# विवाह, सेक्स और प्रेम

लेखिका की अन्य कृतियाँ

भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ
(राजकमल प्रकाशन प्रा० लि० नई दिल्ली, 1976)

कामकाजी भारतीय नारी
(राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, 1976)

# विवाह, सेक्स और प्रेम

प्रमिला कपूर

अनुवादक
मुनीशनारायण सक्सेना

राधाकृष्ण प्रकाशन

अपने पिता श्रद्धेय स्वर्गीय श्री हरिकृष्णलाल धवन की पुण्य स्मृति मे, जिन्होंने मुझे सदैव उच्च शिक्षा प्राप्त करने तथा बौद्धिक काय अपनाने के लिए प्रोत्साहन तथा प्रेरणा दी। उन्होने मुझे जो स्नेह और सद्भावना दी उसके लिए मैं हृदय से आभारी हूँ क्योकि मैं आज जो कुछ भी हूँ, उसमे उनका बहुत बडा योगदान रहा है।

६

# प्रस्तावना

हिन्दी भाषा मे विभिन्न प्रकार का ज्ञानवर्धक साहित्य उपलब्ध कराने के लिए भारत सरकार द्वारा पुस्तक प्रकाशन सम्बन्धी अनेक योजनाएँ कार्यान्वित की जा रही हैं।

शिक्षा तथा समाज कल्याण मन्त्रालय के तत्वावधान मे केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा 'प्रकाशको के सहयोग से हिन्दी मे पुस्तको के लेखन, अनुवाद और प्रकाशन की योजना' सन् 1961 से चल रही है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य अद्यतन ज्ञान-विज्ञान का जन-सामान्य मे प्रचार प्रसार, राष्ट्रीय एकता, धर्म निरपेक्षता तथा मानवता का उदबोधन तथा हिन्दीतर भाषाओ के साहित्य को रोचक तथा लोकप्रिय हिन्दी भाषा मे सुलभ कराना है। इन पुस्तको मे वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली का उपयोग किया जाता है और योजना की पुस्तकें अधिक से अधिक पाठको को सुलभ हो सकें, इस विचार से विक्रय-मूल्य कम रखा जाता है।

प्रस्तुत पुस्तक 'विवाह, सेक्स और प्रेम' डॉ० प्रमिला कपूर की अंग्रेजी रचना 'लव, मरेज एड सेक्स' का अनुवाद है। 'प्रेम, विवाह और सेक्स' मानव की मूलभूत अभिवृत्तिया है जिनपर उसके वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन की सरचना, कार्यशीलता एव उसका अस्तित्व आधारित है। अत आधुनिक युग एव समाज के परिप्रेक्ष्य मे इन अभिवृत्तियो का अध्ययन विशेष महत्त्व रखता है। इस पुस्तक मे इन्ही मूल अभिवृत्तियो, इनकी परिवर्तनशील प्रवृत्तियो और इनके निर्धारक सिद्धातो, प्रक्रियाओ आदि का अध्ययन और विवेचन भारत की युवा शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया के जीवन को आधार मानकर किया गया है। आशा है, यह पुस्तक सभी पाठका के लिए उपयोगी होगी।

हरवंशलाल शर्मा

(हरवंशलाल शर्मा)
अध्यक्ष,
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग,
तथा निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय

नई दिल्ली-22
जनवरी, 1977

# भूमिका

हमारे यहाँ डॉ० प्रमिला कपूर उन कुछेक सवेदी समाजशास्त्रियो मे स हैं, जिन्होंने भारत की शिक्षित, विवाहित, श्रमजीवी और सफेदपोश स्त्रियो के जीवन और मनोवत्तियो मे हो रहे परिवतनो के अध्ययन मे विशिष्टता प्राप्त की है। 1960 के कुछ वष पहले से, जबकि उन्होने समाजशास्त्र की पी एच० डी० की डिग्री के लिए तैयारी आरम्भ की थी, वे उद्देश्य की एकनिष्ठता और कष्टसाध्य अध्यवसाय मे नयी उभर रही उच्चतर तथा मध्यमवग की उन शिक्षित और विवाहित स्त्रियो के जीवन, अभिवृत्तियो और मूल्यो का अध्ययन करती रही हैं जिन्होने घर की चारदीवारी से बाहर, विशेषत नौकरियो तथा व्यवसाय के क्षेत्र मे प्रवेश कर, आजीविका कमाने की नयी भूमिकाओ को अपनाया।

डॉ० प्रमिला कपूर ने 'हिन्दू शिक्षित श्रमजीवी नवयुवतियो के सामाजिक-मनोवैज्ञानिक अभिवत्तियो मे बदलते हुए दृष्टिकोण" विषय मे अनुसधान किया और 1960 मे आगरा यूनिवर्सिटी की इस्टीच्यूट ऑफ सोशल साइसिज से पी एच० डी० की उपाधि प्राप्त की। यह उपाधि प्राप्त कर लेने के बाद उन्होंने अपना अनुसधान उससे आगे विशिष्टता हासिल करने के लिए जारी रखा और डी० लिट० की उपाधि प्राप्त की। यह अनुसधान "मैरेज एड द वर्किंग वूमैन इन इण्डिया" नाम से (1970 मे) पुस्तक रूप म (तथा 1976 मे "भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ' हिन्दी अनुवाद के रूप मे) प्रकाशित हुआ। इस प्रकाशन का सम्मान के साथ स्वागत हुआ और इससे डॉ० प्रमिला कपूर इस विशिष्ट क्षेत्र की प्रामाणिक अनुसधान-कर्ता के रूप मे प्रतिष्ठित हुई।

डॉ० प्रमिला कपूर ने उन 500 विवाहित और श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियो में से अधिकाश के प्रसग में अनुसधान का अपना कार्य जारी रखा, जिनका अध्ययन उन्होने पी-एच० डी० के शोध के बाद किया था, और उनके अतिरिक्त कुछ अन्य को पिछले कुछ वर्षों मे इन स्त्रियो की अभिवत्तियो मे हुए परिवतनो का प्रेक्षण क

लिए चुना। उन्होने एक बहुत ही चुनौती भरे विषय—'विवाह, सेक्स और प्रेम के प्रति दृष्टिकोण' को चुना।

इस दिलचस्प अध्ययन मे डॉ० प्रमिला कपूर ने विश्लेषण के अपने ठेठ तौर तरीके अपनाकर उन बदलती हुई अभिवृत्तियो पर रोशनी डाली है, जो अब तक मानसिक क्रिया प्रतिक्रियाओ के ऐसे अछूते, गूढ आतरिक, सर्वथा वर्जित और अतीव चाञ्चलता से देखे जानेवाले पक्ष रहे हैं जो कि अनुसधान से सम्बद्ध स्त्रियो के जीवन को प्रभावित करते रहे हैं। डॉ० प्रमिला कपूर ने इन उत्तरदाताओ के मन की थाह तक पहुचने की ओर धैर्यपूर्ण, जटिल और वस्तुनिष्ठ ढग से विवाह, सेक्स और प्रेम के प्रति 500 के लगभग स्त्री-उत्तरदाताओ के विचारो को एकत्रित करने की कोशिश की है।

इस पुस्तक मे पाच अध्याय हैं और अन्त मे अग्रेजी के सन्दर्भ ग्रन्थो की विस्तृत तालिका। डॉ० कपूर ने अपने विषय के प्रतिपादन का बहुत ही स्पष्ट प्रतिमान प्रस्तुत किया है।

प्रथम अध्याय 'सक्षिप्त विवरण और प्रविधि' मे लेखिका ने अपनी प्रमुख मान्यताओ को, अपनी आधार भूमिका और अपनी कार्य प्रणाली की अपेक्षाओ की व्याख्या प्रस्तुत की है। डॉ० कपूर ने उन कारणो का स्पष्ट किया है कि क्यो उन्होने अपने अन्वेषण के परिणामों को साख्यिकीय रूप मे न पेश कर व्यक्ति अध्ययन की कडी के रूप मे प्रस्तुत किया। यदि परिशिष्ट मे उन्होने साख्यिकीय सामग्री भी जोड दी होती तो लेखिका के निष्कर्षों का आधार अधिक दृढ होता। इससे अन्य विशेषज्ञो को उनके निष्कर्षों का मूल्याकन करने मे मदद मिलती और इस अध्ययन से सूत्र पाकर देश के दूसरे भागो मे इसी समान क्षेत्र के अध्ययन करने मे सुभीता रहता। लेखिका ने पर्याप्त पाडित्य का परिचय दिया है। उन्हें इस प्रकार के व्यक्ति अध्ययनो की कठिनाइयो का भी ज्ञान है और उनकी ओर सकेत करते हुए उन्होने अन्य अनुसधाताओ को कुछ विभिन्न खतरो से बचने की सलाह दी है जिनमे कि वे पड सकते हैं।

दूसरे, तीसरे तथा चौथे अध्याय क्रमश 'प्रेम' 'विवाह और 'सेक्स' मे—जैसा कि इन श्रमजीवी स्त्रियो ने उन्हे समझा—सम्बन्ध रखते हैं। डॉ० कपूर की व्याख्या का ढाचा तर्कपूर्ण है और उनके उद्देश्य से उनका सामजस्य है। प्रत्येक अध्याय के प्रारम्भ म उन्होने बहुत विस्तार से सुप्रतिष्ठित दार्शनिको, सामाजिक विचारको और समाज-अन्वेषियो के अधिगमों का सामान्य धारणाओ की जटिलता दिखलाने के लिए पुनरावलोकन किया है। फिर वे बतलाने की कोशिश करती हैं कि किस प्रकार वे इन धारणाओ को अपने अनुसधान के व्यावहारिक उपकरण के रूप मे कार्यान्वित करती हैं। तब कुछ व्यक्ति अध्ययनो को डॉ० कपूर अपने निष्कर्षों के दृष्टान्त के रूप में प्रस्तुत करती हैं, और अन्तत अपने व्यापक कथ्य का, जिसमे उनके निष्कर्ष सम्मिलित होते हैं उल्लेख करती हैं। अपने कथ्य के दौरान वे अपने निष्कर्षों को अन्तर्राष्ट्रीय

और भारतीय विद्वानो के निष्कर्षों के साथ बडी सूझ बूझ से एकाकार करती चलती है। उन्हे इसका भान है कि कुछ वे व्यक्ति अध्ययन, जिनकी तरफ उनका सकेत है, सही तौर पर समतुल्य नही हैं। लेकिन क्योकि उन अध्ययनो का ध्येय आधुनिक और शिक्षित स्त्रियो की बदलती हुई मनोवृत्तियो की खोज है इसलिए इन्ही प्रकरणो को—यद्यपि विभिन्न प्रसग मे—वे तर्कसगत ढग से मान लेती हैं कि उन निष्कर्षो से प्रवृत्तियो को तलाशने मे मदद मिल सकती है।

इन अध्यायो मे डा० कपूर इन धारणाओ से अपने सच्चे द्वन्द्व को अनेक अन्य विचारको के लेखन की प्रचुर छानबीन मे प्रदर्शित करती चलती है। सम्यक सामजस्य बना लेने मे भी वे अपना कौशल दिखलाती हैं। विवाहित श्रमजीवी स्त्रियो की प्रतिक्रियाओ मे सूक्ष्म मतभेद की परतो को उघाडने मे भी वे अपनी योग्यता दिखलाती हैं। अभिवृत्तियो मे हो रहे परिवर्तनो की ओर एक कलाकार की दक्षता से डॉ० कपूर इशारा करने मे सफल रही हैं। उनके कई सुझाव आनेवाले अनुसन्धाताओ के मार्ग को प्रशस्त करेंगे।

इतने विद्वत्तापूर्ण, विवेकशील और दिलचस्प अध्ययन के लिए डॉ० कपूर हमारी प्रशसा की अधिकारिणी है।

पुस्तक के अन्तिम अध्याय मे डॉ० कपूर ने अपने निष्कर्षों का सिंहावलोकन प्रस्तुत किया है। 'सिंहावलोकन' शीर्षक अध्याय के प्राय तीन अनुच्छेद हैं। पहले अनुच्छेद मे अपने निष्कर्षों का उन्होने सश्लिष्ट प्रारूप पेश किया है। दूसरे अनुच्छेद मे उन्होंने मनोवैज्ञानिक सामाजिक, व्यक्तिगत और परिवेश से सम्बद्ध तत्त्वो को छाँटने की कोशिश की है, ताकि विवाहित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियो की अभिवृत्तियो मे उनके दो अध्ययनों के बीच की अवधि मे हुए परिवर्तनो के कारणो को रेखाकित किया जा सके। अन्तिम अनुच्छेद मे डॉ० कपूर ने अनेक ऐसे विमर्श प्रस्तुत किये हैं जिन्हे वे अपने अध्ययन के निष्कर्षों तथा इस विषय के तथा इतिहास के अध्ययन से उपजा मानती हैं।

इस अध्याय के आरम्भिक अनुच्छेद योग्यतापूर्ण एव वैध हैं। मैं चाहता हूँ कि इसी अध्याय के उत्तरार्ध मे किये गये सामान्यीकरणो से, जिनका कि सम्बन्ध उनके अध्ययन से नही है, डॉ० कपूर बची रहती।

डॉ० कपूर के अध्ययन का क्षेत्र शिक्षित और श्रमजीवी विवाहित हिन्दू स्त्रियाँ हैं। नयी परिस्थितियो को स्वीकारते हुए, कि स्त्रियो को दो भूमिकाएँ निभानी पडती है, लेखिका ने मूल रूप से उनके बदलते हुए दृष्टिकोण को लेखनीबद्ध करने का प्रयत्न किया है। उन्होने अपने पर्यवेक्षण को परिवार के घेरे मे अभिवृत्तियो मे हो रहे परिवर्तनो पर केन्द्रित किया है। आधुनिक पूजीवादी नगरीय आर्थिक एव सामाजिक ढाँचे के सदर्भ मे एक व्यक्तिवादी, प्रतियोगी मनोविज्ञान और नगदी तथा सविदा सम्बन्ध और विह्रासित लेकिन तीव्रीकृत प्रकार्यों का सम्मिश्रण सामने आया है। लेखिका ने अनेक स्थलो पर बतलाया है कि किस प्रकार श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियो के बदले हुए

दृष्टिकोण मे अनुकूलन की सही भावना की, अपने अधिकारो और कर्तव्यों के प्रति जागरूकता की, समान व्यवहार की अपेक्षा की और नैतिकता के दोहरे मानदडो के विरुद्ध बढ रही विरुचि की झलक देखने को मिलती है। उन्होंने यह भी दरशाया है कि किस प्रकार उच्च जाति और उच्च तथा मध्यमवर्गों की हिन्दू स्त्रियाँ विसम्बन्ध की भावना का एकाकीपन की भावना का और अपने जीवन-साथियो से सम्मानित, हर सुख-सुविधा से परिपूर्ण तथा आर्थिक दृष्टि से उच्च स्तर का जीवन पा सकने की मृगतृष्णा जैसी खोज का अनुभव कर रही हैं। भारत की नारी के सामने जो विशाल समस्याएँ हैं उनके प्रसग मे वैयक्तिक सुख-सुविधा की इस लालसा को उन्हे अपने चिन्तन का आधार बनाना चाहिए था। जसा कि प्रोफेसर गाडगिल तथा अन्य विद्वानो ने बताया है आत्महत्याओ तथा तलाको की बढ़ती हुई सख्या और सवेतन कोटि के अतिरिक्त अन्य कोटियो मे नौकरी पाने के क्रमश घटते हुए अवसरो की उभरती हुई पृष्ठभूमि के प्रसग म देखा जाये तो अधिकाश स्त्रियो के लिए शिक्षा के अवसरो का जो अभाव है और निम्न वर्ग की कोटिसख्यक स्त्रियो को घर बसाने के लिए जो नगण्य सामाजिक सास्कृतिक तथा चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएँ उपलब्ध हैं, उनके बीच इतना अधिक अन्तर है कि मध्यम वर्ग तथा ऊँची जाति की ये हिन्दू स्त्रियाँ एक ऐसे चेतना विहान की परिचायक लगती हैं जो उन विशाल लक्ष्यो की पृष्ठभूमि मे, जिनका कि भारत की स्त्रियो को सामना करना पड रहा है, सापेक्ष रूप से स्वार्थपूर्ण तथा सतही हैं।

मैं चाहता हूँ कि डा० कपूर अपने अगले शोध-कार्यों मे अपना ध्यान भारत की विवाहित श्रमजीवी स्त्रियो के इन पहलुओ पर केन्द्रित करें। मैं डॉ० प्रमिला कपूर से अनुरोध करना चाहूगा कि वे अपने अभिवृत्तिमूलक अन्वेषण का क्षेत्र विस्तृत करके तनाव उत्पन्न करने वाले ढाचे की उस परिधि म प्रवेश करें जो उन स्त्रियो के लिए अनियत परिस्थितियो की प्रेरक होती हैं जिनके सामने दो भूमिकाएँ निभाने की समस्या है। मैं उनसे यह भी अनुरोध करना चाहूँगा कि वे अपना ध्यान सफेदपोश परिवारो की ओर से हटाकर कारखानो मे काम करनेवालो के परिवारो की ओर केन्द्रित करें।

डा० प्रमिला कपूर इस विचारोत्तेजक अन्वेषण के लिए बधाई की पात्र हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि यह पुस्तक व्यापक रूप स पढी जायेगी।

—ए० आर० देसाई

समाजशास्त्र विभाग,
बम्बई विश्वविद्यालय
बम्बई–29

# आमुख

प्रेम, विवाह तथा सेक्स के बारे मे चर्चा करना तथा मत व्यक्त करना भारत मे अपेक्षाकृत नयी बात है। आमतौर पर अब लोग यह जानने के लिए उत्सुक होते जाते रहे हैं कि समाज के विभिन्न वर्गों के लोग इन महत्त्वपूर्ण समस्याओ के बारे में क्या सोचते हैं, क्या महसूस करते हैं और क्या करते हैं। मानव-जीवन के इन महत्त्वपूर्ण पहलुओ के प्रति समकालीन अभिवृत्तियो अथवा व्यवहार के बारे में या इन अभिवृत्तियो में हो रहे परिवर्तनो के बारे में किसी वैज्ञानिक तथा विस्तृत अध्ययन के अभाव में लोग आमतौर पर अटकलो तथा अवैज्ञानिक स्थूल मान्यताओ को अपनी धारणाओं तथा अपनी जानकारी का आधार बना लेते हैं।

प्रस्तुत अध्ययन मे यह मानकर चला गया है कि किसी भी व्यक्ति की अभिवृत्तियाँ उसके आत्मगत जीवन का आधारभूत अग होती हैं और बहुत बडी हद तक उसके विचारो तथा व्यवहार को निर्धारित करती हैं। इस पुस्तक म मैंने प्रेम तथा सेक्स जीवन के सम्बन्ध मे शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो के वास्तविक व्यवहार तथा आचरण क बारे की बातो पर प्रकाश नही डाला है। परन्तु चूकि किसी व्यक्ति या व्यक्तियो के किसी समूह के प्रत्यक्ष तथा प्रच्छन्न व्यवहार पर अभिवृत्तियो का दूरगामी प्रभाव पडता है इसलिए इस पुस्तक मे मैंने इस बात पर ध्यान केन्द्रित किया है कि शिक्षित श्रमजीवी युवतिया इन तीन मुख्य पहलुओ के बारे म क्या अनुभव करती हैं तथा सोचती है।

इस अध्ययन का सूत्रपात 1959 मे हुआ था जब मैं अपने पी एच० डी० के शोध-निबन्ध के लिए आधार-सामग्री एकत्रित कर रही थी, जिसम शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू युवतियो की अभिवृत्तियो का अध्ययन किया गया था। मैंने अपना पी एच० डी० का काम सुविख्यात समाजविज्ञानी प्रोफेसर आर० एन० सक्सेना के योग्य मार्गदर्शन मे आगरे के समाज-विज्ञान संस्थान मे किया था। उस अध्ययन मे स्त्रियो की शिक्षा, रोजगार, विवाह संस्कृति, धर्म, मनोरंजन, नैतिकता, राजनीति और सम्पूर्ण जीवन के

प्रति उनकी अभिवृत्तियो पर ध्यान केन्द्रित किया गया था। जिस समय मैं प्रश्नावली का पूव परीक्षण कर रही थी और उत्तरदाताओं से नैतिक मानदण्डो के प्रति उनके विचार मालूम करने का प्रयत्न कर रही थी, उस समय मैंने शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की प्रतिक्रियाओं मे बिल्कुल चुप्पी साधे रहने से लेकर काफी स्पष्टवादिता तक बहुत विविधता देखी, और मैंने यह महसूस किया कि यद्यपि वे अपने विचार व्यक्त करने मे सकोच करती हैं लेकिन वे निश्चित रूप से प्रेम तथा सेक्स के बारे मे और अधिक बातें कहना चाहती है। थोडी घनिष्ठता स्थापित हो जाने पर मैंने उनसे अपने जीवन तथा अनुभवो के बारे मे बताने को कहा। उस समय मैंने महसूस किया कि मुझे प्रेम तथा सेक्स के प्रति उनकी अभिवत्तियो का भी विस्तारपूर्वक अध्ययन करना चाहिए। इस लिए मैंने अलग से एक प्रश्नमाला तैयार करके अपने उत्तरदाताओं के सामने रखी जिसमे विवाह प्रेम तथा सेक्स के बारे म अधिक विस्तार के साथ कुछ और प्रश्न पूछे गये थे। जब मैंने आधार-सामग्री का विश्लेषण करना तथा पी एच० डी० के लिए अपना शोध प्रबन्ध लिखना आरम्भ किया तो मेरा पूरा इरादा था कि मैं अपनी इस दूसरी प्रश्नमाला के निष्कर्षों को भी उसमे शामिल करूँगी। लेकिन जब मैंने सौ व्यक्ति-अध्ययन तैयार कर लिये तो मैंने देखा कि इन समस्याओं की विस्तत विवेचना किये बिना ही शोध प्रबन्ध बहुत बडा हो गया है। इसलिए मैंने इस आधार-सामग्री को आगे चलकर कभी इस्तेमाल करने के लिए रख छोडने का निश्चय किया।

प्रोफेसर एस० सी० दुबे ने, जिनसे मैं पहली बार उस समय मिली थी जब वह मेरे पी एच० डी० के परीक्षक होकर इस्टीच्यूट मे आये थे, मुझे बधाई दी कि मैंने व्यक्ति अध्ययनो का उपयोग बहुत प्रभावशाली ढग से किया था और उन्हें अध्ययन के निष्कर्षों की व्याख्या करने तथा उन्हे दृष्टान्तों से पुष्ट करने के लिए इस्तमाल किया था। उन्होंने बहुत जोर देकर यह सुझाव रखा कि मैं अपना शोध प्रबन्ध प्रकाशित कराऊँ। उन्होंने मुझे यह बहुमूल्य परामर्श देकर मेरे साथ बडा उपकार किया कि मैं मूल पाठ म किस प्रकार कुछ प्रतिनिधि व्यक्ति अध्ययनो को शामिल करके उसे पुस्तक का रूप दे सकती हू। मेरी मौखिक परीक्षा के कुछ ही दिन बाद मेरे पति गाजा से लौट आये जहा वह सयुक्त राष्ट्रसघ की सेनाओं की भारतीय टुकडी के सेनापति की हैसियत से काम कर रहे थे। ज्यो ही मैं अपने शोध प्रबन्ध को पुस्तक का रूप देने के प्रश्न पर फिर से विचार करने की स्थिति मे हुई, मुझे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से सीनियर रिसर्च फेलोशिप मिल गयी और मैं पी एच० डी० के बाद श्रमजीवी स्त्रियो के ववाहिक समायोजन की समस्या का अध्ययन करने के बृहद् कार्य मे व्यस्त हो गयी। 1967 के अन्त मे अपना शोध प्रबन्ध लिखने के तुरन्त बाद मैं अपने पति के पास दक्षिणी वियतनाम चली गयी, जहाँ वे अन्तर्राष्ट्रीय नियन्त्रण तथा निरीक्षण आयोग के प्रधान सेनापति के पद पर नियुक्त थे। मैंने बहुत अधिक विलम्ब हो जाने से पहले ही पी-एच० डी० के बाद अपने इस शोध प्रबन्ध को प्रकाशित कराने का दृढ निश्चय कर लिया था। इसलिए वापस लौटने पर मैंने इस अध्ययन को लगभग पूरी तरह फिर

से लिख डाला और 1970 मे वह मैरेज एंड द वर्किंग वुमेन इन इण्डिया ["भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ" (हिंदी मे 1976 मे)] के नाम से प्रकाशित हुआ।

1969 मे मैंने इस बात को और भी अधिक उग्र रूप से अनुभव किया कि यद्यपि अभिवृत्ति-परिवर्तन से सम्बन्धित सिद्धान्तों मे अभिवृत्तियो मे होनेवाले परिवर्तन के स्वरूप तथा विभिन्न कारकों के बारे मे अत्यन्त विविध तथा व्यापक सामग्री प्रस्तुत की जाती है परन्तु इस परिवर्तन को लाने मे योग देनेवाले अधिक व्यापक वास्तविक मनोगत सामाजिक अनुभवो के बारे मे अधिक सामग्री उपलब्ध नही है। प्रेम तथा सेक्स के प्रति अभिवृत्तियो के बारे मे प्राय कोई भी अध्ययन नही थे और इन पहलुओं के प्रति शिक्षित स्त्रियो की अभिवृत्तियों में होनेवाले परिवर्तनो के बारे मे तरह-तरह की अटकलें लगायी जा रही थी। इसके अतिरिक्त भारत मे इस प्रकार के प्राय कोई भी विस्तृत अध्ययन उपलब्ध नही थे जिनमें दो विभिन्न समयो पर सीधी छानबीन करके अभिवृत्तियो मे होनेवाले परिवर्तनो की प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर विवेचना की गयी हो। इसलिए उनकी अभिवृत्तियो मे होनेवाले परिवर्तनो का विश्लेषण करने के लिए मैंने पाँच सौ शिक्षित श्रमजीवी हिंदू युवतियो के एक प्रतिनिधि नमूने की अभिवृत्तियो का अध्ययन करने का निश्चय किया जो वैज्ञानिक दृष्टि से उन स्त्रियों के अनुरूप हो जिनका अध्ययन मैंने दस वर्ष पहले 1959 मे किया था। इसलिए मैंने उनके सामने भी वही प्रश्नमाला रखी जो मैंने पाँच सौ शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो के पहले वाले नमूने के लिए इस्तेमाल की थी परन्तु जिनके उत्तरो का मैंने विश्लेषण नही किया था और उन्हें अपने पी-एच० डी० के शोध प्रबन्ध मे विस्तारपूर्वक प्रस्तुत नही किया था। इन दोनो ही छानबीनो मे मैंने इन स्त्रियो से साक्षात्कार किया और इस बात का मूल्यांकन करने का प्रयत्न किया कि इन समस्याओ के प्रति उनकी संकल्पना तथा अभिवृत्तियों में किस हद तक और किस ढग से परिवर्तन हुआ है। ऐसा इस उद्देश्य से किया गया था कि दस वर्ष के अन्तराल के बाद उनकी अभिवृत्तियो मे होनेवाले परिवर्तन को व्यवस्थित ढग से जाँचा जा सके। इस कार्य की कल्पना इस रूप मे की गयी थी और इस वैज्ञानिक मूल्यांकन का प्रतिफल इस पुस्तक के रूप मे प्रस्तुत किया जा रहा है।

सुविधा की दृष्टि से और विश्लेषण तथा प्रस्तुतीकरण के उद्देश्यो से भी पुस्तक को पाँच स्पष्ट अध्यायो मे विभाजित किया गया है। पहले अध्याय मे विषय का परिचय दिया गया है और आधार-सामग्री एकत्रित करने तथा उसका विश्लेषण करने की पद्धति का ब्योरा प्रस्तुत किया गया है। दूसरे, तीसरे तथा चौथे अध्यायो मे क्रमश: प्रेम, विवाह तथा सेक्स के विभिन्न पहलुओ के प्रति बदलती हुई अभिवृत्तियो की विवेचना की गयी है। अंतिम अध्याय मे इस अध्ययन के निष्कर्षों को सार-रूप मे प्रस्तुत किया गया है और प्रेम, विवाह तथा सेक्स के प्रति उनकी अभिवृत्तियो के निरूपण तथा उन अभिवृत्तियो मे परिवर्तन में योग देनेवाले सामाजिक मानसिक और साथ ही स्थितिमूलक कारकों का विश्लेषण किया गया है।

यह मुख्यत एक गुणात्मक अध्ययन है और मेरा पूर्ण विश्वास है कि ठोस दृष्टात दूसरों तक जानकारी पहुचाने का सबसे सफल साधन हैं। इसलिए अपने अध्ययना के निष्कर्षों को दृष्टान्तों से पुष्ट करने तथा उनकी व्याख्या करने के लिए मैंने बहुत बडी हद तक व्यक्ति अध्ययनों का सहारा लिया है।

इस अध्ययन की एक कमी जिसका उल्लेख किया जा सकता है वह यह है कि कुछ प्रक्षेपीय परीक्षणो की सहायता से अचेतन मन की गहराइयो का अन्वेषण करने का कोई प्रयत्न नही किया गया है। परन्तु चूकि इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य इस बात की छानबीन करना था कि श्रमजीवी स्त्रिया सचेतन मन से क्या सोचती, विश्वास करती तथा अनुभव करती है—उनके विचारो, आस्थाओ तथा परिप्रेक्ष्य का उनका आत्मपरक जगत्—इसलिए इस कमी को अनदेखा किया जा सकता है।

अध्ययन के कम ही क्षेत्र ऐसे होग जो शोधकर्ता तथा शोध के "पात्रों" दोनो ही के लिए इतने रोचक हो जितना कि बुनियादी महत्त्व की समस्याओ के प्रति आत्मपरक अभिवृत्तियो का अध्ययन। प्रत्यक्ष छानबीन के दौरान मुझे जो कठिन परिश्रम करना पडा और जो अपमान सहने पडे उनके बावजूद मुझे उत्तरदाताओ से बातें करने तथा उनकी बातें सुनने म भरपूर आनन्द आया। कुछ मुलाकातो के बाद उत्तरदाताओ ने भी यही बताया कि उन्हे भी यह सब बहुत रोचक लगा।

मैं उत्तरदाताओ की आभारी हूँ जिन्होने अनौपचारिक तथा औपचारिक दोनो ही स्तरो पर बहुत धैर्यपूर्वक मेरे प्रश्नो का उत्तर दिया और अपने बारे मे मुझे बताते समय मुझ पर पूरी तरह विश्वास किया। कुल मिलाकर उन्होंने मुझे पूरा सहयोग दिया। उनकी स्नेहपूर्ण सदभावना तथा सहयोग के बिना न तो मैं अपना यह शोध-काय आरम्भ ही कर सकती थी और न ही उसे सन्तोषजनक ढग से पूरा कर सकती थी।

अपने घर के लोगो मे मैं अपने माता पिता का हार्दिक आभार मानती हू, विशेष रूप से अपने स्वर्गीय पिता श्री हरिकृष्णलाल धवन का जिन्होने मेरे बेटो की देखभाल करने मे मेरा बहुत हाथ बँटाया, जो आधार-सामग्री जमा करने के प्रथम चरण के दौरान बहुत छोटे थे और उन्हे देखभाल की बहुत आवश्यकता थी। मेरे मन मे अपने पति ब्रिगेडियर तेग बहादुर कपूर, ए० वी० एस० एम०, के प्रति हार्दिक प्रशसा तथा कृतज्ञता का भाव है, जिन्होने न केवल कोई शिकायत किये बिना उन अनेक असुविधाओ को सहन किया जो मेरे अपने काम मे बहुत व्यस्त रहने के कारण उत्पन्न हुइ, बल्कि बडी सदभावना के साथ मुझे प्रोत्साहित भी किया कि मैं पूरी लगन के साथ इस पुस्तक को लिखू और इसके लिए उन्होंने शोध तथा सृजनात्मक काय के कष्टसाध्य लक्ष्य को पूरा करने के लिए घर पर अत्यन्त अनुकूल वातावरण बनाये रखा। मुझे इस पुस्तक की मूल पाडुलिपि को अन्तिम रूप देने मे अपने दोनो पुत्रो त्रिभुवन और विक्रम से बहुत सहायता मिली और उन दोनो के धैय तथा परिश्रम के लिए उन्हें धन्यवाद देने तथा उनकी सराहना करने के लिए मेरे पास समुचित शब्द नही हैं।

उन सभी मित्रों के नाम गिनाना मेरे लिए कठिन है जिन्होंने अपन उत्साह भरे

नैतिक समर्थन, प्रोत्साहन और रचनात्मक सुझावो से मुझे इस अध्ययन का बीडा उठाने और उसे पूरा करने मे सहायता दी। परन्तु अन्त मे मैं इतना अवश्य कहना चाहूँगी कि जिन लोगो ने भी मुझे इस काम को पूरा करने मे योगदान किया उन सबके प्रति मैं अपना आभार प्रकट करती हूँ।

मैं आशा करती हूँ कि इससे एक ऐसे विषय के बारे मे जो हर पहलू से बहुत महत्त्वपूर्ण है, और अधिक चिन्तन तथा शोध को बढावा मिलेगा। यह पुस्तक केवल समाज शास्त्रियो, मनोवैज्ञानिका, सामाजिक कार्यकर्ताओ, नौकरिया देने वालो, शिक्षको तथा विद्वानो को ही नही बल्कि उन सभी लोगो को लक्ष्य करके लिखी गयी है जिन्हें आज के भारत मे दिलचस्पी है, और जो सभी मनुष्यो के जीवन मे इतना अधिक महत्त्व रखने वाले विषय के बारे मे उपयोगी, विश्वस्त तथा तथ्यपरक जानकारी एकत्रित करने मे रुचि रखते हैं।

—प्रमिला कपूर

के 37 ए, ग्रीन पार्क,
नई दिल्ली 110016

# 1

## सक्षिप्त विवरण और प्रविधि

समाज का लक्षण है गतिशीलता। गतिरोध से उसे बैर है। परिवतन उसका सार-तत्त्व है। वह कभी गतिहीन नहीं रहा, नही तो उसका अस्तित्व ही मिट चुका होता। परन्तु परिवर्तन का वेग और दिशा निरतर बदलती रही है। मूलत आज की दुनिया पहले की तुलना मे बडी तेजी से बदलती हुई दुनिया है और परिवतन सभी दिशाओ में हुआ है। हमारी दृष्टि के सामने नये क्षितिज उभरे हैं और मनुष्य के लिए नये काय-क्षेत्रो का विकास हुआ है। यह परिवर्तन मानव जीवन के भौतिक और अ-भौतिक दोनो ही क्षेत्रो मे हुआ है। 'बदली हुई भौतिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा धार्मिक गतिविधियाँ और लोगों की बदली हुई अभिवृत्तियाँ तथा मूल्य एक-दूसरे का कारण तथा परिणाम हैं। इस प्रकार अभिवत्तियाँ—प्रच्छन्न व्यवहार—और प्रत्यक्ष व्यवहार एक ही समय में एक दूसरे पर प्रभाव डालते भी हैं और एक-दूसरे स प्रभावित होते भी हैं। बदली हुई भौतिक अभौतिक परिस्थिति मे मनुष्य के दृष्टिकोण मे परिवतन इसलिए होता है कि वह तनाव मे कमी करके अपने मानसिक सन्तुलन को बनाये रखने की आवश्यकता अनुभव करता है। बदलते हुए समय और बदलती हुई दुनिया के परिवतनो तथा चुनौतियो का सामना करने के लिए उसे निरतर अपने को नयी परिस्थितियो के अनुसार ढालना पडता है। परिवतन प्राणी-मात्र का जीवन है, जिसके बिना जीवन गतिहीन हो जायेगा और जो भी चीज गतिहीन होती है वह मर जाती है।

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी (टक्नालॉजी) की प्रगति, जनव्यापी प्रसार के साधनो और परिवहन तथा सचार के तीव्रगामी साधनो ने सारी दुनिया को सकुचित करके एक बडी-सी सुगठित इकाई का रूप दे दिया है। इस प्रकार जब भी ससार के किसी भाग मे कोई प्रौद्योगिक वैज्ञानिक, सामाजिक सास्कृतिक, राजनीतिक-धार्मिक या

सामाजिक मनोवैज्ञानिक परिवतन होता है तो देर-सबेर ससार मे अन्य मार्गो के मनोवैज्ञानिक सांचो मे भी उसका प्रवेश हो जाता है। यह प्रतिक्रिया क्रम उस समय तक चलता रहता है जब तक कि सभी भाग परिवतन की क्रियात्मक, परस्पर क्रियात्मक और प्रतिक्रियात्मक प्रतिक्रियाओ मे सम्मिलित नही हो जाते।

सामाजिक दृष्टि से, नारी की मुक्ति एक सबसे अधिक उल्लेखनीय परिवतन रहा है—गृहस्थी के सकुचित घरौंदे स बाहर निकलकर उसका बाहरी दुनिया की गतिविधियो के क्षेत्र मे आना। पिछली लगभग पांच शताब्दियो के दौरान भारत के जीवन के लगभग हर क्षेत्र मे महत्वपूण परिवतन हुए हैं। भारत के स्वतन्त्र होने स परिवतन की गति बहुत तेज हो गयी है और उसकी गतिविधियो के क्षेत्र और भी व्यापक हो गये हैं। उद्योगो नगरो और धम निरपेक्षता के विकास की प्रक्रियाओ के फलस्वरूप लोगो की जीवन पद्धति और अभिवृत्तियो मे, विशेष रूप से नगरवासियो के बीच, राजनीतिक आर्थिक, सास्कृतिक और सामाजिक आर्थिक मनोवैज्ञानिक परिवतन हुए हैं। स्वतन्त्रता के बाद की बदली हुई सामाजिक आर्थिक परिस्थितियो से मध्यम वग की स्त्रियो के लिए आवश्यक हो गया है कि वे जीविकोपाजन के लिए कोई काम करें। भारत की स्वतन्त्रता के बाद एक सबसे आधारभूत तथा दूरगामी सामाजिक परिवतन यह हुआ है कि स्त्रियां अपनी परम्परागत जीवनचर्या से मुक्त हो गयी हैं और विशेष रूप से यह कि मध्यम तथा उच्च वर्गों की स्त्रियो ने जीविकोपाजन के ऐसे व्यवसायो मे प्रवेश किया है जिन पर अब तक मुख्यत पुरुषो का एकाधिकार माना जाता था। भारत में स्त्रियो की सामाजिक आर्थिक मुक्ति के फलस्वरूप उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा और उनके दृष्टिकोण में भी परिवतन आया है।

यह मुक्ति उनके जीवन मे—उनकी भूमिका, उनकी प्रतिष्ठा और जीवन-पद्धतियो मे—होने वाले परिवतनों का परिणाम भी है और उन परिवतनो को लाने-वाला साधन भी। और उनके जीवन में यह परिवतन वैयक्तिक तथा सामाजिक गतिविधियों के हर क्षेत्र के बारे मे उनके विचारो तथा उनकी व्यवहार-पद्धतिया को प्रभावित कर भी रहा है और उनसे प्रभावित हो भी रहा है। क्योंकि इस प्रकार का आधारभूत परिवतन—जो वस्तुत एक सामाजिक क्रान्ति है—न केवल परिवार के ढांचे और सम्बन्धो को प्रभावित करता है बल्कि सामाजिक गतिविधियो के अन्य सभी—आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक तथा सामाजिक क्षेत्रो म प्रविष्ट हो जाता है।

विवाह और परिवार सबसे प्राचीन और सबसे आधारभूत परम्पराएँ हैं और किसी भी समाज विशेष के सामाजिक-आर्थिक जीवन के विभिन्न दूसरे क्षेत्रो में होने-वाले सामाजिक परिवतनों का उन पर गहरा प्रभाव पडता है। यूकोम (1965) और पार्सन्स (1956) जैसे भूमिका-सिद्धान्तविदो के अनुसार भूमिका सिद्धान्त की एक आधारभूत मान्यता यह है कि सामाजिक व्यवस्था मे किसी व्यक्ति की जो भूमिका होती है उसका उसकी अभिवृत्ति पर प्रभाव पडता है। सीवरमन (1956) जैसे विज्ञानियों ने जो वैज्ञानिक अध्ययन किये हैं उनसे इस मान्यता की पुष्टि होती

है। उन्होंने अभिवृत्तियों पर भूमिकाओं के प्रभाव की छानबीन की और इस बात का पता लगाया कि भूमिका में होनेवाले परिवर्तनों के फलस्वरूप रवैये में किस हद तक परिवर्तन आते हैं। उन्होंने यह देखा कि भूमिका में परिवर्तन से उस भूमिका का निर्वाह करनेवाले के कार्य में, और उसके विभिन्न प्रकार के व्यवहारों तथा क्रियाओं में परिवर्तन होता है और फिर इससे उसकी अभिवृत्तियाँ प्रभावित होती हैं (लीबरमैन, 1956, पृष्ठ 385 402)।

हाल ही में प्राप्त किये गये सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक-कानूनी अधिकारों तथा विशेषाधिकारों के आधार पर भारत में स्त्रियों ने समाज में एक नयी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है, जो उनकी वर्तमान भूमिकाओं में श्रमजीवी नारी की भूमिका और जुड़ जाने के कारण, चीजों को देखने के उनके ढंग को भी बदल देगी। विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि शिक्षित स्त्रियों के, विशेष रूप से शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के रवैयों में काफी परिवर्तन हुआ है, विशेष रूप से विवाह तथा परिवार के सम्बन्ध में और स्वयं उनके अपने सामाजिक पद के बारे में। (हाटे, 1930, 1946 और 1969, मर्चेंट, 1935, कापडिया, 1954, 1955, 1958 और 1959, कपूर, 1960, दुबे, 1963, और देसाई, 1957)।

सबसे पहले सामाजिक अभिवृत्तियों का अध्ययन टामस और ज्नानिएच्की (1918) नामक समाजशास्त्रियों ने किया था और अभिवृत्ति की संकल्पना के उस रूप के बहुत निकट पहुंचे थे जिस रूप में उसका प्रयोग आजकल सामाज मनोवैज्ञानिक करते हैं। रेमस ने लिखा है, 'उस समय से समाजविज्ञानी, विशेष रूप में मनोवैज्ञानिक, अभिवृत्तिमूलक अध्ययन की ओर अधिकाधिक ध्यान देते रहे हैं, क्योंकि सिद्धान्त रूप में अभिवृत्तियाँ प्रत्यक्ष अथवा प्रच्छन्न हर प्रकार के व्यवहार का अंग होती हैं" (रेमस, 1954, पृष्ठ 3)। आज, किसी भी जन समुदाय की सामाजिक राजनीतिक-आर्थिक गतिविधियों, व्यवहार या समस्याओं को समझने के लिए और इसके साथ ही व्यक्ति के सामाजिक-मनोवैज्ञानिक अथवा भावात्मक व्यवहार तथा समस्याओं को समझने के लिए अभिवृत्तियों का अध्ययन तथा उनकी जानकारी शायद सबसे विशिष्ट और अनिवार्य आवश्यकता है। इस प्रकार उपचारात्मक तथा उपचारेतर दोनों ही उद्देश्यों के लिए न केवल विशिष्ट सामाजिक-मनोवैज्ञानिक क्षेत्रों में, बल्कि मानव व्यवहार तथा सम्बन्धों के लगभग सभी क्षेत्रों में अभिवृत्तियों को समझना केन्द्रीय तत्त्व बन गया है।

अभिवृत्तियों के बारे में बहुत-सा साहित्य उपलब्ध है, परन्तु यहाँ पर हमारा उद्देश्य उसकी संकल्पना पर विचार करना नहीं है। इसलिए इस संकल्पना के स्पष्टीकरण के लिए नीचे केवल संक्षेप में कुछ परिभाषाएँ दी जा रही हैं। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि "व्यक्ति बहुधा किसी 'दृष्टिकोण' के प्रसंग में काम करता है, उसके सामने जो समस्याएँ होती हैं उनके प्रति उसकी एक अभिवृत्ति या परिप्रेक्ष्य होता है। इन तथ्यों का उल्लेख करते समय हम एक स्थूल तथा व्यापक शब्द का प्रयोग करते हैं—अभिवृत्ति" (ऐश, 1952, पृष्ठ 529)।

किसी व्यक्ति अथवा वस्तु के प्रति या उसके विरुद्ध प्रतिक्रिया करने की अवाप्त की हुई, सीखी हुई अथवा स्थापित प्रवृत्तियाँ ही अभिवृत्तियाँ होती हैं। वे अपने को निकट आने या दूर हटने की प्रवृत्तियों के रूप में व्यक्त करती हैं और वे सामाजिक मूल्यों की ओर उन्मुख होती हैं (न्यूमेयर, 1953, पृष्ठ 169)।

क्रेच और क्रचफील्ड (1948, पृष्ठ 152) ने अभिवृत्ति की परिभाषा "व्यक्ति के जगत के किसी पक्ष विशेष के प्रसंग में अभिप्रेरक, संवेगात्मक, बोधात्मक तथा संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के चिरस्थायी संगठन" के रूप में की है। (देखिये कीसलर, कॉलिंस और मिलर, 1969, पृष्ठ 1)।

एक और परिभाषा के अनुसार "किसी वस्तु अथवा व्यक्ति के प्रति एक विशेष ढंग से सोचने, या उसके बारे में अनुभव करने तथा कार्य करने की तत्परता की स्थिति" उस वस्तु अथवा व्यक्ति के प्रति हमारी अभिवृत्ति होती है (देखिये सार्टेन आदि, 1958, पृष्ठ 80-81)।

"यह एक प्रकार का पूर्वग्रह होता है, जिसके अनुसार हम वस्तुओं या व्यक्तियों का बोध करते हैं और तदनुसार उनके प्रति प्रतिक्रिया करते हैं। 'अभिवृत्ति' का शब्द उस तत्परता का उल्लेख करने का केवल एक सुविधाजनक उपाय है जो किसी भावी गतिविधि के लिए हमारे तन्त्र के अन्दर मौजूद रहती है' (रेमस, 1954, पृष्ठ 5)।

" प्रत्यक्ष व्यवहार के 'उत्पादन' पक्ष और जानकारी प्राप्त करने से सम्बन्धित क्षेत्रों के 'उत्पादन पक्ष दोनों ही पर अभिवृत्तियों के प्रभाव काफी दूरगामी होते हैं" (यूकोम, टर्नर और कानवर्स, 1965 पृष्ठ 79)।

"मैं अभिवृत्ति की परिभाषा किसी मनोभावात्मक वस्तु के पक्ष में या उसके विरुद्ध सकारात्मक अथवा नकारात्मक भाव की गहनता के रूप में करता हूँ। मनोभावात्मक वस्तु कोई ऐसा प्रतीक, व्यक्ति, वाक्यांश, नारा या विचार होती है जिसके प्रति विभिन्न व्यक्तियों का सकारात्मक अथवा नकारात्मक भाव अलग अलग होता है' (थर्स्टन 1946, पृष्ठ 39)।

संक्षेप में वस्तुओं की किसी श्रेणी को पहले से बताये जा सकनेवाले ढंग से अनुभव करने, उससे प्रेरित होने और उसके प्रतिक्रिया करने की पूर्ववृत्ति को अभिवृत्ति कहते हैं' (स्मिथ, ब्रूनर और व्हाइट, 1964 पृष्ठ 33)। और यह स्पष्ट है कि 'अभिवृत्तियाँ क्रियाएँ नहीं बल्कि कुछ करने की प्रवृत्तियाँ होती हैं। फिर भी अभिवृत्तियाँ व्यवहार के नियन्त्रण के लिए सशक्त उपकरण होती हैं क्योंकि बहुत-से उदाहरणों में वे अपनी प्रवृत्ति का अनुसरण करती हैं और इसका परिणाम होता है प्रत्यक्ष क्रिया' (वेबर, 1958 पृष्ठ 3)।

'अभिवृत्तियों की अधिकांश परिभाषाएँ हमें यही बताती हैं कि अभिवृत्तियाँ प्रत्यक्ष व्यवहार में योग देती हैं। यदि हम उद्दीपन की दशा को स्थिर रखें तो विभिन्न व्यक्तियों के व्यवहार में उतना ही अन्तर होना चाहिए जितना उनकी अभिवृत्ति में

अन्तर हो। इस तर्क के अनुसार हर व्यक्ति अभिवृत्ति का मापदण्ड होता है। "
(कीसलर, कालिन और मिलर, 1969, पृष्ठ 23)। 'परन्तु, इस बात का कोई आश्वासन होते हुए भी कि अभिवृत्तिया की परिणति तदनुरूप क्रिया के रूप मे होगी ही, अभिवृत्ति-सम्बन्धी अध्ययनो को अब भी बहुत महत्त्वपूर्ण समझा जाता है (थबर, 1958, पृष्ठ 5)।

अध्ययनो से पता चलता है कि अभिवृत्तिया को बदला जा सकता है और वे बदलती भी हैं। (बर्न, 1936, पृष्ठ 12 19, पीटसन और थस्टन 1933, नाम्रर, 1935, पृष्ठ 315-347, रेमस, 1934 1936 और 1938)। और यही तथ्य सामाजिक नवीनताओ, सामाजिक तनावो और सामाजिक परिवर्तनो का कारण होते हैं।

पिछली अर्ध शताब्दी के दौरान सेक्स, प्रेम और विवाह के प्रति अभिवृत्तियो मे बहुत बड़े परिवर्तन हुए है। एक प्रतिक्रिया क्रम प्रारम्भ हो गया है और जनव्यापी प्रसार के साधनो, बडे पैमाने पर यात्राओ और विभिन्न देशो के लोगो के बीच विनिमय के कार्यक्रमो के माध्यम से और पारस्परिक सास्कृतिक आदान प्रदान के माध्यम से अधिक उन्नत देशो की अभिवृत्तिया अन्य देशो की अभिवृत्तिया को प्रभावित कर रही हैं। आम तौर पर लोग आज प्रेम, विवाह और सेक्स के बारे मे अपने विचार पहले की अपेक्षा अधिक उन्मुक्त भाव से व्यक्त करते हुए पाये जाते हैं। यह अपने-आप में एक बहुत बडा परिवर्तन है। यद्यपि समाज के विभिन्न अग बहुत काफी समय से अनुमान लगाते रहे हैं कि उनकी अभिवृत्तियो मे किस किस ढग से और किस किस दिशा मे परिवर्तन हुए हैं, फिर भी भारत मे इन बदलती हुई अभिवृत्तियो के बारे मे शायद ही कोई वैज्ञानिक छानबीन की गयी है।

प्रेम, विवाह और सेक्स के प्रति बदलती हुई अभिवृत्तियो का अध्ययन इसलिए किया जा रहा है कि वे हर पुरुष और स्त्री के जीवन मे केन्द्रीय रुचि के विषय हैं। वे न केवल समाज के सामाजिक जीवन के अस्तित्व, सगठन और कार्यशीलता के लिए बल्कि उन मानव प्राणियो की उत्पत्ति, पोषण तथा निरतर अस्तित्व के लिए भी सबसे अधिक आधारभूत महत्त्व रखते है जिनसे मिलकर समाज बनता है। इन आधारभूत समस्याओ के प्रति अभिवृत्तियो मे होनेवाले परिवर्तन समाज के उस खण्ड विशेष के ऐसी अभिवृत्तिया रखनेवाले लोगो के सामाजिक जीवन तथा सामाजिक व्यवहार को नये साचे मे ढाल देते है। और फिर इसके फलस्वरूप पारस्परिक क्रिया तथा पारस्परिक प्रतिक्रिया की प्रक्रिया के माध्यम से समाज के अन्य भागो मे परिवर्तन होते हैं।

व्यक्तियो के किसी समूह की अभिवृत्तिया और उनके व्यवहार के ढग मे अन्तर हो सकता है। फिर भी चूकि "मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मूल्यो, रीति-रिवाजो, आस्थाओ, आदर्शो को सक्षेप मे अभिवृत्ति के विविध रूपो को सामाजिक व्यवहार का गतिशास्त्र कहा जा सकता है" (रेमस, 1954, पृष्ठ 14), इसलिए अभिवृत्तियो का
अत्यन्त आवश्यक है ताकि प्रेम, विवाह और सेक्स के बारे मे सामाजिक

वर्तमान तथा भावी दोनों ही प्रवृत्तियों की जानकारी प्राप्त की जा सके। जीवन-साथी चुनने, विवाह करने, प्रेम के सम्बन्ध रखने में व्यवहार के विविध रूपों का अध्ययन करने के लिए, और समाज के किसी समूह विशेष के सेक्स सम्बन्धी व्यवहार का मूल्यांकन करने के लिए उन समस्याओं के प्रति उसकी अभिवृत्तियों का अध्ययन करना बहुत आवश्यक है। सामाजिक परिवर्तन के किसी भी अध्ययन में आधारभूत सामाजिक संस्थाओं तथा व्यवहार के प्रति समाज के विभिन्न अंगों की अभिवृत्तियों को जानना आवश्यक है क्योंकि अभिवृत्तियों से ही इस प्रकार के परिवर्तन की भावी दिशा का संकेत मिलता है।

शिक्षित श्रमजीवी युवती स्त्रियों की अभिवृत्तियों का अध्ययन बहुत महत्त्वपूर्ण है। विवाह, परिवार, सेक्स तथा प्रेम के बारे में युवा वर्ग के लोगों के विचार जानना महत्त्वपूर्ण है क्योंकि निकट भविष्य में प्रेम, विवाह तथा सेक्स सम्बन्धों के संक्षेप में सभी अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों तथा व्यवहार के, नये प्रतिमानों को वही ढालेगे। किसी भी प्रगतिशील देश में सबसे अधिक सम्भावना इसी बात की होती है कि लोगों के सोचने, अनुभव करने और काम करने के ढंग को युवा वर्ग, विशेष रूप से शिक्षित युवा वर्ग ही प्रभावित करेगा। शिक्षित युवा-वर्ग को इसलिए चुना गया है कि बहुधा उसी को वास्तविक अथवा सम्भावी नेतृत्व प्रदान करनेवाला और प्रगति का ध्वजा वाहक और अधिक सुन्दर सभ्यता का निर्माता माना जाता है। यदि इसका एक अंश भी सत्य है तो यह जानना आवश्यक है कि वे क्या सोचते हैं और उनके विचारों तथा उनके विश्वासों में क्या परिवर्तन हो रहे हैं।

चूंकि भारत में बहुत ही कम स्त्रियां ऐसी है जो उस अर्थ में शिक्षित हों जिस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग इस अध्ययन में किया गया है इसलिए सरसरी तौर पर विचार करनेवाले को ऐसा प्रतीत हो सकता है कि अध्ययन के उद्देश्य के लिए वे सर्वथा महत्त्वहीन हैं। यद्यपि संख्या की दृष्टि से उनका महत्त्व अपेक्षाकृत कम है फिर भी गुण की दृष्टि से वे बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त वे जनसंख्या में एक बढ़ता हुआ भाग हैं। और चूंकि शिक्षित श्रमजीवी स्त्री एक सशक्त आर्थिक, मनोवैज्ञानिक, राजनीतिक तथा समाजशास्त्रीय बल बन चुकी है, इसलिए उसके परिवार पर और उस समाज पर जिसका वह एक अंग है, उसका और विशेष रूप से उसकी अभिवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक-सामाजिक आर्थिक प्रभाव विशेष रुचि तथा महत्त्व का विषय है और इसलिए उसकी छानबीन करना आवश्यक है। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि काफी वर्षों के दौरान शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियों में होनेवाले परिवर्तनों का आज तक कोई विशेष अध्ययन नहीं किया गया है। वर्तमान अध्ययन ऐसे ही प्रयास का— शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू नारी की अभिवृत्तियों की सामान्य दिशा और उनमें होनेवाले विस्तृत परिवर्तनों को निर्धारित करने के प्रयास का— प्रतिफल है।

इस अध्ययन का विषय भारत में श्रमजीवी नारी के विचार जगत के वे क्षेत्र हैं जिनके बारे में अब तक कोई खोज नहीं की गयी है विशेष रूप से प्रेम तथा सेक्स के

बारे मे, जिनके बारे मे विचार व्यक्त करना भारत मे दीर्घकाल से वर्जित माना गया है।

विचारो, विश्वासो और मूल्यो पर देश के सामाजिक सास्कृतिक तथा राजनीतिक आर्थिक वातावरण का प्रभाव पडता है और दूसरी ओर वे उस वातावरण को प्रभावित भी करते है और भारतीय समाज जैसे लोकतन्त्रीय समाज मे तो शब्द तथा अभिव्यक्त मत और भी महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। यद्यपि इनमे से कुछ प्रत्यक्ष व्यवहार के घटित होने से पहले कुछ अभिवृत्तियो का बदल सकते हैं पर अन्य नही करते, और इससे उनके सामाजिक व्यवहार के प्रत्याशित प्रतिरूपो का चित्र प्राप्त होगा। "किसी भी समाज के नैतिक मानदड उसकी स्त्रियो के हाथ मे होते है। यह बात सेक्स-सम्बन्धी नैतिक मानदडो के बारे मे विशेष रूप से सच है' (घुर्ये, 1956, पृष्ठ 9)। प्रेम, विवाह तथा सेक्स के प्रति स्त्रियो की अभिवृत्तिया विवाहो, वैवाहिक सम्बन्धो और समाज के सेक्स सम्बन्धी नैतिक मानदडो के न केवल प्रचलित प्रतिरूप प्रतिविम्बित करेंगी बल्कि उनकी भावी प्रवृत्तियो की ओर भी सकेत करेंगी।

मध्यमवर्गीय शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो की अभिवृत्ति मे होनेवाले परिवर्तनो का अध्ययन इसलिए किया गया कि इस वर्ग मे परिवर्तन की प्रक्रियाएँ—उभरती हुई प्रवृत्तिया—नये सामाजिक सम्बन्ध व्यक्तियो को जन्म देती है जिनका प्रभाव धीरे धीरे सामाजिक परिवर्तनो की प्रक्रिया में प्रवेश कर जाता है और उसकी गति को वेग प्रदान करता है। मध्यमवर्गीय बुद्धिजीवियो के मत पर ही विविधतम तथा परस्पर विरोधी मूल्यो का प्रभाव पडता है और उन्ही का मत समाज मे परिवर्तन की गति तथा दिशा का निर्धारण करता है। किर्कपैट्रिक ने पारिवारिक परिवर्तन के अपने अध्ययन के लिए मध्यम तथा उच्च मध्यम वर्गों के पात्रो को यह मानकर चुना कि बहुधा परिवार मे परिवर्तनो का सूत्रपात इसी स्तर पर होता है। और जो कुछ यहा से हो रहा है उससे इस बात का सकेत मिल सकता है कि समाज व्यवस्था के अन्य स्तरो मे आगे चलकर क्या परिवर्तन हो सकते हैं (किर्कपैट्रिक, 1963, पृष्ठ 144)। किर्कपैट्रिक ने जो कुछ परिवार मे परिवर्तन के बारे मे कहा है वही अभिवृत्तियो मे परिवर्तन के बारे मे भी कहा जा सकता है। और इसीलिए और भी अभिवृत्ति परिवर्तन के इस अध्ययन के लिए मध्यमवर्गीय श्रमजीवी महिलाओ को चुना गया।

बदलते हुए सामाजिक व्यवहार और भावी सेक्स-सम्बन्धी तथा वैवाहिक व्यवहार की प्रवृत्तियो का पता लगाने के लिए प्रेम, विवाह तथा सेक्स जैसी आधारभूत तथा महत्त्वपूर्ण समस्याओ के प्रति बदलती हुई अभिवृत्तियो का अध्ययन बहुत महत्त्वपूर्ण है।

हिल (1964), एडवर्ड्स (1967), लासवेल (1970) और व्हाइटहर्स्ट (1969) आदि अनेक परिवार सिद्धान्तकारो ने सकेत दिया है कि "भविष्य के परिवार मे होनेवाले परिवर्तनो के विशिष्ट लक्षण होंगे। अधिकाधिक तलाक अधिक विवाह-पूर्व ससर्ग, सेक्स गत भूमिकाओ मे अधिक समानता, श्रम के विभाजन मे अधिक नमनीयता और सेक्स क्रिया मे भाग लेने मे अधिक समानता" (व्हाइटहर्स्ट और प्लाट, 1969,

पष्ठ 76) । यद्यपि इन सभी अध्ययनो का सम्बन्ध पश्चिमी देशो से है और भारत म अभी तक इस प्रकार के कोई विस्तृत अध्ययन नही किये गये है, फिर भी इस अध्ययन मे प्रयास किया गया है कि इनम से कुछ प्रवृत्तिया का सम्बन्ध उस आधार सामग्री के साथ जोडा जाये जो प्रेम विवाह तथा सेक्स के प्रति प्रत्यक्ष रूप से देखी गयी उनकी अभिवत्तियो के प्रसग मे शिक्षित श्रमजीवी युवा स्त्रिया के इस अध्ययन मे प्राप्त हुई है।

इस अध्ययन मे कुछ ऐसे उपादाना को निधारित करने का भी प्रयास किया गया है जो सभवत इन अभिवत्तियो के निर्माण मे योगदान करते हैं और उन पर प्रभाव डालते हैं। अर्थात इस अन्वेपण का उद्देश्य इस बात का अध्ययन करना भी है कि जाच के इस आयाम के क्षेत्र मे आनेवाले विपया के बारे मे किसी व्यक्ति क मता को कौन से तत्त्व निर्धारित करते है। सक्षेप मे, इस अध्ययन का उद्देश्य है—उनकी अभिवृत्तियो मे परिवतन की प्रवत्तियो और उनके सामाजिक मनोवैज्ञानिक निर्धारका की छानबीन करना, और उन प्रक्रियाओ का विश्लेपण करना जिनके माध्यम से सास्कृतिक मूल्यो के साथ सामाजिक सम्बन्धो की परस्पर क्रिया प्रतिक्रिया होती है और अभिवत्तियो के विविध प्रतिरूप उत्पन्न होते हैं। इसकी परिधि मे उनकी अभिवृत्तिया के सामाजिक तथा मनोवज्ञानिक प्रभावा का अध्ययन भी सम्मिलित है, और इस बात का भी कि व स्त्रियो के उस समूह विशेप के जीवन दशन को किस प्रकार प्रभावित करते ह।

किसी अभिवत्ति के सामाजिक मनोवज्ञानिक अध्ययन के लिए पहले यह आवश्यक होता है कि हम यह पता लगायें कि किसी विपय विशेष के बारे मे किसी व्यक्ति के विश्वास और आस्थाएँ क्या है और यह पता लगाने के लिए हमें यह मालूम करना होगा कि कुछ समस्याओ अथवा वस्तुओ के बारे म उसकी भावनाएँ, विचार और समझ क्या है। सक्षेप म, आवश्यकता केवल यह जानन की है कि विशिष्ट वस्तुओ अथवा व्यक्तियो के बारे म उसका क्या मत है, क्योकि मत "अभि यक्त अभिवत्ति' होते है और वे अभिवत्तिया के सूचक मान जा सकते हैं। अभिवृत्तिया का वह मुख्य पक्ष जिसे नापने मे समाजशास्त्रियो की रुचि होता है, वह है जो भापा के माध्यम से अभिव्यक्त मता का रूप धारण करता है। हमारा सम्बन्ध मतो का रूप धारण करनेवाले मौखिक व्यवहार और व्यवहार के अ य रूपा क साथ उन मता के सभावित पारस्परिक सम्बन्ध का मापने की प्रणालियो से है।

अभिवृत्तिया तथा मता की थाह लन के प्रयास समाज को उत्पत्ति के समय से ही किये जा रह हैं। छोट छोट समूहा के बीच यह काम अनौपचारिक वैयक्तिक सम्पक से किया जा सकता है। सचार के द्रुतगामी साधना के विकास और उसके फलस्वरूप उत्पन्न होनेवाली सुदूरस्थ समूहा की परस्पर निभरता के कारण मतो का मापन की अधिक औपचारिक तथा सुव्यवस्थित प्रणालियो की आवश्यकता पैदा हुई है। इस अनुभूति न कि विश्व के विभिन्न पक्षा के बारे म व्यक्ति की भावना के रूप मे अभिवृत्तिया कदाचित इस विश्व की केवल सज्ञानात्मक समझ की अपेक्षा व्यवहार को अधिक हद

तक निर्धारित करती है, अभिवत्ति-मापन के महत्व तथा बहुमूल्यता को बहुत स्पष्ट बना दिया है।

सभी परिवतनशील मनोवैज्ञानिक तत्वो की तरह विश्वासों तथा अभिवृत्तियो के मापन मे विलक्षण और बहुधा अत्यन्त जटिल समस्याए सामने आती हैं। उनका मापन आवश्यक रूप से परोक्ष होता है। दोना को व्यक्ति के व्यवहार तथा तात्कालिक अनुभवो से निकाले गये निष्कर्षों के आधार पर परोक्ष विधि से ही मापा जा सकता है। चूकि उन्ह परोक्ष विधि से ही मापना होता है, इसलिए यह स्पष्ट है कि इन मापनो के लिए कई अलग अलग प्रणालिया हो सकती हैं। इसके लिए दो प्रकार की प्रणालियाँ है। एक तो है किसी व्यक्ति के प्रत्यक्ष अ मौखिक तथा मौखिक व्यवहार का किसी स्थिति विशेष के प्रसग मे अध्ययन करना और इस प्रकार उसकी अभिवत्तियो का अनुमान लगाना। प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनो ही प्रकार की अनेक प्रणालिया हैं जिनकी सहायता से इनको मापा जा सकता है। अन्य प्रणालियो के ब्योरे मे जाने की आवश्यकता नहीं है क्योकि यहा हमारा अभीष्ट केवल यह जानना है कि इस अध्ययन के लिए कौन-सी प्रणाली अपनायी गयी है।

*यद्यपि अभिवृत्तिया का अनुमान प्रत्यक्ष व्यवहार से लगाया जा सकता है,* फिर भी एक सुव्यवस्थित सामाजिक-मनोवैज्ञानिक अध्ययन मे अभिवृत्तियो के सूचको के रूप मे अभिव्यक्त अथवा समर्थित मतो की ओर ध्यान देना पडता है। लेखिका ने उत्तरदाताओ द्वारा अभिव्यक्त मता और विश्वासो और भावनाओ को विभिन्न वस्तुओ और अपने सहित विभिन्न व्यक्तियो के प्रति उनकी "अभिव्यक्त अभिवृत्तियो" के रूप मे ग्रहण किया है। चूकि अचेतन प्रावरोध, औचित्य-स्थापना और निराधार कल्पनाएँ अभिवत्तियो की निष्कपट अभिव्यक्ति मे बाधक हो सकती है, इसलिए इस अध्ययन म अन्वेषण तथा विश्लेषण के लिए पुनरावृत साक्षात्कार और व्यक्ति अध्ययन की प्रणालियाँ अपनायी गयी। उन्ह मुख्यत इसलिए चुना गया है कि प्रचलित अभिवृत्तियो के सामाजिक मनोवैज्ञानिक निर्धारको का अध्ययन नितान्त आवश्यक है और यह तभी किया जा सकता है जब "पात्र' को अपने बारे मे—अपने जीवन, अपनी रुचिया, अपनी अरुचियो, अपने विश्वासा, मतो तथा विभिन्न वस्तुओ के सम्बन्ध मे अपनी भावनाओ के बारे मे—*बात करने पर प्रवत्त किया जाय।*

लोगो के सामान्य व्यवहार के आधार पर हम निरन्तर उन पर कुछ अभिवत्तियाँ आरोपित करते रहते है। किसी व्यक्ति के पिछले व्यवहार के बारे म और उन परिस्थितियो के बारे म जिनम वह व्यवहार किया गया, जितनी ही पूण जानकारी होगी, उतना ही सही-सही हम उसकी अभिवत्तिया को समझ सकेंगे। अभिवत्तियाँ या तो व्यक्ति के व्यवहार म प्रतिबिम्बित हो सकती हैं या उसके तात्कालिक अनुभव मे। इसलिए मापन के लिए व्यवहारात्मक विश्लेषण और अन्तर्निरीक्षणात्मक विश्लेषण दोनो ही का प्रयोग किया जा सकता है। इस अध्ययन के लिए लेखिका ने व्यक्ति अध्ययन प्रणाली को चुना है जो अपने काय के लिए कई अन्य प्रणालियो का प्रयोग करती है।

अभिवृत्तियों का अध्ययन तथा मापन मुख्यतः गणितीय परिमाणन के माध्यम से नहीं बल्कि गुणात्मक आधार सामग्री के माध्यम से किया गया है।

"सामाजिक विज्ञानों में व्यक्ति अध्ययन की प्रणालीतन्त्रीय मापकता' के बारे में हेटिन के शोध-ग्रन्थ के सार में यह मत व्यक्त किया गया है

> भौतिक वैज्ञानिक जिस गणितीय वस्तुनिष्ठता और आनुभविक परिमाणन पर आग्रह करते हैं शायद उससे प्रतिस्पर्द्धा करने के सामाजिक वैज्ञानिक के उत्साह के कारण साधना ने सैद्धान्तिक तथ्य को धूमिल कर दिया है। भौतिक विज्ञान के कठोर वैज्ञानिक अनुष्ठान और उसके साथ आधार-सामग्री के प्रक्रमण की इलेक्टानिक विधि के उद्भव के फलस्वरूप सारा ध्यान प्रणालीतन्त्रीय साधना पर ही दिया जाने लगा है और नियमोवेषी उपागम पर आवश्यकता से अधिक बल दिया जाने लगा है जबकि मानव-व्यवहार को समझने के लिए व्यक्त्यंकन उपागम के महत्त्व को कम करके आंका जा रहा है। वास्तव में इन दोनों उपागमों का अन्तर मनमाना और ऊपर से थोपा हुआ होता है, इसलिए यह द्विभाजन उत्पन्न होता है (हेटिन, 1970 पृष्ठ 452–ए-1)।

सामाजिक विज्ञानों में प्रगति के लिए व्यक्ति अध्ययन के बहुविध उपयोगों तथा योगदानों का उल्लेख करते हुए यह तर्क दिया जाता है

> गोट्शाल्क, क्लुकहोह्न और ऐंजेल ने यह सिद्ध किया है कि सामाजिक विज्ञानों में प्रगति के लिए व्यक्ति अध्ययन प्रणाली के बहुविध उपयोग तथा योगदान हैं। गैर-आदर्शक व्यवहार के अध्ययन में व्यक्ति अध्ययन और वैयक्तिक दस्तावेजों का विशेष महत्त्व होता है क्योंकि उनसे अनुसंधानकर्ता को ऐसी बहुमूल्य आधार सामग्री मिलती है जिस तक अन्यथा उनकी पहुंच न हो सकती। कुछ भी हो सामाजिक विज्ञानों का वास्तविक लक्ष्य केवल विश्लेषण करना, चीजों को अलग अलग कोटियों तथा वर्गों में बाँट देना नहीं बल्कि उनको समझना है।
>
> (हेटिन, 1970, पृष्ठ 492–ए–1)।

आगे चलकर यह भी तर्क दिया गया है

> सैद्धान्तिक स्थापनाएँ उस समय तक अपूर्ण रहती हैं जब तक वैयक्तिक जीवनों के साथ उनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध न स्थापित किया जा सके। सिद्धान्त की तरह ज्ञान भी व्यक्ति के अनुभवों से अलग रहकर शक्तिहीन हो जाता है, और वह तभी सप्राण हो उठता है जब उसे व्यक्ति अध्ययन के माध्यम से प्राप्त की गयी व्यक्त्यंकन सम्बन्धी समझदारी से पुष्ट किया जाये (हेटिन 1970 पृ० 492–ए–2)।

इस प्रणाली को इसलिए चुना गया है कि 'किसी आदमी का व्यक्ति अध्ययन, जिसमें उसके अपने जीवन की कहानी भी शामिल होती है उसकी आन्तरिक आकांक्षाओं

उसकी जीवन पद्धति, उसे क्रियाशील बनाने वाले अभिप्रायों, 'उसे विफल करनेवाली या उसे उत्प्रेरित करनेवाली अथवा चुनौती देनेवाली बाधाओं और उसे सफलता प्रदान करनेवाली और निर्देशित करनेवाली उस सृजनात्मक बुद्धि (पोटरफील्ड, 1941, पृष्ठ 6) का रहस्योद्घाटन करने की क्षमता रखता है कि वह किसी दत्त सामाजिक परिस्थिति में एक विशिष्ट व्यवहार अपनाये (यंग, 1956, पृष्ठ 231)। और चूंकि विचाराधीन विषय के लिए इस प्रकार की छानबीन आवश्यक है, इसलिए व्यक्ति अध्ययन प्रणाली के बारे में यह समझा गया है कि वह अभिवृत्तियों का सबसे अधिक रहस्योद्घाटन करती है और वही सबसे अच्छी प्रणाली है जिसका प्रयोग किया जा सकता है। यह प्रणाली एक प्रकार से प्रेक्षण प्रश्नावली-साक्षात्कार की सम्मिलित प्रणाली है।

जांच को स्पष्ट और अध्ययन के लिए उपयुक्त बनाने के प्रयास में व्यक्ति-अध्ययन प्रणाली से सुविधा हुई। व्यक्ति अध्ययन प्रणाली से लेखिका ने न केवल दो विभिन्न समयों पर स्त्रियों की अभिवृत्तियों में परिवर्तन का पता लगाया बल्कि एक ही स्त्री के जीवनवृत्त का और इस बात का अध्ययन करके कि उसके जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में—एक बच्ची के रूप में, एक लड़की रूप में, जीविकोपार्जन से पहले और जीविकोपार्जन करते हुए—उसकी अभिवृत्तियां किस प्रकार भिन्न थीं, उस स्त्री की अभिवृत्ति में परिवर्तन का भी पता लगाया। साक्षात्कार के दौरान ऐसे तथ्यों का पता लगाना संभव हो सका जो केवल प्रश्नावली प्रणाली से कदाचित न मालूम किये जा सकते।

अभिवृत्तियों का अध्ययन करने के लिए अनिर्देशित जीवन वृत्त प्रणाली नहीं बल्कि 'निर्देशित' व्यक्ति अध्ययन प्रणाली अपनायी गयी, जिसमें नियंत्रित तथा व्यवस्थित साक्षात्कारों का आयोजन किया गया जिनमें इस उद्देश्य के लिए तैयार किये गये विस्तृत साक्षात्कार कार्यक्रम के मानक प्रश्नों के उत्तर समरूप ढंग से अंकित किये गये। रोजर्स, मेयो, कोमारवोस्की, किंग आदि जैसे सामाजिक वैज्ञानिकों ने ऐसी समस्याओं के अध्ययन के लिए, जो विचाराधीन है, बहुत फलप्रद और उपयोगी पाया है।

यह पुस्तक भारत में युवा शिक्षित हिंदू श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियों में होनेवाले परिवर्तनों की छानबीन करने का प्रयत्न है। यह बताने से पहले कि नमूने किस प्रकार चुने गये और आधार-सामग्री किस प्रकार एकत्रित की गयी तथा किस प्रकार उसका विश्लेषण किया गया, लेखिका कुछ शब्दों की संक्षिप्त व्याख्या दे देना चाहती है, जिन रूपों में इस अध्ययन के लिए उनका उपयोग किया गया है। इस अध्ययन में 'परिवर्तन' का अर्थ होगा विभिन्नता—एक अभिवृत्ति की जगह दूसरी अभिवृत्ति का प्रतिस्थापन। 'अभिवृत्ति' की संक्षिप्त परिभाषा किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति अनुकूल अथवा नकारात्मक ढंग से प्रतिक्रिया करने की प्रवृत्ति के रूप में की जा सकती है। इस अनुसंधान के लिए "युवा" का अर्थ है 20 से 40 वर्ष तक की स्त्रियां जिनमें विवाहित और अविवाहित दोनों ही प्रकार की स्त्रियां शामिल हैं। "शिक्षित" की

परिधि म वे स्त्रियाँ आती ह जिनकी न्यूनतम शक्षिक योग्यता मट्रिकुलेशन, हायर सेकेंडरी या आई० एस-सी० स्तर की हो। 'श्रमजीवी स्त्रियो' से अभिप्राय उन सभी स्त्रियो स है जो 'सफेदपोश" नौकरियो म जीविकोपाजन कर रही हैं—अध्यापन, चिकित्सा, पत्रकारिता और हर स्तर तथा हर प्रकार की दफतरा की नौकरियाँ। यद्यपि "हिन्दू" शब्द की निश्चयात्मक परिभाषा देना इतना सरल नही है, फिर भी इस अध्ययन मे उन सभी स्त्रियों को 'हिन्दू' माना जायगा जिन्ह 1955 के हिन्दू विवाह अधिनियम मे हिन्दू की कोटि म सम्मिलित किया गया है—अर्थात जो लोग जम्मू तथा कश्मीर को छोडकर भारत म अधिवासी हैं उनम से जो भी व्यक्ति मुस्लिम, ईसाई, यहूदी अथवा पारसी नही है उसे हिन्दू समझा जायेगा। इसम सिख, बौद्ध तथा जैन सम्मिलित हैं।

अनुसन्धान स्थन के लिए दिल्ली और आगरा का चुना गया क्योकि इन दो स्थाना म मिलाकर विभिन्न सामाजिक सास्कृतिक तथा सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमियो वाली हर प्रकार की शिक्षित श्रमजीवी महिलाएँ मिल सकती थी। इसके अतिरिक्त, इन दो स्थाना को चुनन मे उनकी अभिवत्तियो पर दिल्ली जसे सवदशीय नगर और उत्तर प्रदेश के आगरा जसे प्रातीय नगर मे काम करन के प्रभाव का फलप्रद तुलनात्मक अध्ययन करने का अवसर उपलब्ध हो गया।

## नमूने का स्वरूप

यह सच है कि 'प्रतिनिधि नमून को चुनना आज सामाजिक सर्वेक्षण के काम का शायद अकेला सबसे कठिन पक्ष है, और यह बात सक्स तथा विवाह के क्षेत्र म सर्वेक्षण के प्रसग मे विशेष रूप स सार्थक है' (चेसर 1969, पृष्ठ 23), परन्तु इस अध्ययन मे एक पूणत प्रतिनिधि नमूने का होना न तो व्यावहारिक समझा गया और न नितान्त आवश्यक ही। यह व्यावहारिक इसलिए नही था कि अकेले एक आदमी के लिए नमूने की जाच करने म बहुत अधिक समय और पैसा लगता है। इसके अतिरिक्त यह बहुत आवश्यक भी नही था क्योकि ऐस गुणात्मक अध्ययन मे, जिसम अध्ययन का उद्देश्य जितना स्वय अभिवत्तिया का विश्लेपण करना हो उतना ही विशिष्ट व्यक्तिया की अभिवत्तियों को प्रभावित करनेवाले उपादाना के प्रसग म उनस सम्बन्धित व्यारे की बाता का विश्लेपण करना भी हो, शुद्धत प्रतिनिधि नमून का होना न तो आवश्यक है और न व्यवहारत सम्भव ही। फिर भी इस बात का पूरा प्रयत्न किया गया कि परिस्थितिया के अनुसार यथासभव बड स बडा और अधिक स अधिक प्रतिनिधि नमूना प्राप्त किया जाय।

चेसर का कहना है कि यह बात "आश्चयजनक भल ही प्रतीत हो कि विश्वस्त अनुमान अपेक्षाकृत छोटे नमूना पर आधारित हो सकत हैं फिर भी यह बात सत्य है (चेसर 1969, पृष्ठ 11)। चूकि अध्ययन एक समजातीय समूह क बारे मे था और विश्लेषण के लिए जो प्रणाली चुनी गयी थी वह गुणात्मक थी, इसलिए अपेक्षाकृत छोटे नमूने की ही आवश्यकता थी। इसलिए सुव्यवस्थित रूप से 500 श्रमजीवी स्त्रियो का

नमूना नीचे बताये गये ढंग से चुना गया।

पहले, दिल्ली और आगरा में काम करने की जगहों का एक नमूना सोद्देश्य आधार पर चुना गया, अर्थात, ऐसे शिक्षण संस्थान, अस्पताल और कार्यालय—निजी, सरकारी तथा अर्ध-सरकारी—चुन गये जहाँ काफी संख्या में स्त्रियाँ काम करती हों। फिर इन जगहों में काम करनेवाली अनेक स्त्रियों के बीच एक बहुत छोटी-सी प्रश्नावली बाँट दी गयी जिसमें पूछा गया था कि वे कितने वर्षों से नौकरी कर रही हैं और उनकी आयु, शिक्षा, वैवाहिक स्थिति तथा धर्म क्या है। इन स्त्रियों में से केवल उनको चुना गया जो हिन्दू थीं, कम से कम दो वर्ष से काम कर रही थीं, जिनकी आयु 20 और 40 वर्ष के बीच थी और जिनकी न्यूनतम शैक्षिक योग्यता मैट्रिकुलेशन, हायर सेकेंडरी अथवा आई० एस-सी० के स्तर की थी। केवल हिन्दू स्त्रियों को इसलिए चुना गया कि अध्ययन के लिए एक समजातीय समूह मिल सके और अध्ययन का क्षेत्र परिसीमित रह सके।

इनमें से नमूने की जाँच के आधार पर 500 स्त्रियों को चुन लिया गया। इसके बाद स्त्रियों के इस नमूने को आयु-वर्गों के आधार पर चार स्तरों में विभाजित कर दिया गया—20 से 24 वर्ष तक, 24 से 29 वर्ष तक, 29 से 34 वर्ष तक, 34 से 40 वर्ष तक और उससे अधिक। और फिर इन चार आयु वर्गों में से प्रत्येक से नमूने की जाँच के आधार पर 25-25 स्त्रियों को चुन लिया गया ताकि विस्तारपूर्वक अध्ययन करने के लिए 100 स्त्रियों का एक छोटा नमूना मिल सके। इस प्रकार अध्ययन के लिए स्त्रियों को चुनने के लिए सुव्यवस्थित बहुचरणी प्रतिचयन का सहारा लिया गया।

मानव नमूनों पर आधारित किसी भी अध्ययन में शत प्रतिशत प्रत्युत्तर पाने की संभावना बहुत कम रहती है। यह प्रायः अनिवार्य ही है कि जिन लोगों को नमूने के लिए चुना गया हो उनमें से कुछ प्रतिशत साक्षात्कार के लिए तैयार न हों। फिर भी समझा बुझाकर और धीरज से काम लेकर इन्कार करनेवालों की संख्या न्यूनतम रखने का प्रयत्न किया। औसतन साक्षात्कार करनेवाला हर प्रत्यार्थी के पास तीन बार मिलने गया। इन स्त्रियों में से केवल तीन प्रतिशत ऐसी थीं जिन्होंने अंत तक साक्षात्कार में भाग लेने से इन्कार किया। वे इस प्रकार के अनुसंधान को अपने निजी जीवन तथा गोपनीयता के क्षेत्र में अतिक्रमण समझती थीं और कभी कभी इन्होंने साक्षात्कार करनेवाले के प्रति बड़ी अशिष्टता तथा उदासीनता भी दिखायी। उसे अपमान भी सहने पड़े फिर भी उसने हिम्मत नहीं हारी और उनको साक्षात्कार के लिए सहमत करने की कोशिश करती रही। पर जब उन्होंने बार बार इन्कार किया या मिलने का वादा करके भी निश्चित समय और स्थान पर नहीं आयीं तो उनकी जगह इस काम के लिए चुनी गयी शेष श्रमजीवी स्त्रियों में से नमूने की जाँच प्रणाली से चुनी गयी दूसरी स्त्रियाँ को रख लिया गया। यद्यपि यह नमूना सर्वथा दोषरहित नहीं है, फिर भी इस बात का पूरा प्रयत्न किया गया है कि पैसे और समय की सीमाओं

के भीतर उसे यथासम्भव प्रतिनिधित्वपूर्ण बनाया जाय।

समय और परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ और बदली हुई सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों में अभिवृत्तियाँ भी बदलती रहती हैं। जिन स्त्रियों का अध्ययन किया जा रहा था उनकी अभिवृत्तियों में होनेवाले परिवर्तनों का अध्ययन करने के लिए लेखिका ने इस बात की जाँच की कि दो विभिन्न समयों पर उनकी अभिवृत्तियाँ क्या थीं। यह मुख्यतः दस वर्ष के अन्तराल से दो विभिन्न समयों पर—1959 में और 1969 में—किया गया पुनरावृत्त प्रतिनिध्यात्मक अध्ययन था। आंशिक रूप से यह एक तालिका अध्ययन था क्योंकि दस साल बाद के नमूने में भी कई वही उत्तरदाता चुने गये थे। तालिका विधि के अनेक गुणों के बावजूद अन्य रूप से केवल उसी का प्रयोग इसलिए नहीं किया जा सकता था कि तालिका में से कुछ लोग "मत सूची" में आ जाते थे और फिर एक आवश्यक शर्त यह थी कि उत्तरदाता की आयु 20 और 40 वर्ष के बीच हो। इसलिए नीचे बतायी गयी रीति से एक पुनरावृत्त प्रतिनिध्यात्मक और आंशिक रूप में अनुदैर्घ्य अध्ययन किया गया।

लेखिका ने 1956 से 1960 तक की अवधि में अपनी डॉक्टरेट की डिग्री के शोध-प्रबन्ध के लिए श्रमजीवी स्त्रियों का अभिवृत्तिक अध्ययन किया था। उस समय उसने ऊपर बतायी गयी रीति से चुने गये श्रमजीवी स्त्रियों के नमूने के जीवन वृत्तों का अध्ययन किया था और शिक्षा प्राप्त कर चुकने के बाद, नौकरी कर लेने के बाद और जीवन के अन्य अनुभवों के साथ उसी व्यक्ति की अभिवृत्ति में होनेवाले परिवर्तन का विश्लेषण किया था। लेखिका उस समय विभिन्न समयावधियों में एकत्रित की गयी सचमुच तुलनात्मक आधार-सामग्री की सहायता से बदलती हुई प्रवृत्तियों का विश्लेषण और तुलना नहीं कर सकी थी क्योंकि उससे पहले भारत में अभिवृत्तियों का विशेष रूप से प्रेम सेक्स और विवाह के प्रसंग में, कोई अध्ययन नहीं किया गया था। इस कारण एक ओर जहाँ अध्ययन रोचक और सम्बन्धी हो गया वहीं दूसरी ओर पूर्ववर्ती आधार-सामग्री के साथ कोई तुलना सम्भव नहीं हो सकी, जिससे प्रवृत्तियों की रूपरेखा तैयार करने में सुविधा होती।

विभिन्न समस्याओं के प्रति विशेष रूप से प्रेम और सेक्स के प्रति, अभिवृत्तियों के बारे में जो प्रश्न पूछे गये थे और जो आधार-सामग्री एकत्रित की गयी थी उस सबका प्रयोग लेखिका ने डॉक्टरेट की डिग्री के लिए अपने शोध प्रबन्ध में नहीं किया था। उस शोध प्रबन्ध में जो प्रश्नावली दी गयी थी उसमें वे सभी प्रश्न दिये भी नहीं गये थे जो वास्तव में पूछे गये थे। इन समस्याओं के बारे में जो आधार-सामग्री जमा की गयी थी उसे बहुत सँभालकर रखा गया था क्योंकि उस समय भी लेखिका की यह योजना और इच्छा थी कि दस वर्ष बीत जाने के बाद श्रमजीवी स्त्रियों के वैसे ही समूह को लेकर इन्हीं समस्याओं के प्रति अभिवृत्तियों का अध्ययन किया जाये। इस प्रकार 1969 में लगभग उतनी ही श्रमजीवी स्त्रियों का अध्ययन किया गया जितनी स्त्रियों का अध्ययन 1959 में किया गया था, जो उन्हीं संस्थाओं और कार्यालयों में काम कर रही थीं

और जिन्हें मूलत उसी ढंग से चुना गया था। उनकी अभिवृत्तियों में होनेवाले परिवर्तनों का अध्ययन करने के लिए लेखिका ने नमूना लेने की वैसी ही विधि के आधार पर, ठीक उसी ढंग से जैसे दस वर्ष पहले किया गया था और जिसका वर्णन ऊपर किया जा चुका है, एक और वैसा ही नमूना तैयार किया। उन्होंने श्रमजीवी स्त्रियों के इस समूल नमूने के साथ बार-बार पहले ही जैसे ढंग से साक्षात्कार किया और उनसे वही प्रश्न पूछे। उनके जीवन वृत्तों का और उनके मतों तथा दृष्टिकोणों का अध्ययन किया गया और उनके व्यक्ति अध्ययन तैयार किये गये। लेखिका ने लगभग दस वर्ष बाद अभिवृत्ति-सम्बन्धी उसी प्रश्नावली का स्त्रियों के समरूप समूह के सामने, और कभी-कभी तो उन्हीं स्त्रियों के सामने रखकर श्रमजीवी स्त्रियों के प्रत्युत्तरों की तुलना की है और इस अवधि के दौरान जो परिवर्तन हुए हैं उनकी सामान्य प्रवृत्तियों का अध्ययन किया है। दो विभिन्न समयों पर किये गये इस कालक्रमिक प्रतिनिध्यात्मक अध्ययन से भारत में शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के सोचने और चीजों को देखने के ढंग में बदलती हुई प्रवृत्तियों की सुव्यवस्थित ढंग से रूपरेखा तैयार करने में बड़ी सुविधा होती है।

## आधार-सामग्री एकत्रित करने के उपकरण

प्रस्तुत अन्वेषण में दो उपकरणों का प्रयोग किया गया है (1) एक विशद प्रश्नावली अथवा साक्षात्कार तालिका, जिसमें मुख्यत नियत उत्तर श्रेणियों वाली मदें थी। अधिकांश प्रश्नों में ऐसी मदें थी जिनके लिए लिकर्ट पद्धति के अनुरूप पाँच विभिन्न प्रकार के प्रत्युत्तरों में से किसी एक को चुना जा सकता था, जिनमें अभिवृत्तियों के मापन के लिए ये कोटियाँ थी—दृढ सहमति, सहमति, अनिर्णीत, असहमति और दृढ असहमति। ऐसा इसलिए किया गया कि इस प्रकार अभिवृत्ति की दिशा—अनुकूल अथवा प्रतिकूल—निर्धारित की जा सकती थी और साथ ही यह भी निर्धारित किया जा सकता था कि वह दिशा कितनी प्रबल है। (2) एक साक्षात्कार मार्गदर्शिका जिसमें अंशत संरचित परन्तु अधिकांशत असंरचित मदें थी।

## साक्षात्कार तालिका का निर्माण

प्रश्नावली साक्षात्कार तालिका निरूपित करते समय इस बात का प्रयत्न किया गया कि उसमें ऐसे प्रश्न सम्मिलित किये जायें जिनसे प्रेम विवाह और सेक्स के विभिन्न पक्षों के प्रति, और पूरे जीवन के प्रति, इन स्त्रियों की अभिवृत्तियों के बारे में प्रत्युत्तर प्राप्त हो सकें। प्रश्नों के वास्तविक निरूपण के लिए लेखिका ने विवाह, परिवार और सदाचार के प्रति अभिवृत्तियों के पूर्ववर्ती अध्ययनों का सामान्य सर्वेक्षण किया। और चूंकि भारत में सेक्स और प्रेम के प्रति अभिवृत्तियों के प्राय कोई भी वैज्ञानिक अध्ययन नहीं किये गये थे, इसलिए लेखिका ने अध्ययन के इस अज्ञात क्षेत्र के बारे में कुछ अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने के लिए विभिन्न कोटियों की श्रमजीवी स्त्रियों के साथ अनौपचारिक ढंग से बातचीत की। प्रश्नावली का प्रथम प्रस्तावित प्रारूप, जिसमें उससे

अधिक प्रश्न थे जितने कि वास्तव में इस्तेमाल किये जानेवाले थे, देश के कुछ प्रमुख समाज विज्ञानियों को दिखाया गया और कुछ प्रश्नों को काट देने, कुछ को नये शब्दों में ढाल देने और कुछ अन्य प्रश्न जोड देने के बारे में उनसे परामर्श किया गया। इस प्रकार विशेषज्ञों के परामर्श से परीक्षात्मक प्रश्नावली और साक्षात्कार मार्गदर्शिका तैयार की गयी। परीक्षात्मक प्रश्नावली और साक्षात्कार मार्गदर्शिका को वास्तविक परिस्थितियों में एक बार फिर परखा गया। अर्थात्, विभिन्न कोटियों की श्रमजीवी स्त्रियों पर, जैसे अध्यापिकाओं, डाक्टरों, व्यापारी स्त्रियों, दफ्तरों में काम करनेवाली स्त्रियों पर, जिन्हें नमूने में सम्मिलित किया जानेवाला था, इस प्रस्तावित प्रश्नावली और साक्षात्कार मार्गदर्शिका का पूर्व परीक्षण किया गया। उन सभी प्रश्नों को जो अस्पष्ट पाये गये या जिनके प्रत्युत्तर अनिश्चित रहे उन्हें निकाल दिया गया। जहाँ भी यह अनुभव किया गया कि साक्षात्कार के प्रवाह में बाधा पडती है वहाँ प्रश्नों के क्रम में सुधार करके उन्हें नये ढंग से व्यवस्थित किया गया। श्रमजीवी स्त्रियों से प्रश्नावली पर टिप्पणी करने, प्रश्नों की आलोचना करने को कहा गया और उनको प्रश्न जोडने, निकालने या उन्हें नये ढंग से ढालने के बारे में सुझाव देने का निमंत्रण दिया गया। उसके बाद इस पूर्व-परीक्षण के परिणामों और अनुभवों के अनुसार प्रश्नावली को अंतिम रूप दिया गया और निरूपित किया गया।

## वैधता की समस्या

कोई भी सामाजिक अनुसंधानकर्ता इस बात के बारे में पूर्णतः आश्वस्त नहीं हो सकता कि उसके परिणाम उस जन समुदाय का पूर्णतः यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है, जिससे कि उसने नमूना लिया था। वैधीकरण की समस्याओं का सभी अनुसंधानकर्ताओं को समान रूप से सामना करना पडता है, विशेष रूप से ऐसे अनुसंधान में जिसका सम्बन्ध प्रेम, विवाह और सक्स जैसी घनिष्ठतम समस्याओं के बारे में लोगों के निजी विचारों और अभिवृत्तियों से हो, जहाँ उत्तरदाता, सचेतन अथवा अचेतन रूप में, सम्भवतः हमेशा अपनी वास्तविक अभिवृत्तियाँ बताने के बजाय वे अभिवृत्तियाँ बतायें जो "सामाजिक रूप में अनुमोदित" और "अनुकूल" हों।

इस बात का पूरा प्रयत्न किया गया कि इस अनिवार्य परिसीमन को घटाकर न्यूनतम रखा जाये और इसलिए साक्षात्कार के समय ऐसा वातावरण उत्पन्न करने की कोशिश की गयी जिसमें इस बात की अधिक सम्भावना हो कि उत्तरदाता वही बात कहेंगे जिसे वे साक्षात्कार करनेवाले द्वारा उनके सामने प्रस्तुत की गयी विभिन्न समस्याओं के बारे में अपना मत समझती हों और जो कुछ वे इन समस्याओं के बारे में सचमुच अनुभव करती हों और सोचती हों। और लेखिका ने जो कुछ वे कहती, सोचते और विश्वास करते हैं उसी का उल्लेख और विश्लेषण किया है। आधार-सामग्री की वैधता की परीक्षा करने के लिए जहाँ एक ओर ऐसी मदें थीं जिनसे साक्षात्कार के दौरान उत्तर देनेवाली किसी स्त्री द्वारा परस्पर सम्बन्धित समस्याओं के बारे में दिये

गये विवरण की आन्तरिक सगतियो अथवा असगतियो का अध्ययन किया जा सकता था, वही प्रश्नावली मे प्रतिपरीक्षण के लिए भी कुछ मदें थी। इसके अतिरिक्त नीचे बतायी गयी अन्वेषण की प्रणाली ही ऐसी थी कि उससे वैध आधार सामग्री सग्रह करने मे सहायता मिली।

## अन्वेषण की प्रणाली

प्रश्नावलियाँ इन स्त्रियो को भेजी नही गयी क्योकि भारत मे प्रश्नावलियो के प्रत्युत्तर के सम्बन्ध मे कई समाज-विज्ञानियो का पिछला अनुभव बहुत निराशाजनक रहा था। आधुनिक गुजराती जीवन मे नारी के अपने अध्ययन (1945) मे जी० बी० देसाई ने, हिन्दू नारी की स्थिति के बारे मे अपने अध्ययन (1946) मे हेट ने, और विवाह और परिवार के बारे मे बदलते हुए मतो के बारे मे अपने अध्ययन (1935) मे मर्चेन्ट ने प्रश्नावलियो का प्रयोग किया था और उन्हे अपने अपने अध्ययनो के लिए क्रमश केवल 4 9 प्रतिशत, 17 1 प्रतिशत और 18 7 प्रतिशत प्रत्युत्तर मिले थे। ग्रेट ब्रिटेन मे भी चेसर सर्वेक्षण (1956) मे जितनी प्रश्नावलियाँ भेजी गयी थी उनमे से केवल 33 प्रतिशत वापस आयी थी, जबकि ग्रामनी और ब्रिटन के अध्ययन (1938) मे अस्वीकृतियो की दर 80 प्रतिशत थी। किंसे तथा अन्य लोग अपने अध्ययनो (1948, 1953) के प्रसग मे अस्वीकृतियो के प्रभावो का अनुमान इसलिए नहीं लगा सके कि उन्होने स्वैच्छिक उत्तरदाताओ का सहारा लिया था। पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त हिन्दू स्त्रियो के बारे म अपने अन्वेषण के अनुभवो के आधार पर मेहता ने भी अपने अध्ययन मे (1970, पृष्ठ 5) बताया है कि अभिवृत्तियो के बारे म किसी जाच पड़ताल मे बाद मे गहराई से लिये गये साक्षात्कार के बिना केवल प्रश्नावली का प्रयोग पर्याप्त नही होता है।

अन्य समाज विज्ञानियो के अनुभव को और एक सामाजिक अनुसन्धानकर्ता के रूप म स्वय अपने अनुभव का लाभ उठाकर लेखिका इस निष्कर्ष पर पहुची कि प्रेम, विवाह और सेक्स के प्रति अभिवृत्तियो के बारे मे आधार सामग्री प्राप्त करने का सबसे अच्छा उपाय गहन साक्षात्कार ही होगा। परिष्कृत मनोवैज्ञानिक परीक्षणो और स्वयप्रयोजन प्रश्नावलियो के उपलब्ध होने के बावजूद लेखिका की दृढ धारणा यही थी कि निजी और आत्मीय समस्याओ के प्रति उनकी अभिवृत्तियो के बारे मे सार्थक जानकारी केवल नम्रे और बार-बार आमने सामने किये गये साक्षात्कारो से ही प्राप्त की जा सकती है।

इस अध्ययन मे साक्षात्कार तालिकाओ को, जिनमे से अधिकाश मे मानवीकृत प्रश्न और उनके साथ नियत प्रत्युत्तर कोटियाँ थी, लेखिका ने प्रत्येक समक्ष साक्षात्कार के तुरन्त बाद स्वय भरा था। जिन स्त्रियो को विस्तृत अध्ययन के लिए चुना गया था उनके दुबारा साक्षात्कार करने के लिए मुक्तोत्तर प्रश्नो वाली साक्षात्कार सदर्शिका का भी प्रयोग किया गया। प्रश्नावली या साक्षात्कार तालिका और साक्षात्कार

सर्वाशिता परिशिष्ट के रूप म नही दा गयी है। इसके बजाय, उन्हें इस पुस्तक म प्रस्तुत किय गय व्यक्ति अध्ययनों के पूरे विस्तार म उत्तरदाता स पूछ गय प्रश्नों क रूप म वितरित कर दिया गया है।

पूरे नमूने म स नमूने की इकाइया व म साक्षात्कारों के दौरान यद्यपि अधिकाश समय प्रश्न के एक मानकीकृत रूप का प्रयोग किया गया था, फिर भी उत्तरदाताओं को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया गया और कभी-कभी तो उन्हें समझा-बुझाकर इसके लिए तत्पर भी करना पड़ा कि व प्रश्न का केवल सीधा सादा उत्तर देने के अतिरिक्त और कुछ ना कह। और इसस लेखिका सामाजिक मनोविश्लेषण के लिए कुछ अत्यन्त बहुमूल्य अप्रत्याशित आधार सामग्री प्राप्त कर सकी। श्रमजीवी स्त्रियों के उप परिचयन के विस्तृत अध्ययन के लिए अधिकाश साक्षात्कार इस प्रकार के थ जिन्हें मनोवैज्ञानिक 'खुलोत्तर' कहते हैं। अर्थात प्रश्न इस ढंग स पूछे गय थ कि उनका उत्तर कई शब्दों म देना पड़। उदाहरण के लिए एक प्रश्न कि 'मुझे अपने बारे म सब कुछ बताइए या 'बचपन के बाद स आप क्या कुछ करती रही हैं?" जिनसे बहुत सी ऐसी जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न किया गया जो शायद उत्तरदाता जान बूझकर न देता या जिसे देने का वह विरोध तक करता।

उन्हें यह समझा दिया गया कि इनके कोई सही या गलत उत्तर नहीं हैं और यह भी कि यह बात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि व केवल अपनी अभिवृत्तियों को व्यक्त करें उन अभिवृत्तियों को नहीं जिनके बारे म व सोचती हों कि दूसरे लोग उनका अनुमान करेंगे। उन्हें इस बात का पूरा विश्वास दिला दिया गया कि जो भी जानकारी वे देंगी वह सर्वथा गोपनीय रखी जायगी, और उनके नामों को पूर्णत गुप्त रखने का आश्वासन इस प्रकार दे दिया गया कि प्रश्नावली या तालिका के किसी भी भाग पर उनका नाम नहीं लिखा गया। चूंकि साक्षात्कर्ता और उत्तरदाता दोनों ही स्त्रियाँ थी इसलिए भी स्पष्ट उत्तर प्राप्त करने म सहायता मिली। बेन्नी, राइसमैन और स्टार (1956) ने भी इसे अधिक प्रभावी पाया।

प्रस्तुत अध्ययन म लगभग सभी (97 प्रतिशत) साक्षात्कार सफल रहे और लेखिका उनकी अभिवृत्तियों के बारे में यथासम्भव अधिकतम यथार्थ जानकारी प्राप्त कर सकी, यद्यपि उसे कठिनाइयों का सामना करना पड़ा और कभी कभी तो उसे एक ही उत्तरदाता के पास कई कई बार जाना पड़ा, तब जाकर वह उसके प्रश्न के बारे म संतुष्ट हुआ। कुछ सकोचशील और शात स्वभाव के उत्तरदाता अपनी अभिवृत्तियों के बारे म, विशेष रूप स सेक्स के प्रति कुछ भी बताने को तयार नहीं होते थे और वाछित घनिष्ठता स्थापित करने के लिए ताकि लेखिका उनकी अभिवृत्तियों का पता लगा सके, अत्यन्त सौहार्दपूर्ण और मित्रतापूर्ण वातावरण उत्पन्न करना पड़ता था कभी कभी ऐसा भी होता था कि लेखिका का पाला किसी बहुत ही वाचाल पात्र स पड़ जाता था और उसे बड़ी चतुराई से उन्हें इस प्रकार अभीष्ट की सीमा म रखना पड़ता था कि बातचीत म उनकी पूरी रुचि भी बनी रहे।

उत्तरदाता के साथ बेहतर सौहाद स्थापित करने के लिए लेखिका ने प्रश्नो को और अधिकांश प्रश्नों के क्रम को लगभग कंठस्थ कर लिया था। इससे उसे इस बात में बहुत सहायता मिली कि वह बात करते समय उत्तरदाता की ओर देखती रह सके और प्रश्नो को पढ़ने के लिए अनावश्यक और ऊटपटाँग ढंग से बीच में रुकने के बजाय बातचीत का क्रम निरंतर बनाये रख सके।

अधिकांश उत्तरदाता स्त्रियां इस बात के बारे में बहुत सतर्क थी कि साक्षात्कर्ता कहीं उनकी बातचीत को टेप न कर ले या उनके उत्तरों को लिखित रूप में दर्ज न कर ले। इसलिए व्यवसाय, आयु, नौकरी करने की अवधि आदि जैसे वस्तुपरक प्रश्नो को छोड़कर अन्य सभी प्रश्नों को उत्तर कोटियों को साक्षात्कर्ता ने या तो इस ढंग से अंकित किया कि उत्तरदाता देख न पायें या फिर उन्हें साक्षात्कार के तुरन्त बाद दर्ज कर लिया गया। साक्षात्कार की ब्योरे की बातें और उत्तरदाताओं की कही हुई विशिष्ट बातों को दर्ज करने के लिए लेखिका भागकर पास के किसी रेस्टोरां या पार्क में जाकर बैठ जाती थी और पूछे गये प्रश्नों के प्रत्युत्तर लिख लेती थी।

यह मानना होगा कि एक बार सौहाद स्थापित हो जाने के बाद उनमें से अधिकांश ने बहुत सहयोग का परिचय दिया और लेखिका पर पूरा भरोसा करके उसे सब बातें बतायी। फिर भी विशेष रूप से प्रेम तथा सेक्स के बारे में अपने विचार व्यक्त करने में श्रमजीवी स्त्रियों के दोनों नमूनों के बीच संकोच की मात्रा के मामले में बहुत अन्तर था। सामान्यतः जिनका इंटरव्यू दस वर्ष पहले लिया गया था उनमें संकोच कहीं अधिक था और वे "खुलने" में कहीं अधिक समय लेती थी, जबकि जिनका इंटरव्यू दो वर्ष बाद लिया गया उनमें ऐसी स्त्रियों की संख्या कहीं अधिक थी जिन्होंने अपने विचार व्यक्त करने में अधिक संकोच नहीं किया और उन्हें इस बात पर प्रसन्नता हुई कि वे एक सहानुभूति रखनेवाले अजनबी और धीरज से बात सुनने वाले के साथ ऐसी निजी समस्याओं के बारे में खुलकर बात कर सकती है।

नमूने में से एक एक नाम को लेकर वास्तविक व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करने और उनमें से प्रत्येक का साक्षात्कार के लिए तैयार करने का पूरा प्रयत्न किया गया, भले ही इसके लिए उस व्यक्ति के पास बार बार जाना पड़ा और सम्बन्धित उत्तरदाता को जो समय और स्थान सबसे अधिक सुविधाजनक हो उसी के अनुसार अपना कार्यक्रम बनाना पड़ा। यह प्रणाली समय और धन दोनों ही की दृष्टि से महंगी तो बहुत है पर इसमें परिणाम संतोषजनक निकलते है। इस प्रकार उनसे मिलने का समय निश्चित कर लिया जाता था और भेंट के लिए उनकी पसन्द का कोई स्थान —दफ्तर, रेस्टोरां या उनका घर—तय कर लिया जाता था। उनमें से अधिकांश ने या तो अपनी काम करने की जगह पर या किसी रेस्टोरां में चाय या काफी पीते हुए ही साक्षात्कर्ता से बात करना अधिक पसंद किया।

लेखिका ने उनके घरों पर उनसे साक्षात्कार करने से यथासम्भव बचने की कोशिश की क्योंकि वहां एकान्त के लिए और परिवार के दूसरे सदस्यों की ओर से

विघ्न बाधा के बिना बातचीत करने के लिए अनुकूल वातावरण बना पाना कठिन हो जाता है। श्रमजीवी स्त्रियाँ या तो अपनी काम करने की जगह पर या किसी रेस्टोरां में, जहाँ कोई उनकी बातचीत न सुन रहा हो अधिक उपयुक्त प्रतीत हुईं क्योंकि निजी ढंग के प्रश्नों का उत्तर देते समय पूर्ण एकान्त आवश्यक होता है। ताइएरुज (1962) का भी यही अनुभव था कि परिवार के सदस्यों के सामने उत्तरदाता में अपने उत्तरों को कुछ बदल देने की प्रवृत्ति आ जाती है।

इस बात का ध्यान रखा गया कि बातचीत सर्वाधिक अवैयक्तिक विषयों और वस्तुपरक प्रश्नों से आरम्भ की जाय। उदाहरण के लिए, बातचीत उनकी काम करने की जगह, पिता के व्यवसाय किस प्रकार की शिक्षा पायी और उनकी नौकरी से सम्बन्धित प्रश्नों से आरम्भ की गयी। प्रेम, विवाह और नैतिकता जैसे आत्मपरक विषयों के बारे में उनके मतों तथा विश्वासों के बारे में केवल उस समय पूछा गया जब पर्याप्त घनिष्ठता स्थापित हो गयी और साक्षात्कर्ता में उत्तरदाता का विश्वास स्थापित हो गया। उत्तरदाता को आश्वासन दिया गया कि उसके मतों और विचारों को अनाम रखा जायेगा और उन्हें इस बात का विश्वास दिला दिया गया कि उनकी दी हुई जानकारी का उपयोग शुद्धतः अनुसन्धान के उद्देश्यों के अतिरिक्त और किसी काम के लिए नहीं किया जायेगा। ये सारी सावधानियाँ बरतने के बावजूद लेखिका को इस बात में बहुत कठिनाई हुई कि वह स्त्रियों को, विशेष रूप से अविवाहित स्त्रियों को विशेषतः सेक्स के बारे में अपने मत और अभिवृत्तियाँ व्यक्त करने के लिए तत्पर कर सके।

फिर भी, जब उन्हें साक्षात्कर्ता के निष्कपट उद्देश्यों का विश्वास हो जाता था और जब वे अपने विचार और मत व्यक्त करना शुरू कर देती थीं तो उनमें से अधिकांश बहुत ईमानदारी और स्पष्टवादिता का परिचय देती थीं और प्रारम्भिक संकोच के दूर हो जाने के बाद बहुत खुलकर बात करती थीं। उन्हें संकोच के इस आवरण से बाहर निकलने में उनकी आयु, शिक्षा व्यवसाय और वैवाहिक स्थिति के अनुसार अलग अलग समय लगता था, विशेष रूप से इस प्रसंग में कि उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि क्या है और उनका पालन पोषण तथा शिक्षा किस सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश में हुआ है और उनका समसमूह क्या है। कुल मिलाकर जिन लोगों का साक्षात्कार किया गया उनके प्रत्युत्तर बहुत अच्छे रहे और अपनी बातचीत में उन्होंने स्पष्टवादिता और मैत्री भाव का परिचय दिया जिससे लेखिका विभिन्न महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के प्रति उनकी अभिवृत्तियों का सामाजिक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर सकी। इनमें से कई साक्षात्कार विश्वास और हार्दिकता के अनुकूल वातावरण में एक से दो घंटे तक चलते रहे। इनमें से कुछ तो दो तीन घंटे से भी अधिक समय तक चलते रहे।

फिर भी, सीधे प्रश्नों के माध्यम से लेखिका उत्तरदाताओं के अवचेतन अथवा अचेतन मन में उतनी गहराई तक नहीं पहुँच सकी जितना कि वह चाहती थी और इसलिए कभी कभी उसने असंतोष भी अनुभव किया। परन्तु चूँकि इस अध्ययन का

मुख्य उद्देश्य इन समस्याओं के प्रति सचेतन अभिवृत्तियों के बारे में उनके प्रत्यक्ष ज्ञान का पता लगाना था, और चूंकि पुनरावृत्त साक्षात्कारों के दौरान उनकी बातों और वक्तव्यों में भावना तथा अन्तर्दृष्टि के सूक्ष्म भेद निकलते थ, इसलिए लेखिका ने काफी सन्तोष अनुभव किया।

अभिवृत्तियों के अधिकांश अध्ययनों का सम्बन्ध आधार सामग्री के सांख्यिकीय विश्लेषण से होता है परन्तु इस अध्ययन का सम्बन्ध मुख्यत गुणात्मक विश्लेषण से है। यह "सांख्यिकीय" अध्ययन नहीं है। इसके विपरीत यह अध्ययन युवा शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की बदलती हुई अभिवृत्तियों में कुछ प्रवृत्तियों का पता लगाने के लिए किया गया है। इस प्रकार सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक और भावात्मक मूल्यों के प्रति उनकी अभिवत्तियों म होनेवाले परिवतन का गुणात्मक ढंग से अध्ययन करने का प्रयत्न किया गया है।

यह मनोवैज्ञानिक सामाजिक अध्ययन वैज्ञानिक तथा व्यवस्थित ढंग से इस बात का पता लगाने के लिए किया गया था कि प्रेम, विवाह और सक्स के प्रति श्रमजीवी स्त्रियों के कौन-से सामान्यत स्वीकृत विश्वास और अभिवृत्तिया सत्य हैं, कौन स अज्ञान मिथ्या और भ्रामक और पूर्णत अटकलों पर आधारित हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य प्रेम, विवाह या सेक्स के प्रति किन्हीं विशिष्ट अभिवत्तियों को उचित ठहराना या उनकी निन्दा करना नहीं है। मुख्यत इसका सम्बन्ध इन अभिवृत्तियों में होनेवाले परिवतन की प्रवत्तिया और उन्हें प्रभावित करनेवाले कारकों का विश्लेषण करन से है।

चूंकि आशा यह की जाती है कि इस अध्ययन म न केवल समाजविज्ञानियों, मनोवैज्ञानिकों, अध्यापकों या पारिवारिक परामर्शदाताओं का वल्कि उन साधारण पाठकों को भी रुचि होगी जो बुनियादी महत्त्व और चिन्ता की समस्याओं के प्रति भारत में शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की बदलती हुई अभिवृत्तियों की प्रवत्तियाँ जानना चाहते है इसलिए जहा कहीं भी सांख्यिकीय पद्धति का सहारा लिया गया है उस साधारण प्रतिशत अनुपातों तक ही सीमित रखा गया है और कहीं भी उसे तालिकाओं के रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया है। वैयक्तिक साक्षात्कारों में एकत्रित की गयी जानकारी और इस प्रकार जमा की गयी आधार-सामग्री को विभिन्न अभिवृत्तियाँ और उनके सामाजिक सांस्कृतिक गति सिद्धान्त की व्याख्या करने के लिए व्यक्ति अध्ययनों के रूप में या उत्तरदाताओं के मौखिक वक्तव्यों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। और इस पुस्तक में जिन अभिवत्तियों पर विचार किया गया है उनका सामाजिक मनोवैज्ञानिक अध्ययन भी इन्हीं के आधार पर किया गया है।

इस अन्वेषण का मुख्य उद्देश्य युवा शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की कुछ अभिवृत्तियों के बारे म तथ्य प्राप्त करना और फिर उसका कार्यात्मक विश्लेषण करना था। तथ्यों का पता लगाना बहुत आवश्यक है क्योंकि 'तथ्यों के बिना जन-साधारण के मन में नाना प्रकार की निराधार धारणाए पनपती रहती हैं" (कफट, 1963),

और हमारे सामने जो कुछ आता है उसमे "आग्रहपूर्ण मत तो होते हैं पर विश्वसनीय आधार सामग्री बहुत थोडी होती है" (कासटयस, 1963)।

हमेशा दो वास्तविकताएँ होती हैं—एक है लोगा का व्यवहार और दूसरी यह है कि वे क्या साचते हैं। कभी कभी और कुछ क्षेत्रो मे अधिक महत्वपूर्ण तात्का लिक वास्तविकता यह होती है कि लोग क्या सोचते हैं। परन्तु ये दाना ही वास्तविकताएँ परस्पर-निर्भर होती हैं। चूकि लेखिका मन की वास्तविकता को भी उतना ही महत्त्व देती है, इसलिए उसने इस बात के उद्धरण देकर कि लोग कुछ चीजो के बारे मे जो कुछ सोचते हैं या अनुभव करते हैं उसके बारे मे वे क्या कहते हैं, इस बात का वर्णन और विवेचन किया है कि समाज का कोई भाग विशेष क्या अनुभव करता है या सोचता है। इस प्रकार इस अध्ययन म भारत की युवा शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो के बदलते हुए "मानसिक जगत" को प्रस्तुत किया गया है या हम यह भी कह सकते हैं कि इसमे उनकी दुनिया की "सुगध" प्रस्तुत की गयी है। इसमे पाठक को कुछ प्रमुख सामाजिक सस्थाओ के बारे म उनकी विचार पद्धति के प्रसग मे समकालीन स्थिति मे परिचित करान का प्रयास किया गया है और साथ ही पाठक का हमारे समाज की कुछ बुनियादी समस्याओ के प्रति उनकी बदलती हुई सकल्पनाओ विश्वासो और अभिवत्तियो की प्रवत्तियो से भी परिचित करान का प्रयत्न किया गया है।

इस पुस्तक का काफी बडा भाग व्यक्ति अध्ययना का या साक्षात्कारो के दौरान उत्तरदाताओ के वक्तव्यो के उद्धरणो का है जिन्हे शब्दश ज्यो का त्यो दिया गया है। इस पूरे अध्ययन मे उत्तरदाताओ के जितने भी नाम दिये गये हैं व कल्पित हैं और जिस किसी वैयक्तिक अथवा अन्य ब्योरे स उत्तरदाता को पहचानने म सुविधा होने की सम्भावना थी उसे जान बूझकर और सावधानी के साथ बदल दिया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखनेवाली आधार सामग्री प्रदान करनेवाली प्राय कोई भी आनुभविक सर्वेक्षा नही उपलब्ध थी। इस प्रकार इस अध्ययन का प्रेम, सेक्स और एक प्रथा के रूप मे विवाह स सम्बन्धित कुछ बदलती हुई अभिवत्तियो की समन्वेषी जाँच समझना उचित ही होगा।

प्रारम्भ मे यह अनुसन्धान कार्य बहुत धीमा और रोचक होते हुए भी कष्टसाध्य था। परन्तु शीघ्र ही लेखिका ने अनुभव किया कि यह कार्य आवश्यक होने के साथ ही उत्साहवर्द्धक और सन्तोषप्रद भी है।

प्रेम, सेक्स और विवाह एक-दूसरे म भिन्न हुए और परस्पर-निर्भर एसे परिवर्तनशील तत्त्व हैं कि उन पर अलग अलग विचार करना कठिन है। परन्तु प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण के लिए अगले तीन अध्यायो म इन पर अलग अलग, किन्तु अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धो के पूरे समूह के विभिन्न अगो के रूप म विचार किया जायगा।

# 2

## प्रेम—एक कालदोष ?

क्या हम प्रेम के बारे मे पर्याप्त जानकारी है ? प्रेम की सकल्पनाओ के बारे म—जो मानव-सम्बन्धो का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष और एक महत्त्वपूर्ण भावात्मक घटना है—इतना कम ज्ञात है कि हमे आश्चर्य होता है कि ऐसा क्यो है । अशत इसका कारण यह हो सकता है कि ईश्वर के प्रति आस्था की तरह प्रेम को भी वैज्ञानिक अध्ययन की पहुँच के बाहर समझा जाता था, और कुछ हद तक अब भी ऐसा ही समझा जाता है।

बोसटेट्टेन ने कई वर्ष पहले लिखा था, "कोई भी शब्द इतना अधिक नही बोला जाता है जितना कि प्रेम, फिर भी कोई विषय इससे अधिक रहस्यमय नही है । जो चीज हमे अधिक निकट से छूती है उसके बारे मे हम सबसे कम जानते हैं । हम सितारो की गति तो नाप लेते हैं पर यह नही जानते कि हम प्रेम कैसे करते है"(देखिये एलिस, 1936, पृष्ठ 136) । प्रेम एक अत्यन्त जटिल सवेग है जिसने मनुष्य को आदिकाल से उत्कृष्ट किया है, परन्तु उसके बारे मे वैज्ञानिक छानबीन अभी हाल ही म आरम्भ की गयी है । 'प्रेम और सेक्स मनुष्य की चिरस्थायी ऐतिहासिक पहेलियाँ हैं' (रेमी और वूग, 1964, पृष्ठ 7) ।

प्रेम के स्वरूप और वास्तविक अर्थ के बारे मे बहुत उलझाव हैं । इसका मुख्य कारण यह प्रचलित धारणा है कि प्रेम मूलत अज्ञात और अज्ञेय है और यह कि प्रेम का स्वरूप मनुष्य की समझ से परे है (देखिये ट्रुक्साल और मेरिल, 1947, पृष्ठ 121-130), और इस महत्त्वपूर्ण वैयक्तिक घटना के बारे मे किसी वैज्ञानिक जाँच पडताल की सम्भावना नही है । लैंटज और स्निडर लिखते हैं, 'यह विज्ञान विरोधी मत न केवल अज्ञान का बल्कि मानव-सम्बन्धो के एक महत्त्वपूर्ण पक्ष को समझने के बारे म पूर्ण निराशा का भी सूचक है" (लैंटज और स्निडर, 1969, पृष्ठ 109) । निस्सन्देह

व्यवहार विज्ञानी प्रेम के बारे मे तो जानकारी प्रदान करते हैं पर प्रेम के अनिवार्य स्वरूप के बारे मे शायद ही कभी कुछ बताते हो। यह बात समझ म आ सकती है क्योंकि प्रेम की सकल्पना एक अत्यन्त जटिल विषय है।

यद्यपि प्रेम के बारे म काफी प्रकाशित सामग्री उपलब्ध है, परन्तु प्रेम के बारे मे साहित्य का सबसे बडा भडार या तो काव्यात्मक, मानवतावादी तथा साहित्यिक है या फिर कामुक और अश्लील है और उसमे प्रेम का वणन एक आवेशपूण अनुभव के रूप म किया गया है। गूड (1959) के अनुसार कवियो तथा कथाकारों के अतिरिक्त वात्स्यायन, ओविड, कपैलैनस और अन्य लोगा ने जो पुस्तकें लिखी हैं व यूनाधिक रूप मे 'कसे करें" कोटि की पुस्तके हैं जिनमे यह बताया गया है कि प्रेम के सम्बन्धा मे व्यक्ति का आचरण किस प्रकार का होना चाहिए और यह कि काम क्रीडा म दूसरे पक्ष को कसे सन्तुष्ट किया जाय। ऐसी रचना शायद ही कभी मिलती है जिसम प्रेम की ओर गम्भीर सामाजिक मनोवैज्ञानिक दष्टि से ध्यान दिया गया हो।

कोल्ब (1948, पृष्ठ 451 456) और वाईगल (1951, पृष्ठ 326 334) जसे कुछ समाजशास्त्रियो ने यह सिद्ध किया है कि हमारे समाज म प्रेम के हितकर प्रभाव होते हैं। गूड (1959, पृष्ठ 38 47) कुछ लेखको की प्रस्तुत की हुई ऐसी प्रस्थापनाओ का उल्लेख करते हुए जिनम बताया गया है कि प्रेम के सम्बन्ध किन परिस्थितियो म उत्पन्न होते हैं लिखते हैं कि प्रेम को जन्म देनेवाली परिस्थितियो की अधिकाश व्याख्याएँ मनोवैज्ञानिक है जिनका स्रोत फ्रायड (1922, पृष्ठ 72) के इस मत मे मिलता है कि 'लक्ष्य-कुठित सेक्स' ही प्रेम है। उदाहरण के लिए यही विचार वालर (1938, पृष्ठ 189 192) ने व्यक्त किया है, जो कहते हैं कि प्रेम एक आदर्शीकृत आवेश है जो सेक्स की विफलता से विकसित होता है। यह प्रस्थापना व्यापक रूप से स्वीकार की जाती है यद्यपि इसे कुछ भोंडे रूप मे प्रस्तुत किया गया है और एक सामान्य व्याख्या के रूप म सही भी नही है।

फ्रायड यह धारणा उत्पन्न करते हैं कि प्रेम सेक्स की इच्छा का दमन करन से प्रसगवश उत्पन्न होनेवाली काइ चीज है, परन्तु सक्स जन्य प्रेम से परे भी ता कुछ प्रेम होते हैं। चसर कहते हैं कि हमारी मूल प्रवत्तिया को 'मोटे तौर पर मे तीन श्रेणिया म विभाजित किया जा सकता है अह प्रवत्तिया, जसे आत्म परिरक्षण सक्स-प्रवृत्तियाँ जिनम मातत्व की प्रवत्ति शामिल है, और सामाजिक प्रवत्तियाँ जिनमे मनुष्य के प्रसग मे परोपकार की भावना सम्मिलित है" (चेसर 1964, पृष्ठ 156)। इससे पहले वह मत व्यक्त करते हैं, "शताब्दिया स नीतिवादी प्रेम और सक्स के बीच अतर करने की समस्या को हल करने का प्रयत्न करत रहे हैं। प्रेम का शुद्धत आध्यात्मिक और इसलिए सच्चरित्रता का परिचायक समझा जाता था। सक्स की इच्छा से दूषित हा जान पर उसे यदि दुष्टता का परिचायक नही तो सन्दिग्ध अवश्य समझा जान लगता था (चसर 1964 पृष्ठ 7)।

पहली बार सोचन पर तो प्रेम और सेक्स दोना एक ही चीज प्रतीत हा सकत

हैं। पर हो सकता है कि ऐसा न हो। दोनों की परिभाषाएँ इस उलझाव को दूर कर सकती हैं, यद्यपि इनकी परिभाषा करना बहुत कठिन है। प्रेम ऐसी जटिल भावना-मनोग्रंथि है कि कोई भी परिभाषा इस पूरी जटिल घटना का अति सरलीकरण ही होगी। प्रेम एक स्थूल सकल्पना है जिसका अर्थ अलग अलग लोगो के लिए अलग अलग हो सकता है।

जब भी जननाग प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से उद्दीप्त होते है तब प्रेम को सेक्स स सम्बन्धित माना जाता है परन्तु जब भी प्रेम का सम्बन्ध जननागो से नही होता है तो उसे सेक्स से असम्बन्धित समझा जाता है। प्रेम केवल सेक्स प्रवत्ति का दूसरा नाम नही है जैसा कि बहुत से लोग समझते हैं। यह प्रवृत्ति तो मनुष्य मे प्रेम करने की क्षमता विकसित होने से बहुत पहले भी मौजूद थी।

जैसा कि चेसर ने समझाया है, सेक्स की प्रवृत्ति तो मानव-जाति की उत्पत्ति के समय से सदव ही रही है और पशुओ की तरह मनुष्य भी आख बन्द करके समागम के अपने आवेश का अनुसरण करता था, जो एक स्त्री सगिनी के साथ, जो कि 'शारीरिक इच्छा की पूर्ति के अनाम माध्यम' से अधिक कुछ नही होती थी, प्रजनन की अत प्रेरणा के विवेकहीन अनुसरण के रूप मे मैथुन के अतिरिक्त कुछ भी नही होता था। मानव विकास की प्रक्रिया के दौरान लगभग दस लाख वर्ष पहले मानव चेतना मे एक परिवतन हुआ जिसने मनुष्य मे दूसरो के साथ सहयोग करने तथा उनकी सहायता करने और इसके साथ ही दूसरो की चिन्ता करन के लिए अपनी तत्परता की चेतना जागृत की। इस विकास के साथ मनुष्य एक विशिष्ट स्त्री सगिनी के साथ सहचारिता की आवश्यकता अनुभव करने लगा, और वह एक अनाम मानव के साथ अधी सेक्स प्रवृत्ति की शुद्धत शारीरिक तुष्टि से अधिक किसी चीज की इच्छा करन लगा। इस उदीयमान मानव आवश्यक्ता न मथुन क्रिया मे एक नये अर्थ का समावेश कर दिया। इसने उसम एक नयी कोमलता और निष्ठा की एक नयी भावना भर दी। मानव विकास के एक निश्चित स्तर पर पहुच जाने के बाद ही मानव-जाति मे एक उदीयमान गुण तथा क्षमता के रूप मे प्रेम का उद्भव हुआ। इसका उदभव उसी ढग से हुआ जिस ढग मे मानव विकास के उच्चतर स्तर पर पहुचकर मस्तिष्क के अधिक विकसित हो जाने के बाद प्रज्ञा और तक शक्ति का उदभव हुआ (देखिये चेसर, 1964, पृष्ठ 68 और 216)। प्रेम की भावनाओ की उत्पत्ति के बारे मे अनुमान लगाते हुए स्टीफेंस लिखते हैं

> प्रेम के सवेग (या सवेगों) का उद्गम क्या है ? कुछ समाजो मे इस सवेग का सवथा, या लगभग सवथा, अभाव क्यो रहता है ? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए हम प्रेम-भावनाओ के यनितरत्र उद्गमो को जानना होगा—जो एक एसा विषय है जिसके बारे मे सिद्धान्त तो कई हैं पर जानकारी न होने के बराबर है। इस प्रकार के एक सिद्धात के अनुसार प्रेम करन की क्षमता वियोग की चिन्ता स—मां के प्रेम स

अलग हो जाने के बाल्यावस्था के भय से—उत्पन्न होती है (राइक, 1944)। एक और सिद्धान्त मे कहा गया है कि रूमानी प्रेम इडिपसीय प्रेम का—शशव काव्य मे बेटे के अपनी माता के प्रति या बेटी के अपने पिता के प्रति सेक्स प्रेम का—ही क्रम होता है (फेनिचेल 1945)। (स्टीफेंस, 1963, पृष्ठ 206)।

राइस ने रूमानी प्रेम का इतिहास जिस रूप म प्रस्तुत किया है (1960, पृष्ठ 53 56) उसका साराश देते हुए स्टीफेंस लिखते हैं

रूमानी प्रेम के आन्दोलन मे कई अवसरा पर यह भी समझा गया है कि प्रेम की निष्पत्ति सेक्स समागम के रूप मे करना प्रेम को नष्ट कर देना है। स्थायी रहने के लिए प्रेम को विवाह और सेक्स से मुक्त रहना चाहिए।

दरबारी प्रेम की प्रारम्भिक अवस्थाओ मे बहुधा सेक्स के तत्त्व का समावेश नगण्य होता था। वह मुख्यत दूर से सराहना के रूप मे होता था, जिसके साथ वीरतापूर्ण कत्तव्यपालन या किसी नये रचे हुए अथवा अच्छे ढग से गाय गये गीत के पुरस्कार के रूप मे बस माथे पर एक चुम्बन दे दिया जाता था। सूरमा और चारण, कम से कम कुछ समय के लिए, अपने प्रेम के आदशवादी तत्त्व से सन्तुष्ट रहते थे और अपने इस आत्म त्याग मे गौरव तक अनुभव करते थे।

सोलहवी शताब्दी तक पहुचते पहुचते प्रेमियो के पराक्रमो का पुरस्कार नियमित रूप से केवल माथे पर एक चुम्बन के बताये दहिक अनुग्रहो के रूप मे दिया जाने लगा।

कुछ ही शताब्दियो के भीतर यह व्यवस्था छिन्न भिन्न हो गयी और सेक्स समागम ही पुरस्कार बन गया, जिसे अनौपचारिक रूप से ग्रहण किया जाता था, सोलहवी शताब्दी के मध्य तक पहुचते पहुचत विवाहेतर ससग औपचारिक रूप से पुरस्कार के रूप म दिया जाने लगा (राइस, 1960, पृष्ठ 55 56)।

परन्तु धीरे धीरे दरबारी प्रेम की परम्पराएँ 'भ्रष्ट' हो गयी, अर्थात उसका सेक्स वाला अश कम उदात्त होता गया और प्रेम तथा सेक्स और प्रेम तथा विवाह एक-दूसरे से सम्बद्ध हो गये। (स्टीफेंस,1963,पृष्ठ 202-203)।

उसका उदगम कुछ भी हो, प्रेम नि सन्देह मनुष्य की बुनियादी तथा आधारभूत आवश्यकताओ मे स एक है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य व जन्म के समय से ही उसम प्रेम का गुण होता है और बुनियादी तौर पर हर आदमी म प्रेम की क्षमता होती है। इतना आवश्यक है कि प्रेम करने की पूववृत्ति विकसित होती है, समाजीकरण के आचरण—अर्थात् वे तरीके जिनसे समाज प्रेम के लिए किसी व्यक्ति का समाजीकरण करता है—प्रेम को जन्म देत हैं, और उसे एक निश्चित रूप प्रदान करत हैं। यह

आधारभूत क्षमता मनुष्य म उस समय तक प्रसुप्त रहती है जब तक कि उसे जागत न किया जाये और वह अपने निकटतम परिवेश मे अपने "महत्त्वपूण पात्रों" के साथ सामाजिक अत क्रिया के प्रारम्भिक अनुभवों के माध्यम से प्रेम करना सीख नही लेता।

लेकिन प्रेम है क्या ? विभिन्न विद्वानों न प्रेम की जो परिभाषाएँ और व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं, उनमे से कुछ इस प्रकार हैं "सेक्स से 'कुछ अधिक' के लिए मनुष्य की वह अनन्य लालसा अर्थात जिसे हम प्रेम कहते है' (चेसर 1964 पृष्ठ 126)।

"जब किसी व्यक्ति के लिए किसी दूसरे व्यक्ति की तुष्टि अथवा सुरक्षा उतनी ही महत्त्वपूण बन जाती है जितनी कि स्वय उसकी अपनी सुरक्षा, तब प्रेम की स्थिति का अस्तित्व होता है" (सलिवान, 1947)।

किसी व्यक्ति से प्रेम का अथ उस व्यक्ति पर अधिकार करना नही, बल्कि उस व्यक्ति को पूणत स्वीकार करना होता है। इसका अथ होता है उस व्यक्ति को सहष उसके अनन्य मनुष्यत्व का पूण अधिकार प्रदान करना। यह नही हो सकता कि हम किसी व्यक्ति स सचमुच प्रेम भी करते हों और उसे अपना दास बनाने का भी प्रयत्न करें—कानून के सहारे, या निभरता तथा आधिपत्य के बन्धनों के सहारे। जब कभी हम अनन्य प्रेम अनुभव करते हैं तब हमे यह रूपान्तरकारी अनुभव सद्भावना की क्षमता की दिशा मे प्रेरित करता है" (ओवरस्ट्रीट, 1949)।

"एक दूसरे की अखडता के परिरक्षण की परिस्थिति मे दो मनुष्यों के बीच आत्मीयता की अभिव्यक्ति प्रेम होती है" (फ्राम्प, 1947)।

स्पेंसर ने अपनी पुस्तक प्रिंसिपल्ज आफ साइकोलॉजी (मनोविज्ञान के सिद्धान्त) मे प्रेम का विश्लेषण नौ महत्त्वपूण तत्त्वों मे किया है (1) सेक्स का शारीरिक आवेग, (2) सौंदय की भावना, (3) स्नेह, (4) श्लाघा और सम्मान, (5) अनुमोदन की चाह, (6) आत्म प्रतिष्ठा, (7) स्वामित्व की भावना, (8) वैयक्तिक सीमाओं के अभाव स उत्पन्न क्रिया की विस्तारित स्वतन्त्रता, और (9) सहानुभूतियों का उत्कष। 'यह आवेश उनमे से अधिकाश प्राथमिक उत्तेजनों का जिनकी हममे क्षमता होती है, एक म मिलाकर एक विशाल समुच्चय के रूप मे ढाल देता है' (स्पेंसर, 1855)।

"प्रेम से हमारा अभिप्राय उस अत प्रेरणा के सवेगात्मक सहवर्ती से होता है जो हमे व्यक्तियों के साथ सन्निकट वैयक्तिक सम्पक की ओर ले जाती है। प्रेम के साथ कोमलता की भावनाएँ हो भी सकती हैं और नही भी" (ब्राउन, 1940, पृष्ठ 133)। फ्रायड ने बताया है कि प्रेम करने और प्रेम का पात्र बनने की इच्छा मनुष्य के लिए मुख्य अभिप्रेरणा शक्ति होती है। स्टीफेंस के अनुसार 'प्रेम", अथवा "रोमांटिक प्रेम" आगे दी हुई चीजों मे से किसी एक, कई या सभी का द्योतक हो सकता है (1) किसी एक व्यक्ति के प्रति गहरा आकषण और लगाव, जिसके साथ सेक्स की सचेतन इच्छा हो भी सकती है और नहीं भी, (2) अधिकार की भावना सेक्स-सम्बन्धी

निष्ठा और सेक्स-सम्बन्धी ईर्ष्या की क्षमता, (3) विषमतम मन स्थितियां उल्लास और कभी अवसाद, (4) प्रेम के पात्र को आदर्श समझना (देखिये स्टीफेंस, 1963, पृष्ठ 204)।

"रोमांटिक प्रेम मुख्यत सामान्य प्रेम की गहन अभिव्यक्ति होता है, जिसमें घनिष्ठ आत्मीयता की ओर समकालीन ससग प्रेम के विशेष लक्षणों से उत्पन्न होने वाली विशेषताएँ प्राप्त करने का आग्रह होता है। विशेष रूप से, रोमांटिक प्रेम इन चीजों को अतिरंजित कर देता है (क) प्रेम के सूचकों के रूप में उत्तेजना और उद्विग्नता तथा उल्लासोन्माद की भावनाओं पर निर्भरता, (ख) ससग के पात्र का आदर्श मानना और इस सम्बन्ध की निष्कलंकता (ग) व्यक्ति पर किन्हीं विरोधी दावों की तुलना में रोमांटिक प्रेम के नैतिक दावे की श्रेष्ठता, और (घ) तर्कसंगत निर्णय से अलग प्रेम पर भरोसा करना और सफल विवाह को सुनिश्चित बनाने की योजना बनाना (टर्नर, 1970 पृष्ठ 317)। रूजमाट (1940) ने भी रोमांटिक प्रेम का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है।

भारत के प्राचीन शास्त्रीय साहित्य ने ऐंद्रिय तथा रोमांटिक प्रेम को आदर्श रूप में प्रस्तुत किया है। केवल परवर्ती साहित्य में ही जाकर हमें प्रेम के प्रति कुछ अधिक नीरस अभिवृत्ति की दिशा में बढ़ने की प्रवृत्ति दिखायी देती है। फिर भी कुछ बातों की दृष्टि से रोमांटिक प्रेम कार्यात्मक होता है क्योंकि वह सवेगात्मक आवश्यकताओं की विशेष रूप से प्रेम की वैयक्तिक आवश्यकता की तुष्टि करता है। और विशेष रूप से आज की परिस्थितियों में, वह व्यक्ति को उस अत्यधिक खिंचाव तथा विकृति से मार मुक्त कर देता है जो अधिकाधिक निर्वैयक्तिक तथा व्यक्ति निरपेक्ष होती हुई औद्योगिक तथा नगरीय दिशावाली सभ्यता व्यक्ति पर थोप देती है।

प्रेम दो प्रकार का होता है एक वह जिसका सम्बन्ध विवाह से होता है और जिसमें दायित्व पर बल दिया जाता है और दूसरा जिसका सम्बन्ध सेक्स से होता है और जिसमें आवेग पर बल दिया जाता है (देखिये टर्नर, 1970, पृष्ठ 330)। टर्नर का मत है "हर प्रकार के पारिवारिक प्रेम में—वैवाहिक, पितृीय, सन्तानीय और सहोदर—अमरीका मध्य वर्गीय संस्कृति के कुछ आधारभूत लक्षण होते हैं। प्रेम (क) स्थायी, (ख) व्यापक, (ग) घनिष्ठ (घ) विश्वासमूलक (ङ) परार्थवादी, (च) अनुकम्पामय, (छ) सहमतिजन्य, (ज) अनुक्रियाशील, (झ) प्रशंसात्मक (ञ) स्वतःस्फूर्त, और (ट) मूल्यवान होता है। प्रेम के सांस्कृतिक प्रतिमान भर्त्सना द्वारा और अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत करके सिखाये जाते हैं और उनके लिए इस बात की आवश्यकता होती है कि सीखने वाला उस उपयुक्त व्यवहार तथा परिस्थितियों से परिचित हो जाये जिन पर यह प्रतिमान लागू होता हो और वह कुछ आन्तरिक संवेदना को प्रेम के संकेतक के रूप में पहचाने' (टर्नर 1970 पृष्ठ 343)।

इस प्रसंग में सैक्सटन ने बताया है

विवाह के युगल सम्बन्ध में प्रेम के चार मुख्य घटक होते हैं परार्थ

प्रेम, सहचारी प्रेम, सेक्स प्रेम और रोमांटिक प्रेम। पराथ प्रम मे दूसरे के कल्याण पर बल दिया जाता है। प्रेमी को स्वय अपने शारीरिक कल्याण की व्यवस्था करने की अपेक्षा दूसरे के लिए व्यवस्था करने म अधिक सन्तोष मिलता है। सहचारी प्रेम का सम्बन्ध उस सन्तोष से होता है जो केवल दूसरे व्यक्ति के साथ रहने से, उसकी उपस्थिति से प्राप्त होता है—साथ साथ बातें करते हुए, खेलते हुए, काम करते हुए या किसी चीज का निर्माण करत हुए। सेक्स प्रेम म प्रेम और सेक्स एक दूसरे स मिलकर एकाकार हो जाते है एक ही समय म वही व्यक्ति सेक्स का पात्र भी होता है और प्रेम का पात्र भी, जब किसी व्यक्ति को एक साथ दोनो का अनुभव होता है तभी इस घटना को सेक्स प्रेम कहते हैं। अपनी चरम परिणति म सक्स प्रेम से उत्पन्न इतना सन्तोष और इतना गहरा लगाव उत्पन्न हो सकता है जिसकी तीव्रता प्राय एक पहेली होती है।

रोमांटिक प्रेम अर्थात दूसरे को आदश मानना, कदाचित प्रेम के सवेग की सबस जटिल अभिव्यक्ति है। रोमांटिक प्रेम के मूल्य वयक्तिक होते हैं, विवाह मे मूल्य पारिवारिक होत हैं। रोमास सवथा निजी, उदवेगपूर्ण और मनमौजी होता है और तीव्र अनुभव तथा अभिज्ञा उसकी लाक्षणिक विशेषताएँ है, विवाह प्रकट, स्थिर, नियक और बहुधा मासारिक होता है (सक्सटन, 1970, पृष्ठ 53)।

पराथ प्रेम और सेक्स प्रेम की विवेचना करत हुए सारोकिन लिखते हैं

> यदि सेक्स प्रेम म दोनो पक्षो के अहभाव परस्पर विलीन होकर एक ही प्रेममय 'हम' का रूप धारण कर लें और दोनो प्रणयी एक दूसरे का अत्य मूल्य मानकर एक दूसरे के प्रति वैसा ही आचरण रखें तो सेक्स-प्रेम पराथ प्रेम का एक रूप बन जाता है। जब ये लक्षण नही पाये जात और जब दोनो प्रणयी एक दूसरे को केवल सुख प्राप्त करने का साधन या एक उपयोगी वस्तु समझते है और परस्पर ऐसा ही आचरण रखते हैं, तो सेक्स-प्रेम एक ऐसा सम्बन्ध बन जाता है जो पराथ प्रेम से सवथा वचित रहता है (सोरोकिन 1970 पृष्ठ 78)।

सेक्स और प्रेम के बीच अन्तर करत हुए राधाकृष्णन लिखते हैं "जब प्रेम की स्वाभाविक मूल प्रवत्ति का मागदशन मस्तिष्क और हृदय, बुद्धि और विवेक करत ह तो उसका परिणाम प्रेम होता है। प्रेम न तो रहस्यमय आराधना है और न ही पाशविक भोग। वह सर्वोच्च भावो के मागदशन के अधीन एक मनुष्य के प्रति दूसरे मनुष्य का आकषण होता है" (राधाकृष्णन् 1956, पृष्ठ 146)। आगे चलकर उन्होंने यह चेतावनी भी दी है कि आवेशपूर्ण प्रेम की उद्विग्नता को गहरा अनुराग नही समझ लेना चाहिए, क्योंकि वह सवथा भिन्न अनुभव होता है। वह लिखत हैं, 'प्रेम

मादक पदार्थ नहीं होता जिसके द्वारा अविवेक पर एक-दूसरे में खो जाएँ, और न ही मनुष्य प्रजाति-परिरक्षण का उपकरण मात्र है" (पृष्ठ 152)। आगे चलकर वह कहते हैं

> "प्रेम केवल सेक्स के गुण, धन-वृद्धि या सौन्दर्य से बढ़कर होता है। यह एक निजी मामला है जिसमें दो घनिष्ठ सम्बन्ध पाए जाते हैं जो एक पारिवारिक आवश्यकता की तुष्टि, या एक परिवार की स्थापना या स्वार्थपूर्ण गुण से अधिक मूल्यवान होते हैं। प्रेम केवल दो ज्वालाओं का मिलन नहीं होता बल्कि यह एक आत्मा द्वारा दूसरी आत्मा का आवाहन होता है। शुद्ध प्रेम बदले में कुछ नहीं चाहता। यह किसी प्रतिबन्ध या संकोच के बिना मैदान में कूद पड़ता है। यह कभी थकता नहीं किसी भी काम को असम्भव नहीं समझता और सब कुछ सहने को तैयार रहता है। ऐसा प्रेम शाश्वत होता है" (1956 पृष्ठ 154)।

सोरोकिन के अनुसार "शुद्ध प्रेम को किसी सौदे, किसी पुरस्कार की चिन्ता नहीं होती। वह बदले में कुछ नहीं मांगता। 'सौदेबाजी के प्रेम' के सभी रूप, जिनमें वह विषमलिंगी प्रेम भी सम्मिलित है जिसमें सेक्स क्रिया में दूसरे भागीदार से केवल इसलिए प्रेम किया जाता है कि पुरुष या स्त्री सुख देती है या उपयोगी होती है, 'अशुद्ध प्रेम' के उदाहरण हैं। कभी-कभी इस प्रकार का प्रेम परामर्शमूलक तत्त्वों से सर्वथा रिक्त हो जाता है और पतित होकर शत्रुता तथा घृणा के सम्बन्ध का रूप धारण कर लेता है' (सोरोकिन 1970 पृष्ठ 78)।

गेड्डीज का मत है, "प्रेम एक सुन्दर शब्द है। इसका अर्थ प्रायः कुछ भी हो सकता है और हम उसका जो भी अर्थ लगाना चाहें लगा सकते हैं। यह मैथुन के लिए एक शिष्ट शब्द है। यह उस भावना के लिए एक शब्द है जो बच्चे के प्रति माँ की होती है। यही वह शब्द है जिसका प्रयोग ईश्वर की अपनी सन्तान के प्रति भावना के लिए किया जाता है। यदि हम चाकलेट आइसक्रीम से विशेष रुचि हो तो चाकलेट-आइसक्रीम के लिए हमारे मन में जो भाव होता है उसे भी प्रेम कहते हैं। यही वह शब्द है जो देशभक्ति को व्यक्त करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। मनुष्य के प्रति मनुष्य का जो प्रेम होता है—समस्त मानव जाति का प्रेम—उसके प्रसंग में भी इसी शब्द का प्रयोग किया जाता है' (गेड्डीज 1954, पृष्ठ 27)। इस प्रसंग में विडाल लिखते हैं "प्रेम अपनी जाति का परिरक्षण करने की मूल प्रवृत्ति की स्वाभाविक, स्वतःस्फूर्त अभिव्यक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। यह सरासर एक फन्दा है जिसे प्रकृति ने परम सुख की हमारी लालसा के माध्यम से उस जाति के जनन के लिए हमको फाँसने के उद्देश्य से तैयार किया है" (विडाल 1941, पृष्ठ 10)।

"प्रेम का अभिप्राय है कुछ प्रकार के व्यवहार जिनमें भावना भी सम्मिलित है और कुछ प्रकार के सामाजिक सम्बन्ध अथवा अन्तःक्रिया जो इस व्यवहार पर आधारित प्रतीत होते हैं। प्रेम की भावनाएँ बहुधा पारस्परिक होती हैं, पर ऐसा होना

आवश्यक नही है। प्रेम के बारे मे चेसर कहते है

> जैसा कि मनोविज्ञान ने सिद्ध कर दिया है, प्रेम उभयभावी होता है। सच तो यह है कि बिजली के धनात्मक तथा ऋणात्मक ध्रुवो की तरह प्रेम और घृणा एक ही मन ऊर्जा के दो विपरीत ध्रुव हैं। यही कारण है कि प्रेम न पा सकने पर मनुष्य बहुधा क्रूर और आक्रामक हो जाता है।

अन्तिम विश्लेषण म प्रेम हमारी भावप्रवण सुरक्षा की आवश्यकता को तुष्ट करता है (चेसर, 1974 पृष्ठ 8-9)।

वह आगे चलकर कहते हैं, "उस व्यापक अथ मे प्रेम की परिभाषा एक एस सकारात्मक सम्बन्ध की स्थापना करने की तत्परता के रूप मे की जा सकती है जिसका लक्षण है देना न कि पाना (चेसर, 1964, पृष्ठ 19)।

स्त्री के लिए प्रेम उसका धम बन जाता है। "रहस्यमय प्रेम की तरह मानव प्रेम का भी सर्वोच्च लक्ष्य है प्रेम के पात्र के साथ तादात्म्य" (राइक 1945) "प्रेम करने वाली स्त्री कोई आकस्मिक विपत्ति पडन पर अपने जगत को ढह जाने देती है, क्योकि वास्तव मे वह अपने प्रेमी के जगत मे रहती है' (वावा, 1969, पृष्ठ 384 385)। इस प्रसग म स्टेकेल ने यह मत व्यक्त किया है "अतिम विश्लेषण म प्रेम का अथ केवल यह है दूसरे व्यक्ति के अन्दर अपने आपको पाना। कोई भी व्यक्ति अपने-आपको या तो अपने अहभाव क आधीन कर देता है या फिर उसके द्वि-ध्रुवीय विलोम के आधीन। हमारा आदश हमारे सेक्स अहभाव का विलोम होता है। वह दूसरा स्व वह होता है जसा कि हम बनना चाहते हैं (यदि हम दूसरे सेक्स के होते)" (1941, पृष्ठ 50)।

कामरे ने, जिसने अपना सारा जीवन एक ऐसे सकारात्मक दशन की रचना करने मे व्यतीत किया जा सवथा वास्तविक हो, लिखा है, "ससार मे प्रेम के अतिरिक्त कुछ भी वास्तविक नही है। हम सोचते-सोचते थक जाते हैं, कुछ करते करते भी थक जाते हैं, पर हम प्रेम करते कभी नही थकत, और न ऐसा कहने म थकते हैं " (देखिये एलिस, 1936, पृष्ठ 141)। एलिस न बताया है कि "विभिन्न विचारक इस निष्कष पर पहुचे हैं कि सेक्स-प्रेम (जिसके साथ माता पिता का और विशेष रूप से माता का प्रेम भी सम्मिलित है) जीवन की प्रमुख अभिव्यक्तियो का स्रोत है। " आगे चलकर वह कहते हैं, 'वे सभी यही कहत हुए प्रतीत हाते हैं कि प्रेम ही एक ऐसी चीज है जो सवाधिक साथक है" (एलिस, 1936 पृष्ठ 140 142)।

प्रेम करनेवाले व्यक्ति को इसके कारण जा कष्ट और विपत्तियाँ झेलनी पडती हैं उनके बावजूद प्रेम जीवन का परम वरदान है। जैसा कि राधाकृष्णन न अपनी प्रख्यात पुस्तक रीलिजन एण्ड सोसायटी (धम और समाज) (1956) मे अनेक स्थानो पर कहा है 'सुख का कोई भी स्रोत इतना सच्चा और विश्वस्त नही है जितना कि एक मनुष्य के लिए दूसर मनुष्य का प्रेम। इसके माध्यम स हम उससे अधिक समझदार बन जाते हैं जितना कि हम समझते हैं उससे अधिक अच्छे बन जाते हैं कि हम अनुभव करते है, उससे अधिक उदात्त बन जाते है जितना कि हम

156)। 'जब हम किसी ऐसे व्यक्ति के साथ होते हैं जिससे हमें बहुत गहरा प्रेम होता है तो हम संतुष्ट रहते हैं और यह नहीं पूछते कि हम क्या जीवित हैं या हमारा जन्म क्यों हुआ, हम जानते हैं कि हमारा जन्म प्रेम और मित्रता के लिए हुआ था" (पृष्ठ 157)। भारत में प्रेम की जो अनेक भूमिकाएँ बतायी जाती हैं या उसका जो बहुपक्षीय महत्त्व बताया जाता है उसे समझ सकना पश्चिम के लोगों के लिए अलग अलग परम्परागत पृष्ठभूमियों के कारण कुछ कठिन है। 'सिद्धान्त और व्यवहार दोनों ही की दृष्टि से भारत में प्रेम का जो महत्त्व है उसकी कल्पना करना भी हमारे लिए असम्भव है' (एलिस, 1970 पृष्ठ 129)।

प्रेम के बारे में रसेल का मत है

> मैं प्रेम को मानव-जीवन की एक सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु मानता हूँ, और मैं हर उस व्यवस्था को बुरा समझता हूँ जो इसके उन्मुक्त विकास में अनावश्यक हस्तक्षेप करती है।
>
> प्रेम यदि इस शब्द का उचित ढग से प्रयोग किया जाय, सबसे के बीच हर सम्बन्ध का द्योतक नहीं, बल्कि केवल उस एक सम्बन्ध का द्योतक है जिसमें पर्याप्त संवेग का समावेश हो, और उस सम्बन्ध का भी जो मानसिक भी होता है और शारीरिक भी। वह तीव्रता के किसी भी स्तर तक पहुच सकता है (रसेल, 1959, पृष्ठ 80)।

प्रेम के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए चित्रे लिखते हैं, "अपने यथार्थ रूप को बनाये रखकर एक दूसरे का उद्दीप्त तथा आलोकित करने की क्षमता और इसी प्रकार एक दूसरे को उसके यथार्थ रूप में स्वीकार करने की योग्यता ही पारस्परिक प्रेम का सारतत्त्व है"(चित्रे, 1971 पृष्ठ 49)। फ्राम्म ने इनकी व्याख्या इस प्रकार की है 'इस बिन्दु पर प्रेम से हमारा अभिप्राय है लोगों के प्रति अनुक्रियाशीलता की सभी अनुकूल भावनाएं न कि वह उत्कृष्ट वशीकरण संवेग जिसका उल्लेख रोमांटिक साहित्य में मिलता है। आगे चलकर वह व्याख्या करते हैं 'प्रेम एक ऐसा संवेग है जिसे उस व्यक्ति के प्रसंग में ही समझा जा सकता है जो उसे अनुभव करता है। प्रेम से हमारी सुरक्षा की भावना बढ़ती है। हम जितनी ही अच्छी तरह स्वयं अपने को समझेंगे उतनी ही अच्छी तरह हम अपने प्रेम को भी समझ सकते हैं। हम दूसरे लोगों की विभिन्न लाक्षणिक विशेषताओं का जो मूल्यांकन करते है वह स्वयं हमारी जीवन-पद्धति को भी प्रतिबिम्बित करता है" (फ्राम्म, 1955, पृष्ठ 43)।

विभिन्न उपलब्ध स्रोतों के अनुसंधान के आधार पर प्रेस्काट (1970) ने प्रेम से सम्बंधित जिन स्थापनाओं को विकसित किया है उनमें से कुछ इस प्रकार हैं

**(1) प्रेम करनेवाले को अपने प्रेम के पात्र के कल्याण, सुख और विकास में बहुत गहरी दिलचस्पी रहती है।** यह दिलचस्पी इतनी गहरी होती है कि वह प्रेम करने वाले व्यक्ति के संगठित व्यक्तित्व या उसकी 'स्व संरचना का एक प्रमुख मूल्य बन जाती है।

(2) "प्रेम करने वाले को अपने साधन अपने पात्र के लिए उपलब्ध करके सुख मिलता है, ताकि वह अपने कल्याण, सुख और विकास को बढावा देने के लिए उनका उपयोग कर सके। शक्ति, समय, धन, बुद्धि—वास्तव मे सभी साधन—सहर्ष प्रेम के पात्र के उपयोग के लिए दे दिये जाते है। प्रेम करनेवाले व्यक्ति को अपने प्रेम के पात्र के कल्याण, सुख तथा विकास की न केवल गहरी चिंता रहती है बल्कि वह जब भी सम्भव होता है इसे बढावा देने के लिए वस्तुत कुछ करता भी है।"

(3) "प्रेम सबसे सहजता से और बहुधा परिवार की परिधि मे उत्पन्न होता है पर उसकी परिधि को बढ़ाकर उसमे अन्य व्यक्तियो, या लोगो की अन्य कोटियां, या समस्त मानवता को भी सम्मिलित किया जा सकता है। स्वाइटजर तो उसमे समस्त प्राणियो और सृष्टि की समस्त सर्जनात्मक शक्तियां—अर्थात ईश्वर को भी सम्मिलित मानता है। इसी प्रकार कोई व्यक्ति असख्य अन्य मनुष्यो तथा प्राणियो से प्रेम लाभ का अनुभव कर सकता है। नि सन्देह, कुछ व्यक्तियो से भी सच्चा पूर्ण प्रेम प्राप्त करना कठिन होता है। परन्तु यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि उसकी प्रक्रियाओ की अधिक विज्ञान-सम्मत समझदारी प्राप्त करके हम उसे व्यापक बनाने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ नही उत्पन्न कर सकते।"

(4) "प्रेम के सत्प्रभाव प्रेम के पात्र तक ही सीमित नहीं रहते बल्कि वे प्रेम करनेवाले के सुख तथा और अधिक विकास को भी बढावा देते हैं। प्रेम करनेवाले के लिए प्रेम परार्थपरक, आत्मत्यागी और परिसीमनकारी नही होता। इसके विपरीत वह परस्पर गतिवान होता है जो दोनो के जीवन को बहुत समृद्ध बना देता है।'

(5) "प्रेम की जडें मुख्यत सेक्स मूलक गत्यात्मकता अथवा हार्मोन सम्बन्धी अतर्नोद मे नहीं होतीं, यद्यपि उसमे कामुकता के काफी बडे अश भी हो सकते हैं चाहे वह माता पिता और बच्चा के बीच हो या बच्चो के बीच, या वयस्को के बीच। फ्राम्म जब यह कहते हैं कि उत्पादनशील प्रेम से सम्बन्ध चाहे किसी का हो पर उसका सारतत्त्व सदा वही रहता है तब वह इसी स्थिति का समर्थन करते हुए से लगते है' (प्रेस्काट 1970, पृष्ठ 68)।

पुरुषो और स्त्रियो के बीच जो प्रेम होता है वह मानव प्रेम के विभिन्न पहलुओ में से एक है। *मानव जीवन मे स्त्री के प्रेम के अत्यधिक महत्त्व को व्यक्त करते* हुए राधाकृष्णन लिखते है

> विश्व की महान उपलब्धियो के लिए प्रेरणा स्त्री के प्रेम से मिली है। कालिदास जैसे प्रतिभाशाली पुरुष, नेपोलियन जैसे विजेता, माइकेल फैरेडे जैसे वैज्ञानिक और अन्य कई विश्व निर्माता तथा ससार से विरक्त हो जानेवाले इस बात के साक्षी है कि उनके जीवन मे प्रेम की कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। जो चीज़ सुमधुर कविताए रचनेवालो की कल्पना की श्रेष्ठतम उडानो के लिए आदोलित करती है वह है ऐंद्रिय उल्लास, प्रेम का फलप्रद सतोष और साथ ही उसका घातक आवेश।

> रामायण में राम और रावण के बीच संघर्ष का केन्द्र एक स्त्री ही थी, और ट्राय का युद्ध भी एक स्त्री पर अधिकार जमाने के लिए ही लड़ा गया था। प्रेम का आवेग स्वयं जीवन के मर्म की ज्वाला है, वह समस्त सृजनात्मकता का स्वर है।
>
> और विद्यापति के गीतों की प्रेरणा भी एक रानी से मिली। बीथोवेन ने भी अपने संगीत की सारी निधि अपनी 'अमर प्रियतमा' पर ही उंडेल दी थी (राधाकृष्णन् 1956, पृष्ठ 146)।

प्रेम और सेक्स का प्रयोग पर्यायवाची शब्दों के रूप में करते हुए भी लुडिन ने एक स्त्री के जीवन में प्रेम के महत्त्व पर जोर दिया है। "प्रेम स्त्री का जीवन भी होता है और उसकी जीविका भी, उसकी मूल प्रवृत्ति भी और वृत्ति भी, उसका उद्देश्य भी और सुख भी, उसकी रुचि भी और उसका अस्त्र भी। स्त्री के लिए प्रतीततः हर वस्तु का निर्धारण प्रेम के माध्यम से होता है, और उसका अर्थ यह है कि जीवन की सभी अवस्थाओं तथा उनके सभी पक्षों का सम्बन्ध सेक्स के अव्यक्त अथवा तुष्ट स्वप्नों के साथ होता है। वे स्त्रियां भी जो नैतिक अथवा धार्मिक कारणों से कभी मैथुन नहीं करतीं, सेक्स को ही अपने जीवन का केन्द्र बिन्दु बनाती हैं, क्योंकि जहां दूसरी स्त्रियाँ तुष्टि की कामना करती हैं ये स्त्रियां उपरति अथवा विरक्ति को अपने जीवन का केन्द्र बनाती हैं (लुडिन 1967, पृष्ठ 332)।

प्रेम आवश्यक रूप से पसन्द या रुचियों की समानता पर निर्भर नहीं रहता। वह शारीरिक अथवा आध्यात्मिक आकर्षण से भी प्रेरित हो सकता है—जैसे भागवत में जहाँ प्रेम भावना के उल्लेख भक्ति भाव के रूप में, मोक्ष प्राप्त करने के एक साधन के रूप में व्यक्त किये गये हैं।

पोपेनोए के शब्दों में "प्राथमिक सेक्स संसृष्टि का तीसरा तत्त्व वह है जिसे मैं सेक्स रंजित साहचर्य कहूँगा। इससे मेरा अभिप्राय है वह कोमलता और स्नेह जो दो विपर्यलिंगी व्यक्ति एक दूसरे के प्रति अनुभव करते हैं, जिसे मनोविज्ञानी विलियम मैक्डूगल ने कोमल संवेग कहा है। उसके कारण हम अपने साथी की सबसे बुरी बातों के बजाय उसकी सबसे अच्छी बातों को देखते हैं। यह एक ऐसा संवेग है जो जैविक मैथुन के आवेग के घट जाने के बहुत बाद तक बना रहता है और अधिक मूल्यवान हो जाता है। यह सेक्स रंजित साहचर्य इतना महत्त्वपूर्ण होता है कि लोग बहुधा इसे 'प्रेम' कहते हैं" (पोपेनोए, 1963 पृष्ठ 36 37)। प्रेम के बारे में ड्रूकिंग का मत है

> (प्रेम) केवल एक रोमांटिक भावना नहीं है जो अपनी प्रकृति के कारण ही किसी व्यक्ति को एक प्रकार के उल्लास की मादकता की अवस्था में पहुँचा दे, और कुछ समय बीतने पर उस व्यक्ति को प्रतिदिन के जीवन की तुच्छ बातों के बीच लौटा लाये। वह उनके लिए अस्तित्व के एक अधिक उदात्त रूप का सामान्यतम वस्तुओं के रूपान्तरण का द्योतक होता है, जो इस बात का परिणाम होता है कि दोनों

साझेदारी को इस बात का पूरा आभास रहता है कि उसे अपनी प्रतिष्ठा तथा आत्म सम्मान को सुरक्षित रखने मे दूसरे का सहारा प्राप्त है (शूक्किग, 1969, पृष्ठ 47)।

प्रेम के विभिन्न तत्त्व कुछ भी हो पर एक आधारभूत तत्त्व सदा स्थिर रहता है—सचेतन अथवा अचेतन आवश्यक पूर्तियो का एक ऐसा समूह जो किसी व्यक्ति को एक विशिष्ट वस्तु अथवा व्यक्ति से प्राप्त होता है, जैसे पत्नी, भाई, मा, घर-बार या देश मे। अथात व्यक्ति किसी वस्तु अथवा व्यक्ति विशेष से इसलिए प्रेम करना आरम्भ करता है कि उस व्यक्तिय। वस्तु से प्रेम करते हुए उसकी कुछ ऐसी सचेतन अथवा अचेतन आवश्यकताओ की पूर्ति होती रहती है जिन्हे वह महत्त्वपूर्ण समझता है। राधाकृष्णन् लिखते है, "प्रेम प्रधानत एक आत्मगत अनुभव होता है, जिसके आधारभूत अग है कल्पना और कामना। प्रेम के कारण का बहुत कुछ अश तो प्रेम करनेवाले मे होता है, और उसका पात्र तो केवल एक सयोग होता है" (राधाकृष्णन्, 1956, पृष्ठ 170)।

इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि प्रेम के आधारभूत अनुभव की जडें व्यक्तियो की आवश्यकताओ म होती ह। स्थूल रूप मे, हम प्रेम की कल्पना एक ऐसी सवेगात्मक भावना के रूप मे कर सकते हैं जो आवश्यकता पूर्तियो की एक जटिल ससृष्टि से उत्पन्न होती है (देखिय लज और सिडर, 1969, पृष्ठ 104)। वास्तव म जन्म लेन के क्षण से ही बच्चा अपने परिवेश के केवल उन्ही "महत्त्वपूण विषयों" से प्रेम करना सीखता है जो भोजन तथा सरक्षण की उसकी आधारभूत आवश्यकताओ की तुष्टि अथवा आपूर्ति से रजित होते है। जिस समय वह बढता रहता है, और उसकी शारीरिक, सवेगात्मक, मानसिक तथा आध्यात्मिक आवश्यकताओ की परिधि व्यापक होती जाती है, उस समय भी हार्दिकता तथा कोमलता की यह सवेगात्मक भावना जिसे 'प्रेम' कहते हैं, आवश्यकता पूर्तियो की बहुपक्षीय ससृष्टि के माध्यम से ही अनुभव की जाती है। 'अन्य महत्त्वपूण लोगो' से प्राप्त होनेवाली यही हार्दिकता तथा कोमलता उसके जीवन को जीने योग्य बनाती है।

समाज विज्ञान के अनुसधानो से इस बात के पर्याप्त उदाहरण प्राप्त किये गये हैं कि किसी के व्यक्तित्व की—उसके प्रत्यक्ष ज्ञान, प्रतिक्रियाओ, सज्ञान और उसके भावात्मक व्यवहार की भी—रचना पर जिस चीज का महत्त्वपूण प्रभाव पडता है वह यह है कि उस व्यक्ति को प्रेम की—हार्दिकता तथा कोमलता की सवेगात्मक भावना की—तुष्टि किस मात्रा म प्राप्त हुई है या किस मात्रा मे वह उससे वचित रहा है। किसी व्यक्ति का आत्म तादात्म्य स्थापित करन म जो स्व के विकास मात्र के लिए ही बहुत महत्त्वपूण होता है, उसकी भूमिका बहुत महत्त्वपूण होती है। ससटन ने भी इसी प्रकार का मत व्यक्त किया है

> अलग अलग दृष्टिकोण रखते हुए भी लगभग सभी प्रेक्षक इस बात पर सहमत हैं कि शिशु के जीवित रहन के लिए और प्रौढावस्था मे उसके कल्याण के लिए प्रेम महत्त्वपूण और अत्यत आवश्यक है। ...

म पालन पोषण तथा परार्थपरक प्रेम प्राप्त करके व्यक्ति म प्रेम करने की क्षमता उत्पन्न होती है। जब वह यह अनुभव करता है कि उसमे प्रेम किया जा रहा है तो वह अपने का प्रेम किय जाने योग्य और दूसरो को प्रेमभाव स परिपूर्ण समझता है। दूसरे शब्दो म स्वय अपने स प्रेम करना सीख लेन के बाद ही वह दूसरा स प्रेम कर सकता है।

अपनी समस्त अभिव्यक्तियो म प्रेम एक अत्यन्त उपयुक्त तथा जटिल, और साथ ही प्रबल तथा बाध्यकारी सवेग होता है। इसकी ऊर्जा और इसके अभिप्रेरण उन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भावनाओ म स हैं जो मनुष्य अनुभव कर सकता है (सक्सटम 1970 पृष्ठ 53)।

यह कहने की आवश्यकता नही कि प्रेम वयक्तिक और सामाजिक दोना ही प्रकार के कल्याण तथा सुख के लिए महत्त्वपूर्ण तथा आवश्यक है, क्याकि व्यवहार-विज्ञानी इस बात को सिद्ध कर चुके हैं। 3,000 किशोर-वयस्का क अपने अध्ययन के आधार पर डूवाल ने यह पता लगाया था कि प्रेम मे व्यक्ति की तादात्म्य की खोज से प्रत्यक्ष रूप से सम्बधित होने की प्रवत्ति होती है (डूवाल 1964 पृष्ठ 226 229)। मानव विकास मे प्रेम की बहुपक्षीय भूमिकाओ के सम्बन्ध म समान विज्ञानिया के अवलोकनो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रेम उस व्यक्ति को जो प्रेम का पात्र होता है, उसके लिए नितान्त आवश्यक आधारभूत सुरक्षा प्रदान करता है और उसके लिए स्वय अपने स तथा दूसरो स प्रेम करना सीखना सम्भव बनाता है। वह उसे समूह का भाग बनकर रहने और माता पिता सगे सम्बधिया, अध्यापका तथा साथिया से तादात्म्य स्थापित करने मे सहायता देता है और इस प्रकार उसे उस समाज व्यवस्था के विभिन्न मूल्या को आत्मसात करन मे सहायता देता है जिसमे वह रहता है। 'केवल विलक्षण वैयक्तिक घटना के रूप म ही नही बल्कि सामाजिक घटना के रूप म भी प्रेम की सम्भावना के प्रति आस्था रखना मनुष्य की प्रकृति क बार म अतर्दृष्टि पर आधारित एक तकसगत आस्था है (फ्राम्म, 1956)।

इसम सन्देह नही कि प्रेम एक जटिल घटना है, फिर भी वह अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धा के लिए और इस बात को समझने के लिए भी सार्थक तथा महत्त्वपूर्ण है कि यदि हम किसी सामाजिक समूह के लोगा की अन्तर्वैयक्तिक अन्त क्रिया के सामाजिक-मनोवैज्ञानिक आयामा का समझना चाहत ह ता यह जानना महत्त्वपूर्ण है कि उस समूह विशेष के विभिन्न लोगा के विचार तथा सकल्पनाए उसके बारे मे क्या हैं। इस अध्याय म लेखिका न अपनी छानबीन अधिक व्यापक परिप्रेक्ष्य म प्रेम के प्रति शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया के बदलत हुए विचारो पर केन्द्रित की है। इसी अध्याय मे प्रेम के बार म विभिन्न विद्वाना क विचार भी प्रस्तुत किये गये हैं। इस अध्ययन मे प्रेम का उल्लेख वर्णनात्मक ढग स किया गया है और कोई मूल्यांकन नही किये गय हैं। यद्यपि प्रेम शब्द का प्रयोग किसी भी प्रबल उल्लास क लिए किया जाता है जैसे यह कहना कि 'मुझे मिठाई स प्रेम है", वतमान प्रसग म उसका प्रयोग सामान्यत ऐस उदाहरणो

मे किया गया है जब स्वय अपने अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप मे या प्रतीक रूप म भावनाओ का पात्र होता है। प्रेम के विषमलिंगी व्यक्तियो के बीच अनुराग, गहरी रुचि, लगाव और भावावेश आदि विभिन्न अर्थ लगाये जाते है। प्रेम एक भावना है और इसलिए यह जानना आवश्यक है कि कोई व्यक्ति उस किस प्रकार अनुभव करता है। इस अध्याय मे प्रेम के बारे मे युवा हिन्दू शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो की भावनाएँ तथा विचार दृष्टान्त मूलक व्यक्ति अध्ययनों के माध्यम मे प्रस्तुत किय गये हैं।

लेखिका ने उन व्यक्तिया के अनुभवो तथा अभिवृत्तिया के बारे मे स्वय अपना निणय देने का कोई प्रयास नही किया है, जिनके व्यक्ति अध्ययन अथवा विचार यहा प्रस्तुत किये गये ह। उनकी अभिवत्तिया के सम्भावित औचित्य अथवा अनौचित्य के बार मे उसने कोई नैतिक विवेचन भी नही किया है। उत्तरदाताओ के विचारा को प्रस्तुत करने के लिए उसन अधिकाश उनके वक्तव्यो का शब्दश प्रयोग किया है, क्योंकि उसका विश्वास है कि न केवल उनके जीवन के तथ्यो को बल्कि उनकी अभिवृत्तिया की सूक्ष्म लाक्षणिक विशेषताओ को व्यक्त करने का सबस प्रभावी उपाय यही है।

व्यक्ति अध्ययन सख्या 19 तथा 50 एसी स्त्रिया का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनका अध्ययन लेखिका ने दस वप पहले किया था, लेकिन व्यक्ति अध्ययन सख्या 10 और 15 ऐसी स्त्रियो के लाक्षणिक उदाहरण हैं जिनका साक्षात्कार तथा अध्ययन दस वप बाद किया गया था। ज्योति का व्यक्ति अध्ययन श्रमजीवी स्त्रिया के उस समूह का प्रतिनिधित्व करता है जिसम कुछ पारम्परिक तथा रूढ़िवादी पारिवारिक पृष्ठभूमिवाली स्त्रियाँ है, कचन का व्यक्ति-अध्ययन ऐसी काटि की स्त्रिया का है जिनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि न तो बहुत कट्टरपथी तथा पारम्परिक है और न ही बहुत उन्नत, जबकि वासना तथा पमिला के व्यक्ति अध्ययन स्त्रियो के उस वग का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसम आधुनिक तथा पाश्चात्य प्रभाववाली पारिवारिक पृष्ठभूमि की स्त्रिया शामिल होती हैं।

## व्यक्ति-अध्ययन सख्या 19

ज्योति लडकियो के कालेज म पढाती थी। वह छत्तीस वप की थी और बी० ए०, बी० टी० पास थी। वह लगभग पूरे चार वप से काम कर रही थी और 400 रुपये प्रति माह कमा रही थी। उसकी शक्ल सूरत साधारण थी पर शरीर कुछ भारी था। उसका पहनावा सादा था और वह सौन्दय प्रसाधनो का प्रयोग प्राय बिल्कुल नहीं करती थी। आरम्भ मे तो वह बहुत शान्त रही पर विश्वास स्थापित हो जान पर वह खुलकर स्पष्टवादिता म बातें करन लगी। वह गम्भीर थी लेकिन कुछ उदास भी। कुल मिलाकर वह बहुत अच्छी लडकी थी, दूसरों का काफी ध्यान रखनवाली और बात करन मे विनम्र।

ज्योति का जन्म और पालन पोषण सामान्य साधना तथा रूढिवादी विचारो वाले मध्यम वग के एक परिवार म हुआ था। उसके पिता बहुत थोडा वतन पान वाले सरकारी कमचारी थे, पर उसके दादा काफी अच्छे पद पर थ और उनकी पतृक सम्पत्ति भी थी। उसके चार बहनें और दो भाई थे। वह अपने माता पिता की सबस ज्येष्ठ सन्तान थी। वह अपने दादा दादी के साथ रहती थी और उसे उनका भरपूर स्नेह प्राप्त था। लेकिन उसके दादा दादी बहुत रूढिवादी थे और चूकि उनके दादा का यह पसन्द नही था कि दस वष की आयु के बाद लडकिया घर के बाहर शिक्षा प्राप्त करने जाएँ, इसलिए उसने बी० ए० तक की सारी शिक्षा घर पर ही प्राप्त की थी। अपने जीवन का अधिकाश भाग उसन उत्तर प्रदेश क छोटे छोटे शहरो म ही बिताया था।

चूकि उसके दादा की नौकरी ऐसी थी कि उनकी बदली होती रहती थी और उन्हे एक जगह से दूसरी जगह जाना पडता था, इसलिए अपनी सहलियो स बिछुडकर वह बहुत उदास हो जाती थी। इसके फलस्वरूप कुछ समय बाद वह बहुत गम्भीर और सकोचशील हो गयी थी और आसानी स सहलियाँ नहीं बनाती थी। उसके दादा कठोर अनुशासन म विश्वास रखते थ। वह बहुत ही आज्ञाकारी और भीरु बच्ची थी क्योकि उसक दादा उससे पूण आज्ञापालन की आशा रखत थ और इसके बदल मे उसके प्रति बहुत हार्दिकता दिखात थे और उसका बहुत ध्यान रखते थे।

अपने विवाह के प्रस्तावो से सम्बधित घटनाओ का उल्लेख करते हुए उसन बताया कि बी० ए० की पढाई पूरी करन स पहल ही उसक दादा-दादी न उसका विवाह करन के लिए एक सम्पन्न परिवार का लडका पसन्द किया था। वह बी० ए० तक भी नही पढा था और आर्थिक रूप से स्वावलम्बी भी नहा था। उसने बताया कि उस एस आदमी के साथ विवाह करन का विचार बिल्कुल पसन्द नही था ज आर्थिक दृष्टि से अपन माता पिता पर आश्रित हो और बहुत अधिक पढा लिखा भी न हो, पर चूकि उसके दादा चाहते थ कि उसक और उस लडके के बीच औपचारिक साक्षात्कार हा जाय, इसलिए उसने इकार नही किया। उसके मान को इस बात स कुछ ठेस अवश्य लगी कि उस लडके तथा उसक माता पिता न उस बहू बनान योग्य नही समझा, फिर भी वह काफी खुश थी कि उस इस परिस्थिति से छुटकारा मिल गया।

जब ज्योति ने अपनी बी० ए० की पढाइ पूरी की उस समय तक उसके दादा क विचार कुछ-कुछ बदलने लग थे और जब उन्होन देखा कि बहुत-सी लडकियाँ उच्च शिक्षा प्राप्त करने लगी थी और काम करन लगी था तो उन्होने भी उस एक महिला सस्थान से बी० एड० करन की अनुमति द दी। उन्होने उस एम० ए० इस डर स नहीं पास करने दिया कि अगर वह अधिक उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेगी तो अधिक शिक्षित वर खोजन मे कठिनाई होगी। बी० एड० कर लेन के बाद घर म बैठे बैठे गृहस्थी क काम-काज म अपनी दादी का हाथ बँटाते हुए वह बहुत ऊबता जाती

थी। वह चाहती थी कि कोई नौकरी कर ले जिससे उसे घर से बाहर निकलने का अवसर भी मिले और स्वतन्त्र रूप से उसकी अपनी कुछ आय भी होने लगे। उसके दादा ने उसे घर के पास ही महिलाओं के एक प्राइवेट कालेज मे पढाने की अनुमति दे दी, ताकि उसे घर से बहुत दूर न जाना पडे। वहाँ उसके साथ काम करनेवाली अधिकाश दूसरी स्त्रियाँ भी कुछ कट्टरपन्थी परिवारो की थी जिनमे लडकियों को अभी तक एक बोझा समझा जाता था।

उसे इस बात की बडा चिन्ता रहती थी कि लोग उसके बार मे क्या कहेंगे या सोचेंगे। चूकि उसके दादा-दादी बहुत धर्मपरायण थे, इसलिए वह भी काफी धार्मिक विचारो वाली हो गयी और ईश्वर के प्रति दृढ आस्था रखने लगी। वह अन्ध-विश्वासी भी थी। उसने बताया कि चूकि अधिकाश समय उसने घर पर रहकर ही निजी रूप से शिक्षा पायी थी, इसलिए जब उसने नयी नयी नौकरी की तो उसे कुछ घबराहट भी हुई लेकिन लगभग साल भर बाद उसने अपने आपको नयी परिस्थितियों के अनुसार ढाल लिया और उसका सकोच दूर हो गया और साहस आ गया। उसने कुछ सहेलियाँ भी बनाना शुरू कर दिया। धीरे धीरे उसके निजी विचारो तथा सोचने के ढग का विकास होता गया। उसके साथ एक अध्यापिका काम करती थी जिससे उसे विशेष लगाव हो गया और वह उसके घर जाने लगी। उसकी इस सहेली के एक छोटा भाई था जो बी० ए० पास था और किसी दफ्तर मे मामूली वेतन पर नौकर था। वह दूसरी जाति का था और उम्र मे ज्योति से दस वर्ष बडा भी था। उसे दो एक बार देखने के बाद वह उसकी ओर बहुत आकृष्ट होने लगी। वह हर समय उसके बारे मे ही सोचती रहती और अगर कभी वह उसे प्यार-भरी नजरो से देख लेता तो उसे बहुत रोमाच होता। उसने बताया, 'एक बार जब मैं अपनी सहेली के घर पर थी तो वह मुझे छोडकर अन्दर कोई किताब या कुछ और लेने चली गयी। इसी बीच उसका भाई आया और मुझसे पूछने लगा कि कालेज मे काम करना मुझे कसा लगता है, और फिर हल्के से मेरा कधा छूकर उसने कहा कि वह मुझे बहुत चाहता है। इस बात का मुझ पर ऐसा चामत्कारिक प्रभाव पडा जिसे मैं समझा नही सकती, और मुझे ऐसा लगा कि मैं उसके प्रेम मे पागल हो गयी हूँ।'

उसने बताया कि वह उसके घर अक्सर जाने लगी और चोरी छुपे उससे बातें भी कर लेती थी। वह उसके जीवन का सबसे बडा उल्लास था। वह दिन रात उसी के स्वप्न देखती रहती और उसके लिए कुछ भी करने को तैयार रहती। एक बार जब वह बीमार पडा तो उसका जी चाहता कि हर समय उसकी सेवा शुश्रूषा करती रहे लेकिन चूकि वह काम के समय ही कालेज से भागकर ही उसके घर जा सकती थी, इसलिए वह लगभग हर समय ही दुखी और बेचैन रहती। उसे न भूख लगती और न नींद आती, यहाँ तक कि वह भी बीमार पड गयी। जब दोनो स्वस्थ हो गये तो उन्होंने विवाह कर लेने का निर्णय किया पर वह अपने दादा-दादी की अनुमति ले लेना चाहती थी। उसमे इतना साहस नही था कि अपने दादा को इसके बारे मे बताती,

लेकिन बडी मुश्किल से उसने अपनी सहेली से यह बात अपनी दादी से कहलवायी और उन्होंने फिर दादा को इसकी सूचना दी। घर पर बडा कुहराम मचा और उसके दादा दादी ने उसे दोष दिया कि उसने घर की इज्जत मिट्टी म मिला दी और अपने निलज्ज आचरण से उनके नाम को बट्टा लगा दिया। उन दोनो के विवाह के विरुद्ध उनका तक यह था कि वह लडका सम्पन्न परिवार का नही था और दूसरी जाति का था। उसने बताया कि उसे उससे इतना अधिक प्रेम था कि वह उसके साथ भाग जाने को भी तैयार थी, पर वह अपने दादा दादी का दिल नही दुखाना चाहती थी, जिन्हान उसे बडे लाड-प्यार से पाल पोसकर बडा किया था। उसके दादा अपनी धुन के पक्के थे और वे किसी प्रकार सहमत नही हुए इसलिए उस लडके के साथ विवाह करने का विचार छोड देना पडा। इससे उसका दिल इतना टूट गया कि इस आघात के कारण वह काफी समय तक बीमार रही और इस साक्षात्कार के समय तक वह उसे भुला नहीं सकी थी, हालाकि उसने बाद में किसी दूसरी स्त्री से विवाह कर लिया था।

जब उससे पूछा गया, "तुम किस प्रकार के आदमी को अपना पति के रूप म सबसे अधिक पसन्द करोगी ? तो उसने कहा कि काम आरम्भ करने से पहले वह हमेशा यही सोचती थी कि उसके दादा दादी या माता पिता जो भी आदमी उसके लिए पसन्द कर देंगे उसी के साथ विवाह कर लेगी, इसलिए उसने कभी यह सोचा भी नहा कि वह किस प्रकार के आदमी को अपना पति बनाना चाहती है। लेकिन कुछ समय काम कर लेने के बाद वह निश्चित रूप से उन गुणो के बारे म सोचने लगी जो उसके पति मे होने चाहिए। उसने बताया, "मैं ऐसा पति चाहती हू जो बहुत प्यार करने वाला और सुहृदय हो और मुझस सचमुच प्रम करता हो और यह तो है ही कि वह पढा लिखा हो और आर्थिक रूप से स्वावलम्बी हो ताकि विवाह के बाद अपने परिवार का भरण पोषण कर सके।'

जब इसके बाद उससे पूछा गया, तुम्हारे लिए प्रेम का क्या अर्थ है ?' तो उसने उत्तर दिया, "प्रेम मनुष्य के जीवन की सबसे उदात्त भावना है चाहे वह माता पिता और सन्तान के बीच हो, या भाइयों और बहनो के बीच सहेलियो के बीच या किसी पुरुष और स्त्री के बीच। निकट सम्बन्धियो और प्रियजनो के प्रेम के बिना जीवन का कोई मूल्य नहीं है। लेकिन मैं समझती हूँ कि प्रौढ हो जाने पर विपर्यलिंगी व्यक्ति के प्रेम की बहुत आवश्यकता होती है। और मेरे लिए पुरुष और स्त्री का यह प्रेम वह बेबस कर देनेवाली भावना है कि जिस व्यक्ति से हम प्रेम करते हैं उसके बिना जीवन असम्भव हो जाये। सेक्स स परे किसी चीज के लिए उस दूसरे व्यक्ति के साहचर्य की विलक्षण लालसा या अनोखी इच्छा ही प्रेम है। वह प्रेम के पात्र को पूरी तरह समझने और उसे अत्यधिक चाहने की भावना होती है। मेरे लिए सच्चा प्रेम उस प्रकार की शक्ति और बल है जो उस व्यक्ति को जो उसे अनुभव करता है, प्रेम के पात्र का प्रेम प्राप्त करने के लिए सब-कुछ त्याग देने के लिए या कुछ भी करने के लिए तत्पर कर दे। मैं समझती हूँ कि किसी व्यक्ति की आवश्यकता अनुभव करना और उसे सब कुछ दे देने

की इच्छा रखना ही प्रेम है। मेरे लिए प्रेम करने का अर्थ है कुछ देना, कुछ त्याग करना, उसका अर्थ है प्रेम के पात्र के हित तथा सुख के लिए ही सोचना, काम करना और अपना अस्तित्व लगभग उसी को अर्पित कर देना।" वह कहती रही, "प्रेम तभी बना रह सकता है जब उसके साथ लाभ का कोई विशिष्ट स्वार्थपूर्ण प्रयोजन न हो। इसमे सन्देह नहीं कि यह पारस्परिक लगाव या सम्बन्ध है और यदि वह एक व्यक्ति की ओर से दूसरे को भुगतान के रूप मे हो तो वह सदा बना नही रह सकता। लेकिन निश्चित रूप से यह बदले का व्यापार भी नही है, जिसमे एक व्यक्ति प्रेम देता है और दूसरे व्यक्ति से उसे प्रेम के अतिरिक्त कोई और चीज मिलती है। मैं समझती हूँ कि सच्चे प्रेम का अस्तित्व अब भी है, लेकिन उसके लिए आवश्यक यह है हम पूरी तरह आत्म-समर्पण कर दें। मैं केवल प्रेम करना चाहती हूँ, और जिस व्यक्ति से मुझे प्रेम हो उससे प्रेम के बदले मे कुछ मागे बिना मैं अपने को पूरी तरह उसे समर्पित कर देना चाहती हूँ। मेरे लिए प्रेम का अर्थ है दूसरो की आवश्यकताओ का बडी कोमलता से ध्यान रखना और पूरे मन से उनमे लीन हो जाना और इस अवस्था से सन्तोष प्राप्त करना।" उसने आगे चलकर कहा, "प्रेम वह भावना है जिसे मैं जीवन मे सबसे अधिक मूल्यवान समझती हूँ और मैं आसानी से किसी के प्रेम मे नही पडती क्योकि मैं इसे अत्यन्त बहुमूल्य समझती हूँ।"

इस प्रश्न के उत्तर म कि "क्या तुम शुद्धत प्लेटोनिक या निष्काम प्रेम म विश्वास रखती हो, अर्थात् ऐसा प्रेम जिसम सेक्स का अश न हो ?" उसने कहा, "हा, मैं सक्स रहित प्रेम मे विश्वास करता हूँ। मैं तो आध्यात्मिक प्रेम और ईश्वर के प्रेम तक मे विश्वास रखती हूँ। लेकिन मैं समझती हूँ कि पुरुष और स्त्री के बीच प्रेम यदि विवाह के बाद प्रारम्भ हो तो अच्छा है। हमारे धम की ओर हमारे माता पिता की शिक्षा भी तो यही है कि जिस पुरुष से लडकी का विवाह होता है उसके प्रति नि स्वार्थ भक्ति के फलस्वरूप ही प्रेम उत्पन्न होता है। परन्तु यदि कोई लडकी किसी पुरुष से विवाह से पहले ही प्रेम करने लगे तो उसे सेक्स से मुक्त रखा जाना चाहिए और इस प्रेम-सम्बन्ध की परिणति विवाह मे होनी चाहिए। केवल विवाह के बाद ही सेक्स-सम्बन्ध स्थापित किये जा सकते हैं। मैं अपनी घनिष्ठतम सहेलियो के इन विचारो से पूरी तरह सहमत हूँ कि पुरुष और स्त्री के पारस्परिक प्रेम को केवल कल्पना मे नही बनाये रखा जा सकता, और यदि एक पुरुष और एक स्त्री वास्तव मे एक दूसरे से प्रेम करते हैं तो उनमे निश्चित रूप से एक दूसरे का होकर रहने और विवाह के बन्धन मे बँधकर एक हो जाने की उत्कट लालसा होगी, परन्तु मेरी यह दृढ धारणा है कि विवाह तक प्रेम सेक्स से मुक्त होना चाहिए।" इस प्रश्न के उत्तर मे कि "तुम्हारी राय मे, किसी स्त्री के जीवन मे, आमतौर पर शारीरिक प्रेम की भूमिका कितनी महत्त्वपूर्ण होती है ?' उसने कहा, "मैं नही समझती कि उसकी भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। पूरे प्रेम सम्बन्ध के एक अश के रूप मे उसका महत्त्व होता है, लेकिन अपने आप मे उसका कोई महत्त्व नही है।"

जब उससे पूछा गया कि वह किस चीज के पक्ष मे है, सेक्स से मुक्त प्रेम, या प्रेम रहित सेक्स सम्बन्ध, या सेक्स-सम्बन्ध सहित प्रेम, या प्रेम हो जाने के बाद सेक्स सम्बन्ध, तो उसने उत्तर दिया, "मैं विवाह से पहले सेक्स सम्बन्धो से मुक्त प्रेम की और विवाह के बाद सेक्स सम्बन्ध सहित प्रेम की दृढ समर्थक हूँ और मैं विवाह की परिधि के अन्दर प्रेम के साथ सेक्स सम्बन्धो को भी उचित समझती हूँ लेकिन मैं विवाह से पहले प्रेम के बिना सेक्स-सम्बन्ध की दृढ विरोधी हू और विवाह के बाद पति के साथ भी इस प्रकार के सम्बन्ध को बहुत उचित नही समझती।' जब उससे पूछा गया, 'क्या तुम समझती हो कि कोई स्त्री एक ही समय मे एक से अधिक पुरुषो से प्रेम कर सकती है?' तो उसे कुछ अटपटा सा लगा और उसने कहा कि यह अनैतिक प्रश्न है और फिर बहुत सकुचाते हुए बोली, "नही, मैं नही समझती कि वह एक ही समय मे एक से अधिक पुरुष के साथ सच्चाई के साथ और पूरे मन से प्रेम कर सकती है क्योकि वह उनमे से किसी के भी साथ पूरा न्याय नही कर सकेगी और वह दोनो की खीचातानी का शिकार रहेगी और वह स्वय अपने लिए भी और उन दोनो पुरुषो के लिए भी समस्याएँ पैदा कर सकती है। उसके मन मे दोनो के प्रति समान निष्ठा और लगन नही हो सकती, और ऐसा करना उचित नही होगा।

इस प्रश्न के उत्तर मे कि "तुम्हारी राय मे, साधारणतया किसी पुरुष के प्रेम का स्त्री के जीवन मे क्या योगदान होता है? उसने उत्तर दिया, 'यदि कोई चीज ऐसी है जो स्त्री को यौवनमय, स्फूर्तिमय और उत्साहमय बना सकती है, तो वह प्रेम है। मूलत प्रेम शारीरिक आकर्षण से आरम्भ होता है परन्तु शीघ्र ही विकसित होकर वह उससे कही अधिक कुछ बन जाता है। प्रेम एक कोमल भावना है जो स्त्री के जीवन को कोमलता प्रदान करती है। प्रेम नारी के अस्तित्व को सार्थक बनाता है। परन्तु यदि किसी स्त्री को अपने प्रेम के पात्र से अलग रहने पर विवश किया जाय या यदि उसे अपने प्रेमी का प्रेम प्राप्त न हो तो यह स्थिति उसके जीवन मे सचमुच विषाद उत्पन्न कर सकती है और गहरी निराशा तथा असतोष का स्रोत बन सकती है। लेकिन फिर भी मैं समझती हूँ कि प्रेम स्त्री के जीवन की महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओ को पूरा करता है।'

उसके बाद उससे पूछा गया, तुम्हें किसी को अपना प्रेम देकर अधिक सन्ताप मिलता है या किसी का प्रेम पाकर?' उसने उत्तर दिया, 'ऐसा है कि सन्तोष तो प्रेम देने और प्रेम पाने दोनो ही मे बहुत मिलता है, लेकिन मैं समझती हूँ कि दूसरा का प्रेम पाने की अपेक्षा मुझे दूसरा को अपना प्रेम दे सकने पर अधिक प्रसन्नता होती है।' जब उससे पूछा गया, 'सुखी होने के लिए तुम्हे किन चीजो की सबसे अधिक आवश्यकता है? प्राथमिकता के क्रम से तीन चीजों के नाम बताओ, तो उसने कहा, "सबसे पहले तो मुझे प्रेम चाहिए, लेकिन मैं समझती हूँ कि सुखी रहने के लिए मुझे अच्छा स्वास्थ्य भी चाहिए और सुखी होने के लिए कम से कम कुछ अच्छे ढग से और थोड़े आराम के साथ जीवन व्यतीत करना आवश्यक है जिसके लिए पैसा चाहिए।

लेकिन सुखी रहने के लिए मुझे पति का प्रेम चाहिए, अर्थात् सुखी रहने के लिए मैं एक प्रेम करनेवाले और सम्पन्न व्यक्ति से विवाह करना चाहती हूँ।" बाद में उसने बताया कि उसकी सबसे अच्छी सहेलियाँ थीं, जिनका वह बहुत सम्मान करती है, एसे ही विचार रखती हैं।

अन्त में उसने बताया कि कुछ मिलाकर जीवन निराशाजनक नहीं है और जबसे उसने काम करना आरम्भ किया है तब से वह अधिक सुखी और स्वस्थ अनुभव करती है। परन्तु वह अपने विवाह के प्रश्न में भविष्य की अनिश्चितता के बारे में काफी चिन्तित थी, और इसके बारे में भी कि विवाह के बाद जीवन किस प्रकार का होगा, आगे चलकर उसका जीवन सुखी होगा या दुखी। उसे इस बात से भी बड़ी निराशा थी कि उसे ऐसा लगता था कि जिस प्रकार के आदमी को वह अपना पति बनाना चाहती थी शायद वैसा आदमी उसे न मिले और यह कि इतना समय निकल जाय कि उसे कोई उचित वर मिल ही न सके। यह छुपा हुआ डर कि शायद अवसर हमेशा के लिए उसके हाथ से निकल जाए, उसके अन्दर निरन्तर एक तनाव और बेचैनी पैदा कर रहा था। और उसने कहा कि आर्थिक स्वतन्त्रता, काफी अच्छी नौकरी, और दादा-दादी तथा घरवालों के प्रेम के बावजूद एक जीवन साथी और स्वयं अपने घर के बिना वह बेहद अकेली और खोयी-खोयी-सी महसूस करती थी।

## व्यक्ति-अध्ययन संख्या 55

मनाली-सुन्दर, 28 वर्षीया बचन सुशिक्षित, सुसम्कृत और सुलक्षणा थी। वह एम० ए० पास थी और अंग्रेजी भाषा के ज्ञान में पूरी तरह निपुण होने के अतिरिक्त जर्मन और फ्रांसीसी भाषाएँ भी काफी अच्छी तरह जानती थी। वह एक सरकारी दफ्तर में अच्छे पद पर काम कर रही थी और प्रतिमाह 600 रुपये पाती थी। वह पिछले दो वर्ष से यह नौकरी कर रही थी और उससे काफी सन्तुष्ट थी। उसमें आत्मविश्वास और निश्चिन्तता थी और वह शालीन थी।

उसका परिवार कुछ रूढ़िवादी था जिसमें बेटियों को घूमने फिरने की छूट नहीं थी और उनकी गतिविधियों पर कुछ प्रतिबन्ध थे। उसके माता पिता धर्म-परायण और कुछ हद तक अन्धविश्वासी भी थे। वह ईश्वर में आस्था रखती थी और हर धर्म को सम्मान की दृष्टि से देखती थी। वह ज्योतिष में भी विश्वास रखती थी। उसके पिता उस समय रेल मन्त्रालय में काम करते थे और लगभग 500 रुपये महीना पाते थे। उसकी माँ का जीवन पूरी तरह अपने पति और बच्चों को अर्पित था। बचन की छः बहनें और थीं, जो सभी उससे छोटी थीं। वह सबसे बड़ी सन्तान थी और उसके कोई भाई नहीं था।

चूँकि उसके बचपन में उसके पिता के पास काफी पैसा नहीं था और परिवार में बहुत-से बच्चे थे, इसलिए उसका बचपन कुछ अभावग्रस्त तथा उल्लासहीन रहा था। पैसे की हमेशा तंगी रहती और यद्यपि माता पिता अपने बच्चों से काफी प्यार

करते थे, लेकिन उन्हे पुत्र की चिन्ता सताती रहती थी और केवल बेटिया होने पर वे कुछ उदास भी रहते थे। उसे कोई भौतिक सुख सुविधा तो नहीं मिली पर माता पिता के स्नेह के कारण उसे उनसे बहुत लगाव हो गया। वह शुरू से ही बहुत प्रतिभाशाली थी और उसके मन मे पढने और उच्च शिक्षा प्राप्त करने की उत्कट इच्छा थी।

उसे पढने के लिए एक साधारण स्कूल मे भेजा गया। वह पढने मे तेज थी और पढाई मे बहुत रुचि दिखाती थी। बडी कठिनाई से उसके पिता ने उसे मैट्रिक तक पढाया, क्योकि उनकी आय बहुत थोडी थी और उन्हे सभी बच्चो का भरण पोषण करना था और वह हर बच्चे को एक जैसी शिक्षा देने मे विश्वास रखते थे। उनकी आय मे यह सम्भव नही था कि सभी बेटियो को मैट्रिक के बाद उच्च शिक्षा दिलायी जा सके। कचन को गहरी निराशा हुई, विशेष रूप से उस समय जब उसके सगे सम्बन्धियो ने उसकी उच्च शिक्षा के लिए आर्थिक सहायता देने से इन्कार कर दिया। पर वह आगे पढने का दृढ सकल्प कर चुकी थी, चाहे इसके लिए उसे स्वय ही क्यो न पैसा कमाना पडे। इसलिए उसने अपने लिए कोई उचित नौकरी खोजना शुरू कर दिया। सौभाग्य से आकाशवाणी मे एक समाचार पढकर सुनानेवाले की नौकरी खाली थी और उसे वह मिल गयी।

वह आरम्भ से ही निडर व साहसी थी और उसकी बहनो पर लगा रखे गये अनेक प्रतिबन्धो और आर्थिक सहायता देने से उसके सगे सम्बन्धियो के इन्कार के कारण उसने भी जिद पकड ली और एक ऐसी नौकरी कर ली जो उसके परिवार की परम्पराओ के विरुद्ध थी। ऐसा करते हुए उसकी यह सबसे बडी इच्छा पूरी हो रही थी कि वह स्वय आगे पढ सके और अपनी छोटी बहनो को आगे पढाने मे सहायता दे सके। अपनी नौकरी के साथ साथ उच्चतर शिक्षा की अपनी कामना पूरी करने के लिए उसने सन्ध्याकालीन कक्षाओ मे नाम लिखा लिया। नौकरी करते हुए उसने एम० ए० तक की अपनी कालेज की पढाई पूरी की। पढाई के साथ साथ उसने विदेशी भाषाएँ भी सीखी। उसे अपनी अधिकाश आय अपने माता पिता पर और अपनी बहनो की पढाई पर और स्वय अधिक ज्ञान अर्जित करने पर खर्च करना अच्छा लगता था। उसे ठेठ भारतीय पहनावा तथा वेश भूषा पसन्द थी और वह सौन्दर्य प्रसाधनो का प्रयोग अल्प मात्रा मे ही करती थी।

उसने बताया कि जब वह कालेज मे थी और सन्ध्याकालीन कक्षाओ मे पढने जाती थी तो एक सुन्दर नौजवान से उसकी मित्रता हो गयी जो उससे भिन्न जाति बिरादरी का था। उसकी नौकरी मे वेतन भी अधिक नही मिलता था। लेकिन उसने बताया, 'वह मेरे प्रति प्रेम की अपार भावनाएँ व्यक्त करता था। मैं भी उसके प्रति अधिक आकृष्ट हो गयी। मुझे ऐसा लगता था कि मैं उसके प्रेम मे पागल हो गयी हूँ। मैं हरदम उसी के बारे मे सोचती रहती थी और उसे देख भर पाने से मुझे बहुत हर्ष होता था और उसे न देखती तो उदास हो जाती और बहुत रोती थी और अगर वह मुझे दिलासा देता और मेरे गाल को चूम लेता तो मुझे बडा रोमाच होता और मुझे

पर इसका कल्पनातीत प्रभाव पडता । मेरा सब कुछ उसी का था और ऐसा लगता था कि उसके बिना मेरा जीवन राख का ढेर है । मैं उसके साथ जितना भी सम्भव होता अपना समय व्यतीत करती और कभी-कभी तो अपने दफ्तर के काम की भी परवाह न करती । उसने वचन दिया था कि वह मुझसे शादी करेगा और मैं भविष्य के ऐसे कल्पना लोक मे रह रही थी जिसमे हर्ष और उल्लास और साथ साथ रहने के सुख के अतिरिक्त और कुछ भी नही होगा ।" वह कहती रही, "मैं उसके साथ अपने विवाह के दिवा-स्वप्नो म ही डूबी हुई थी कि अचानक उसने अपने मा बाप की पसन्द की एक लडकी से ब्याह करने का फैसला कर लिया, जो एक धनी परिवार की थी और उसी की जाति की थी । इससे मुझे बहुत आघात पहुचा और मेरा जी चाहा कि मैं मर जाऊँ । मेरा मन बहुत निराश और उदास हो गया और मैंने अपने जीवन को समाप्त करने का प्रयत्न किया । लेकिन धीरे धीरे मैं अपना ध्यान सास्कृतिक गतिविधिया की ओर मोडन लगी और मैंने मानव सम्बन्धो से अपना नाता ताड लिया । मैं सबसे अलग अलग रहने लगी और अपने सहकर्मियो के साथ बहुत कम हँसती बोलती थी ।"

फिर उसे सरकारी नौकरी मिल गयी और पिछले दो वर्ष से वह अपनी यह नौकरी कर रही है । कई वर्षो के अनुभव और उच्च शिक्षा की बदौलत उसमे बहुत आत्म विश्वास और निर्भीकता पैदा हो गयी और वह काउसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स, काउसिल ऑफ कल्चरल अफेयर्स और दूसरी सास्कृतिक तथा साहित्यिक सस्थाओ की सदस्य बन गयी जहा उसका काम के बाद का सारा समय बीत जाता था । सास्कृतिक गतिविधियो के प्रति उसे हमेशा स रुचि रही थी । अगर उसने विवाह करने की कोई जल्दी नही दिखायी तो इसका एक कारण यह था कि उस इस बात की बडी उत्सुकता थी कि विवाह करने और घर बसाने से पहले वह अपनी सब बहनो को पढा लिखा दे । जिन दिनो वह आकाशवाणी म काम करती थी, एक सैनिक अफसर ने उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा लेकिन बात बनी नही, क्योकि उसके माता पिता ने दोनो की जन्म कुडली मिलवायी और वे एक दूसरे से मेल न खा सकी । इससे उसे बहुत निराशा हुई । फिर भी उसे इस बात का सन्ताप था कि वह आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी थी और अपनी तथा अपनी बहनो की सहायता कर रही थी और इस प्रकार पिता का भी हाथ बँटा रही थी, जिनसे उसे गहरा लगाव था । अपनी आय के कारण उसे अपनी सास्कृतिक रुचियो को सन्तुष्ट करने और बहुत ऊँचे ऊँचे अफसरो के बीच उठने-बठने का अवसर मिलता था, क्योकि वह स्वय काउसिल आफ वर्ल्ड अफेयर्स और काउसिल आफ कल्चरल अफेयर्स की सदस्य थी । इसी की बदौलत उसे ऊँचे-ऊँचे पदोवाले लोगो से मिलने और उनके बीच उठन-बठन का अवसर मिलता था । वह विवाह के साथ-साथ कोई नौकरी भी करते रहना बेहतर समझती थी ।

उसने बताया कि कुछ समय बाद उसके चाचा और अन्य रिश्तेदारो ने उसके वर के लिए उसी की जाति बिरादरी के एक लडके का सुझाव रखा लेकिन अपने सगे-सम्बन्धियो की नाराजगी की परवाह न करते हुए उसने उसके साथ विवाह करने से

इकार कर दिया क्योंकि वह लडका न तो सूरत शक्ल था अच्छा था और न ही काई अच्छे वेतनवाली नौकरी ही करता था। एक वप बाद किसी पार्टी म उसकी मुलाकात एक सरकारी अफमर से हो गयी और धीरे धीरे उसने उमस बहुत मित्रता पैदा कर ली और वह उससे विवाह करना चाहता था। शुरू शुरू मे वह भी उसे बहुत पसन्द था, लेकिन अधिक निकट से जानने पर उसे पता चला कि वह बहुत दब्बू है और उसमे कोई निडर कदम उठाने का साहस नही है। उसके बारे म जो चीज उस नापसन्द थी वह यह थी कि वह न तो उसके घर आता था और न उस अपने घर बुलाता था। इसके बजाय वह हमेशा यही चाहता था कि वह उसस कही बाहर मिला करे या उसके साथ सिनमा देखने, मोटर की सैर क लिए या कही और चला करे, जबकि वह चाहती थी कि वह उसके घर आया करे। इसके अलावा उसके मन मे अपने जीवन के बारे म कोई महत्त्वाकाक्षा नही थी, और वह दायित्व सभालने से कतराता था। वह अक्सर उसके दफ्तर आकर घण्टो बठा रहता और काई भी समझदारी की बातचीत न करता, जिस पर उस कभी-कभी बडी झुझलाहट होती और कभी कभी ता उस नफरत भी होने लगती। वह बडी दुविधा म पडी रही क्योंकि कभी कभी उसका भी जी चाहता था कि उसस विवाह कर ले क्योंकि वह आई० ए० एस० अफसर था, धनी परिवार का था, उसके प्रति प्रेम की भावनाएँ व्यक्त करता था और उससे विवाह करना चाहता था। लेकिन इसक साथ ही वह यह भी महसूस करती थी कि उसे उसके साथ विवाह नही करना चाहिए क्योंकि वह उससे पर्याप्त प्रेम नही करती थी और वह गैर जिम्मदार था और उसम इतना भी साहस नही था कि अपने माता पिता को यह बता सके कि वह उससे विवाह करना चाहता है। यह दुविधा उसके लिए एक यातना बन गयी थी और अन्त मे उसने उससे विवाह करने का विचार त्याग दिया क्याकि वह इस दिशा मे कोई कदम ही नही उठा रहा था। कचन ने बताया कि प्रेम के य सारे अनुभव उसके लिए बहुत निराशाजनक थे।

इस प्रश्न के उत्तर मे कि '*तुम किस प्रकार के आदमी का अपने पति के रूप* म सबसे अधिक पसन्द करोगी ?" उसने कहा, 'मैं चाहती हूँ कि वह सुसस्कृत और सज्जन आदमी हो, खूब पढा लिखा हो, प्रेम करनेवाला हो और यह तो मैं चाहूँगी ही कि वह काई अच्छे वेतनवाली नौकरी या व्यापार करता हो।

जब उससे पूछा गया कि प्रेम का उसके लिए क्या अर्थ है तो उसने कहा, 'प्रेम एक सवेगात्मक भावना है जो माता पिता तथा बच्चो क बीच बहनो के बीच और दो समलिंगी अथवा विपमलिंगी मित्रो के बीच भी अनुभव की जा सकती है। माता पिता की हार्दिकता और लगाव और अपने बच्चो के लिए उनके नि स्वार्थ प्रेम को अनुभव करना निश्चित रूप से बहुत मूल्यवान है। वास्तव मे बच्चों के व्यक्तित्व के निर्माण का स्रोत हो यही है।' इसके बाद उसने अपना उदाहरण दिया और कहा कि बचपन मे उस अपने माता पिता के लाड प्यार के अतिरिक्त और कोई सुख नही मिला और अकेले उस स्नेह ने उसे इतना विश्वास और शक्ति दी कि वह अपने परो पर खडी

हो सकी, अपनी छोटी बहनो को सहारा दे सकी और अपने माता पिता की सहायता कर सकी। उसने कहा कि माता पिता के बिना बच्चा मे सवेगात्मक सुरक्षा की वह भावना नही उत्पन्न हो सकती जो आत्म विश्वास तथा चरित्र की दृढता का एकमात्र स्रोत होती है।

पुरुष और स्त्री के बीच प्रेम के प्रसग म उसने कहा, "जब मैं अपनी अपरिपक्व किशोरावस्था के दिनो के बारे म सोचती हूँ तो मुझे ऐसा लगता है कि निष्काम तथा रोमाटिक सम्बन्धो के वे विचार मूर्खतापूर्ण भावुक भ्रमो के अतिरिक्त और कुछ नही है। रोमाटिक प्रेम म जिस व्यक्ति स प्रेम किया जाता है उसे एक लुभावने धुधलके के पार देखा जाता है, उस रूप मे नही जसा कि वह वास्तव म होता या होनी है। लेकिन अब मैं सोचती हूँ किसी पुरुष और स्त्री के बीच यह सारा भावुक प्रेम उनके बीच एक प्रकार के आकषण या मोह के अतिरिक्त और कुछ नही होता, जिसके कारण कुछ समय के लिए वे कल्पनाओ और रोमास की दुनिया म रहत है और जस ही व जीवन को ठोस व्यावहारिक ढग से देखना आरम्भ करते है या कई उदाहरणो मे जसे ही वे सम्भोग आरम्भ कर देत है ये रोमाटिक भावनाएँ समाप्त हो जाती ह। उसके बाद एक-दूसरे के लिए दोनो का आकषण समाप्त हो जाता है। हाँ, अगर उसके बाद भी उनमे एक दूसरे के लिए हार्दिकता की गहरी भावनाएँ, चिन्ता और इच्छा बनी रह तो वह सच्चा प्रेम होता है और वह सम्बन्ध इस योग्य होता है कि उसे बनाये रखा जाये। शारीरिक रूप के प्रति और मानसिक अभिव्यक्तियो के प्रति भी पारस्परिक आकषण प्रेम होता है।"

आगे चलकर उसने कहा, 'मैं बडी दढता से यह मानती हू कि किसी स्त्री को किसी पुरुष के लिए अपने प्रेम को अपने जीवन की तकसगत योजना म बाधक नही होन देना चाहिए और यदि वह ऐसा होने देती है तो वह मूख है। प्रेम के बारे म जहाँ तक भी सम्भव हो यथाथनिष्ठ होने की कोशिश करना चाहिए।" इसी प्रसग म उसन यह भी कहा कि जब वह कालेज मे पढती थी तो समझती थी कि सच्चा प्रेम वह प्रेम होता है जिसमें जिस व्यक्ति स प्रेम किया जाता है उस पाने के लिए हम सब कुछ त्याग देने के लिए और कुछ भी कर डालने के लिए तैयार रहत है और यह कि प्रेम एक अनवरत लालसा होती है। लेकिन अब, उसने बताया, प्रेम उसके लिए बलिदानो का क्रम और बिना किसी शत के एकतरफा भक्ति नही है और न ही अब उसका जीवन एक निरतर पीडा है। अब उसकी राय मे, प्रेम आदान प्रदान का सौदा है। अगर वह किसी को अपना प्रेम देती है तो उसके बदले मे वह आशा करती है कि वह व्यक्ति उसके प्रति हार्दिकता दिखायेगा, उसकी ओर ध्यान देगा और उसका ध्यान रखेगा। उसन कहा, "मैं समझती हूँ कि प्रेम एक साझेदारी है, कुछ देना, कुछ लेना, दूसरे को अपने वश मे कर लेना और दूसरे के वश मे हो जाना। प्रेम का अथ है पारस्परिक आस्था और एक दूसरे पर विश्वास। वह मानसिक तथा शारीरिक रूप से दूसरे से एकाकार हो जाने की भावना है।"

उससे पूछा गया, 'तुम्हें अधिक सन्तोष किसी को अपना प्रेम देकर मिलता है या किसी का प्रेम पाकर ?" उसने उत्तर दिया, "मुझे प्रेम तथा स्नेह देने और पाने में बराबर सन्तोष मिलता है लेकिन मैं एकतरफा प्रेम में और बदले में प्रेम पाये बिना किसी पर अपना प्रेम लुटाते रहने में विश्वास नहीं करती। और मुझे बदले में प्रेम दिये बिना किसी का प्रेम पाकर भी बहुत आनन्द नहीं मिलता लेकिन मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं है। मेरे सबसे अच्छे मित्रों का भी यही विचार है।"

जब उससे प्राथमिकता के क्रम के अनुसार उन तीन चीजों के नाम बताने को कहा गया जिनकी उसे सुखी होने के लिए सबसे अधिक आवश्यकता है, तो उसने कहा, 'मैं एक अच्छा सम्पन्न पति और रहने के लिए एक आरामदेह घर चाहती हूं। लेकिन निश्चित रूप से उसके अलावा और भी कुछ चाहिए। मुझे इसकी भी आवश्यकता है कि कोई मेरा ध्यान रखे, मुझे सराहे और मुझसे प्रेम करे और इसके लिए आवश्यक है कि वह प्रेम करनेवाला हो और मेरे प्रति निष्ठा रखता हो। लेकिन सुखी होने के लिए मुझे अपने माता पिता, बहनों और स्त्रियों के प्रेम की भी आवश्यकता है और इस बात की भी कि दूसरे मुझे सराहें और मुझे स्वीकार करें।'

इस प्रश्न के उत्तर में कि "तुम्हारी राय में साधारणतया किसी पुरुष के प्रेम का स्त्री के जीवन में क्या योगदान होता है ?" उसने कहा, "अगर प्रेम सच्चा और हार्दिक हो तो स्त्री के जीवन में आधारभूत सन्तोष प्रदान करने में उसका महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। परन्तु किसी पुरुष का सच्चा प्रेम पाना आसान नहीं होता है और इसलिए वह स्त्री के जीवन में निराशाएँ और असन्तोष पैदा कर देता है। फिर भी स्त्री के लिए पुरुष का प्रेम बहुमूल्य होता है और वह निश्चित रूप से उसकी कामना करती है और जब वह उसे मिल जाता है तो आमतौर पर वह सन्तोष अनुभव करती है। मेरे मित्रों के विचार भी ऐसे ही हैं।"

इस प्रश्न के उत्तर में कि 'तुम्हारी राय में किसी स्त्री के जीवन में आमतौर पर शारीरिक प्रेम की भूमिका कितनी महत्त्वपूर्ण होती है ?" उसने कहा, "मैं समझती हूँ कि स्त्री के जीवन में उसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। लेकिन अगर इसे केवल अलग करके देखा जाय तो स्त्री के जीवन में उसकी भूमिका इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं होती। मैं समझती हूँ कि शारीरिक प्रेम से परे का प्रेम भी बहुत महत्त्वपूर्ण होता है और उसके बिना शारीरिक प्रेम भी स्त्री के लिए बहुत सन्तोषप्रद नहीं होता।" जब उससे पूछा गया 'तुम किन चीजों के पक्ष में हो, सेक्स से मुक्त प्रेम, या प्रेम रहित सेक्स-सम्बन्ध या सेक्स सम्बन्ध सहित प्रेम या प्रेम हो जाने के बाद सेक्स-सम्बन्ध ?" तो वह कुछ देर तो चुप रही और फिर कुछ सोचकर बोली, "मैं सेक्स के बिना प्रेम को भी उचित समझती हूँ और सेक्स-सम्बन्ध सहित प्रेम को भी, लेकिन मैं प्रेम के बिना सेक्स-सम्बन्ध के पक्ष में बिल्कुल नहीं हूँ। उन उदाहरणों को छोड़कर जिनमें विवाह माता पिता के तय कर देने से हो जाता है और दोनों को एक-दूसरे को सचमुच जानना आरम्भ करने से भी पहले पति और पत्नी के बीच सेक्स-सम्बन्ध होना अनिवार्य होता है।'

जब उससे पूछा गया कि, "क्या तुम शुद्धत प्लेटोनिक या निष्काम प्रेम मे विश्वास रखती हो, अर्थात ऐसा प्रेम जिसमे सेक्स का अश न हो ?" तो उसने उत्तर दिया, "जी नही, मैं स्त्री और पुरुष के बीच शुद्धत निष्काम प्रेम मे विश्वास नही रखती, इस अर्थ मे कि उनके बीच किसी प्रकार की शारीरिक घनिष्ठता हो ही नही। लेकिन मेरा यह विश्वास अवश्य है कि सेक्स-सम्भाग के बिना भी प्रेम हो सकता है, विशेष रूप से यदि आगे चलकर दानो की विवाह कर लेने की योजना हो, या यदि आरम्भ मे ही यह बात स्पष्ट कर दी गयी हो कि दानो के बीच शारीरिक घनिष्ठता का कोई सम्बन्ध नही रहगा, या दोनो के नैतिक मानदण्ड या सिद्धात बहुत उच्च स्तर के हा।"

जब उससे पूछा गया, "क्या तुम समझती हा कि कोई स्त्री एक ही समय मे एक से अधिक पुरुषो स प्रेम कर सकती है ?" तो उसन उत्तर दिया, "शारीरिक दृष्टि से मैं नही समझती कि वह एक साथ एक से अधिक पुरुषा से प्रेम कर सकती है, लेकिन अगर प्रेम का अर्थ शारीरिक घनिष्ठता के बिना केवल एक दूसर का बहुत पसन्द करना समझा जाये, तो मैं समझती हूँ कि वह एक ही समय म, एक स अधिक पुरुषा से प्रेम कर सकती है। लेकिन मैं समझती हूँ कि हार्दिक प्रेम म इतना समय, इतना विचार और इतना ध्यान लग जाता है कि एक से अधिक पुरुष स प्रेम करन की कोई गुजाइश ही नही रह जाती।" उसन यह भी कहा कि उसके सबसे अच्छे मित्रा का भी यही मत है।

अपनी नौकरी, अपन दफ्तर के और निजी जीवन के साथ, जिसमे वह व्यस्त और सतुष्ट रहती थी, कचन का जीवन काफी राचक लगता था। अपनी उपलब्धियो और गर्व की आवश्यकता की तुष्टि से उसे सुखी रहने की बहुत प्रेरणा मिलती थी। उसकी यह दृढ भावना थी कि अपने जीवन को बनाना या बिगाडना पूरी तरह उस व्यक्ति के हाथ मे हाता है। वह जा कुछ भी थी पूर्णत अपन ही प्रयासा से बनी थी। वह विपत्तिया का सामना साहस और निडरता के साथ करती थी। कभी कभी वह बहुत दुःखी भी हो जाती थी और बहुधा उसे यह भी नही पता चलता था कि इसका कारण क्या है। वह एक अस्पष्ट सा विचलित कर देनवाला अनुभव हाता था। वह जीवन मे सबसे अधिक आशा प्रेम और सम्पदा की करती थी। अगर उसके बस म होता तो वह थोडी सी लम्बी और हा जाना चाहती थी। वह अक्सर दूसरा की समस्याओ के बारे मे साचती थी और यथासभव जा कुछ भी वह कर सकती थी वह करके उनकी सहायता करने को भी तैयार रहती थी। उस पीठ-पीछे किसी की बुराइ करना या किसी का बदनाम करना पसन्द नही था। वह ऊँचे स्वर म व्यर्थ की बातें करन मे तनिक भी विश्वास नही रखती थी। उस निरन्तर इस बात की चिन्ता सताती रहती थी कि जीवन साथी के सम्बन्ध म उसका भविष्य अनिश्चित था। कुछ लडकिया और लडका स उसकी मित्रता थी। लेकिन उसे अपनी सहेलिया की अपेक्षा अपन मित्र लडको के साथ रहन म अधिक आनन्द आता था क्योकि वह अनुभव करती थी कि पुरुष अधिक प्रबुद्ध हात हैं और इसलिए उनके ज्ञान तथा प्रज्ञा के विकास मे वे अधिक

योग द सकते है। लेकिन उसने बताया कि मित्रा तथा सगे-सम्बधियो का इतना बडा वृत्त होने के बावजूद वह बहुत अकेलापन अनुभव करती थी और एक पति और अपने घर की आवश्यकता को बहुत गहराई से अनुभव करती थी।

## व्यक्ति-अध्ययन संख्या 10

पैंतीस वर्षीया श्रीमती वासना आकर्षक भी थी और तेज भी। उनके मन मे हर चीज के बारे म उत्साह था और वह अपने भविष्य के बारे मे आशावान था। अपनी योग्यताओ के बारे म आवश्यकता स अधिक विश्वास और अपने स्पन्दनशील व्यक्तित्व के आभास के कारण उनमे दभ की प्रवत्ति भी थी। अपने हर काम म वह बहुत व्यावहारिक तथा दक्ष और बात करन म निडर और स्पष्टवादी थी। पिछले 11 वर्ष स वह सरकारी नौकरी कर रही था। उन्होने एम० ए०, बी० एड० पास किया था और 900 रुपये वेतन पाती थी।

वासना का जन्म एक प्रबुद्ध तथा उदार विचारो वाले परिवार म हुआ था। उसके पिता भी सरकारी नौकरी करत थ। उन्होन अपनी नौकरी क दौरान काफी पैसा कमाया था लेकिन चूकि वह बहुत फजूलखर्च थ, इसलिए उन्होने लगभग अपनी सारी कमाई अपनी नौकरी क दौरान ही खर्च कर दी थी और जिस समय उन्होने नौकरी से अवकाश प्राप्त किया उस समय वासना और उसकी बहनें काफी छोटी थी। उसके एक बडा भाई और दो छोटी बहनें थी। उसकी मा बहुत समझदार महिला थी, जिन्होने अपने पति की बेतुकी आदतो की वजह से बहुत दुख झेले थे, और उनके बीच अकसर झगडा भी चलता रहता था।

चूकि वासना का जन्म अपने बडे भाई के जन्म के बारह वर्ष बाद हुआ था, इसलिए उसकी मा उसे बहुत प्यार करती थी। चूकि उसे भी अपनी माँ स बहुत लगाव था इसलिए वह अपने बाप से भी इस बात पर झगडा कर लेती थी कि वह उनके साथ सम्मानपूर्ण बरताव क्यो नही करते। रिटायर होने के बाद उसके बाप ने कही और नौकरी कर ली थी और उसकी पढाई अच्छे स्कूलो म हुई थी। चूकि वह सूरत शक्ल की अच्छी और बहुत होशियार थी इसलिए स्कूल म उसकी बहुत सी सहेलियाँ थी और उसे बहुत से लोग पसन्द करते थ। जब उसने आई० एस सी० की पढाई पूरी कर ली तो उसके पिता की बडी इच्छा थी कि वह अपनी पढाई समाप्त कर द और विवाह कर ले। उसके भाई का विवाह हो चुका था और उन्होने अपना घर बसा लिया था। वह अपनी छोटी बहनो के प्रति बहुत उदासीन थे। लेकिन उसकी माँ, जिन्होंने स्वय बहुत दुख झेले थे उसे आगे पढाने के लिए बहुत उत्सुक थी। और वासना स्वय भी यह ठान चुकी थी कि वह कालेज की शिक्षा प्राप्त करेगी और आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनेगी। पिता की इच्छा के विरुद्ध उसकी माँ ने उसे बी० ए० बी० एड० तक पढाया।

बी० ए० बी० एड० की परीक्षा पास करते ही उसने पढाने की नौकरी कर ली

और आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बन गयी। उसने अपनी बहनो मे भी यह चेतना पैदा की कि वे उच्च शिक्षा प्राप्त करने के अपने अधिकार क लिए लडें और उसने अपन पिता को मजबूर किया कि उन्ह कालेज की शिक्षा दिलायें। पढान की नौकरी करते हुए ही उसने एम० ए० पास किया और उसे अपने एक मित्र लडके की सहायता से एक अध सरकारी सस्था मे नौकरी मिल गयी। डेढ साल तक वहा काम करने के बाद उसने कोशिश करके एक सरकारी नौकरी प्राप्त कर ली। उसे इतनी अच्छी नौकरी पान मे सफलता इसलिए मिली कि वह जानबूझकर एसे लोगो स जाकर मिली थी जो कुछ महत्त्व रखते थे। और वह उच्च सरकारी पदो पर नियुक्त ऐस लागो से मित्रता करती थी जो उसकी सहायता कर सकत थे। उसका कहना था, "मै ऐसे लोगा को मित्र बनाने मे विश्वास नहीं रखती थी जो किसी काम के न हो। मुझे ऐसे लोगा की सगत पसन्द है जिनके बडे बडे लोगा स सम्ब ध हो और जो स्वय ऊँचे ऊँचे पदो पर हा और साथ ही सहायता करन को भी तयार हो। महत्त्वहीन और प्रभावहीन लोगा के साथ उठना बैठना मैं समय की बर्बादी समझती हूँ।"

जब से उसने पढाना आरम्भ किया था और उसके बाद भी जब वह अपनी इस नौकरी पर जम गयी थी, उस इस बात का आभास था कि उसे कोई उचित वर ढूढकर अपना घर बसा लेना चाहिए। अनेक मित्र और प्रशसक होत हुए भी और अपनी निजी प्रतिष्ठा के साथ सुखी जीवन बिताने के बावजूद वह हमेशा विवाह कर लेन और एक पति तथा अपने घर की आवश्यकता अनुभव करती थी। इस पूरी अवधि म, जब वह पढाई म, नौकरी खोजने मे या अच्छी सरकारी नौकरी पाने के लिए जोड-तोड करने म व्यस्त रही, उचित पति की खोज उसन कभी नही छोडी। और यद्यपि विभिन्न प्रकार के लडको से उसकी मित्रता थी और उसके सामने विवाह के दो-तीन प्रस्ताव आए भी किन्तु उसने विवाह न करने का निणय इसलिए किया कि जिन लोगा ने उसके सामने उनकी विवाह का प्रस्ताव रखा था उनके पास अच्छी नौकरिया नहीं थी और समाज मे हैसियत ऊँची नही थी या फिर उनका चरित्र अच्छा नही था।

उसने बताया, "दो बार मैंने दो अलग अलग पुरुषो स मित्रता की, एक बार जब मैं पढाती थी और दूसरी बार जब मैं अध सरकारी नौकरी कर रही थी, विशेष रूप से विवाह करने के उद्देश्य से। लेकिन पहलेवाले के बारे म मुझे पता चला कि यद्यपि उसकी नौकरी भी बहुत अच्छी थी और उसका व्यक्तित्व भी बहुत प्रभावशाली था पर उसे कई दूसरी लडकिया मे भी रुचि थी। पहले तो मैंने अपना सारा ध्यान और सारा समय उसे देकर और उसक साथ विनम्रता, हार्दिकता और सहिष्णुता का बरताव करके अपनी ओर से पूरा प्रयत्न किया कि वह दूसरी लडकियो की ओर ध्यान देना छोड दे। मैंने जितना भी बन पडा उसके लिए आकषक बनन की भी कोशिश की और वह भी मुझे सराहता था और मुझ पर प्रशसा की बौछार करता था। लेकिन बाद मे मुझे पता चला कि उसकी प्रवत्ति ही रस चूसकर उड जानेवाल भँवरे जसी थी और वह दूसरी लडकियो से भी उतना ही प्रेम जताता था और जिस समय वह मुझसे विवाह करन

की प्रबल इच्छा व्यक्त करता था उसी समय वह दूसरी लड़कियों से भी इसी प्रकार की इच्छा व्यक्त करता रहा था। इसलिए मैं धीरे धीरे उससे खिंचती गयी। मेरे अहंभाव को कुछ ठेस तो अवश्य लगी कि मैं उसे पूरी तरह अपना बना लेने में विफल रही थी, पर इससे मैं बहुत विचलित नहीं हुई।" दूसरे के बारे में उसने बताया कि वह इस प्रकार का आदमी निकला जो चाहता था कि उसकी पत्नी बहुत आज्ञाकारी, घरेलू और बँधी लीक पर चलनेवाली लड़की हो, लेकिन इसके साथ ही मनोरंजन और अच्छी संगत के लिए वह उन औरतों से भी दोस्ती करना चाहता था जो अपने व्यवहार तथा व्यक्तित्व में आधुनिक, चुस्त चालाक, सम्पन्न और अपनी बात मनवा लेने वाली हों।

चूंकि वह बहुत स्पष्टवादी और बहिर्मुखी स्वभाव की थी इसलिए उसने यह भी वर्णन किया कि एक सम्पन्न अफसर को अपना पति बनाने में वह कैसे सफल हुई। उसने कहा, 'मैं दो आदमियों को अच्छी तरह जानती थी, एक बहुत अच्छे पद पर काम करनेवाला सरकारी अफसर था और दूसरा एक प्राइवेट कम्पनी में बहुत अच्छे वेतन पर काम कर रहा था, जिससे मेरा परिचय कई सरकारी आयोजनों में हुआ था। दोनों पढ़े-लिखे थे। एक बहुत हृष्ट पुष्ट और लम्बे कद का था और दूसरे का व्यक्तित्व तो इतना प्रभावशाली नहीं था पर उसकी नौकरी ज्यादा अच्छी थी। मेरी उनसे मित्रता हो गयी और मैं दोनों के साथ बहुत अच्छा बरताव रखती थी। मैंने उन दोनों को जानने और समझने की कोशिश की और दोनों के साथ बड़े प्यार का व्यवहार करती थी और मैं उनको अलग अलग विभिन्न स्थानों पर चाय पीने के लिए या खाना खाने के लिए बुलाती थी। मैं बारी बारी से उन दोनों के साथ मोटर की लम्बी सैर पर या सिनेमा देखने जाती थी और अपने प्रति दोनों की रुचि तथा आकर्षण बनाये रखती थी क्योंकि मैं स्वयं यह निर्णय करना चाहती थी कि मेरे लिए पति के रूप में कौन अधिक उपयुक्त होगा। जिस क्षण मुझे यह लगा कि मेरा वह मित्र जिसका व्यक्तित्व कम प्रभावशाली पर नौकरी ज्यादा अच्छी थी मुझसे विवाह करने को ज्यादा आसानी से तैयार हो जायगा उसी क्षण मैंने फैसला कर लिया कि मैं उसे अपने साथ विवाह करने के लिए तैयार करने और उसमें इस बात की इच्छा जगाने की भरपूर कोशिश करूँगी। मेरे मन में उसके प्रति गहरी भावनाएँ भी उत्पन्न हो गयी। और मैं उसकी ओर आकृष्ट भी होने लगी। मैं उस पर प्रशंसाओं की बौछार करने लगी और उसके प्रति प्रेम की भावनाएँ व्यक्त करने लगी। अपने दूसरे मित्र की अपेक्षा मैं उसके साथ अधिक समय बिताने लगी और उसकी ओर अधिक ध्यान देने लगी और मैंने बार बार उससे यह भी कहा कि अगर उसने मुझसे विवाह न किया तो मेरा जीवन नरक बन जायेगा। लेकिन मैंने दूसरे के साथ भी मित्रता बनाये रखी ताकि अगर एक हाथ से निकल जाये तो कम से कम दूसरे का तो सहारा रहे। अन्त में मैं उसी का प्रेम जीत लेने में सफल हो गयी जिस पर मैं अपना अधिकांश समय ध्यान और प्यार लुटा रही थी। और मुझे इस बात की खुशी है कि मैं उसके साथ विवाह कर लेने

में सफल भी हुई।"

वह बताती रही कि वह सज्जन भी जो अब उसके पति थे, किस प्रकार उसमें दिलचस्पी लेने लगे और अंत में उससे प्यार करने लगे। उसने बताया कि जब वह उनकी ओर ध्यान देने लगी और उनकी प्रशंसा करने लगी तो वह भी दिलचस्पी लेने लगे। 'लेकिन,' उसने बताया, 'वह मुझसे विवाह करने पर केवल इसलिए तैयार नहीं हो गये कि वह मुझसे प्यार करने लगे थे, या इसलिए कि मैं सुन्दर और चुस्त-चालाक थी या केवल इसलिए कि मैं विवाह करना चाहती थी। इसके विपरीत, उन्होंने भी ठंडे दिमाग से पूरी स्थिति का अध्ययन किया था, मेरी शिक्षा और मेरे परिवार की पृष्ठभूमि के बारे में पता लगाया था और यह समझ लिया था कि मैं नौकरी करती हूँ और विवाह के बाद भी काम करते रहने की मेरी योजना है। जब उन्हें पूरा भरोसा हो गया कि मुझमें ऐसे गुण हैं जो उनके लिए लाभप्रद सिद्ध होंगे तो उन्होंने भी जान-बूझकर मुझसे मित्रता और प्रेम के सम्बन्ध बढ़ाये और तब हम दोनों ने एक साथ अपनी प्रेम की भावनाओं को विकसित करने की योजना बनायी और ऐसा कर लेने पर एक-दूसरे से विवाह कर लेने का निर्णय किया।'

इस प्रश्न के उत्तर में कि तुम किस प्रकार के आदमी को अपने पति के रूप में सबसे अधिक पसन्द करती ?' उसने कहा, "एक पति के रूप में मैं ऐसा आदमी चाहती जो किसी अच्छे पद पर हो, जिसका व्यक्तित्व प्रभावशाली हो और जिसकी सामाजिक हैसियत ऊँची हो, जिसकी रुचियाँ सुसंस्कृत तथा परिष्कृत हों और जिसका दृष्टिकोण बहुत उदार तथा आधुनिक हो और जो मेरी भावनाओं का ध्यान रखे, मुझे प्रशंसा की दृष्टि से देखे और सराहे। बात यह है कि अच्छे से अच्छे विवाह के लिए भी प्रेम तो आवश्यक होता है। लेकिन विवाह एक ऐसी चीज होती है जिसमें आदमी से प्यार करना ही नहीं बल्कि उसके साथ रहना भी आवश्यक होता है। इसलिए किसी आदमी के साथ रहने के लिए वह उस प्रकार का होना चाहिए जैसा कि मैंने ऊपर बताया है। वह प्यार करनेवाला भी होना चाहिए लेकिन ईर्ष्यालु तथा एकाधिकारी प्रवृत्ति का न हो।" आगे चलकर उसने कहा, "मुझे अपने पति में ये सारे गुण तो नहीं लेकिन इनमें से बहुत से गुण मिले हैं। मेरा जीवन इतना व्यस्त है कि मुझे इस बात पर विचार करने का समय ही नहीं मिलता कि उनमें किन किन बातों की कमी है और हम सुनियोजित तथा व्यावहारिक जीवन पसन्द है और हम जीवन का यथासंभव भरपूर उपयोग करते हैं।'

"सुखी रहने के लिए तुम्हें सबसे अधिक आवश्यकता किस चीज की है? प्राथमिकता के क्रम के अनुसार तीन चीजों के नाम बताओ।" उससे जब यह प्रश्न किया गया तो उसने उत्तर दिया, 'मुझे एक नेक और अच्छी हैसियत वाले पति के साथ भौतिक सुख सुविधाएँ, घर-बार और बच्चे चाहिएँ। लेकिन मुझे दूसरों से ढेरों प्रशंसा तथा मान्यता और प्रतिष्ठा तथा ख्याति के साथ एक स्वतन्त्र हैसियत चाहिए। वह कहती रही, "देखिये, मैं बहुत बड़े दिल की, उदार और परि

मेरी रुचियाँ बहुत परिष्कृत हैं और मैं बहुत सहृदय तथा प्यार करनेवाले स्वभाव की व्यक्ति हूँ। इसलिए मैं चाहती हूँ और मुझे इसकी आवश्यकता है कि मुझे दूसरों से ढेर प्रशंसा और सराहना मिले और सुखी रहने के लिए मुझे ढेर पैसा भी चाहिए। और चूँकि मुझे इनमें से अधिकांश चीजें प्राप्त हैं जिनकी मुझे सुखी रहने के लिए आवश्यकता है इसलिए मैं सुखी रहती हूँ और मैंने अपने जीवन को और अधिक सफल तथा सुखी बनाने का संकल्प कर रखा है।"

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कि 'तुम्हारे लिए प्रेम का क्या अर्थ है?' उसने कहा 'बात यह है कि प्रेम एक बहुत व्यापक शब्द है जिसमें एक ओर पुरुषों तथा स्त्रियों के बीच शुद्ध काम-प्रेरित आकर्षण की भावनाओं से लेकर दूसरी ओर आध्यात्मिक प्रेम—ईश्वर से प्रेम—की भावनाओं तक सभी कुछ आ जाता है, जिसमें मनुष्य के बीच हार्दिकता तथा पारस्परिक चिंता की प्रबल भावनाएँ भी शामिल हैं। प्रेम वस्तुतः एक प्रकार की आदत होती है जिसमें दूसरे के बिना संवेगात्मक तथा शारीरिक दृष्टि से जीवन ही असम्भव हो जाता है। मेरे लिए प्रेम का अर्थ है दो विपरीतलिंगी व्यक्तियों के बीच गहरा लगाव जो वैयक्तिक हित तथा मनस्ताप के लिए विकसित किया जाता है। मैं समझती हूँ कि प्रेम का अर्थ है पारस्परिक सराहना तथा काम भावना की संतुष्टि।' आगे चलकर उसने यह भी कहा 'मैं किसी को देखते ही उसे अच्छी तरह जाने बिना उससे प्यार करने लगने में विश्वास नहीं रखती। क्योंकि मैंने कई ऐसी नासमझ लड़कियों के बारे में सुना है और मैं कई ऐसी लड़कियों को जानती हूँ, जिनमें मेरी एक मौसी भी हैं जो किसी आदमी को देखते ही मूर्खों की तरह उससे प्रेम करने लगीं और उन्होंने यह पता लगाये बिना ही उससे विवाह कर लिया कि वह करता क्या है और विवाह के बाद वह रुपये-पैसे की दृष्टि से क्या सुरक्षा और सुख सुविधा प्रदान कर सकता है। नतीजा यह हुआ कि 'सुनहरी रातों के सपनों' और 'रोमांटिक कल्पना की उड़ानों' के समाप्त हो जाने पर दोनों ही को यह जानकर बड़ी निराशा हुई कि वे खाली हवा और प्रेम पर जीवित नहीं रह सकते जैसा कि उन्होंने शायद अनजाने में समझ रखा था। और चूँकि मेरी मौसी को सुख सुविधा के जीवन की आदत थी, इसलिए जब उसे नौकरी करनी पड़ी और बहुत कष्टमय जीवन व्यतीत करना पड़ा तो वह बहुत झुँझलाने लगी। धीरे धीरे दोनों एक दूसरे में दोष निकालने लगे और एक दूसरे के बारे में इस बात पर जोर देने लगे कि वे विवाह से पहले जो जानते थे उसकी तुलना में काफी निराशाजनक और भिन्न थे। यद्यपि उन्होंने एक-दूसरे से सम्बन्ध-विच्छेद नहीं किया है पर वे बहुत दुखी रहते हैं और एक-दूसरे को बर्दाश्त नहीं कर पाते। इसलिए मैं समझती हूँ कि यदि प्रेम को सफल होना है तो उसमें जीवन की ठोस व्यावहारिकता का गुण होना चाहिए और उसके प्रति पूरा यथार्थ दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए। मैं किसी भी लड़के से उसके गुणों तथा उसकी आर्थिक स्थिति के बारे में जाने बिना मित्रता या किसी प्रकार का लगाव पैदा नहीं करना चाहूँगी।

आगे चलकर उसने कहा, "मैं नि स्वार्थ प्रेम या मात्र कुछ त्याग देनेवाले प्रेम में भी विश्वास नहीं करती। प्रेम कुछ देने और कुछ पाने का सौदा है और अगर हम किसी दूसरे पर कोई उपकार करते हैं तो उसे भी उसके बदले में वैसा ही करना चाहिए। नहीं तो प्रेम धीरे धीरे मर जाता है।" वह कहती रही, "केवल वही लोग प्रेम कर सकते हैं और प्रेम पा सकते हैं जिनमें सजग रूप में प्रेम को खोजने तथा जीवन से सन्तुष्टि पाने की क्षमता हो। यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि सच्चे प्रेम का अर्थ अडिग श्रद्धा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। ऐसा क्यों हो ? यह एक भावना है जिसे न्यूनाधिक रूप में अपने हित में विकसित किया जा सकता है और जब तक उससे लाभ होता रहता है तब तक वह बनी रहती है।" बातचीत के दौरान उसने बताया, "जीवन से सन्तोष प्राप्त करने के लिए प्रेम को उन्मुक्त तथा निर्बन्ध होना चाहिए और जब तक उससे सम्बन्धित व्यक्तियों को सन्तोष मिलता रहे तब तक उसे बना रहना चाहिए। जैसे ही इस सवेग अथवा भावना का क्रम भंग हो जाये उसी क्षण यह सम्बन्ध भी समाप्त हो जाना चाहिए। परन्तु इसके साथ ही उसे लक्ष्यहीन या किसी ठोस उद्देश्य से रहित भी नहीं होना चाहिए। मैं अन्धे प्रेम में विश्वास नहीं करती जो मेरे विचार से केवल गल्प-साहित्य में पाया जाता है या उन लोगों के लिए होता है जिनमें वास्तविकताओं से जूझने और जीवन से अधिकतम सुख प्राप्त करने की क्षमता नहीं होती।"

लेकिन जब उससे पूछा गया, "क्या तुम्हें किसी को अपना प्रेम देने की अपेक्षा प्रेम प्राप्त करने में अधिक सन्तोष मिलता है ?" तो उसने उत्तर दिया, "मैं बिल्कुल स्पष्ट कहूँ तो मुझे किसी को अपना प्रेम देने की अपेक्षा प्रेम प्राप्त करने में अधिक सुख मिलता है। मुझे दूसरों को अपना स्नेह या प्रेम देकर भी आनन्द प्राप्त होता है, लेकिन अधिकांशत उन लोगों को जिनके बारे में मैं चाहती हूँ कि किसी न किसी उद्देश्य से उनके साथ मेरा लगाव हो। मैं इसमें विश्वास नहीं करती कि मैं दूसरों पर अपना प्रेम लुटाती रहूँ और बदले में उनका ध्यान, प्रशंसा और प्रेम न प्राप्त कर सकूँ। मुझे उस स्थिति में भी दूसरे का प्रेम प्राप्त करके बहुत सन्तोष मिलता है जब मैं स्वयं इसके बदले में उसे अपना प्रेम न दूँ।"

इस प्रश्न के उत्तर में कि "तुम्हारी राय में, साधारणतया किसी पुरुष के प्रेम का स्त्री के जीवन में क्या योगदान होता है ?" उसने कहा "इससे शारीरिक सन्तोष में, प्रशंसा तथा प्रेम प्राप्त करने की आवश्यकता की तुष्टि में, पति, घर तथा बच्चे होने की आवश्यकता की तुष्टि में योगदान मिलता है। इसमें स्त्री के अभिमान को भी सन्तोष मिलता है और आर्थिक तथा सवेगात्मक सुरक्षा और सामाजिक प्रतिष्ठा भी प्राप्त होती है। परन्तु यदि प्रेम केवल वासना हो तो उससे केवल काम भाव की तुष्टि होती है और सो भी तब यदि उस स्त्री को भी शुद्धत शारीरिक तुष्टि के प्रति उतनी ही रुचि हो। अन्यथा इसमें केवल उसके विश्वास तथा प्रेम का शोषण होता है।" आगे चलकर उसने कहा कि वह किसी पुरुष और स्त्री के प्रेम को, भले ही वह शुद्धत शारीरिक हो, पतित समझने में विश्वास नहीं करती। उसने कहा कि वह बर्ट्रेंड रसेल

के इस कथन से सहमत है कि प्रेम से डरना जीवन से डरना है और जो जीवन से डरते हैं वे यों ही आधे मर चुके होते हैं।

जब उससे पूछा गया, 'तुम्हारी राय में, किसी स्त्री के जीवन में, आमतौर पर शारीरिक प्रेम की भूमिका कितनी महत्त्वपूर्ण होती है?" तो उसने उत्तर दिया, "देखिए, मैं समझती हूँ कि उसकी भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है और यह कहना कि सच्चा प्रेम निष्काम होता है और शारीरिक प्रेम गन्दगी है सरासर गलत है। एक स्त्री की भी शारीरिक आवश्यकताएँ होती हैं जिनकी तुष्टि होनी चाहिए। वास्तव में पति और पत्नी के बीच इसकी भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है।' जब उससे पूछा गया, "तुम किस बात के पक्ष में हो, सेक्स से मुक्त प्रेम के या सेक्स सम्बन्ध सहित प्रेम के?" तो उसने उत्तर दिया जैसा कि मैं पहले कह चुकी हूँ, मैं बिना किसी अन्तिम उद्देश्य के प्रेम के पक्ष में बिल्कुल नहीं हूँ और यदि वह उद्देश्य पूरा होता रहे तो स्थिति के अनुसार मैं इन दोनों में से किसी के भी पक्ष में हूँ।' जब उससे पूछा गया, "क्या तुम शुद्ध प्लेटोनिक या निष्काम प्रेम में विश्वास करती हो, अर्थात ऐसा प्रेम जिसमें सेक्स का अंश न हो?" तो उसने उत्तर दिया, "मैं किसी भी स्त्री और पुरुष के बीच, उनको छोड़कर जिनमें आपस में रक्त के सम्बन्ध हों, निष्काम प्रेम में विश्वास नहीं करती। यदि वे एक दूसरे से प्रेम करते हैं और उन्हें अक्सर अकेले में एक दूसरे के साथ रहने का मौका मिलता है तो स्वाभाविक रूप से कुछ समय बाद उनके बीच चाहे अनचाहे सेक्स-सम्बन्ध विकसित हो जायेंगे।" इस प्रश्न के उत्तर में कि "क्या तुम समझती हो कि कोई स्त्री एक ही समय में एक से अधिक पुरुषों से प्रेम कर सकती है?" उसने कहा, "मैं नहीं जानती कि वास्तव में यह प्रेम है क्या चीज, लेकिन निश्चित रूप से कोई स्त्री किसी विशिष्ट उद्देश्य से एक ही समय में एक से अधिक पुरुषों के साथ नेकी, प्रेम और घनिष्ठता का बरताव कर सकती है। परन्तु वह कोई उलझाव पैदा किये बिना भी ऐसा कर सकती है, शर्त केवल यह है कि वह इतनी बुद्धिमान हो कि स्थिति को बड़ी होशियारी से सम्भाले रहे।

कुल मिलाकर वह बड़ी उत्साहमयी लड़की थी जीवन के प्रति जिसका दृष्टिकोण व्यापक और विचार बहुत आशावान थे। उसे स्वयं अपने पर और अपनी क्षमताओं पर पूरा भरोसा था और चूँकि उसे अपने माता पिता तथा मित्रों से हमेशा जो कुछ मिला था वह श्रेष्ठतम ही था, इसलिए उसे जीवन में अपना भाग ढूँढ लेने का भरपूर भरोसा था। चूँकि उसका पालन पोषण धनी लोगों के परिवार में हुआ था और उसने देखा था कि उसकी मौसियों, बुआओं, मामाओं, चाचाओं और रिश्ते के भाई बहनों के विवाह हो चुके थे और उन्हें वे सारी सुख-सुविधाएँ उपलब्ध थीं जो पैसे से खरीदी जा सकती हैं, इसलिए जीवन में उसकी सबसे प्रबल इच्छा किसी धनवान अफसर से विवाह करने की थी और उसने अपना यह लक्ष्य किसी भी प्रकार प्राप्त कर लिया था।

जीवन में उसकी अपनी निश्चित योजनाएँ थीं और उसे दूसरे लोगों की बहुत

अधिक चिन्ता नही थी। वह पूरी तरह अपनी ही योजनाओ मे डूबी रहती थी और उसका सारा ध्यान और सारी शक्तियाँ अपने ही पर केन्द्रित रहती थी। उसे अपने शारीरिक रग रूप, आकर्षण, प्रतिभा, योग्यताओ, बुद्धिमत्ता और उपलब्धियो की आवश्यकता से अधिक आभास था। वह एक प्रभावशाली व्यक्तित्ववाली सुसस्कृत लडकी थी, जिसका सोचने का ढग बहुत व्यावहारिक और जिसकी योजनाएँ बहुत सोची समझी हुई तथा उद्देश्यपूर्ण थी। यह निश्चित था कि वह जीवन से जो कुछ भी प्राप्त करना चाहगी प्राप्त कर लेगी, क्योकि उसकी यह दृढ धारणा थी कि किसी भी स्त्री या पुरुष का जीवन मे अपना लक्ष्य, या अपने लक्ष्य प्राप्त करने मे अन्य किसी भी चीज से बढकर सहायता महत्त्वाकाक्षा और दृढ सकल्प से मिलती है।

## व्यक्ति-अध्ययन सख्या 15

पच्चीस वर्षीया पमिला चुस्त चालाक और आकर्षक लडकी थी। वह आधुनिक पोशाक पहने थी और उसका शरीर बहुत सुडौल तथा आकर्षक था। वह बहुत फुर्तीली तथा सजग थी और उसका चेहरा बहुत स्वस्थ तथा आभामय था। वह एम० ए० पास थी और 750 रुपये मासिक वेतन पर एक अर्ध सरकारी नौकरी कर रही थी।

पमिला का जन्म एक सुशिक्षित तथा उन्नत विचारो वाले परिवार मे हुआ था। उसने एक अच्छे पब्लिक स्कूल मे शिक्षा पायी थी और अपने पिता की उच्च तथा महत्त्वपूर्ण सामाजिक प्रतिष्ठा के कारण वह बहुत ही शिष्ट, सभ्य तथा सुसस्कृत लोगो के बीच उठती बैठती थी। स्कूल म उसके सभी मित्र, चाहे वे लडके हो या लडकियाँ बहुत ही सम्पन्न तथा पाश्चात्य ढग के रहन-सहन वाले परिवारो के थे। वह अपने माता पिता की इकलौती बेटी थी और उसके एक भाई था जो उससे केवल दो वर्ष बडा था। माता पिता दोनो के साथ एक जैसा व्यवहार रखते थे, दोनो एक ही पब्लिक स्कूल मे पढे थे और पढाई के दौरान तथा उसके बाद भी, जब उसने अपनी पढाई पूरी कर ली थी इग्लैंड और अमेरिका हो आये थे। वह लदन पढाई के बाद अतिरिक्त प्रशिक्षण प्राप्त करने गयी थी। उसके बाद उसने नौकरी कर ली थी, अधिकतर अपने को उपयोगी ढग से व्यस्त रखने तथा बौद्धिक सन्तोष और उद्दीपन के लिए और इसके साथ ही इस उद्देश्य से भी कि उसे अच्छे लोगो से मिलने जुलने का अवसर मिलेगा और वह आर्थिक दृष्टि से स्वावलबी रहेगी।

जब वह स्कूल मे पढती थी तभी से कई लडकियो और लडको से उसकी दोस्ती थी। उसने बिल्कुल स्पष्ट शब्दो म यह भी बताया कि वह तीन चार मर्दों से प्रेम करती थी—एक प्रोफेसर, एक कलाकार, एक राजनीतिज्ञ और एक विदेशी छात्र। इनके प्रति उसके मन मे बडा आदर था और वे सब भी उससे प्रेम करते थे। उसने बताया कि वह उनमे से प्रत्येक से उनके अलग अलग गुणो के कारण प्रेम करती थी और उनमे से प्रत्येक के साथ अपने सम्बन्धो से उसे अलग अलग प्रकार का सन्तोष मिलता था और उनमे से प्रत्येक के साथ रहने मे उसे भरपूर आनन्द मिलता था।

परन्तु अब तक उसे कोई ऐसा पुरुष नहीं मिला था, जिसके साथ वह विवाह करना चाहे। उसने यह भी कहा कि वह पारम्परिक अर्थ में विवाह करने की बात सोच भी नहीं रही थी।

प्रेम के अर्थ के बारे में और जीवन में सुख पैदा करने में, प्रेम के महत्त्व के बारे में, उसके विचारों तथा मतों से सम्बन्धित उससे जितने भी प्रश्न पूछे गये उन सबके उत्तर सारत न्यूनाधिक रूप में वैसे ही थे जैसे वासना ने दिये थे (व्यक्ति अध्ययन संख्या 10) और उसने लगभग वैसे ही मत व्यक्त किये। लेकिन प्रेम सम्बन्धों की चर्चा करते हुए उसने कहा कि वह 'स्वच्छन्द प्रेम' में विश्वास रखती है। जब उससे पूछा गया कि स्वच्छन्द प्रेम से उसका क्या अभिप्राय है तो उसने कहा कि स्वच्छन्द प्रेम से उसका अभिप्राय है प्रतिबद्धताओं या दायित्वों के बिना किसी से भी प्रेम करने की स्वतन्त्रता। उसने कहा "मेरा विश्वास है कि प्रेम स्वतःस्फूर्त तथा पारस्परिक होना चाहिए और प्रेम सम्बन्ध केवल तभी तक रहना चाहिए जब तक वह उस सम्बन्ध में बँधे हुए दोनों व्यक्तियों को सन्तोष तथा उल्लास देता रहे और जिस क्षण उनमें से किसी एक को भी उससे सन्तोष तथा सुख मिलना बन्द हो जाये यह सम्बन्ध भी भंग हो जाना चाहिए।" आगे चलकर उसने कहा, "प्रेम को कर्तव्य नहीं समझा जाना चाहिए और वह किसी पर थोपा नहीं जाना चाहिए और सम्बन्धित व्यक्ति पर उसके कारण दायित्वों अथवा प्रतिबद्धताओं का बोझ नहीं पड़ना चाहिए। सभी व्यक्तियों को लड़कों को भी और लड़कियों को भी, पारस्परिक सन्तोष के लिए इच्छानुसार किसी के भी साथ प्रेम के सम्बन्ध स्थापित करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए और उन्हें पूरी सद्भावना के साथ और एक दूसरे के प्रति किसी भी प्रकार के द्वेष अथवा कुत्सा के बिना इस सम्बन्ध को जब चाहे तोड़ देने की भी स्वतन्त्रता होनी चाहिए।" उसने कहा, 'प्रेम को प्रेम की माँग के अतिरिक्त और कोई माँग नहीं करनी चाहिए और उसे किसी व्यक्ति के साथ उसी समय तक जारी रखा जाना चाहिए जब तक वह उस रूप में अनुभव किया जाता रहे।"

एक और बात जिस पर पमिला ने जोर दिया वह थी 'प्रेम की निरवरोध अभिव्यक्ति'। उसने कहा, 'मैं न केवल स्वच्छन्द प्रेम में विश्वास करती हूँ बल्कि प्रेम की उन्मुक्त अभिव्यक्ति में भी। मेरी दृढ़ भावना है कि लड़कों और लड़कियों में अकारण ही यह भावना नहीं पैदा की जानी चाहिए कि दूसरों की उपस्थिति में हार्दिक तथा सच्चे प्रेम की कोमल तथा नाजुक भावनाओं को आलिंगन अथवा चुम्बन जैसी स्वतःस्फूर्त क्रियाओं से प्रकट अभिव्यक्ति लज्जास्पद तथा अनैतिक है। उससे वे बन्द कमरों में रहने के लिए विवश हो जायेंगे कि अपनी भावनाओं को व्यक्त मात्र करने के लिए वे स्वजनों से भागकर सुदूर तथा गुप्त स्थानों की शरण लें, और उन तनावपूर्ण परिस्थितियों में इसकी सम्भावना अधिक होगी कि उनका आचरण अवांछनीय हो।

उसने आग्रहपूर्वक कहा कि उसका दृढ़ विश्वास है कि यदि दो व्यक्तियों के बीच विवाह से पहले और विवाह के बाद भी एक दूसरे के प्रति प्रेम, आदर, समवेदना तथा

लगाव की भावनाएं हों, तो उन्हें शारीरिक रूप से एक-दूसरे के सामीप्य की स्वतन्त्रता होनी चाहिए—हाथ पकड़कर बैठना, गालों को चूमना, और दूसरों की उपस्थिति में एक दूसरे का आलिंगन करना। उसकी दृढ़ भावना थी कि प्रेम की अभिव्यक्ति निष्कपट तथा निरवरोध होनी चाहिए और केवल ऐसी अवस्था में ही लोग अपनी भावनाओं तथा व्यवहार में साहस, ईमानदारी तथा सच्चाई पैदा कर सकते हैं अन्यथा वे बेईमानी, झूठ और सबसे बढ़कर मक्कारी करने पर मजबूर हो जायेंगे। वह ऐसे मक्कार लोगों को बिल्कुल पसन्द नहीं करती थी, बल्कि उसने उनकी कड़ी आलोचना की जो दूसरों के सामने तो एक दूसरे से कई हाथ दूर बैठेंगे और आपस में बात भी नहीं करेंगे और ऐसा जतायेंगे मानो प्रेम या मित्रता तो दूर रही उनके बीच किसी प्रकार का औपचारिक सम्बन्ध भी नहीं है जबकि दूसरों की नजरों से दूर अकेले में वे घनिष्ठतम शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने से भी नहीं चूकेंगे। उसने कहा कि लड़कों और लड़कियों दोनों ही को यह सिखाया जाना चाहिए कि वे अपनी भावनाओं के बारे में और अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति में साहस तथा ईमानदारी का परिचय दें और बिना किसी संकोच के सत्यनिष्ठ रहें।

अन्त में उसने बड़ी निर्भीकता से कहा, 'मैं अपनी भावनाओं के बारे में हमेशा बहुत ईमानदार रही हूं और मैं दूसरों के सामने भी अपने प्रेम के पात्र को बड़े प्यार से सम्बोधित करके और उसके प्रति प्यार तथा कोमलता का व्यवहार करके अपने संवेगों को स्वतःस्फूर्त ढंग से व्यक्त करती हूं। परन्तु मुझे बहुधा इस बात पर बहुत निराशा हुई है बल्कि क्रोध भी आया है कि उन्हीं पुरुषों ने जिनसे मैं प्रेम करती रही थी मुझे इस बात पर झिड़क दिया है कि मैंने सबके सामने इस तरह खुलकर अपनी भावनाओं को क्यों व्यक्त किया। उनमें से अधिकांश का यही आग्रह रहा है कि सबके सामने तो मैं भोली और मासूम बनी रहूं और दूसरों की उपस्थिति में हम एक दूसरे के प्रति बिल्कुल औपचारिक व्यवहार रखें और पर्दों के पीछे जब दोनों अकेले में हों तो एक दूसरे की बांहों में समा जाएं। पारस्परिक हार्दिकता, कोमलता, सच्ची समवेदना तथा प्रेम व्यक्त करने के लिए नहीं बल्कि यथासम्भव न्यूनतम समय में शुद्धतः अपनी शारीरिक भूख अथवा वासना को तुष्ट करने के लिए। और यह बात मेरे लिए सर्वथा घृणास्पद है।"

वह कहती रही, "मुझे ऐसे पुरुषों का अनुभव हुआ है और इसीलिए अब मुझे किसी ऐसे पुरुष के साथ सम्बन्ध रखने से घृणा हो गयी है जो मक्कार हो और जिसमें अपने दृढ़ विश्वास को व्यक्त करने का साहस न हो और जिसे अपनी ख्याति और नाम की बड़ी चिन्ता लगी रहती हो। मैं समझती हूं कि ऐसे कपटी लोगों ने कभी यह जाना ही नहीं है कि प्रेम क्या होता है। उन्होंने केवल अकेले में दूसरे व्यक्ति का अनुचित लाभ उठाना और अपनी वासना का तृप्त करना सीखा है। प्रेम करने का अर्थ होता है कोमलता, सहृदयता तथा सहिष्णुता का व्यवहार करना और प्रेम के पात्र की भावनाओं भावों और उसके कल्याण की चिन्ता रखना, उसका अर्थ केवल एकतरफा

सेक्स किया नहीं है। अन्त मे उसने कहा "काश, ऐसे पुरुषो को इस बात का ज्ञान होता कि स्त्री से प्रेम कैसे किया जाता है और किस समय किसके साथ प्रेम किया जाना चाहिए।"

नीचे कुछ ऐसी श्रमजीवी महिलाओ के वक्तव्यों के रूप मे, जिनके व्यक्ति अध्ययनो का विस्तृत वर्णन अगले दो अध्यायों मे—अध्याय तीन और चार मे किया गया है प्रेम के सम्बन्ध मे कुछ प्रारूपिक विचार दिये जा रहे हैं।

**व्यक्ति अध्ययन संख्या 17** सुमन ने कहा, "मैं चाहती हूँ कि मेरा पति हो, घरबार हो बच्चे हों। जहाँ तक प्रेम का सवाल है, हो सकता है कि वैवाहिक सम्बन्धों का सूत्रपात उससे न हो लेकिन बाद मे चलकर वैवाहिक जीवन के दौरान कोशिश करके और धीरज के साथ उसे विकसित किया जा सकता है। मैंने अपने माता पिता और उनके मित्रों के बारे में देखा है कि जब उनका विवाह हुआ था तो वे एक दूसरे के लिए बिल्कुल अजनबी थे, परन्तु बाद में उनके बीच ऐसा प्रेम विकसित हुआ जो रोमांटिक न होते हुए भी वास्तविक तथा सन्तोषप्रद था। मैं देखती हूँ कि वे एक दूसरे के साथ पूर्ण सामंजस्य के साथ रहते हैं और उनका वैवाहिक जीवन काफी सुखी है।

**व्यक्ति अध्ययन संख्या 32** रश्मि ने कहा, 'प्रेम के बिना सेक्स अपना पर्याप्त नहीं होती क्योंकि उससे मानवता मे कुछ कमी पैदा होती है और वह इतनी नीरस रह जाती है कि सन्तोषप्रद नहीं होती है।" उसने आगे चलकर कहा, 'मैं समझती हूँ कि स्त्री केवल सेक्स की भूखी नहीं होती बल्कि वह पूर्ण प्रेम चाहती है जो उसे शायद ही कभी मिलता हो।" उसने आगे चलकर कहा, 'हां मोह और प्रेम के बीच बहुत अन्तर होता है। प्रेम अपने आप ही नहीं जाता। उसके लिए योजना बनानी पड़ती है और निर्णय करना पड़ता है और एक व्यक्ति को चुनकर उससे प्रेम किया जाता है।

**व्यक्ति अध्ययन संख्या 7** सोनिया ने कहा रोमांटिक प्रेम मे प्रेम के पात्र को कभी न पूरी हो सकने वाली आशाओं और स्वप्नों से सजा-सँवारकर चमक दमक प्रदान की जाती है और उसे आदर्श बना दिया जाता है।

**व्यक्ति अध्ययन संख्या 24** सीता ने कहा, 'मैं समझती हूँ कि मानवता का अनुभव करने का सबसे अधिक सन्तोषप्रद तथा श्रेष्ठतम मार्ग लोगों के बीच विश्वास तथा प्रेम के सम्बन्ध का माध्यम है। उस प्रकार के सम्बन्ध में ऐसा अनुभव प्राप्त होता है जो लगभग आध्यात्मिक होता है जिसके बिना मनुष्य विनाशकारी तथा उदास बन जाता है।'

**व्यक्ति अध्ययन संख्या 7** माया ने अपना मत व्यक्त करते हुए कहा, "मैं समझती हूँ कि यह सम्भव भी है और सामाजिक दृष्टि से वांछनीय भी कि एक स्त्री एक ही समय में एक से अधिक पुरुषों से और एक पुरुष एक से अधिक स्त्री से प्रेम करे। विवाह से किसी व्यक्ति की दूसरों के प्रति अपना स्नेह व्यक्त करने की क्षमता समाप्त तथा अवरुद्ध नहीं हो जानी चाहिए।"

**व्यक्ति अध्ययन संख्या 39** भारती ने आग्रहपूर्वक कहा "मैं समझती हूँ कि प्रेम का आधार सराहना है और कम से कम मैं तो केवल उसी व्यक्ति से प्रेम कर सकती हू जिसे मैं उसके हृदय तथा मस्तिष्क के गुणों के कारण सराह सकू।"

**व्यक्ति अध्ययन संख्या 45** शालिनी ने विचारमग्न होकर कहा, "यद्यपि मैं यह तो नही कहती कि प्रेम नैसर्गिक अथवा प्लेटोनिक या निष्काम होता है, लेकिन इसके साथ ही मेरा यह दृढ विश्वास भी है कि यदि दो विषमलिंगी व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धो मे सेक्स के तत्त्वों का प्रवेश हो जाये तो वैवाहिक बन्धन के बिना प्रेम को गहन तथा उदात्त रूप म अनुभव करते रहना सम्भव ही नही है। वास्तव मे मेरा तो मत यह है कि प्रेम चिरस्थायी तथा आदरपूर्ण तभी रह सकता है, जिसमे दोनो मे दूसरे को सुखी बनाने के लिए सब कुछ करने की इच्छा हो, जब दोनो एक दूसरे के साथ काफी समय बिताने के बावजूद अपने पारस्परिक सम्बन्धो मे सेक्स का प्रवेश न होने दे। सेक्स के तत्त्व का प्रवेश होने से पारस्परिक सम्मान तथा सराहना दूषित हो जाती है और साथ ही प्रेम का वह उदात्त रोमांटिक प्रभाव भी दूषित हो जाता है जिसका अपना अलग ही एक अनोखा आकर्षण होता है। मैं तो चाहती हूँ कि मैं किसी अन्य पुरुष के साथ गहरा पारस्परिक प्रेम का अनुभव कर सकती जिसमे उस समय तक सेक्स के तत्त्व का प्रवेश होता ही नही जब तक कि हमारा विवाह न हो जाता, यदि कभी भी हमारा विवाह होता। विवाह के बाद भी दूसरे पुरुष के साथ प्रेम हो सकता है परन्तु उसके साथ शारीरिक घनिष्ठता स्थापित हुए बिना। लेकिन मैं ठीक से नही बता सकती कि इस प्रकार का सम्बन्ध वास्तविक है या केवल स्वप्न।"

प्रेम के बारे मे अपनी संकल्पना व्यक्त करते हुए उसने कहा, 'मैं समझती हूँ कि प्रेम एक अनवरत भावना है जो बहुत गहरी तथा समय के बन्धन से मुक्त है। प्रेम मे सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह होती है कि जिस व्यक्ति से आप प्रेम करें वह आपके साथ बिल्कुल एकाकार हो जाये और इस रूप मे उसका सुख भी आपके लिए उतना ही महत्त्वपूर्ण, शायद उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाये जितना कि आपका अपना सुख है और आप उसे सदा सुखी रखने की इच्छा करने लगें और उसके लिए पूरी कोशिश करें। और जिस व्यक्ति से आप प्रेम करें उसी के सुख मे आपको भी सुख तथा सन्तोष मिले।"

## अभिमत

इन व्यक्ति अध्ययनो को पढने पर, और विशेष रूप से जिन शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों का अध्ययन किया गया उनसे पूछे गये प्रश्नों पर उनके प्रत्युत्तरों का अध्ययन करने पर, कुछ अभिवृत्तियाँ बार बार सामने आती है और प्रेम के प्रति इन स्त्रियों की इन्ही बार-बार सामने आनेवाली अभिवृत्तियों मे होनेवाले परिवर्तन की यहा विवेचना की गयी है।

## प्रेम की संकल्पना

'माता पिता तथा सन्तान के प्रेम' की संकल्पना में तो प्राय कोई भी परिवर्तन नहीं हुआ है लेकिन यह देखा गया है कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों में पुरुष स्त्री की संकल्पना बदल गयी है। जिन दो विभिन्न समयों पर उनके विचारों का पता लगाया गया उन दोनों ही समयों पर उन्होंने यही मत व्यक्त किया कि सन्तान के प्रति माता पिता का प्रेम एक उदात्त तथा कोमल भावना है जो त्यागपूर्ण, निःस्वार्थ तथा अच्छी है। वे यह भी अनुभव करती थीं कि हर व्यक्ति के लिए माता पिता का प्रेम नितान्त आवश्यक है और किसी भी व्यक्ति को स्वस्थ, प्रेममय तथा सहिष्णु बनाने तथा बनाये रखने के लिए इसका बहुत महत्त्व है। उनका यह भी विश्वास था कि अपनी सन्तान के लिए माता पिता का निःस्वार्थ बल्कि एकतरफा लगाव तथा प्रेम ही सबसे पहले उसे आत्म विश्वास प्रदान करता है और सकारात्मक दृष्टि से उसमें सुरक्षा तथा संरक्षण का आभास उत्पन्न करता है। यह उसे संसार का सामना करने की शक्ति देता है और उसमें किसी का होकर रहने की भावना और साथ ही एक आत्म बिम्ब उत्पन्न करता है। यद्यपि दोनों ही समयों पर शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों में माता पिता के प्रेम के प्रति उपर्युक्त अभिवृत्ति पायी गयी, परन्तु दस वर्ष पहले वे अपने माता पिता के प्रति उससे अधिक सहिष्णु थीं, उनसे उनको उससे अधिक गहरा लगाव था और उन्हें उनकी भावनाओं तथा भावों की उससे अधिक चिन्ता थी जितनी कि दस वर्ष बाद पायी गयी। स्त्रियों के जिस समूह का अध्ययन दस वर्ष बाद किया गया उनमें त्याग, चिन्ता तथा माता पिता के सुख तथा आराम के लिए कुछ करने की अभिवृत्ति पहले की अपेक्षा कहीं कम थी। इस प्रकार सन्तान के मन में माता पिता के लिए चिन्ता तथा प्रेम में तो परिवर्तन आ गया था जबकि सन्तान के प्रति माता पिता का प्रेम लगभग पूर्ववत् बना हुआ था।

दस वर्ष की अवधि बीत जाने पर पुरुष तथा स्त्री के बीच प्रेम के प्रति उनकी अभिवृत्ति में बहुत परिवर्तन पाया गया। पहले यह देखा गया था कि यह अभिवृत्ति इस बात पर केन्द्रित थी और उसकी मान्यता यह थी कि प्रेम मानव का सबसे उदात्त संवेग है जिसके बिना जीवन का कोई मूल्य नहीं है और जिसमें प्रेम को एक ऐसी शक्ति या बल माना जाता था जो उसे अनुभव करनेवाले व्यक्ति को प्रेम के लिए या प्रेम के पात्र की खातिर हर त्याग करने के लिए तत्पर कर देता था। प्रेम का अर्थ समझा जाता था कुछ देना कुछ त्याग करना और जिसमें निजी लाभ अथवा हित का कोई विशिष्ट स्वार्थपूर्ण उद्देश्य न हो। प्रेम को हर प्रतिबन्ध से मुक्त एक ऐसी निष्ठा या लगन माना जाता था जो सर्वथा स्वार्थहीन होती थी और जिसमें प्रेम के बदले कुछ माँगे बिना प्रेम करने के आनन्द की खातिर सब कुछ त्याग देने की भावना रहती थी। दस वर्ष बाद यह देखा गया कि यह अभिवृत्ति प्रेम को एक ऐसा अनुभव या भावना मानने की हो गयी थी जो एक आदान प्रदान का सौदा है, जिसमें प्रेम सहिष्णुता ध्यान तथा सुख प्रेम के बदले में हो दिया जाता है। उसकी कल्पना अब सब कुछ त्याग कर

देनेवाली या नि स्वाथ नही रह गयी थी बल्कि उसे अब एक एमा लगाव माना जान लगा था जा लगभग पूणत निजी लाभ तथा सन्तोप और स्वय अपनी सुविधा के लिए विकसित किया जाता था और उसका अस्तित्व तभी तक रहता था जब तक वह कोई लाभ देता रहे।

इस विश्वास मे भी परिवतन पाया गया है कि प्रेम एक स्वत स्फूत तथा अनैच्छिक सवेग है जो दूसरे व्यक्ति के लिए केवल प्रेम की खातिर, केवल प्रेम के उल्लास तथा सन्तोप की खातिर प्रेम पात्र को अच्छी तरह जाने बिना भी अनुभव किया जाता है। दस वप बाद अभिवृत्ति यह विश्वास करने की थी कि प्रेम कोई लक्ष्यहीन सवेग नही है बल्कि वह किसी विशिष्ट उद्देश्य अथवा प्रयोजन को लक्ष्य मानकर विकसित किया जाता है। अर्थात परिवतन यह हुआ है कि जहाँ पहले देखते ही प्रेम हो जाने या हृदय के आदेश के अनुसार प्रेम करने पर विश्वास किया जाता था वहाँ अब अन्धे प्रेम अथवा देखते ही प्रेम हो जाने पर बिलकुल भी विश्वास नही रह गया और उसे एक तक-सगत, भलीभाँति सोचा समझा हुआ स्वैच्छिक सवेग माना जाने लगा जिसमे आदेश मस्तिष्क देता है। अब अधिक श्रमजीवी स्त्रियाँ यह विश्वास रखती हैं कि प्रेम को सफल तथा परिपक्व होने के लिए भावुक तथा रोमाटिक न होकर तकसगत और व्यवहारमूलक होना चाहिए। दस वप बाद पहले की तुलना म बहुत कम स्त्रिया ऐसी पायी गयी जो रोमाटिक प्रेम मे विश्वास रखती है। उनका विश्वास अब यह है कि परिपक्व प्रेम तकसगत होता है और वह मोह रोमाटिक भावो अथवा कल्पना पर न आधारित होकर प्रतिदिन के जीवन की वास्तविकताओ पर आधारित होता है।

उत्तरदाताओ के उत्तरो तथा कथनो के विश्लेषण से यह बात भी स्पष्ट है कि प्रेम के प्रति उनकी अभिवृत्ति म पहला परिवतन तो यह हुआ कि वे अब यह नही समझती कि प्रेम केवल वही है जो कुछ हम अनुभव करते है बल्कि वह यह भी है जो कुछ हम करते हैं, और दूसरे यह कि वे यह नही मानती कि प्रेम का अथ केवल दूसर को कुछ देना या त्याग करना है बल्कि वे उसे अपनी निजी आवश्यकताओ की स्वाथ-पूण पूर्ति का एक साधन अधिक मानती हैं, जो हद से हद एक आदान-प्रदान का मामला होता है। प्रेम के प्रति उनकी अभिवृत्ति मे परिवतन इस रूप म भी हुआ है कि पहले जहा प्रेम को एक ऐसा घनिष्ठ और नाजुक सम्ब ध समझा जाता था जिसे बही-खाते की मदो की तरह नही बरता जा सकता, वहा अब उस अब एक प्रकार की विनिमय प्रणाली माना जाने लगा जिसमे जो कुछ दिया जाये उसके बदले मे कुछ पाना सुनिश्चित रहे। अब उनमे से अधिकतर किसी व्यक्ति से उसी स्थिति म प्रेम करने को तैयार होती ह जब इसके बदले म उन्ह कुछ मिल सके, जस सवेगात्मक सुरक्षा, आर्थिक सुरक्षा, एक सुरक्षित भविष्य और प्रेम।

अपना प्रेम देकर और दूसरे का प्रेम पाकर उन्ह किस हद तक सन्तोप मिलता है, इसमे भी किसी को अपना प्रेम देकर अधिक सन्तोप प्राप्त करने या प्रेम देने तथा प्रेम पाने मे बराबर सन्तोप प्राप्त करने की अपेक्षा अब किसी को अपना प्रेम देने के

बजाय अधिक सन्तोष, दूसरे का प्रेम प्राप्त करके अधिक सन्तोष पाने पर अधिक बल दिया जाने लगा है। इस अभिवृत्ति का स्थान कि दूसरों के साथ सुख प्राप्त करने के लिए पहली बुनियादी शर्त है, कुछ पाने की अपेक्षा कुछ देने के लिए अधिक तत्पर रहना जिसके कारण निःस्वार्थ हो जाना आवश्यक होता है (देखिए, चौधरी, पृष्ठ 89) यह अभिवृत्ति लेती जा रही है कि जीवन से सन्तोष प्राप्त करने के लिए कोई व्यक्ति जितना पसन्द उससे अधिक प्रेम प्राप्त करने की उसे कोशिश करनी चाहिए। शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियों का झुकाव किसी को अपना प्रेम देने की अपेक्षा दूसरों का स्नेह तथा प्रेम प्राप्त करके अधिक सन्तोष प्राप्त करने की ओर होता जा रहा है, जबकि भारत में परम्परागत हिन्दू स्त्री की अभिवृत्ति सदा से अपना स्नेह दूसरों को देने की ओर शायद ही कभी उसे दूसरों से प्राप्त करने की आशा करने की रही है। स्त्रियों के इस गुण के सम्बन्ध में अभिमत व्यक्त करते हुए मेयर ने लिखा है

> सारी दुनिया की तरह प्राचीन भारत की स्त्री में भी पुरुष की अपेक्षा प्रेम का गुण कहीं अधिक पाया जाता है, अर्थात प्रेम को उसके अधिक उदात्त अर्थ में समझना क्योंकि जो भावना सारे अस्तित्व में व्याप्त हो वह सुदृढ़ तथा चिरस्थायी होती है, निरन्तर गहरी होती जाती है, और उसमें परार्थमूलक तत्त्वों का गहरा पुट होता है। (मेयर 1952, पृष्ठ 277 278)

## स्त्री के जीवन में पुरुष के प्रेम का योगदान

इस बात के बारे में भी श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्ति में परिवर्तन पाया गया कि स्त्री के जीवन में मनुष्य के प्रेम का क्या योगदान रहता है। दस वर्ष पहले ऐसी स्त्रियों की संख्या अधिक थी जो यह विश्वास रखती थीं कि पुरुष का प्रेम स्त्री के लिए सबसे मूल्यवान वस्तु है और यदि वह उसे मिल जाता है तो वह उसके जीवन को समृद्ध तथा परिपूर्ण बना देता है। उनके लिए उसका अर्थ था एक ऐसा कोमल सवेग जो स्त्री के जीवन में कोमलता भर देता है और उसके जीवन की सबसे महत्त्वपूर्ण तथा आधारभूत आवश्यकताओं को पूरा करता है और जो उसके लिए लगभग सब कुछ होता है। यदि वह सच्चा और हार्दिक होता था तो वही उसका सारा जीवन और अस्तित्व होता था। अन्यथा वह उसके जीवन में निराशा तथा असन्तोष का स्रोत बन जाता था। परन्तु सामान्यतः यह समझा जाता था कि पुरुष का प्रेम बहुधा निष्कपट तथा सच्चा ही होता है।

इस अध्ययन के आधार पर हम देखते हैं कि इस प्रश्न के सम्बन्ध में उनकी अभिवृत्तियों में बहुत अधिक परिवर्तन नहीं हुआ है कि पुरुष का सच्चा अथवा अहार्दिक प्रेम स्त्री के जीवन में मुख्यतः सन्तोष लाता है अथवा असन्तोष। दोनों ही समूहों में शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों का—जिस समूह का पहले अध्ययन किया गया था उसमें से 70 प्रतिशत स्त्रियों का और जिसका बाद में अध्ययन किया गया उसमें से 65 प्रति

गत स्त्रियों का—यह विश्वास था कि यदि पुरुष का प्रेम हार्दिक तथा सच्चा हो तो वह स्त्री के जीवन में मुख्यत संतोष का योगदान करता है, जबकि यदि वह हार्दिक न हो तो वह उनके जीवन में मुख्यत असन्तोष तथा निराशा का ही योगदान करता है। परन्तु निश्चित रूप से इस बात में परिवर्तन देखा गया कि बादवाले समूह में ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात अधिक था (20 प्रतिशत) जो यह समझती थीं कि पुरुष का प्रेम अधिकांश उदाहरणों में हार्दिक नहीं होता जबकि पहलेवाले समूह में ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात कम (19 प्रतिशत) था।

और सबसे बढ़कर तो यह परिवर्तन देखा गया कि बादवाले समूह की अपेक्षा पहलेवाले समूह में ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बहुत अधिक था जो पुरुष के प्रेम के बारे में यह समझती थीं कि वह स्त्री के जीवन में संवेगात्मक सन्तुष्टि और उसके उन्नयन तथा सार-तत्त्व में योगदान करता है जबकि बादवाले समूह की स्त्रियों में इस विश्वास की प्रधानता अधिक प्रचलित पायी गयी कि पुरुष का प्रेम स्त्री के जीवन की व्यावहारिक तथा भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करने में योग देता है। परन्तु दोनों ही समूहों में ऐसी स्त्रियों की संख्या केवल 10 से 25 प्रतिशत तक ही थी जिन्होंने यह बताया कि पुरुष के प्रेम ने स्त्री के जीवन को केवल असन्तोष मिलता है या यह कि उसका कोई खास योगदान नहीं होता। और दोनों ही समूहों में यह प्रतिशत अनुपात उच्चतर आयु वर्ग की स्त्रियों में बढ़ता जाता था। इस अध्ययन के आधार पर हम देखते हैं कि युवा हिन्दू शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ पुरुष के प्रेम को स्त्री के जीवन के लिए अब भी मूल्यवान समझती हैं यद्यपि ऐसा करने के लिए उनके कारण तथा अभिप्रेरण काफी बदल गये हैं।

## शारीरिक प्रेम की भूमिका

पहले श्रमजीवी स्त्रियों का मत यह था कि स्त्री के जीवन में शारीरिक प्रेम की कोई बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं होती और यह कि एक स्त्री के लिए वह प्रेम अधिक महत्त्वपूर्ण होता है जो शारीरिक प्रेम से परे होता है और यह कि सम्पूर्ण प्रेम के बिना केवल शारीरिक प्रेम से उसे तनिक भी सन्तोष नहीं मिलता और यह कि पूरे प्रेम-सम्बन्ध के एक भाग के रूप में ही यह महत्त्वपूर्ण बन सकता है, अब इसमें परिवर्तन होकर उनका मत यह हो गया है कि यह पुरुष तथा स्त्री के परस्पर प्रेम का बहुत महत्त्वपूर्ण पक्ष है और यह कि एक स्त्री के जीवन में इसकी भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। पहले स्त्रियों के जिस समूह का अध्ययन किया गया था उसके विपरीत बादवाले समूह में ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बहुत अधिक था जो यह समझती थीं कि शारीरिक प्रेम कोई गन्दी या ऐसी चीज नहीं है जो लज्जास्पद हो। इसके बजाय उसे स्त्री की शारीरिक जरूरतों को पूरा करने के लिए आवश्यक जाता है और विशेष रूप से पति-पत्नी सम्बन्ध का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ॥ जाता है।

पहला मत जिसके अनुसार शारीरिक प्रेम को स्त्री के जीवन का एक महत्त्वहीन भाग माना जाता था, पहलेवाले समूह की 59 प्रतिशत स्त्रियों में और बाद्वाले समूह की 31 प्रतिशत स्त्रियों में पाया गया। दूसरा मत, जिसके अनुसार शारीरिक प्रेम को स्त्री के जीवन का बहुत महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता था, पहले समूह की 35 प्रतिशत स्त्रियों की तुलना में बादवाले समूह की 65 प्रतिशत स्त्रियों ने व्यक्त किया। लेकिन दोनों ही समूहों में ऐसा कहनेवाली स्त्रियों का सबसे अधिक प्रतिशत अनपात 29 से 40 वर्ष तक के आयु वर्ग में और सबसे कम प्रतिशत 20-24 वर्ष तक के आयु वर्ग में था। इससे पता चलता है कि जब स्त्री बहुत अल्पवयस्क होती है तो उसमें कल्पनाओं की दुनिया में रहने और यह विश्वास करने की प्रवृत्ति पायी जाती है कि शारीरिक प्रेम की स्त्री के जीवन में कोई बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका नहीं होती। जब वह सवेगात्मक दृष्टि से प्रौढ़ हो जाती है। और स्त्री के जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं को समझने लगती है तब जाकर वह यह अनुभव करना आरम्भ करती है कि स्त्री के जीवन में उसकी बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

## प्रेम सेक्स सहित या सेक्स-रहित

सेक्स-सहित अथवा सेक्स रहित प्रेम का अनुमोदन करने अथवा उसे अवांछनीय समझने के सम्बन्ध में भी उनकी अभिवृत्तियों में परिवर्तन हुआ है। पहले वे अविवाहित जीवन में सेक्स रहित प्रेम का और विवाह के बाद अपने पति के साथ प्रेम और सेक्स सम्बन्ध का उत्साहपूर्वक अनुमोदन करती थीं और यदि माता पिता ने उनका विवाह तय करा दिया हो तो सेक्स सम्बन्ध स्थापित हो जाने के बाद भी प्रेम का अनुमोदन करती थीं परन्तु वे बिना प्रेम के सेक्स सम्बन्धों का या विवाह से पहले प्रेम होने पर भी सेक्स सम्बन्धों का दृढ़तापूर्वक विरोध करती थीं और विवाह के बाद पति के साथ भी बिना प्रेम के सेक्स सम्बन्ध को बहुत पसन्द नहीं करती थीं। यद्यपि 'सेक्स रहित प्रेम' का और सेक्स सहित प्रेम का भी अनुमोदन करने की प्रवृत्ति पायी जाती थी, परन्तु प्रेम रहित सेक्स को बहुत नापसन्द किया जाता था, उस स्थिति को छोड़कर जब विवाह दूसरों ने तय करा दिया हो और पति के साथ इस प्रकार का सेक्स सम्बन्ध स्थापित किया जाय। दस वर्ष बाद यह देखा गया कि यद्यपि यह ऊपर वाली प्रवृत्ति तो बनी रही, पर इसके साथ ही उनकी अभिवृत्ति में एक नयी प्रवृत्ति भी विकसित हुई और वह थी चारों ही प्रकार के प्रेम का अनुमोदन करने की अभिवृत्ति—सेक्स रहित प्रेम, सेक्स-सहित प्रेम, प्रेम रहित सेक्स, और प्रेम सहित सेक्स—जिसका निर्णय इस आधार पर किया जाता था कि स्थिति क्या है और वह विशिष्ट लक्ष्य अथवा उद्देश्य क्या है जिसकी तुष्टि की जा रही है या जिसे प्राप्त किया जा रहा है। यह प्रवृत्ति मुख्यतः इसलिए उभरी कि कुल मिलाकर अधिक स्त्रियाँ ऐसे प्रेम का अनुमोदन नहीं करतीं जो जिसका कोई विशिष्ट प्रयोजन अथवा उद्देश्य न हो।

## प्लेटोनिक अथवा निष्काम प्रेम—सेक्स-रहित प्रेम

दस वर्ष बाद ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात पहले की अपेक्षा बहुत कम हो गया था जो प्लेटोनिक अथवा निष्काम प्रेम, अर्थात सेक्स रहित प्रेम या दो विपर्यलिंगी व्यक्तियों के बीच किसी भी प्रकार की शारीरिक घनिष्ठता के बिना प्रेम के अस्तित्व में विश्वास रखती थीं, जबकि ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत-अनुपात बढ़ गया था जो प्लेटोनिक अथवा निष्काम प्रेम के अस्तित्व में विश्वास नहीं रखती थीं। यह देखा गया कि पचपन प्रतिशत स्त्रियों का विश्वास यह था कि यद्यपि स्त्री और पुरुष के बीच प्लेटोनिक सम्बन्ध हो सकता है, अर्थात सेक्स-सम्बन्ध स्थापित किए बिना दो व्यक्तियों के बीच प्रेम हो तो सकता है, परन्तु वह केवल हवा पर पनप नहीं सकता, और यह कि कोई भी प्रेम-सम्बन्ध दोनों पक्षों के लिए एक महत्त्वपूर्ण तथा अर्थपूर्ण अनुभव हो, इसके लिए शारीरिक उपस्थिति अथवा निकटता और प्रेम की किंचित शारीरिक अभिव्यक्ति भी आवश्यक है। उनका विश्वास था कि किसी भी प्रकार की शारीरिक घनिष्ठता के बिना प्रेम सम्भव ही नहीं है परन्तु सेक्स-सम्बन्ध स्थापित किए बिना भी उसका अस्तित्व निश्चित रूप से सम्भव है यदि इस प्रकार के सम्बन्ध में जुड़े हुए लोगों के निश्चित सिद्धान्त हों या यदि उन्होंने विवाह करने की योजना बना रखी हो और विवाह हो जाने तक सेक्स-सम्बन्धों की स्थापना को स्थगित कर रखा हो।

इंग्लैंड में युवकों तथा युवतियों के एक अध्ययन में 57 प्रतिशत स्त्रियों ने बताया कि उनका विश्वास था कि प्लेटोनिक अर्थात निष्काम प्रेम होता है। परन्तु इनमें हर तीन में से एक रोमांटिक प्रेम में विश्वास नहीं रखती थी और केवल 40 प्रतिशत रोमांटिक प्रेम में विश्वास रखती थीं (चाटहम, 1970, पृष्ठ 100)। इस अध्ययन में लेखिका ने दस वर्ष बाद जिन युवा शिक्षित हिंदू श्रमजीवी स्त्रियों से साक्षात्कार किया उनमें ऐसी स्त्रियाँ भी पायी गयीं जो प्लेटोनिक अर्थात निष्काम प्रेम में बिल्कुल भी विश्वास नहीं रखती थीं और उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि स्त्री और पुरुष के प्रेम में यदि उनका सम्पर्क बार-बार होता है और दीर्घकाल तक चलता है तो उनके बीच शारीरिक घनिष्ठता या कुछ हद तक सेक्स भी होना अनिवार्य है। ऐसी स्त्रियों का तर्क यह था कि प्रेम चूंकि एक साकार पुरुष तथा साकार स्त्री के बीच होता है और चूंकि प्रेम का पात्र कोई काल्पनिक व्यक्ति न होकर वास्तविक होता है, अथवा उसका अस्तित्व केवल कल्पना में नहीं होता, इसलिए प्रेम सम्बन्ध भी वास्तविक तथा पार्थिव ही होगा न कि हवाई।

## एक साथ एक से अधिक व्यक्ति से प्रेम

किसी स्त्री की एक साथ एक से अधिक व्यक्ति से प्रेम करने की सम्भावना से सम्बंधित अभिवृत्ति के बारे में बहुत छटपटा अनुभव करनेवाली श्रमजीवी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात उस समूह में अधिक था जिसका अध्ययन दस वर्ष पहले किया गया था। जिस समूह का अध्ययन पहले किया गया था उसकी स्त्रियों की राय में यह बहुत उटपटा सवाल था परन्तु अपने प्रारम्भिक संकोच तथा अटपटेपन को

पा लेने के बाद उन्होने यह मत व्यक्त किया कि यदि प्रेम शारीरिक न हो तो वह निश्चित रूप से एक साथ कई पुरुषो के साथ किया जा सकता है, लेकिन शारीरिक प्रेम, जिसमे शारीरिक ससग प्रेम-सम्बन्ध का एक विभिन्न अग हो, एक ही समय म एक से अधिक पुरुष से नही किया जा सकता। उन्होने इस बात पर भी जोर दिया कि हार्दिक तथा सच्चे प्रेम मे इतना समय, विचार, शक्ति तथा ध्यान देना पडता है कि किसी भी स्त्री क लिए एक से अधिक पुरुषो के साथ हार्दिक प्रेम करना सभव ही नही है।

दस वष बाद यह अभिवत्ति तो वनी रही पर उसमे एक नया परिवतन आ गया। पहला यह कि अब एसी स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात कम रह गया था जो यह प्रश्न पूछे जाने पर छटपटा या बेतुका अनुभव करती थी। दूसर, ऐसी स्त्रिया की सख्या बढ गयी थी जिनका विश्वास था कि विविध प्रकार तथा स्वरूप की तुष्टियो के लिए, एक स्त्री के लिए एक ही समय मे एक स अधिक पुरुष स प्रेम करना सम्भव है। इस तरह की स्त्रियो ने जस पमिला ने कहा कि कोई स्त्री बौद्धिक उद्दीपन तथा विचारा के आदान प्रदान के लिए किसी प्रबुद्ध व्यक्ति स प्रेम कर सकती है जबकि अपन सौदय भाव की अथवा किसी भिन्न प्रकार की आवश्यकताओ की तुष्टि क लिए वह किसी सगीत कार अथवा कलाकार से प्रेम कर सकती है और इसके साथ ही सवगात्मक तथा वित्तीय सुरक्षा के लिए और शारीरिक सन्तुष्टि तथा साहचय भाव की सन्तुष्टि के लिए वह अपने पति के प्रति भी बहुत गहरा प्रेम रख सकती ह। या जैसा कि वासना ने अपन व्यवहार तथा अपनी बातो स व्यक्त किया है, कोई लडकी अन्त मे उनमे से अपना एक जीवन-साथी चुनने के विशिष्ट प्रयोजन से एक ही साथ दो-तीन पुरुषा के प्रति प्रेम भाव रख सकती है। इस प्रकार नयी प्रवत्ति यह है कि व यह अनुभव करती है कि किसी विशिष्ट प्रयो जन स या विभिन्न और विविध प्रकार की बौद्धिक अथवा अन्य तुष्टिया के लिए एक स्त्री एक साथ एक स अधिक पुरुष से प्रेम कर सकती ह।

## स्वच्छन्द प्रेम तथा प्रेम की निरवरोध अभिव्यक्ति

युवा शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्रिया स्वच्छन्द प्रेम और 'प्रेम का निरवरोध अभिव्यक्ति' जसी सकल्पनाओ को दस वष पहले अपने मुह से व्यक्त नही करती थी। इस समूह म इन सकल्पनाओ का समावेश दस वष बाद प्रकट हुआ यद्यपि व उन्ही गिनी चुनी स्त्रिया के बीच लोकप्रिय थी जो अपन को प्रगतिशील समझती थी और आधुनिक तथा उन्नत परिवारो स सम्बन्ध रखती थी और जिनका पालन पोषण तथा शिक्षा दीक्षा पाश्चात्य सस्कृति के वातावरण म हुई थी और उन पर इस सस्कृति का गहरा प्रभाव था। स्वच्छन्द प्रेम स इस प्रकार की स्त्रिया का अभिप्राय था एक स्त्री और एक पुरुष के बीच ऐसा प्रेम जो दायित्वा या कतव्या के बधनो म जकडा हुआ न हो और यह कि जीवन म सन्तोष प्राप्त करने के लिए प्रेम का स्वत स्फूत तथा निबन्ध होना आवश्यक है और वह केवल उसी समय तक रहता है जब उसमे लिप्त दोनो व्यक्ति उससे सन्तोष प्राप्त करत हैं और किसी भी प्रकार के सामाजिक निषेधा अथवा प्रति-

बन्धनों के बिना उस सम्बन्ध को बनाये रखना चाहते हैं। उनके विचार के अनुसार ज्यों ही कोई व्यक्ति यह सोचने लगता है कि प्रेम करना उसका कर्त्तव्य है, प्रेम का अस्तित्व मिट जाता है और किसी को प्रेम करने पर विवश नहीं किया जा सकता।

उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि सन्तोषप्रद प्रेम-सम्बन्ध के लिए "प्रेम की निरवरोध अभिव्यक्ति" आवश्यक है। उनका विश्वास था कि किसी से प्रेम करने और बिना किसी संकोच के उसे व्यक्त करने से किसी व्यक्ति में जितनी गहराई और परिपक्वता आती है उतनी किसी और अनुभव से नहीं आ सकती और यह स्वच्छन्द प्रेम तथा उन्मुक्त परिवेश में ही सम्भव है। वे यह अनुभव करती थीं कि प्रेम की अभिव्यक्ति निरवरोध होनी चाहिए और जो लोग एक-दूसरे से प्रेम करते हों उन्हें दूसरों की उपस्थिति में एक-दूसरे के निकट बैठने और स्वतःस्फूर्त ढंग से एक दूसरे का आलिंगन तथा चुम्बन की स्वतन्त्रता अनुभव करना चाहिए। उनका विश्वास था कि यदि किसी पुरुष और स्त्री की भावनाएँ बहुत हार्दिक तथा स्नेहपूर्ण हैं तो उन्हें यह मक्कारी नहीं करनी चाहिए कि दूसरों की उपस्थिति में तो एक-दूसरे से कई हाथ की दूरी पर बैठें और अकेले में एक-दूसरे का चुम्बन और आलिंगन करें। उनका तर्क यह था कि स्नेह तथा प्रेम की भावनाएँ स्वतःस्फूर्त और सच्ची होती हैं और यदि सम्बन्धित व्यक्ति एक-दूसरे के हाथों या गालों पर प्यार करके या एक-दूसरे को गले लगाकर इस तरह की भावनाओं का थोड़ा-सा व्यक्त करना चाहें तो दूसरों की उपस्थिति में वे ऐसा क्यों न कर सकें। उनका विश्वास था कि यह अवरोध न रहने पर उन्हें एकान्त स्थानों में चोरी-छुपे मिलने और झूठ बोलकर या मक्कारी करके मन में अपराध की भावना पालने की आवश्यकता नहीं रह जायेगी, और यह कि प्रेम की निरवरोध अभिव्यक्ति
वे निष्कपट, निर्भीक तथा ईमानदार व्यक्ति बनेंगे। इन स्त्रियों ने यह
कि नौजवान लड़कों तथा लड़कियों के मन में जितना ही अधिक
किया जायेगा कि दूसरों की उपस्थिति में उन्हें शारीरिक
एक-दूसरे से अलग रहना चाहिए, उतना ही अधिक वे दूसरों
के साथ रहने से कतरायेंगे और इस प्रकार वे अपने
उन्हें दूसरों के सामने अपनी भावनाओं को व्यक्त
होकर एक-दूसरे से मिलने के लिए एकान्त और
तथा भय के वातावरण में कोई उन्हें देख न ले।
अप्राकृतिक स्वेच्छाचारी तथा अवांछनीय ढंगों
भी और विवाह के बाद भी उन्हें हार्दिकता,
नाएँ व्यक्त करने में स्वतन्त्र तथा निष्कपट

## जीवन को सुखी बनाने में प्रेम की

इस प्रश्न के उत्तर में कि
आवश्यकता किस चीज की है ?"

'प्रेम" को यह स्थान दिया, जबकि दस वर्ष पहले 39 प्रतिशत स्त्रियों ने उनके जीवन को सुखी बनाने के लिए आवश्यक उपकरणों में इसे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बताया था। दस वर्ष बाद ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात भी बहुत अधिक था जिन्होंने यह कहने के साथ ही कि उनके जीवन को सुखी बनाने के लिए जिस चीज की सबसे अधिक आवश्यकता है वह 'प्रेम' है, यह भी कहा कि उन्हें सुखी रहने के लिए भौतिक सुख सुविधाएँ चाहिएँ। जैसा कि हमने कथा और वासना के उदाहरणों में देखा है, उनकी रोमांटिक संकल्पनाओं में भी प्रेम का विचार अकेले शायद ही कभी आता हो। आम तौर पर उसके साथ भौतिक सुख सुविधा तथा वित्तीय सुरक्षा के प्रति लगाव जुड़ा रहता है। शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के बीच इस बदलती हुई प्रवृत्ति को देखते हुए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इस समय यद्यपि वे प्रेम को उन्हें सुखी बनानेवाला एक "आवश्यक" कारक मानती हैं—फिर भी उनमें से 10 प्रतिशत से कुछ कम स्त्रियाँ ही सुखी रहने के लिए इसे एक 'पर्याप्त' कारक मानती हैं। अर्थात उनमें ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बहुत कम है जो यह समझती हों कि केवल 'प्रेम के सहारे ही जीवन व्यतीत करके" वे सुखी हो सकती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की बदलती हुई धारणाओं के अनुसार सुखी रहने के एक पर्याप्त आधार के रूप में प्रेम की भूमिका अब पहले की तुलना में बहुत कम रह गयी है, और अब उसे सुखी रहने के लिए आवश्यक कारकों में से केवल एक कारक माना जाता है, एकमात्र कारक नहीं।

## जीवन-साथी चुनने में प्रेम की भूमिका

इस प्रश्न के साथ कि वे अपने जीवन को सुखी बनाने में प्रेम को कितना महत्त्व देती हैं, बहुत घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ यह प्रश्न भी है कि जीवन साथी चुनने की कसौटी के रूप में वे किसी से प्रेम करने या किसी के पात्र होने को कितना महत्त्व देती हैं।

पहले भी जब भारत में स्वयंवर की प्रथा प्रचलित थी, पति चुनने के बारे में उसकी अभिवृत्ति सर्वथा भिन्न थी। वह या तो किसी ऐसे आदमी को चुनती थी जो अपनी वीरता अथवा बुद्धिमत्ता सिद्ध कर सके, या किसी ऐसे को जो प्रतिष्ठित परिवार का हो और ख्यातिवान तथा चरित्रवान हो। लेकिन जैसा कि श्रमजीवी स्त्रियों के इन व्यक्ति अध्ययनों को देखने से स्पष्ट है, अब स्त्रियों की अभिवृत्तियाँ बदल गयी हैं। ये अभिवृत्तियाँ समय के साथ बदलती रही हैं। कुछ वर्ष पहले तक माता पिता और उनकी लड़कियाँ भी ऐसा आदमी चाहती थीं जिसके माँ-बाप पैसेवाले हों, चाहे वह स्वयं कुछ कमा सकता हो या न कमा सकता हो। इसके बाद एक प्रतिक्रिया हुई और लोगों की अभिवृत्ति बदलकर बिलकुल दूसरे छोर पर सर्वथा असम्भव पर में पहुँचा और तब विशेष रूप से शिक्षित श्रमजीवी लड़कियाँ उस आदमी को पसंद करने लगीं जिससे उन्हें प्रेम होता था। लेकिन उनकी अभिवृत्तियाँ बदलती रही हैं। दस वर्ष पहले वे उस आदमी को पसंद करती थीं जो "कमाऊ" माना जाता हो और स्नेहमय स्वभाव का

हो' या "अच्छी हैसियत का हो और सौन्दर्य-बोध रखता हो" या जो "बहुत पढ़ा लिखा" हो, या "जिसका व्यक्तित्व प्रभावशाली हो" और वे जानबूझकर इस बात पर आग्रह-पूर्वक बहुत जोर देती थीं कि धन-दौलत को वे इतना अधिक महत्त्व नहीं देती हैं, हालांकि जब उनसे युक्तिपूर्वक बड़े प्यार से पूछा गया तो उनमें से अधिकांश ने यह स्वीकार किया कि वे ऐसा पति चाहती हैं जो "भौतिक सुख-सुविधाएँ" प्रदान कर सकने भर को काफी कमाता हो, और इस प्रकार वे उसकी "धनोपार्जन की क्षमता" और "पर्स" को भी ध्यान में रखती थीं। लेकिन दस वर्ष बाद उन्हें पूरी चेतना के साथ इस बात का स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं हुआ कि वे अपने पति में सबसे अधिक यह बात चाहेंगी कि वह उच्च प्रतिष्ठावाले किसी अच्छे वेतनवाले पद पर हो और जहाँ तक उसके व्यवसाय अथवा व्यापार का सम्बन्ध है उसके भविष्य की संभावनाएँ उज्ज्वल हों। जिन स्त्रियों से दस वर्ष पहले साक्षात्कार किया गया उनकी तुलना में उन्होंने इस बात पर भी अधिक जोर दिया कि उसका "चरित्र अच्छा" हो और "व्यक्तित्व प्रभावशाली हो।"

अब जीवन साथी चुनने में केवल किसी से प्रेम करना या किसी का प्रेम पात्र होना एकमात्र महत्त्वपूर्ण आधार नहीं रह गये हैं, अब उसके लिए पर्याप्त पैसा और अच्छी सामाजिक प्रतिष्ठा और व्यवसाय में सफलता अधिक महत्त्वपूर्ण कारक बन गये हैं। यद्यपि शिक्षित श्रमजीवी स्त्री इस बात को स्वीकार करती है कि अच्छे विवाह और निजी सन्तोष के लिए प्रेम बहुत आवश्यक है परन्तु आज जीवन साथी चुनने में प्रेम की भूमिका केवल गौण होती है। वह अपने भावी पति के चरित्र, शिक्षा, धनोपार्जन की क्षमता और सम्भावनाओं को अधिक महत्त्व देने लगी है। वह सुरक्षा और सुखद भविष्य के बारे में सोचती है और ऐसे जीवन साथी के बजाय जिसके विचार उलझे हुए, मन उद्विग्न और दृष्टि भावुकता तथा रोमांटिक प्रेम से धूमिल हो ऐसा जीवन साथी चुनती है जिसका स्वभाव शान्त तथा उद्वेग रहित हो और जिसकी आँखें पूरी तरह खुली हों। आज वह ऐसा पति चाहती है जो उसकी "भौतिक" तथा "संवेगात्मक" दोनों ही प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा कर सके। अब पहले की अपेक्षा भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति को अधिक प्रधानता प्राप्त है। अर्थात् जीवन साथी चुनने में रोमांटिक प्रेम—यह आधार कि जिस व्यक्ति को वह अपना जीवन-साथी चुने उससे वह प्रेम करती हो और वह भी उससे प्रेम करता हो—शिक्षित श्रमजीवी स्त्री के लिए अब उतना महत्त्वपूर्ण नहीं रह गया है जितना दस वर्ष पहले था। केवल 11 प्रतिशत स्त्रियों ने इस बात पर जोर दिया कि जीवन-साथी चुनने की कसौटी यह है कि उस व्यक्ति से उन्हें प्रेम हो, जबकि दस वर्ष पहले ऐसी स्त्रियों की संख्या 35 प्रतिशत थी। अब केवल शारीरिक आकर्षण, सुन्दरता, रोमांस तथा मोह उनके प्रेम के विकसित होने तथा बने रहने का उतना अधिक आधार नहीं रह गया है जितना कि उस व्यक्ति के प्रति सम्मान का भाव जो अपनी श्रेष्ठतर शिक्षा, बुद्धि, प्रतिभा, धनोपार्जन की भावनाओं, क्षमताओं, चरित्र तथा व्यक्तित्व के कारण उनके मन में अपने प्रति सम्मान की भावना जागृत करता हो।

फ्रांसीसी जनमत संस्थान ने फ्रांसीसी स्त्रियों की अभिरुचियों के बारे में जा

अध्ययन किया था उसमें फ्रांसीसी स्त्रियों में भी यही प्रवृत्ति पायी गयी थी। इस अध्ययन में बताया गया है कि औसत फ्रांसीसी स्त्रियों के लिए जीवन-साथी चुनने में प्रेम की भूमिका केवल गौण होती है। वह विशिष्ट गुण जैसे उसके भावी पति का चरित्र, पर अधिक ध्यान देती हैं और वह सुरक्षा, सुख सुविधा तथा भविष्य के बारे में सोचती हैं। वह भावा शील नहीं होती। अपने भावी पति के बारे में निर्णय करते समय वह तर्क, बुद्धि तथा ठंडे दिमाग से काम लेती हैं। वह जीवन-साथी चुनने में रोमांटिक प्रेम को अधिक महत्त्व नहीं देती। (रेमी और वूग, 1964, पृष्ठ 18 19)। जीवन साथी चुनने की यह कसौटी और वर्तमान अध्ययन में उत्तरदाताओं द्वारा बनायी गयी कसौटी उस कसौटी में बिलकुल भिन्न है जो संयुक्त राज्य अमेरिका के कालेज छात्रों ने बतायी थी। जीवन-साथी चुनने में पसन्द की कसौटी के रूप में जिस गुण पर सबसे कम जोर दिया गया वह था 'विवाह के समय धनवान हो'' केवल 5 प्रतिशत ने कहा कि वे इसे बहुत महत्त्वपूर्ण समझते हैं। "रोमांटिक प्रेम जीवन-साथी चुनने की सबसे महत्त्वपूर्ण कसौटी है। लगभग प्रत्येक छात्र छात्रा ने कहा कि जीवन साथी चुनने में प्रेम करना और प्रेम का पात्र होना एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कसौटी है। (गोल्डसेन इत्यादि, 1960, पृष्ठ 81)। चेस्सर के अध्ययन में अधिकांश अंग्रेज स्त्रियों ने कहा कि वे इस बात को कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण समझती हैं कि उनका भावी पति स्नेहमय, हार्दिक और दूसरे की भावनाओं को समझनेवाला हो, बजाय इसके कि वह देखने में सुन्दर और बलवान हो (चेस्सर, 1969, पृष्ठ 128)।

जैसा कि हिन्दू शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के प्रतिनिधि व्यक्ति अध्ययनों में स्पष्ट है, विशेष रूप से वासना जैसी स्त्रियों के व्यक्ति-अध्ययन से, वे अब अपना पति चुनने के मामले में अधिक भौतिकवादी तथा हर ऊँच-नीच पहले से सोच लेनेवाली हो गयी हैं। उस व्यक्ति के लाक्षणिक गुणों के बारे में, जिससे वे प्रेम और विवाह करना चाहेंगी, अब उनके विचार अधिक सुनिश्चित हैं। वे ऐसे साथी के साथ प्रेम करने को अधिक "तत्पर' होंगी जो ठोस आवश्यकताओं को पूरा कर सकता हो सामाजिक प्रतिष्ठा, सरकारी पद, पैसा, शिक्षा, स्वास्थ्य और अच्छा चरित्र। काफी हद तक ऐसा इसलिए है कि उनका प्रेम का ढर्रा बदल गया है। अब वे बहुत व्यावहारिक और ऊँच नीच सोचनेवाली हो गयी हैं। वे भावी जीवन साथी की सभी सम्भावनाओं पर अच्छी तरह विचार करती हैं और तब विवेकपूर्वक उससे प्रेम करना आरम्भ करती हैं। प्रेम में उनके हृदय से अधिक उनका मस्तिष्क काम करता है और प्रेम में भी वे तर्क-शक्ति से काम लेती हैं। यही कारण है कि अब शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के बीच 'अन्धा प्रेम' पहले की अपेक्षा बहुत कम पाया जाता है।

जैसा कि वासना के उदाहरण में देखा गया है कि अब श्रमजीवी स्त्री कुल मिलाकर निर्णय लेने से पहले हर चीज का हिसाब लगा लेती है। रोमांस और प्रेम के मामले में भी वह असाधारण रूप से चतुर और ऊँच नीच समझनेवाली हो गयी है और अब वह वैसी अन्धी नहीं रह गयी है जैसी कि 'प्रेम ग्रस्त' लड़कियाँ हुआ करती थीं। उसके लिए प्रेम अत्यन्त तर्कसंगत और व्यावहारिक हो गया है। पहले उसकी संकल्पना

के अनुसार प्रेम अंधा होता था और "प्रेम ग्रस्त" लडकियाँ इस प्रकार की व्यावहारिक समस्याओ के बारे मे शायद ही कभी सोचती थी कि उनके जीवन-साथी की पैसा कमाने की क्षमता क्या है, उसकी दौलत और सूरत शक्ल, उसकी शिक्षा और भविष्य की सम्भावनाएँ क्या है। उस समय उसके लिए प्रेम स्वत स्फूत होता था जिसके बाद विवाह हो जाना चाहिए। अब 'देखते ही प्रेम हो जाने" जैसी कोई चीज़ नही होती, बल्कि अब तो खूब अच्छी तरह सोचा-समझा हुआ प्रेम होता है। अब जिन बातो की ओर प्राथमिक रूप से ध्यान दिया जाता है वे है—जीवन-साथी की पैसा कमाने की क्षमता, शिक्षा, सस्कृति और चरित्र और उसके बाद सोच समझकर प्रेम किया जाता है। यदि कोई स्वत स्फूत प्रेम आरम्भ हो भी जाता है तो भी यदि उसमे वे सारे गुण नही होते जो वह अपने पति मे चाहती है तो आवश्यक नही है कि उस प्रेम के फलस्वरूप विवाह भी हो जाय। जब विवाह का प्रश्न आता है तो वह ऐसे व्यक्ति से विवाह करती है जो व्यावहारिक दृष्टि से उसकी मागो तथा आवश्यकताओ के अनुकूल हो।

लेकिन जैसा कि वासना के लाक्षणिक व्यक्ति अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है यह परिवतन केवल शिक्षित श्रमजीवी लडकियो की अभिवृत्ति मे ही नही पाया जाता, समाज के मध्यम वग तथा उच्च मध्यम वग के शिक्षित नवयुवको के बीच भी यह परिवतन उतनी ही हद तक पाया तथा अनुभव किया जाता है। वे भी आमतौर पर आख मूदकर प्रेम का शिकार नही हो जाते या किसी लडकी के मोह मे नही पड जाते, और विशेष रूप से विवाह के मामले मे वे भी उतने ही ऊँच नीच सोचनेवाले तथा विवकशील होते हैं। वे भी व्यावहारिक होते हैं और इस बात पर पूरी तरह विचार करते है कि यह लडकी उनमे से अधिकाश आवश्यकताओ तथा गुणो पर खरी उतरेगी या नही, जिन्हे वे अपने जीवन मे भावी लाभ तथा हित के लिए आवश्यक समझते है। और वे भी जब तक स्वय आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र नही हो जाते और यह अनुभव नही करने लगते कि वे विवाह करने की हैसियत रखते हैं और विवाहित तथा पारिवारिक जीवन का दायित्व सँभाल सकते हैं तब तक वे भी जल्दबाजी मे किसी लडकी से विवाह करने का निणय नही करते।

विश्लेषण करने पर हमे यह सोचने पर विवश होना पडता है कि आज की युवा शिक्षित स्त्रियो तथा पुरुषो की प्रेम-भावनाएँ कितनी शान्त और विवेकपूण हो गयी हैं, और वे एक ऐसा जीवन साथी पाने के लिए कितनी योजना बनाते हैं जो वस्तुनिष्ठ दृष्टि से उनके लिए एक अच्छा जोडा हो। अब वे केवल उस व्यक्ति से प्रेम करने की कल्पना करती है जिनके बारे मे वे सोचती हैं कि वह रुपये पैसे की दृष्टि से और अन्य बातो की दृष्टि से भी एक लाभदायक जोडा होगा। ब्यौरे की अन्य सभी बातो पर ध्यान देने के बाद ही प्रेम की भावनाएँ प्रस्फुटित होती हैं। इस युग मे शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया तथा पुरुषो के बीच प्रेम ने एक भिन्न आकार तथा रूप धारण कर लिया है, वह बहुत तकसगत तथा विवेकपूण हो गया है।

यह परिवतन श्रमजीवी स्त्रिया के उन समूहो की अभिवृत्तियो मे ही नही

पाया गया जिनका अध्ययन दस वर्ष के अन्तराल से किया गया था, बल्कि यह परिवर्तन एक ही स्त्री में उसके जीवन की अलग अलग अवस्थाओं में भी पाया गया। किशोरावस्था में लड़कियों में यह भावना उत्पन्न होती है कि एक चुना हुआ पुरुष ऐसा होता है जिसे देखते ही वे उससे प्रेम करने लगेंगी, और वे अनुभव करती हैं कि प्रेम हर समस्या का हल कर देता है और इन अभिवृत्तियों में आस्था तथा विश्वास रखने से उन्हें प्रेम विवाह तथा सुख का आश्वासन दिखायी देता है (विच, 1952, पृष्ठ एफ 367)। परन्तु अब वे पहले से भिन्न हो गयी हैं। ऐसी लड़कियों का प्रतिशत अनुपात, जो किशोरावस्था में भी ऐसा अनुभव करती थी, घटता जा रहा है और उनकी संख्या तो बहुत घट गयी है जो किशोरावस्था को पार करने के बाद भी ऐसा अनुभव करती रहती हैं। अब देखते ही प्रेम हो जाने में या इस विचार में उनका अधिक लगाव नहीं रह गया है कि प्रेम सभी समस्याओं को हल कर देता है। इसके बजाय वे अनुभव करती हैं कि 'प्रेम उन आकर्षणों से विकसित होता है जो लोग एक-दूसरे के प्रति अनुभव करते हैं और आकर्षण मानव अन्तःक्रिया में उत्पन्न होते हैं। आकर्षणों की जड़ें विशेष प्रकार की आवश्यकतापूर्तियों में जमी होती हैं। अन्ततः प्रेम करने लगने और प्रेम करते रहने की पूरी प्रक्रिया का एक गतिवान प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है जिसमें दो व्यक्तियों के बीच समायोजन और पुनःसमायोजन की आवश्यकता होती है। यह बादवाला दृष्टिकोण उन व्यक्तियों का लाक्षणिक गुण है जिन्होंने प्रौढ़ ढंग से प्रेम करने की क्षमता विकसित कर ली है" (लटज और सिडर, 1969, पृष्ठ 118)। परन्तु इस अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ अपनी प्रेम करने लगने की क्षमता विवेकपूर्ण ढंग से विकसित कर रही हैं।

शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के विचार अब भी उलझे हुए हैं क्योंकि वे आज भी प्रेम करने लगने और प्रेम करते रहने में अन्तर नहीं कर पातीं। जैसा कि लटज और सिडर ने समझाया है

> प्रेम करने लगना आसान होता है क्योंकि बहुधा वह मुख्यतः सेक्स सम्बन्धी विचारों पर आधारित होता है, प्रेम करते रहने के लिए एक स्थायी सम्बन्ध स्थापित करने तथा उसे बनाये रखने की योग्यता आवश्यक होती है। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए व्यक्ति को यह जानना चाहिए कि वह चाहता क्या है उसे अपनी इच्छाओं को समझना चाहिए और उसमें भावना को निरन्तर बनाये रखने और उस सम्बन्ध के दूसरे साझेदारों में होनेवाले परिवर्तनों तथा विकास के प्रति संवेदनशील होने की योग्यता होनी चाहिए (लटज और सिडर, 1969 पृष्ठ 102)।

किसी प्रेम सम्बन्ध को किस हद तक प्रौढ़ अथवा अप्रौढ़ समझा जाय, इसका निर्धारण इस बात से होता है कि इसमें निहित आवश्यकताएँ किस हद तक उस जोड़े के यौंदिक तथा संवेगात्मक विकास में सहायक हैं और किस हद तक उनकी जड़ें वास्तविकता में जमी हुई हैं। बर्जेस और लॉक ने इस प्रकार की आवश्यकताओं का

वर्गीकरण इस रूप में किया है (1) साहचर्य, (2) संचार तथा क्रियाशीलता की स्वतन्त्रता, (3) संवेगात्मक परस्पर निर्भरता, और (4) सेक्स-सम्बन्धी कामनाएँ, और यह प्रौढ़ आवश्यकताओं के प्रतिरूप का द्योतक है, क्योंकि ये आवश्यकताएँ यथार्थमूलक हैं और सम्बन्धित व्यक्तियों को सर्वांगीण बौद्धिक तथा संवेगात्मक विकास प्रदान करने के लिए पर्याप्त व्यापक हैं (देखिये बर्जेस और लॉक, 1960, पृष्ठ 322-325)। और वह प्रेम अप्रौढ़ होता है जिसमें वे आवश्यकताएँ जो पूरी हो रही हैं अवास्तविक हों और बौद्धिक तथा संवेगात्मक विकास को बढ़ावा देने तक सीमित हों (लट्ज और सिडर, 1969, पृष्ठ 107)।

प्रौढ़ ढंग से प्रेम करने की क्षमता पारिवारिक, सामाजिक वातावरण में, और पारिवारिक अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों में विकसित होती है, और इसमें भी बढ़कर वह समाज के मूल्यों द्वारा विकसित होती है। शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियों में जिस पक्ष का महत्त्व बढ़ता हुआ पाया गया है वह यह है कि वह प्रेम जो केवल भावुकता या केवल एकतरफा निष्ठा के बजाय पारस्परिक सम्मान पर आधारित होता है वह गौरवशाली, गम्भीर तथा स्वीकार्य होता है और सामान्यतः उसके फलस्वरूप विवाह की परिधि के भीतर भी और बाहर भी, बहुत सन्तोष तथा सुख मिलता है। अब उनमें से अधिकांश यह अनुभव करती है कि प्रेम-सम्बन्ध के सन्तोषप्रद तथा सफल होने के लिए किसी भी मानव-सम्बन्ध की भाँति इस सम्बन्ध की गत्यात्मकता के प्रति भी एक संवेदनशीलता की आवश्यकता होती है।

## सम्पदा तथा ख्याति का प्रेम

साक्षात्कार के दौरान यह पाया गया कि प्रेम के अतिरिक्त—जिसके मूल्य की शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ दस वर्ष पहले बहुत समर्थक थीं और जिसे वे अपनी आधारभूत आवश्यकता समझती थीं—वे अब जीवन में सबसे अधिक इच्छा सम्पदा तथा ख्याति की रखती हैं। यद्यपि जब उनसे पूछा गया "सुखी रहने के लिए तुम्हें सबसे अधिक आवश्यकता किस चीज की है ?" तो स्पष्ट रूप से इसका उत्तर "सम्पदा" देनेवाली श्रमजीवी स्त्रियों की संख्या पहले समूह में उतनी अधिक नहीं थी जितनी कि दूसरे समूह में। उन्होंने "प्रेम" और "ख्याति" पर बल दिया था। परन्तु दूसरे समूह में, जिसका अध्ययन दस वर्ष बाद किया गया, उनके विचारों तथा व्यवहार से यह संकेत मिला कि वे दस वर्ष पहले की तुलना में अब "सम्पदा" को अधिक मूल्यवान समझने लगी थीं। प्रख्यात और मान्य होने की नयी लालसा अधिक प्रमुख हो गयी थी। और शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों में ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात कहीं अधिक है जो अब पहले की अपेक्षा इस बात की बहुत गहरी इच्छा अनुभव करती हैं कि उन्हें महत्त्वपूर्ण समझा जाये और वे सुविख्यात हों। अंग्रेज दार्शनिक एडम स्मिथ ने, जो दो शताब्दी पहले हुआ था, एक बार कहा था कि "मनुष्य में एक प्रबल प्रेरक शक्ति है दूसरों द्वारा मान्य तथा स्वीकार्य होने की आवश्यकता" (एजलेर्सन, 1969, पृष्ठ 14)। यह आवश्यकता, जो

किसी के प्रेम का पात्र होने की आवश्यकता तथा अहंभाव की तुष्टि की अचेतन अभिव्यक्ति होती है, शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की प्रसिद्ध तथा सुविख्यात होने की सचेतन इच्छा तथा महत्त्वाकांक्षा के रूप में अधिकाधिक मुखर होती जा रही है।

लोगों के दिमाग में इन अभिवृत्तियों का पोषण करने में आमतौर पर पूरे समाज की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। चलचित्र, साहित्य, पत्रिकाओं के लेख तथा उपन्यास सभी की अपनी भूमिका होती है। एक ऐसे समाज में, जिसके मूल्य भीतरी गुणों—आंतरिक स्वभाव—के बजाय बाहरी गुणों तथा प्रत्यक्ष रूप पर, चमक-दमक तथा दिखावे पर और लोगों को क्रय वस्तु समझने पर जोर देते हैं—एक ऐसा दृष्टिकोण जिसके अनुसार बदले में व्यक्ति बदले में कुछ पाने को महत्त्व देते हैं, वहां किसी मानव सम्बन्ध के प्रति गहरी संवेदनात्मक प्रतिबद्धता से कतराया जाता है (देखिये फ्राम्म, 1956, अध्याय 1)।

इसके अतिरिक्त जैसा कि लेट्ज और सिडर का मत है, "भौतिकवादी तथा प्रतिस्पर्द्धात्मक मूल्य प्रौढ़ ढंग से प्रेम करने की क्षमता के विकास के लिए, तनिक भी अनुकूल नहीं होते। जब पुरुष-स्त्री सम्बन्ध में भौतिकवादी दृष्टिकोण पर आवश्यकता से अधिक जोर दिया जाता है तो उससे यह भ्रांत धारणा उत्पन्न हो सकती है कि भौतिक सम्पदाएँ प्रेम को सुनिश्चित बनाती हैं" (लेट्ज और सिडर, 1969, पृष्ठ 120)। भौतिकवाद तथा बाह्य रूप पर बल देना वे विशिष्ट मूल्य हैं जो अधिक शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों ने परसंस्कृति-ग्रहण की प्रक्रिया के जरिये और जनव्यापी संचार के साधनों के माध्यम से अन्य संस्कृतियों के संपर्क में आने के कारण तेजी से अपना लिये हैं। इससे प्रेम-सम्बन्ध सहित मानव सम्बन्धों का उनका प्रतिमान दूसरे रंग में रंजित हो गया है। प्रतिस्पर्द्धा की भावना ने उन्हें अधिक अहंकेन्द्रिक बना दिया है, और ऐसी स्त्रियों को कुछ लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए दूसरों को रौंदकर आगे बढ़ जाने में भी कोई संकोच नहीं होता। उनके लिए लक्ष्य उन साधनों से अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं जिनकी सहायता से वे लक्ष्य प्राप्त किये जाते हैं। उनके लिए प्रेम सम्बन्ध में शोषणात्मक होने की प्रवृत्ति हो जाती है क्योंकि वे स्वयं अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अपने साथी का लाभ उठाती हैं। वे अपने जीवन-साथियों का प्रयोग अपनी निजी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए करती हैं और इस बात की ओर कोई ध्यान नहीं देतीं कि उन पर भी बदले में ऐसा ही आचरण करने का दायित्व है।

लेट्ज और सिडर के अनुसार संवेगात्मक रूप में अप्रौढ़ व्यक्ति की प्रमुख लाक्षणिकता है 'स्पष्ट स्वकेन्द्रीयता जो उसे, प्रौढ़ प्रेम को अनुभव करने में असमर्थ बना देती है। वह आमतौर पर अपनी ही चिंताओं तथा भय को दूर करने में इतना अधिक व्यस्त रहता है कि उसमें दूसरों की आवश्यकताओं का ध्यान रखने की क्षमता ही नहीं रह जाती" (लेट्ज और सिडर, 1969, पृष्ठ 132)। इस प्रकार का व्यक्ति हमेशा अपनी ही निजी समस्याओं तथा आवश्यकताओं में डूबा रहता है—दूसरों को कैसे प्रभावित करना और अपने निजी संतोष के लिए विभिन्न वस्तुओं को कैसे प्राप्त करना—और उसके लिए दूसरों के साथ लिप्त होने की प्रायः कोई भी अभिप्रेरणा नहीं

रह जाती ।

"जो व्यक्ति सचमुच दूसरो से प्रेम करता है वह अपने आपसे भी प्रेम करता है, वह जीवन से प्रेम करता है" (फ्राम्म, 1955)। दस वर्ष बाद पहले की अपेक्षा अधिक सख्या म शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियो मे यह बात देखी गयी कि उन्हे अपने ही गौरवान्वित रूप से प्रेम था। इसलिए वे न दूसरो से प्रेम कर सकती थी, न अपने आपसे और न ही वास्तविक अर्थ मे जीवन से प्रेम कर सकती थी। यह पाया गया है कि प्रेम की उनकी सकल्पना नार्सिसीय अथवा आत्मरति थी। यह स्वय अपने से प्रेम करने के अर्थ मे आत्म प्रेम नही है जिसमे अपने आपको गरिमामय तथा सम्मान योग्य स्वीकार किया जाता है और अपनी चिन्ता करने तथा स्वय अपने से प्रेम करने की योग्यता से सम्पन्न माना जाता है (फ्राम्म, 1956, पृष्ठ 57 63), और जिसमे यह भावना रहती है कि प्रेम सम्बन्ध म वह केवल पानेवाला ही नही है बल्कि उसके पास बदले मे कुछ देने को भी है। बल्कि यह तो स्वय अपने मे नार्सिसीय अथवा आत्मरतिक अन्तलयन है, जिसका लक्षण होता है स्वय अपनी आदर्शीकृत अथवा गौरवान्वित प्रतिमा से प्रेम करना, और फलस्वरूप दूसरो से प्रेम करने की क्षमता खो देना।

जब स्वकेन्द्रिकता बहुत बढ जाती है तो उसे नार्सिसीयता कहते हैं। स्लेटर ने इस शब्द की व्याख्या इस रूप मे की है

> नार्सिसीयता शब्द की उत्पत्ति नार्सिसीस नामक लडके की उस यूनानी दन्तकथा स हुई है, जिसमे उसने एक दिन एक तालाब मे अपना प्रतिबिम्ब देख लिया था। उसे अपने सुन्दर बिम्ब से प्रेम हो गया, वह उससे अलग नही हो सका और उसी के लिए घुल घुलकर मर गया। उस लडके को स्वय अपने बिम्ब से मोह हो गया था, लेकिन निश्चित है कि उस अपने वास्तविक स्व से प्रेम नही था, क्योकि वह अपने वास्तविक हितो तथा कल्याण की उपेक्षा करता रहा। इसी प्रकार नार्सिसीय व्यक्ति को अपने वास्तविक स्व से नही बल्कि अपनी प्रतिमा से—अपनी एक कल्पित सकल्पना से—प्रेम होता है, जो पानी के तालाब मे नही, बल्कि उसकी कल्पना में सम्पूर्ण गौरव तथा भव्यता के साथ झिलमिल होती रहती है" (स्लेटर, 1953)।

यह महत्त्वपूर्ण है कि प्रेम सम्बन्ध का आधार कल्पना में न होकर वास्तविकता मे हो। यदि किसी का प्रेम दूसरे साझेदार की अवास्तविक तथा गौरवान्वित प्रतिमा पर आधारित होगा तो वह सम्बन्ध सम्भवत बहुत अल्पकालिक होगा, क्योकि जो प्रेम का पात्र है उसके साथ निरन्तर अथवा दीर्घकालिक सम्पर्क से वास्तविकता खुल जायगी। दोष उभरकर सामने आने लगत हैं और अवास्तविक प्रतिमा चकनाचूर हो जाती है। और प्रेम के साझेदार के प्रति निराशा उत्पन्न होती है (देखिये राइक, 1957, पृष्ठ 82)। लैंट्ज और सिंडर लिखते हैं, "यह तो बताने की आवश्यकता नही कि नार्सिसीय प्रतिमानो से स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध मे बहुत बडी समस्याएँ उठ खडी होती हैं

किसी के प्रेम का पात्र होने की आवश्यकता तथा अहंभाव की तुष्टि की अचेतन अभिव्यक्ति होती है, शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की प्रसिद्ध तथा सुविख्यात होने की सचेतन इच्छा तथा महत्त्वाकांक्षा के रूप में अधिकाधिक मुखर होती जा रही है।

लोगों के दिमाग में इन अभिवृत्तियों का पोषण करने में आमतौर पर पूरे समाज की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। चलचित्र, साहित्य, पत्रिकाओं के लेख तथा उपन्यास सभी की अपनी भूमिका होती है। एक ऐसे समाज में, जिसके मूल्य भीतरी गुणों—आंतरिक स्वभाव—के बजाय बाहरी गुणों तथा प्रत्यक्ष रूप पर, चमक दमक तथा निखार पर और लोगों का क्रय-वस्तु समझने पर ज़ोर देते हैं—एक ऐसा दृष्टिकोण जिसके अनुसार कोई व्यक्ति बदले में कुछ पाने को महत्त्व देते हैं वहाँ किसी मानव सम्बन्ध के प्रति गहरी संवेगात्मक प्रतिबद्धता से कतराया जाता है (देखिए फ्राम्म, 1956, अध्याय 1)।

इसके अतिरिक्त जैसा कि लट्ज और सिंडर का मत है, "भौतिकवादी तथा प्रतिस्पर्द्धात्मक मूल्य प्रौढ़ ढंग से प्रेम करने की क्षमता के विकास के लिए, तनिक भी अनुकूल नहीं होते। जब पुरुष-स्त्री सम्बन्ध में भौतिकवादी दृष्टिकोण पर आवश्यकता से अधिक ज़ोर दिया जाता है तो उससे यह भ्रान्त धारणा उत्पन्न हो सकती है कि भौतिक सम्पदाएँ प्रेम को सुनिश्चित बनाती हैं' (लैट्ज और सिंडर, 1969, पृष्ठ 120)। भौतिकवाद तथा बाह्य रूप पर बल देना वे विशिष्ट मूल्य हैं जो अधिक शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों ने परसंस्कृति-ग्रहण की प्रक्रिया के ज़रिये और जनव्यापी संचार के साधनों के माध्यम से अन्य संस्कृतियों के संपर्क में आने के कारण तेज़ी से अपना लिये हैं। इसमें प्रेम-सम्बन्ध सहित मानव सम्बन्धों का उनका प्रतिमान दूसरे रंग में रंगित हो गया है। प्रतिस्पर्द्धा की भावना ने उन्हें अधिक अहंकेन्द्रिक बना दिया है, और ऐसी स्त्रियों को कुछ लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए दूसरों को रौंदकर आगे बढ़ जाने में भी कोई संकोच नहीं होता। उनके लिए लक्ष्य उन साधनों से अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं जिनकी सहायता से वे लक्ष्य प्राप्त किए जाते हैं। उनके लिए प्रेम सम्बन्ध में शोषणात्मक होने की प्रवृत्ति हो जाती है क्योंकि वे स्वयं अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए अपने साथी का लाभ उठाती हैं। वे अपने जीवन-साथियों का प्रयोग अपनी निजी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए करती हैं और इस बात की ओर कोई ध्यान नहीं देतीं कि उन पर भी बदले में ऐसा ही आचरण करने का दायित्व है।

लट्ज और सिंडर के अनुसार संवेगात्मक रूप में अप्रौढ़ व्यक्ति की प्रमुख लाक्षणिकता है 'स्पष्ट स्वकेन्द्रीयता जो उसे, प्रौढ़ प्रेम को अनुभव करने में अक्षम बना देती है। वह आमतौर पर अपनी ही चिंताओं तथा भय को दूर करने में इतना अधिक व्यस्त रहता है कि उसमें दूसरों की आवश्यकताओं का ध्यान रखने की क्षमता ही नहीं रह जाती' (लट्ज और सिंडर, 1969, पृष्ठ 132)। इस प्रकार का व्यक्ति हमेशा अपनी ही निजी समस्याओं तथा आवश्यकताओं में डूबा रहता है—दूसरों को कम प्रभावित करना और अपने निजी सन्तोष के लिए विभिन्न वस्तुओं को कैसे प्राप्त करना—और उसके लिए दूसरों के साथ लिप्त होने की प्रायः कोई भी अभिप्रेरणा नहीं

रह जाती।

"जो व्यक्ति सचमुच दूसरो से प्रेम करता है वह अपने आपसे भी प्रेम करता है, वह जीवन से प्रेम करता है" (फ्राम्म, 1955)। दस वर्ष बाद पहले की अपेक्षा अधिक संख्या म शिक्षित हिंदू श्रमजीवी स्त्रियो मे यह बात देखी गयी कि उन्हें अपने ही गौरवान्वित रूप से प्रेम था। इसलिए वे न दूसरो से प्रेम कर सकती थी, न अपने आपसे और न ही वास्तविक अर्थ मे जीवन से प्रेम कर सकती थी। यह पाया गया है कि प्रेम की उनकी सकल्पना नार्सिसीय अथवा आत्मरति थी। यह स्वय अपने से प्रेम करने के अर्थ मे आत्म प्रेम नही है जिसमे अपने आपको गरिमामय तथा सम्मान योग्य स्वीकार किया जाता है और अपनी चिन्ता करने तथा स्वय अपने से प्रेम करने की योग्यता से सम्पन्न माना जाता है (फ्राम्म, 1956, पृष्ठ 57 63), और जिसमे यह भावना रहती है कि प्रेम सम्बन्ध मे वह केवल पानेवाला ही नही है बल्कि उसके पास बदले मे कुछ देने का भी है। बल्कि यह तो स्वय अपने मे नार्सिसीय अथवा आत्मरतिक अनलयन है, जिसका लक्षण होता है स्वय अपनी आदर्शीकृत अथवा गौरवान्वित प्रतिमा से प्रेम करना, और फलस्वरूप दूसरा से प्रेम करने की क्षमता खो देना।

जब स्वकेन्द्रिकता बहुत बढ जाती है तो उसे नार्सिसीयता कहते हैं। स्लेटर ने इस शब्द की व्याख्या इस रूप मे की है

> नार्सिसीयता शब्द की उत्पत्ति नार्सिसीस नामक लडके की उस यूनानी दन्त कथा से हुई है, जिसमे उसने एक दिन एक तालाब मे अपना प्रतिबिम्ब देख लिया था। उसे अपने सुन्दर बिम्ब स प्रेम हो गया वह उससे अलग नही हो सका और उसी के लिए घुल घुलकर मर गया। उस लडके को स्वय अपने बिम्ब से मोह हो गया था, लेकिन निश्चित है कि उस अपने वास्तविक स्व से प्रेम नही था, क्योकि वह अपने वास्तविक हितो तथा कल्याण की उपेक्षा करता रहा। इसी प्रकार नार्सिसीय व्यक्ति का अपने वास्तविक स्व से नही बल्कि अपनी प्रतिमा से—अपनी एक कल्पित सकल्पना से—प्रेम होता है, जो पानी के तालाब मे नही, बल्कि उसकी कल्पना मे सम्पूर्ण गौरव तथा भव्यता के साथ झिलमिल होती रहती है" (स्लेटर, 1953)।

यह महत्त्वपूर्ण है कि प्रेम सम्बन्ध का आधार कल्पना मे न होकर वास्तविकता म हो। यदि किसी का प्रेम दूसरे साझेदार की अवास्तविक तथा गौरवान्वित प्रतिमा पर आधारित होगा तो वह सम्बन्ध सम्भवत बहुत अल्पकालिक होगा, क्योकि जो प्रेम का पात्र है उसके साथ निरन्तर अथवा दीर्घकालिक सम्पर्क से वास्तविकता खुल जायगी। दोष उभरकर सामने आने लगते हैं और अवास्तविक प्रतिमा चकनाचूर हो जाती है। और प्रेम के साझेदार के प्रति निराशा उत्पन्न होती है (देखिये रादव, 1957, पृष्ठ 82)। लट्ज और सिंडर लिखते हैं, "यह ता बताने की आवश्यकता नही कि नार्सिसीय प्रतिमानो से स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध मे बहुत बडी समस्याएँ उठ खडी होती हैं

और वे अर्थपूर्ण साहचर्य को कठिन बना देती हैं' (लटज और सिंडर, 1969, पृष्ठ 134)। वे आगे चलकर लिखते हैं

अपने से प्रेम के दूसरे के प्रति प्रेम में स्थानान्तरण की प्रक्रिया बड़ी सुगमता से सम्पन्न हो जाती है यदि प्रेम को अवरुद्ध अथवा स्थिर न कर दिया जाये, अर्थात यदि वह किसी के साथ बुरी तरह जकड़ न जाये जैसे स्वयं अपने साथ जैसा कि नार्सिसीयता में होता है, या अपने माता पिता के साथ जैसा कि पितृ स्थिरण में होता है या अपने ही समलिंगी किसी व्यक्ति के साथ जैसा कि समलिंगी में होता है।

माता पिता द्वारा स्वीकृति अथवा अस्वीकृति के प्रतिमानों में प्रौढ़ ढंग से प्रेम करने की क्षमता से सम्बन्धित अन्य आशय भी निहित हैं, क्योंकि इन प्रतिमानों का प्रभाव इस बात पर पड़ सकता है कि कोई व्यक्ति किसी विपर्मलिंगी व्यक्ति के साथ किस प्रकार सम्बन्ध स्थापित करता है (लटज और सिंडर 1969, पृष्ठ 126 27)।

इन संकल्पनाओं के निरूपण में पारिवारिक सम्बन्ध सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। यदि पारिवारिक सम्बन्ध ऐसा है जिसमें एक मानव अनुभव के रूप में प्रेम का मूल्यवान समझा जाता है, तो प्रेम के प्रति सकारात्मक अभिवृत्तियों का और साथ ही प्रेम व्यक्त करने तथा दूसरे का प्रेम प्राप्त करने की क्षमता विकसित होती है।

प्रेम करने की क्षमता के विकास के लिए बच्चे और उसके माता पिता अथवा पारिवारिक परिवेश के अन्य प्रौढ़ लोगों के बीच वैयक्तिक अन्तःक्रियाएँ भी बहुत महत्त्वपूर्ण होती हैं। जब बच्चा सर्वागात्मक रूप से यह अनुभव करता है कि किसी के द्वारा प्रेम किये जाने पर कैसा लगता है तो वह दूसरे लोगों के प्रति भी अपनी भावनाएँ व्यक्त करने लगता है। किसी दूसरे व्यक्ति को प्रौढ़ ढंग से प्रेम करने की क्षमता की अभिव्यक्ति आमतौर पर सभी लोगों से प्रेम करने की क्षमता के रूप में भी व्यक्त होती है।

किसी व्यक्ति की विशिष्ट अभिवृत्तियों को ढालने तथा निरूपित करने में जो अन्य कारक बहुत महत्त्वपूर्ण हैं वे हैं कि उस व्यक्ति ने स्कूल में किस प्रकार की शिक्षा और उच्चतर शिक्षा प्राप्त की है और किशोरावस्था में वह जिन समवयस्क समूहों तथा मित्र मंडलियों में उठता बैठता रहा है उसके विभिन्न सदस्यों की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमियाँ क्या रही हैं। अभिवृत्तियाँ उन विशिष्ट तथा महत्त्वपूर्ण घटनाओं से भी प्रभावित होती हैं जिनका किसी व्यक्ति को अपने जीवन में अनुभव होता है विशेष रूप से उस काल में जब उसके व्यक्तित्व का निर्माण हो रहा हो और उसमें सहज ही प्रभाव ग्रहण करने की प्रवृत्ति हो।

इस समय हम सभी लोग जिस प्रकार के संक्रमणकालीन युग में रह रहे हैं, उसमें मूल्यों तथा विश्वासों के बारे में बहुत से उलझाव हैं क्योंकि सम्भावना इस बात की है कि जो कुछ भी पुराना है उसे बुरा समझ लिया जाये और जो कुछ नया है ठ अच्छा, और पुराने मूल्यों को तो लगभग तिरस्कृत कर दिया गया है जबकि नये मू

अभी तक ढाले और स्वीकार नही किये गये हैं। इस स्थिति में वे निरंतर बदलते रहते हैं और कोई भी उनके बारे मे स्पष्ट ज्ञान नही रखता। बदले हुए मूल्यो के कारण लोग मानव-सम्बन्धो मे गहरी प्रतिबद्धता के बावजूद सतही ढग से जीवन व्यतीत करते हैं और इसलिए अपने मे गहराई के साथ भरपूर प्रेम करने की क्षमता भी नही पाते। इस प्रकार समाज द्वारा मान्यता-प्राप्त मूल्य भी किसी व्यक्ति की प्रेम की संकल्पना तथा उसकी प्रेम करने की क्षमता के विकास मे महत्त्वपूर्ण कारक होते है।

# 3

## विवाह—आवश्यकता या परिपाटी ?

विवाह मानव सम्बन्धो का एक सबसे गहरा तथा सबसे जटिल बन्धन है। यह समाज की एक आधारशिला और समाज व्यवस्था का एक अत्यन्त आवश्यक अग है। विभिन्न प्रकार के परम्परागत रस्मो तथा विश्वासो के प्रतिमान विवाह पद्धति के साथ जुडे हुए हैं। राधाकृष्णन ने लिखा है, "विवाह एक परिपाटी ही नही बल्कि मानव समाज का एक अतर्निहित लक्षण है। वह प्रकृति के जविकीय प्रयोजनो तथा मनुष्य के सामाजिक प्रयोजनो के बीच एक समायोजन है" (राधाकृष्णन, 1956, पृष्ठ 147)। इस प्राचीन प्रथा के बारे मे पोमेराइ का अभिमत है

> विवाह, जैसा कि मिल्टन ने बताया है, 'केवल दैहिक मैथुन नही बल्कि एक मानव समाज है', और यद्यपि इसकी जडें मजबूती से सेक्स आकर्षण मे जमी होती है और वह एक शारीरिक क्रिया से पुष्ट होता है, फिर भी वह ऐसी सर्वोपरि मूल्यवान निधियो को जन्म देता है जो उन निधियो के ह्रास के बाद भी सुरक्षित रहती है जिनका सम्बन्ध प्रधानत मैथुन के साथ होता है। विवाह भी जीवन से कम बडी कला नही है और जिन लोगो मे उसे सफल बनाने के लिए आवश्यक स्नेह, धीरज और सकल्प होता है उनके लिए वह जीवन का सबसे समृद्ध फलप्रद सम्बन्ध होता है (पामेराई 1936 पृष्ठ 127)।

विवाह की प्रथा की उत्पत्ति के बारे मे यह नही कहा जा सकता कि इस प्रथा को रामाटिक प्रेम ने जन्म दिया अथवा पाशविक वासना ने।

राधाकृष्णन् के अनुसार

> आदिम विवाह प्रणाली स्त्री की पराधीनता पर आधारित थी और उसका स्थायित्व क्षणभगुर भावावेश पर नही बल्कि आर्थिक भाव

> श्यकता पर आधारित था। अधिक सुव्यवस्थित जीवन पद्धति के विकास, और सपत्ति के सचार के साथ वैध उत्तराधिकारियों के माध्यम से स्वामित्व प्रदान करने की इच्छा ने विवाह की प्रथा को अतिरिक्त ,सबल प्रदान किया (राधाकृष्णन, 1956, पृष्ठ 148)।

विवाह के मौलिक रूप के सम्बन्ध मे एक विवाद है। उन्नीसवी शताब्दी के अत के नवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्रीय साहित्य पर मानो इस प्रश्न का भूत सवार है कि आदिम मनुष्य सामूहिक विवाह की अवस्था मे रहता था कि नही (एलिस, 1970, पष्ठ 86)। वेस्टरमाक तथा स्पेंसर जैसे कुछ सिद्धान्तवेत्ताओं का दावा है कि उसका मौलिक रूप एक विवाह प्रथा का था, जबकि मागन श्रार ब्रिफेर जसे अन्य लोगों का कहना है कि उसका मौलिक रूप स्वैर सम्बन्ध।अर्थात अनियत सभोग का था (देखिये, लटज़ और सिडर, 1969, पृष्ठ 19)। बाखाफेन, मैकलेह नान लिपट, कोहलर ब्लॉच तथा अन्य कई लोगो के अनुसार उसका रूप व्यक्तिगत विवाह का नही बल्कि "सामूहिक विवाह का था जिसमे किसी समूह अथवा कबीले के सभी पुरुष किसी भेद भाव के बिना उस कबीले की किसी भी स्त्री के पास जा सकते थे और इन सम्बन्धों के फलस्वरूप जो सतानें होती थी व पूरे समुदाय की सतानें समझी जाती थी। (देखिये वस्टरमाक, 1925, पष्ठ 103)। फिर भी टॉड जैसे कुछ अन्य विद्वान् है जिन्होंने मानव इतिहास के आरम्भ मे सामूहिक विवाह की सार्वत्रिकता के विचार से मतभेद प्रकट किया है और यह मत व्यक्त किया है

> हमारा अपना निष्कर्ष यह है कि सामूहिक विवाह की प्रणाली उस समय इतने पर्याप्त रूपा मे स्थापित नही हुई थी कि उस पर कोई व्यापक निमाण किया जा सके। हमे इस बात को स्वीकार करने के लिए तैयार रहना चाहिए कि आदिम समाज मे स्वैरिता अर्थात अनियत सभाग और विवाह की स्थिरता दोनो ही की बदलती हुई परिस्थितिया पायी जाती थी, जिसे हम सक्षेप म सविराम स्वरिता कह सकत है (टॉड, 1913 पष्ठ 31-44)।

विवाह का मौलिक रूप कुछ भी रहा हो, अब कम से कम सिद्धान्तत प्रचलित रूप सामान्यत एक विवाह का ही है।

भारतीय आर्य सस्कृति मे प्रस्थापित विवाह के आदश रूप के अनुसार, 'विवाह को पिता अथवा अन्य किसी उपयुक्त सम्बन्धी द्वारा वर को वधू का औपचारिक दान समझा जाता था और अब भी समझा जाता है ताकि दोनो मिलकर मानव अस्तित्व के चार प्रमाणिक प्रयोजनों मे से तीन को पूरा कर सकें। ये उल्लिखित उद्देश्य हैं—धम, अर्थ और काम। चूकि एक प्रकार से पहले उल्लिखित उद्देश्य 'धम' मे चौथा उद्देश्य 'मोक्ष' निहित है, इसलिए हम यह मान सकत हैं कि दोनो पक्षो की ओर से विवाह सम्बन्ध सपन्न होने की घोषणा मानव-अस्तित्व के चिरपोषित लक्ष्यों को मिलाकर प्राप्त करने के उद्देश्य से की जाती थी (घुर्ये, 1955, पृष्ठ 92)।

हिन्दुओं के धार्मिक तथा ऐहिक ग्रन्थ विवाह की संकल्पनाओं के उल्लेख से भरे पड़े हैं। हिन्दू धर्म साहित्य का अध्ययन करने से हम एक सामाजिक संस्था के रूप में हिन्दू विवाह प्रथा की आधारभूत संकल्पनाओं का पता चलता है।~जीवन के सम्बन्ध में हिन्दू दृष्टिकोण के अनुसार चार पुरुषार्थों, जीवन के चार महान् उद्देश्यों—धर्म, अर्थ, काम मोक्ष—को पूरा करने के लिए पुरुष और स्त्री के लिए विवाह करना बहुत आवश्यक है। विवाह के बारे में परम्परागत हिन्दू संकल्पना यह है कि यह एक ऐसा धार्मिक संस्कार है जो हमें अपने धार्मिक तथा सामाजिक दोनों ही प्रकार के दायित्व निभाने का अवसर प्रदान करता है। 'विवाह का मुख्यतः दायित्व सामूहिक विधान समझा जाता था जो एक ओर तो धार्मिक तथा नैतिक होते थे और दूसरी ओर सामाजिक तथा आर्थिक' (मेहता 1970, पृष्ठ 17)।

प्रत्येक हिन्दू के लिए विवाह एक संस्कार होता है और इसलिए वह एक ऐसा पवित्र बन्धन होता है जो केवल मृत्यु से ही भंग हो सकता है। जैसा कि महाभारत में कहा गया है, पत्नी ईश्वर की देन होती है।" हिन्दू दर्शनशास्त्र के अनुसार विवाह केवल दो शरीरों का नहीं बल्कि दो आत्माओं का मिलन होता है। वह एक धार्मिक बन्धन होता है। विवाह के हिन्दू आदर्श के अनुसार वह जीवन की परिपूर्ति का एक साधन है जिसका वास्तविक उद्देश्य है जीवन संग्राम को मिलकर लड़ने में पूर्ण साहचर्य। हमारी संस्कृति में विवाह के सांस्कारिक तथा अटूट स्वरूप पर सदैव बल दिया गया है। एक संस्था के रूप में विवाह प्रेम की अभिव्यक्ति तथा उसके विकास का साधन है" (राधाकृष्णन्, 1956 पृष्ठ 146 147)। आदर्श रूप में इसलिए उसका उद्देश्य केवल संतान उत्पन्न करना और उनका पालन पोषण करके उन्हें सामाजिक दृष्टि से उपयोगी नागरिक बनाना ही नहीं है, 'बल्कि उसका मुख्य उद्देश्य पति पत्नी की स्थायी साहचर्य की आवश्यकताओं को पूरा करके उनके व्यक्तित्वों को समृद्ध बनाना है, जिसमें दोनों ही एक दूसरे के जीवन के पूरक बन सकें और दोनों ही पूर्णता प्राप्त कर सकें' (राधाकृष्णन, 1956, पृष्ठ 161 162)। तात्पर्य यह कि उसका लक्ष्य विपरीतलिंगी व्यक्ति के साथ सम्बन्ध स्थापित करके व्यक्ति की जैविक संवेगात्मक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक परिपूर्ति तथा विकास करना है जिसे दोनों में से कोई भी अकेले रहकर प्राप्त नहीं कर सकता था।

आदर्श रूप में, उसका उद्देश्य व्यक्ति का ही पूर्ण विकास तथा परिपूर्ति नहीं बल्कि परिवार का और उसके माध्यम से समाज तथा मानवता का भी विकास, परिपूर्ति तथा कल्याण है। दूसरे शब्दों में, विवाह को व्यक्ति तथा समाज के पोषण के लिए एक आवश्यक संस्था माना जाता है। और जैसा कि विवेकानंद ने लिखा है 'विवाह इन्द्रिय भोग के लिए नहीं बल्कि वंश को चलाने के लिए होता है। यही विवाह के बारे में भारतीय संकल्पना है' (विवेकानंद 1946 पृष्ठ 409 410) जिसके अनुसार जन हित के लिए वैयक्तिक सुख की आहुति देनी पड़ती है। इस संकल्पना के अनुसार परिवारवाद का सिद्धान्त सर्वोपरि है और उसका पालन किया जाना चाहिए और व्यक्ति के हितों को पूरे

परिवार के हितो की तुलना मे गौण स्थान दिया जाता है । पारम्परिक हिन्दू विवाह के बारे मे कापडिया लिखते हैं, "विवाह परिवार तथा समुदाय के प्रति एक सामाजिक कत्तव्य था, और उसम वैयक्तिक हित का विचार नगण्य था" (कापडिया, 1958, पृष्ठ 199) । इसका समथन कुमारस्वामी ने भी किया है, जिनका मत है, "हिन्दू समाज-शास्त्रियो के अनुसार विवाह एक सामाजिक तथा नैतिक सम्बन्ध है, और सन्तानोत्पत्ति एक ऋण का भुगतान" (कुमारस्वामी, 1924, पृष्ठ 86) ।

आल्तेकर (1962) ने बताया है कि प्रारम्भिक काल मे विवाह को हिन्दू पुरुषो तथा स्त्रियो के लिए एक धार्मिक और उसके साथ ही सामाजिक कत्तव्य भी समझा जाता था । उसे स्त्री के लिए अनिवाय और कन्याओ के लिए उसी प्रकार सवथा बाध्यकारी माना जाता था जसे लडको के लिए उपनयन सस्कार । विवाह सभी के लिए आवश्यक तथा वाछनीय भी समझा जाता था । पुरुषो के लिए विवाह इसलिए अनिवाय था कि आत्मा की मुक्ति प्राप्त करने के लिए उत्तराधिकारियो का होना आवश्यक था और स्त्रियो के लिए वह इसलिए अनिवाय था कि वे भी उस समय तक "स्वग नही जा सकती थी" जब तक कि उनका शरीर विवाह के सस्कार स शुद्ध न हो गया हो (महाभारत, 9 33, देखिय आल्तेकर 1962, पृष्ठ 32-34) । इस प्रकार हिन्दू स्त्री के लिए विवाह कोई विकल्प नही बल्कि एक बाध्यता थी और उसके माता पिता के लिए एक पवित्र कत्तव्य जिसका स्रोत "अशत इस विश्वास मे था कि स्त्री को स्वय उसकी अपनी रति भावना के खतरा स बचाने का यही एकमात्र उपाय था ' (गुड, 1963, पृष्ठ 208)। इसके लिए सर्वोच्च धम था पतिव्रत—अपने पति के प्रति स्त्री की पूण भक्ति और अडिग निष्ठा और जीवित अथवा मत अवस्था मे उसे अपना देवता और अपने मोक्ष का एकमात्र माध्यम मानना । 'पुराणो के रचयिताओ ने पतिव्रत अर्थात् केवल पति के प्रति श्रद्धा रखने के जिस विचार का प्रचार किया है उसका आशय केवल पति के प्रति निष्कलक निष्ठा ही नही था बल्कि इस विचार के अनुसार पति की सवा करना पत्नी का एकमात्र कत्तव्य और उसके जीवन का एकमात्र ध्येय था" (कापडिया, 1958, पृष्ठ 169) ।

हिन्दू शास्त्रो के अनुसार विवाह को एक सस्कार और एक अटूट बन्धन माना गया है और उसे भग करना हिन्दू नारी के धम के विरुद्ध था । चूकि सुख की खोज को जीवन का परम लक्ष्य नही माना जाता था और परिवार के सुख के लिए निजी सुख की बलि दी जा सकती थी, इसलिए विवाहित जीवन म उसके अभाव को इस बन्धन को भग करने के लिए उचित आधार नही समझा जाता था (देखिये आल्तेकर, 1962, कापडिया, 1958, मेहता, 1970) । "हिन्दू धार्मिक भावना कम से कम धम-सूत्रो के काल से (600 300 ई० पू०) तो निश्चित रूप से विवाह-सम्बन्ध के भग किये जाने के विरुद्ध रही है " (गार, 1968, पृष्ठ 200) ।

प्रभु (1954), आल्तेकर (1962) और कापडिया (1958) के अध्ययनो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आदश रूप मे हिन्दू विवाह प्रणाली एक विवाही

पद्धति थी। आपस्तम्ब तथा गौतम सूत्र के खंड 2 का उल्लेख करते हुए प्रभु लिखते हैं "जब तक किसी गृहस्थ की पत्नी हो और वह एक गृहस्थ के रूप में उसके धार्मिक कर्तव्यों के पालन में उसके साथ भाग लेने को तैयार हो, और जिसने उसकी सन्तानों को जन्म भी दिया हो, तब तक उसे किसी दूसरी स्त्री को अपनी पत्नी नहीं बनाना चाहिए' (प्रभु, 1954, पृ० 198)। प्रभु के अध्ययन के आधार पर गूड लिखते हैं कि "अनेक सबेता से पता चलता है कि विवाह के बारे में हिन्दू सांस्कृतिक विचार एक-विवाही था। वैदिक देवता एक विवाही हैं। घरेलू धार्मिक कर्मकांडों के पालन के नियमों में भी एक से अधिक पत्नी के भाग लेने की किसी सम्भावना की व्यवस्था नहीं है। विवाह संस्कार सपन्न कराने के श्लोकों तथा विवाह सम्बन्धी दार्शनिक शास्त्रार्थों में वैवाहिक निष्ठा पर बल दिया गया है" (गूड, 1963, पृ० 222)।

जहाँ तक इस प्रश्न का सम्बन्ध है कि विवाह का निर्धारण करने अथवा अनुमति का क्या स्थान होता था, हम देखते हैं कि वेदों, सूत्रों तथा स्मृतियों के युग में रोमांटिक प्रेम पर आधारित विवाहों को भी मान्यता प्राप्त थी और गंधर्व विवाह का यद्यपि बहुत अधिक प्रचलन नहीं था, फिर भी समाज में उस विवाह के एक स्वीकृत रूप की मान्यता प्राप्त थी। इस प्रकार का विवाह भावी वर-वधू की पारस्परिक सहमति पर आधारित होता था (कापाडिया, 1 2, देखिये राधाकृष्णन्, 1956, पृ० 66)। इस प्रकार के विवाह में प्रेमी वर मालाओं के आदान प्रदान के एक साधारण समारोह द्वारा अपनी वधू का वरण करता था। वात्स्यायन ने कामसूत्र में इसे विवाह की आदर्श पद्धति माना है। कालिदास की महान नाट्यकृति अभिज्ञान शाकुंतल में दुष्यंत और शकुंतला के बीच इस प्रकार के विवाह का उल्लेख किया गया है। इस प्रसंग में नाठ लिखते हैं

> भगवान मनु रोमांटिक विवाहों को अस्वीकार करनेवाले सर्वप्रथम लोगों में से थे। उन्होंने गंधर्व सम्बन्धों को वासना पर आधारित ठहराकर उनकी निंदा की और इसलिए उन्हें अशोभनीय माना। रोमांटिक प्रेम को तीन अन्य कारणों से तिरस्कार की दृष्टि से देखा जाता था कहा जाता था कि यह स्वच्छंद काम क्रीडा के लिए मार्ग उन्मुक्त करता है यह जीवन-साथी को विवेकहीन ढंग से चुनने को प्रोत्साहन देता है, और सबसे बड़ी बात यह है कि इससे परिवार के लिए संकट उत्पन्न होता है (नाठ, 1972)।

वीरगाथा काल में कन्या को उन पुरुषों में से अपना वर चुनने का अधिकार होता था जिन्हें उसके माता पिता ने अपनी पुत्री के लिए योग्य वर के रूप में पसन्द किया हो। वीरगाथा-काल में स्वयंवर की प्रथा का प्रचलन हो गया, जिसमें वधू की निजी रुचि और अपनी त्रुटियों के लिए योग्य वर प्राप्त करने में माता पिता के परामर्श अथवा अनुमति दोनों ही का संयोजन होता था। इस प्रकार माता-पिता के निर्धारित किये हुए विवाहों में पुत्री की अनुमति भी शामिल होती थी।" माता पिता

द्वारा निर्धारित अल्पवयस्क विवाह जो बाल विवाह से भिन्न होते थे, भारत में सामान्य रूप से प्रचलित रहे हैं" (राधाकृष्णन्, 1956, पृ० 170)। विवाह विच्छेद (तलाक) तथा स्त्रियों के पुनर्विवाह के सम्बन्ध में भी ऐसी ही स्थिति थी। उन दशाओं अथवा परिस्थितियों का निर्धारण करते हुए जिनमें स्त्री को विवाह सम्बन्ध भंग करने की अनुमति थी, कौटिल्य लिखते हैं

> यदि पति दुश्चरित्र हो, या दीर्घकाल से परदेस में हो, या राजद्रोह का अपराधी हो, या अपनी पत्नी के लिए खतरनाक हो, या अपनी जाति से निकाल दिया गया हो, या उसका पुंसत्व नष्ट हो गया हो, तो उसकी पत्नी उसे छोड़ सकती है (अर्थशास्त्र 3 3, देखिये राधाकृष्णन्, 1956, पृ० 181)।

प्राचीन हिन्दू विधि में केवल उन स्त्रियों के लिए पुनर्विवाह की स्पष्ट अनुमति का उल्लेख मिलता है जिन्होंने अपने पति को किसी न्यायोचित कारण से छोड़ दिया हो, या जिनके पति उन्हें छोड़कर चले गये हों अथवा मर गये हों (देखिये आयंगर, 1938, पृ० 185)। एक योग्य वर की उचित आयु तथा शिक्षा के सम्बन्ध में भी कामसूत्र में उल्लेख किया गया है कि केवल उसी नवयुवक को विवाह करने का अधिकार होगा जिसने ब्रह्मचर्य के किसी नियम का उल्लंघन किये बिना वेदों का अध्ययन किया हो (काम-सूत्र, 5 2, देखिये शरयू बाल और वनर्स, 1966, पृ० 21)।

बहुत बाद में जाकर विभिन्न सामाजिक-आर्थिक कारणों से भारत में स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने से निरुत्साह किया जाने लगा और यौवनारम्भ से पहले ही विवाह कर देने की प्रथा प्रारंभ हुई। स्त्रियों की शिक्षा के ह्रास और कन्याओं के लिए विवाह की आयु घटा दिये जाने के कारण उनमें जीवन साथी चुनने में अपना मत देने की पर्याप्त क्षमता नहीं रह गयी और इस प्रकार शुद्धतः माता पिता द्वारा निर्धारित विवाहों का प्रचलन हो गया। जैसा कि मेहता ने कहा है

> हिन्दू कट्टरपंथिता के अन्तर्गत विवाह दो व्यक्तियों के बीच स्वतन्त्र वरण का सवाल नहीं रह गया, इसके विपरीत वह दो परिवारों के बीच बातचीत से निर्धारित सम्बन्ध बन गया। वह वैदिक धार्मिक कर्मकांडों द्वारा विधिवत् सम्पन्न हुआ एक अटल संस्कार होता था जिसमें उन व्यक्तियों से कोई परामर्श नहीं किया जाता था जिनका उससे सबसे अधिक सम्बन्ध होता था।
>
> हिन्दू कट्टरपंथिता के अनुसार विवाह केवल पति के जीवनकाल तक के लिए ही नहीं होता था, बल्कि यह एक ऐसा सम्बन्ध था जो उसकी मृत्यु के बाद भी बना रहता था। फलस्वरूप सामाजिक प्रथा के अनुसार विधवाओं का सामाजिक प्रथा के अनुसार पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी (मेहता, 1970, पृष्ठ 17 18)।

1954 के विशेष विवाह अधिनियम और 1955 के हिन्दू विवाह अधिनियम का पारित किया जाना, जिनमें विवाह के लिए बालिकाओं तथा बालकों की न्यूनतम आयु

15 और 18 वप निर्धारित की गयी है, विवाह की एकविवाही पद्धति को एकमात्र वघ विवाह पद्धति माना गया है।और पुरुषों तथा स्त्रियों दोनों ही को विवाह भग करन तथा पुनर्विवाह करने का अधिकार दिया गया है, इस बात का सूचक है कि हिन्दू समाज एक बार फिर वदिक काल म प्रचलित व्यवहार का अपना रहा है।

आइये अब इस विवाह के बारे म पश्चिमी विद्वानों की कुछ परिभाषाओं तथा सकल्पनाओं पर विचार करें। बोगाडास ने विवाह की परिभाषा करते हुए कहा है कि यह 'एक ऐसी सस्था है जिसम पुरुषों तथा स्त्रियों को मुख्यत बच्चे पैदा करन और उनका पालन पोषण करन तथा घनिष्ठ वैयक्तिक सम्बन्ध स्थापित करके एक दूसरे के साथ रहन का अवसर दिया जाता ह (बोगार्डस, 1950 पृष्ठ 75)। 'यदि एक सस्था के रूप म उस पर विचार किया जाये तो विवाह कामुकता का नियमन करने तथा पारिवारिक जीवन की रक्षा करने की दिशा म समाज के चरम प्रयास का द्योतक है' (चेस्सर, 1964, पृष्ठ 126)। वेस्टरमाक ने विवाह की परिभाषा इस रूप म की है कि वह नर और नारी के बीच न्यूनाधिक रूप मे एक स्थायी सम्बन्ध होता है जो जनन की क्रिया मात्र से आगे तक भी बना रहता है। यह तो प्राकृतिक इतिहास की दृष्टि स उसकी परिभाषा है। एक सामाजिक सस्था के रूप मे वह प्रथा अथवा विधि द्वारा नियमित एक सम्बन्ध होता है' (वेस्टरमाक, 1928, पृष्ठ 364)। अपनी जानकारी वा व य जीवन के निकटतम तथा वैज्ञानिक अध्ययन पर आधारित करत हुए मलिनोस्की न भी वेस्टरमाक के अभिमत का समथन किया है। उनकी सकल्पना के अनुसार भी विवाह केवल एक 'सेक्स गत विनियोजन" ही नहीं होता बल्कि उस जटिल सामाजिक परिस्थितियों पर आधारित एक सस्था' माना जाता है और यह कि सेक्स गत विनियोजन उसका मुख्य पक्ष भी नहीं है और वह केवल सेक्स पर आधारित भी नहीं है। (देखिये मैलिनोव्स्की 1922)।

वेस्टरमाक के (1925) कथनों का उल्लेख करत हुए एलिस ने लिखा ह कि इस शब्द के व्यापक जविक अथ म विवाह की परिधि म सेक्स सम्बन्ध का हर वह सामाजिक रूप आ जाता है जिसका सचेतन अथवा अचेतन मुख्य उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति हो (एलिस, 1961 पृष्ठ 29)। प्रेम तथा विवाह के बार म एडलर का अभिमत है

> प्रेम और उसके साथ विवाह जो उसकी निष्पत्ति है, *विपमलिंगी साथी* के प्रति घनिष्ठतम लगाव का सूचक है जो शारीरिक आकर्षण साहचय और सन्तान उत्पन्न करन क निणय क रूप म व्यक्त होता है। *यह बात सहज ही प्रमाणित की जा सकती है कि प्रेम और विवाह* सहयोग का एक पक्ष है—केवल दो व्यक्तियों के कल्याण क लिए ही सहयोग नहीं अपितु मानवजाति क कल्याण क लिए भी सहयोग (एडलर, 1962, पृष्ठ 190)।

स्वसन के अभिमतों का उल्लेख करत हुए मराफ और फील्ड लिखत हैं कि समाज के दृष्टिकोण से विवाह एक ऐसी सस्था है जो किसी समाज विशेष के बच्चों

की सख्या मे वृद्धि तथा उनके समाजीकरण को सुनिश्चित बनाने का काम करती है। व्यक्ति के दृष्टिकोण से यह सस्था बच्चे पैदा करने तथा उनका पालन पोषण करने मे योग देती है और स्नेह प्रदान करने के लिए नियत्रणो का प्रबन्ध करती है (स्वसन, 1965)। विवाह व्यक्ति के समाजीकरण का अतिम चरण है (पार्सस और वेल्स, 1955) जब वह अपने भविष्य के सारे दायित्व अतिम रूप से अपने कन्धो पर ले लेता है (देखिये वेरोफ और फेल्ड, 1970, पृष्ठ 71)। चेस्सर के मतानुसार "विवाह एक आवश्यक सामाजिक सस्था है। पारिवारिक जीवन के सरक्षण तथा बच्चा के कल्याण की सुरक्षा के किसी और उपाय का कल्पना ही नही की जा सकती। परन्तु मनुष्य की बनायी हुई हर सस्था मे एक मनमानापन होता है, और अनिवाय रूप से कुछ लोग ऐसे होते हैं जो समाज द्वारा स्वीकृत पद्धति के अनुसार ढल नही पाते" (चेस्सर, 1964, पृष्ठ 88)। दूसरी ओर स्टीफेंस का मत है "विवाह सामाजिक दृष्टि से वैध सेक्स सम्बन्ध होता है, जो एक सावजनिक घोषणा से आरम्भ होता है और जिस स्थायित्व के किसी विचार से स्थापित किया जाता है, इस सम्बन्ध को एक सुस्पष्ट विवाह अनुबंध के साथ स्वीकार किया जाता है, जिसमे पति और पत्नी के बीच और पत्नी पति तथा उनकी सन्ताना के बीच पारस्परिक अधिकारो तथा दायित्वो की विस्तत व्याख्या रहती है" (स्टीफेंस, 1963, पष्ठ 5)। लटज और सिडर के अनुसार, "विवाह एक या एक से अधिक पुरुषो और एक या एक से अधिक स्त्रियो का औपचारिक तथा स्थायी सेक्स सम्बन्ध होता है, जिसका पालन कुछ नियत अधिकारा तथा कत्तव्यो की परिधि मे रह-कर किया जाता है' (लटज और सिडर, 1969, पृष्ठ 16)। काट ने विवाह की परिभाषा यह की है कि "दो विपमलिंगी व्यक्तियो को आजीवन एक दूसरे के सेक्स-गत गुणा पर पारस्परिक स्वामित्व के बधनो मे जकड देने" को विवाह कहते है (देखिये राधाकृष्णन 1956, पष्ठ 150)।

विवाह से सम्बधित विभिन्न सकल्पनाओ पर विचार करने के बाद हम कह सकते हैं कि परम्परागत हिन्दू सकल्पना के अनुसार विवाह को एक ऐसा धार्मिक सस्कार माना जाता है जिसके सहारे मनुष्य अपने धार्मिक तथा सामाजिक दोना ही प्रकार के दायित्वो को पूरा कर सकता है, परन्तु समकालीन पाश्चात्य दृष्टिकोण के अनुसार वह केवल एक ऐसा सामाजिक अनुबन्ध है जिसके सहारे मनुष्य अपने कत्तव्यो अथवा दायित्वो को पूरा करके कुछ सुविधाएँ प्राप्त करता है। परपरागत हिन्दू सकल्पना के अनुसार धर्म, काम, अर्थ तथा मोक्ष के लक्ष्या की पूर्ति के लिए—परिवार, समाज और मानवजाति के प्रति अपने दायित्वो को पूरा करने के लिए—विवाह नितान्त आवश्यक है, जबकि पश्चिम मे विवाह को निजी आवश्यकताओ की पूर्ति तथा सुख के लिए आवश्यक समझा जाता है।

इनमे से जिस दृष्टिकोण को भी सही माना जाय, परम्परागत दृष्टि से विवाह का काम भोग के लिए एक सामाजिक अनुमति अथवा खुली छूट की अपेक्षा [illegible] परिवार की स्थापना के लिए एक सामाजिक सविदा के रूप मे अधिक [illegible] गयी है। (राधाकृष्णन, 1956, पष्ठ 151)। गूड लिखते हैं 'केवल [illegible]

में विवाहों की व्यवस्था पति और पत्नी के निजी सुख के लिए की गयी है। इसके बजाय उन्हें और उनके सगे सम्बन्धियों को अधिक चिन्ता इसी बात की रहती थी कि वे एक दूसरे के प्रति अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करते हैं या नहीं और एक-दूसरे का उचित सम्मान करते है या नहीं" (गूड, 1965, पृष्ठ 72)। रसेल ने बताया है कि विवाह 'दो व्यक्तियों के एक दूसरे के साथ रहने में सुख अनुभव करने से अधिक गम्भीर चीज है, वह एक ऐसी संस्था है जो इस बात के कारण कि उसके फलस्वरूप सन्तान की उत्पत्ति होती है, यह समाज के ताने बाने का एक विभिन्न अंग होती है, और उसका महत्त्व पति और पत्नी की निजी भावनाओं की परिधि से कहीं अधिक व्यापक होता है' (रसेल, 1959, पृष्ठ 51 52)।

पुरुषों तथा स्त्रियों के जीवन पर विवाह का हमेशा से इतना गहरा प्रभाव रहा है कि इस संस्था के प्रति उनके रवैये तथा अभिवृत्ति की सहायता से सहज ही इस बात का संकेत मिल सकता है कि किसी समाज विशेष में विवाह तथा वैवाहिक सम्बन्धों में वर्तमान प्रवृत्तियां क्या है और भावी प्रवृत्तियां क्या होंगी।

विवाह से सम्बन्धित उपर्युक्त संकल्पनाओं तथा परिभाषाओं से किसी समाज विशेष के सम्भ्यों की बदलती हुई अभिवृत्तियों के बारे में कुछ तर्कसंगत प्रश्न उठते हैं जो उस समाज में होनेवाले सामाजिक परिवर्तनों के विशेष पक्षों की दिशाओं को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न हैं (1) विवाह की आवश्यकता, (2) विवाह की संकल्पना, (3) विवाह करने का लक्ष्य, (4) विवाह करने की आयु (5) भावी रूप, (6) विवाह का रूप, (7) विवाह की पद्धति, (8) तलाक, और (9) विवाह विच्छेद अथवा एक साथी की मृत्यु के बाद पुनर्विवाह। इस अध्याय में इन्हीं प्रश्नों के बारे में शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियों की अभिवृत्तियों का विश्लेषण किया गया है।

ये अभिवृत्तियाँ श्रमजीवी स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करनेवाले पात्रों के प्रत्युत्तरों के माध्यम से प्रस्तुत की गयी हैं। इस अध्याय में जिन व्यक्ति-अध्ययनों को प्रस्तुत किया गया है तथा जिनकी विवेचना की गयी है, उनका सम्बन्ध विभिन्न सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों की ऐसी स्त्रियों से है जिन्हें श्रमजीवी स्त्रियों के दो ऐसे नमूनों में से चुना गया है जिनसे दस वर्ष के अन्तराल में साक्षात्कार किया गया था। सुमन और कमला से दस वर्ष पहले साक्षात्कार किया गया था और माया तथा सानिया का अध्ययन दस वर्ष बाद किया गया, जबकि रश्मि तथा शालिनी का अध्ययन दस वर्ष पहले भी किया गया था और दस वर्ष बाद भी। इन स्त्रियों के अतिरिक्त ज्योति, कंचन, वासना, प्रमिला और मोना के विचार तथा मत भी दिये गये हैं जिनका उल्लेख दूसरे और चौथे अध्यायों में विस्तारपूर्वक किया गया है।

### व्यक्ति-अध्ययन संख्या 17

तेईस वर्षीय सुमन पिछले डेढ़ साल से एक अस्पताल में डाक्टर के रूप में काम

कर रही थी। वह एम० बी० बी० एस० पास थी और उसे 350 रुपये वेतन मिलता था। सूरत शक्ल मामूली से भी कुछ कम ही थी, उसका कद छोटा और रंग काला था और उन अपने इस अनाकर्षक रूप का बहुत दुखद आभास रहता था। वह बहुत शान्त स्वभाव की और गम्भीर थी, रख-रखाव अच्छा और कपड़े हमेशा बहुत साफ सुथरे रहते थे और वह काफी प्रभावशाली लगती थी। बातचीत करने में वह बहुत रोचक थी और उसका व्यक्तित्व सुखद था।

सुमन एक कट्टरपंथी हिन्दू परिवार की लड़की थी जिसमें लड़कियों को न उच्च शिक्षा प्राप्त करने दी जाती थी और न ही उन्हें घूमने फिरने और अपने विचार व्यक्त करने की स्वतन्त्रता थी। अपने माता पिता की तरह वह भी धार्मिक विचार रखती थी और ईश्वर में आस्था रखती थी। यद्यपि मन्दिरों में जाने में वह विश्वास नहीं रखती थी पर पूजा प्रार्थना नियमित रूप से करती थी। उसकी माँ ने बिल्कुल भी शिक्षा नहीं पायी थी और बस नाममात्र को पढ़ लिख पाती थी। उसकी मां बहुत ही दब्बू और भीरु स्वभाव की थी, अपने काम-काज में बहुत कुशल थी और उसके पिता की सेवा बड़ी निष्ठा के साथ करती थी।

सुमन का बचपन सुख-सुविधाओं के बीच बीता था क्योंकि उस समय उसके पिता बहुत अच्छी नौकरी पर लगे हुए थे और बहुत सम्पन्न थे। उसके तीन भाई थे—एक बड़ा और दो छोटे—और अकेली बेटी होने के नाते उसके माता पिता उससे बहुत प्यार करते थे। चूंकि उसके पिता को बहुत छोटे-छोटे शहरों में काम करना पड़ता था, इसलिए उसका अधिकांश बचपन और छात्र-जीवन वहीं बीता था और वह बहुत साधारण स्कूलों में पढ़ी थी। आरम्भ में ही वह पढ़ने में बहुत तेज थी और उसे अच्छे नम्बर मिलते थे। उसकी तुलना में उसके भाई बहुत निकम्मे थे और पढ़ने लिखने से कोई रुचि नहीं रखते थे। शुरू में तो उसके पिता उच्च शिक्षा नहीं दिलाना चाहते थे, परन्तु अपने बेटों से निराश होकर उन्होंने सारी आशाएँ बेटी से लगायी और यह इच्छा प्रकट की कि वह डाक्टरी पढ़े। परन्तु उसे भौतिकी से रुचि थी और वह डाक्टरी की बजाय बी० एस०-सी० करना चाहती थी। उसकी माँ, दादी और चाचियाँ, मौसियाँ आदि चाहती थीं कि परिवार की परम्परा के अनुसार उसका विवाह कर दिया जाये।

उन्हीं दिनों उसके पिता की नौकरी छूट गयी जिसके कारण सुमन बहुत चिन्तित हुई। वह जानती थी कि उसकी बिरादरी में यह चलन था कि लड़के के मा बाप दहेज में बहुत पैसा मांगते थे। उसे इस बात का पूरी तरह आभास था कि उसकी सूरत शक्ल साधारण से भी कुछ कम ही अच्छी थी और इसलिए वह महसूस करती थी कि थोड़े ही लोग ऐसे होंगे जो उससे विवाह करना चाहें। इस प्रकार उसके अन्दर एक मनोग्रन्थि पैदा हो गयी और बाद में उसे विवाह से अरुचि सी हो गयी और वह मेडिकल कालेज में नाम लिखाकर जान-बूझकर पाँच साल के लिए विवाह से बचना चाहती थी। यही उसके पिता भी चाहते थे। उसने यह भी महसूस किया कि उसे

आर्थिक रूप से स्वतन्त्र हो जाना चाहिए ताकि उसके माता पिता पर उसका विवाह
करने के दायित्व का बोझ न रह जाये।

मेडिकल कालेज में प्रथम वर्ष की पढाई के दौरान वह बहुत निराश होने लगी
पर उसके पिता ने उसे जी लगाकर परिश्रम करने की प्रेरणा दी। किसी कारण उसे
वह स्थान और उतने नम्बर न मिल सके जिसकी उसने आशा की थी। इससे
मेडिकल कालेज के अध्यापकों के प्रति और स्वयं अपने प्रति उसका रवैया बिल्कुल
बदल गया। उसने अनुभव किया कि सुन्दरता और चुस्ती का बहुत महत्त्व है और
चूंकि वह अंग्रेजी प्रवाह के साथ नहीं बोल पाती है और प्रश्नों के उत्तर चुस्ती के साथ
नहीं दे सकती है इसीलिए उसे सिद्धान्त की परीक्षा में भी अच्छे नम्बर नहीं मिल सके
जिसका उसे बहुत अच्छा ज्ञान था। इससे वह हतोत्साह हो गयी और उसने मेहनत
करना छोड दिया। परन्तु शीघ्र ही उसे इस बात का आभास हुआ कि उसके माँ-बाप के
पास बहुत पैसा नहीं है और उसकी पढाई उनको बहुत महँगी पड रही है। इसलिए
उसने डाक्टर बनकर पैसा कमाने और अपने माँ-बाप तथा छोटे भाइयों की सहायता
करने का दृढ निश्चय किया। उसने यह भी महसूस किया कि उसके माँ बाप के पास
उसका दहेज देने के लिए कोई पैसा नहीं है, जिसके बिना उसका विवाह होना कठिन
था। इसलिए उसने अपना सारा ध्यान पढाई पर केंद्रित किया और एम० बी० बी०
एम० की पढाई पूरी कर ली। शिक्षा पूरी हो जाने पर उस अस्पताल में काम करना
पडा और वह हाउस सर्जन के क्वाटरों में रहने लगी। वह अपनी अधिकांश कमाई
अपने छोटे भाइयों अपनी माँ और स्वयं अपने लिए चीजें खरीदने पर खर्च कर देती
थी। उसने बताया कि जब से वह पैसा कमाने लगी उसके बाद से उसे जीवन कुल
मिलाकर अधिक रोचक लगने लगा और वह अब उतना भारी बोझ नहीं लगता था।
उसे इस बात पर बडा सन्तोष था कि उसने आर्थिक रूप से अपने पिता की सहायता की
थी, रुपये पैसे के मामले में वह स्वावलम्बी थी और अपनी इच्छा के अनुसार कहीं भी
आ जा सकती थी। उसने कहा कि लगभग एक वर्ष पहले तक वह सोचती थी कि वह
कभी भी विवाह करना नहीं चाहेगी और यह कि विवाह करना आवश्यक नहीं है।
वह विश्वास करती थी कि वह विवाह किये बिना भी रह लेगी और अपने व्यवसाय
पर ही सारा ध्यान केन्द्रित करेगी और अपने माँ बाप की देखभाल करेगी। मुख्यतः
इसका कारण यह था कि वह सोचती थी कि उसकी बिरादरी का कोई भी नवयुवक
उससे विवाह करने को तैयार नहीं होगा और अगर कोई तैयार हो भी गया तो वह दहेज
में बहुत बडी रकम मांगेगा जिसे दे पाना उसके माँ बाप की सामर्थ्य के बाहर होगा।

जब भी उसके मां बाप यह तर्क करते कि हर लडकी के लिए विवाह करना
नितान्त आवश्यक है और मां बाप का यह कर्त्तव्य है कि वे अपनी बेटियों का विवाह
करायें, चाहे इसके लिए उन्हें भीख ही क्यों न माँगनी पडे और उधार ही क्यों न लेना
पडे, तो सुमन बहुत उदास हो जाती और झुंझला उठती। परन्तु कुछ महीने पहले
एक नवयुवक जो डाक्टर था और उसी के साथ काम करता था, उसके प्रति रुचि दिखा

लगा और उसकी ओर ध्यान देने लगा। इसमें उसे बहुत सन्तोष और सुख मिला और वह भी उसे बहुत चाहने लगी। उस नवयुवक की ओर से, जो उसी की जाति बिरादरी का था, इस अप्रत्याशित व्यवहार के कारण जीवन के प्रति और विशेष रूप से विवाह करने के बारे में सुमन का रवैया बिल्कुल बदल गया। अब उसने बताया कि वह विवाह करना चाहती है। वह यह सोचने लगी कि विवाह करना आवश्यक है क्योंकि उससे शारीरिक और संवेगात्मक दोनों ही प्रकार की सुरक्षा मिलती है और उससे लडकी को एक संरक्षक मिल जाता है। उसने यह भी सोचा कि इस प्रकार वह अपने पति तथा परिवार के प्रति अपने पवित्र कर्त्तव्यों का निर्वाह कर सकेगी।

उसने कहा "विवाह इसलिए आवश्यक है कि वह वैध ढंग से सन्तान उत्पन्न करने तथा उसका पालन-पोषण करने का अवसर प्रदान करता है।" जब उससे पूछा गया कि आगे चलकर उसकी योजना विवाह करने की है या काम करने की या एक साथ दोनों ही की तो उसने उत्तर दिया, "विवाह करने की", और कहा कि उसके जीवन का अंतिम लक्ष्य विवाह करना है। वह बताती रही कि विवाह के बाद वह काम करना नहीं चाहेगी जब तक कि आर्थिक कारणों से विवश न हो जाये। वह कहती रही कि स्त्री का बुनियादी कर्त्तव्य है विवाह करना और अपने पति तथा अपने घर-बार की देखभाल करना। फिर भी, उसने स्वीकार किया कि विवाह हो जाने के बाद भी वह चाहेगी कि उसे दो घंटे के लिए कोई डाक्टर का काम मिल जाये। उसके गृहस्थी के कर्त्तव्यों के पालन में कोई विघ्न नहीं पड़ेगा और साथ ही वह समय की गति के अनुसार अपने व्यावसायिक ज्ञान को भी बढ़ाती रह सकेगी ताकि अगर जीवन में आगे चलकर कभी उसे अपना व्यवसाय फिर करना पड़े तो वह कर सके।

इस प्रश्न के उत्तर में कि "तुम विवाह क्यों करना चाहती हो?" उसने कहा, "क्योंकि मेरा सम्बन्ध परम्पराओं में जकड़े हुए एक ऐसे परिवार से है जिसमें इस बात का चलन रहा है कि हर लड़की की आयु अधिक हो जाने से पहले ही विवाह कर ले, और मेरे माता पिता की भी तीव्र इच्छा यही रही है कि वे मेरा विवाह कर दें और इस प्रकार अपना पवित्र कर्त्तव्य पूरा कर दें। मैं समझती हूँ कि मेरा भी यह कर्त्तव्य है कि मैं अपने माता पिता की इच्छा पूरी करूँ। लेकिन मैं इसलिए भी विवाह करना चाहती हूँ कि मैं किसी ऐसे पुरुष की होकर रहना चाहती हूँ जो मुझे बहुत अच्छा लगता हो और मैं अपने पति के रूप में उससे प्रेम करना चाहती हूँ और उसके संरक्षण तथा उसकी देखभाल में रहना चाहती हूँ।" यह पूछे जाने पर कि "विवाह से तुम किस बात की आशा रखती हो?" उसने उत्तर दिया, मैं विवाह से बहुत अधिक कुछ नहीं चाहती। मैं यह आशा अवश्य करती हूँ कि विवाह से मुझे एक ऐसे व्यक्ति की सेवा करने का अवसर मिलेगा जिसे मैं बहुत सराहती हूँ और जिसका मैं बहुत सम्मान करती हूँ और मैं उसे अपना स्नेह दे सकूँगी और उसके परिवार वालों की सेवा कर सकूँगी और उसका स्नेह तथा सम्मान प्राप्त कर सकूँगी।'

जब उससे पूछा गया, 'फिर तुम विवाह कर क्यों नहीं लेती?" तो उसने

उत्तर दिया "इसलिए कि वह उस समय तक विवाह नहीं करना चाहते जब तक कि उन्हें कोई बेहतर नौकरी न मिल जाय और उनके माता पिता सहष मेरे माता पिता की ओर से रखे गये उनके साथ मेरे विवाह के प्रस्ताव को स्वीकार न कर लें। हालांकि वह कहते है कि उनके माता पिता मान जायेंगे पर मुझे कभी-कभी डर लगता है कि शायद वे न मानें। अगर इस प्रकार की कोई बात हुई तो मुझे बहुत दुःख होगा।"

इस प्रश्न के उत्तर मे कि स्त्री को विवाह क्या करना चाहिए ? सुमन ने कहा कि स्त्री को सामाजिक प्रथाओ तथा परम्पराओ का पालन करने के लिए विवाह करना चाहिए इसलिए कि उसे सामाजिक प्रतिष्ठा तथा सम्मान मिले और उसका घर बार, पति और बच्चे हो। उसने यह भी कहा कि स्त्री को इसलिए भी विवाह करना चाहिए कि वह किसी की होकर रह सके और अपने पति तथा परिवार के अन्य सदस्यो को अपना प्यार दे सके और उनका प्यार पा सके। सुमन ने आगे चलकर कहा कि विवाह इस बात का अवसर प्रदान करता रहता है कि निरन्तर सहवास से प्रेम का विकास हो जो अन्यथा सम्भव नही है। वह यह महसूस करती थी कि विवाह से अपनी भावनाओ को व्यक्त करने और दूसरो को स्नेह देने तथा उनका स्नेह प्राप्त करने का एक मार्ग उन्मुक्त होता है।

उसने स्वीकार किया कि एक वर्ष पहले तक वह विश्वास करती थी कि विवाह माता पिता को तय करना चाहिए और उसके लिए लडके और लडकी की केवल औपचारिक स्वीकृति ली जा सकती है, परन्तु अब वह यह अनुभव करने लगी थी कि विवाह शुद्धत माता पिता का तय किया मामला नही होना चाहिए और यह कि एक-दूसरे को थोडा-बहुत जान लेने के बाद ही विवाह होना चाहिए। फिर भी अब तक उसका यही विश्वास है कि लडको और लडकियों का अपनी इच्छाओ के बावजूद माता पिता की हार्दिक अनुमति के बिना विवाह नही करना चाहिए और यदि असहमति हो तो उन्हे या तो अपने माता पिता को समझा-बुझाकर अपनी पसन्द के बारे मे सहमत कर लेना चाहिए या फिर उस व्यक्ति के साथ विवाह करने का विचार त्याग देना चाहिए।

सुमन का दृढ विश्वास था कि हर व्यक्ति को अपनी बिरादरी, प्रदेश, धर्म और जाति की परिधि मे ही विवाह करना चाहिए और उसने कहा कि वह स्वय अपनी बिरादरी और अपने प्रदेश के ही किसी आदमी से विवाह करना चाहेगी और यह कि उसे अपने धर्म तथा अपनी जाति के बाहर विवाह करने का विचार बिल्कुल पसन्द नही है। उसने समझाया कि अपनी बिरादरी और अपने प्रदेश के भीतर विवाह करना इसलिए अच्छा है कि लडके और लडकी दोनो के परिवारो के रीति रिवाज, रहन-सहन, खान पान मे समानता होगी और उनकी सामाजिक सास्कृतिक पृष्ठभूमियाँ भी एक जैसी ही होगी, और उसको विश्वास था कि इससे लडकी को नये परिवार और उसके रहन-सहन के ढग के अनुसार अपने को ढाल लेने मे सुविधा होगी। परन्तु, उसने यह भी कहा कि उसे इस बात मे भी कोई आपत्ति नहीं है कि कोई लडकी किसी दूसरी बिरादरी के लडके से विवाह कर ले यदि दोनो एक-दूसरे के प्रति सम्मान और स्नेह

रखते हों और दोनों के माता पिता उन्हें विवाह करने की स्वीकृति दे दें। परन्तु यदि दो युवा व्यक्ति अपने माता पिता या अपने अभिभावकों की अनुमति के बिना विवाह कर लें तो वह इसे बहुत आपत्तिजनक मानेगी।

उसने कहा कि उसकी राय में सबसे अच्छा उपाय यह है कि माता-पिता या सगे-सम्बन्धी विवाह के लिए किसी योग्य पात्र का सुझाव दे दें और अंतिम निर्णय लड़के-लड़कियों पर छोड़ दें, या फिर लड़का या लड़की किसी उचित पात्र का सुझाव दे दें और माता पिता अन्तिम निर्णय कर दें। वह यह भी महसूस करती थी कि दोनों के परिवारों की रुचियों तथा विचारों को उसमें अधिक या कम से कम उतना ही महत्त्व दिया जाना चाहिए जितना कि विवाह करनेवाले युवा व्यक्तियों की रुचियों को। पूछे जाने पर उसने बताया कि उसकी राय में लड़की के लिए विवाह करने की सबसे उपयुक्त आयु 23 और 29 वर्ष के बीच है और 16 वर्ष से कम आयु की लड़की को तो विवाह करने ही नहीं देना चाहिए। उसने कहा कि लड़के और लड़की की आयु में 7 से 10 वर्ष तक का अन्तर होना चाहिए। उसने कहा कि वह अपनी ही आयु के या अपने से छोटे किसी आदमी के साथ विवाह नहीं करना चाहेगी क्योंकि वह समझती थी कि यदि वह उसमें बड़ा न हुआ तो उसका सम्मान नहीं कर सकेगी।

अपने जीवन साथी में वह किन गुणों को महत्त्व देती है, इसके बारे में उसने कहा कि वह चाहेगी कि वह उससे अधिक पढ़ा-लिखा और बुद्धि, आर्थिक क्षमता तथा आत्मविश्वास में उससे श्रेष्ठतर हो ताकि वह उसका सम्मान कर सके। परन्तु विचित्र बात है कि इसके साथ ही उसने यह भी कहा कि वह ऐसा जीवन-साथी नहीं चाहेगी जो देखने में उससे अधिक सुंदर हो। उसका विश्वास था कि पति की सूरत शक्ल साधारण होनी चाहिए ताकि दूसरी स्त्रियाँ उसकी ओर आकृष्ट न हों और वह अपनी पत्नी को महत्त्व दे सके और उससे प्रेम कर सके। यह अभिवृत्ति उस गहरी मनोग्रंथि का परिणाम हो सकती थी जो अपनी साधारण सूरत शक्ल के कारण उसके मन में पैदा हो गयी थी। उसकी संकल्पना के अनुसार पति के सबसे महत्त्वपूर्ण गुण थे—अच्छा चरित्र, श्रेष्ठ शिक्षा, और अपने व्यवसाय में दक्षता।

उससे पूछा गया कि विवाह के बारे में निम्नलिखित कथनों में से वह किनसे सहमत है (1) "विवाह एक पवित्र संस्कार है जो मुख्यतः किसी व्यक्ति के कर्त्तव्य के पालन के लिए और परिवार की भलाई तथा कल्याण के लिए संपन्न किया जाता है।" (2) "विवाह एक सामाजिक अनुबन्ध है जो मुख्यतः व्यक्ति की भलाई के लिए और उस पुरुष अथवा स्त्री के निजी सुख-सन्तोष के लिए किया जाता है।" (3) "विवाह एक परम्परागत सामाजिक संस्था है जो व्यक्ति के सामाजिक कर्त्तव्य के निर्वाह और व्यक्ति तथा परिवार के सुख-सन्तोष दोनों ही उद्देश्यों को पूरा करने के लिए विकसित की गयी है।" इसके उत्तर में उसने कहा कि वह इनमें से तीसरे कथन से सबसे अधिक सहमत है। वह इस बात को अधिक उचित समझती थी कि विवाह वैदिक पद्धति के अनुसार हो और उसके साथ कुछ पुरानी धार्मिक प्रथाओं का भी पालन किया जाये और

वह यह महसूस करती थी कि विवाह पारम्परिक ढग से सपन्न किया जाना चाहिए। उसका मत था कि एकविवाही पद्धति विवाह की सबसे अच्छी प्रणाली है और वह इस बात की कट्टर विरोधी थी कि जब तक किसी स्त्री का पति या किसी पुरुष की पत्नी जीवित हो तब तक वह दूसरा विवाह करे। उसका विश्वास था कि सामान्यत विवाह या बधन अटूट होता है और उसके लिए आजीवन निष्ठा तथा निर्वाह का सकल्प आवश्यक है।

वह तलाक के पक्ष मे नही थी। वह इस बात की भी घोर विरोधी थी कि कोई स्त्री अपने पति को छोडकर दूसरा विवाह कर ले। उसका मत था कि इस प्रकार की स्त्री को उसका नया पति कभी सम्मान की दृष्टि से नही देख सकता और वह निराश तथा अपने आपमे असतुष्ट हो जायगी। उसका विश्वास था कि तलाक केवल उस दशा में लिया जाना चाहिए जब और कोई उपाय न रह जाय, अन्यथा पत्नी को अपने पति के साथ सामजस्य स्थापित करने की कोशिश करनी चाहिए और केवल स्नेह और त्याग के माध्यम् से उसे नये साचे मे ढालने का प्रयत्न करना चाहिए। वह महसूस करती थी कि तलाक का विचार ही पति पत्नी के इस बात के प्रयासो के माग मे बाधा बन जाता है कि वे एक-दूसरे के प्रति सामजस्य स्थापित करें और ववाहिक जीवन की कठिनाइयो को यथासभव हल करें। उसका विश्वास था कि यदि दोनो ओर से हार्दिक प्रयत्न किये जायें तो पति पत्नी एक दूसरे की ओर विवाह के बाद की किसी भी अरुचिकर स्थिति की कठिनाइयो तथा कमियो को दूर कर सकते हैं। फिर भी उसका मत था कि कुछ परिस्थितियो मे स्त्री को तलाक का अधिकार होना चाहिए जसे यदि उसका पति क्रूर अथवा दुश्चरित्र हो। उसने कहा कि तलाक उस समय तक कभी नही लिया जाना चाहिए जब तक कि वह बिल्कुल ही अनिवाय न हो जाय क्योकि यह हिन्दू परम्परा के विरुद्ध है और इसलिए भी कि समाज तलाक दिये गये लोगो को तिरस्कार की दृष्टि से देखता है।

वह इस बात के पक्ष मे थी कि यदि कोई स्त्री युवावस्था मे ही विधवा हो गयी हो और उसके कोई सन्तान न हो तो वह दुबारा विवाह कर सकती है, अन्यथा वह न इसे उचित समझती थी और न अनुचित, उसकी राय मे इसका निणय हर विधवा की विशिष्ट स्थिति अथवा परिस्थितियो पर निभर करता है।

उससे पूछा गया 'क्या तुम इसे उचित समझती हो कि कोई विवाहित स्त्री अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति के प्रति गहरा लगाव रखे ?' इस प्रश्न के उत्तर मे उसने कहा, 'बिल्कुल नही, मैं इसे बिल्कुल उचित नही समझती। मैं यह अनुभव करती हू कि उसे अपने पति अपने घर-बार तथा अपने बच्चो के प्रति पूणत निष्ठावान होना चाहिए और उसे दूसरे लगावो की आवश्यकता ही नही अनुभव करनी चाहिए। उसे अपनी सारी आवश्यकताएँ विवाह की परिधि मे रहकर ही पूरी कर लेनी चाहिए। मैं इस बात को बहुत अनुचित समझती हूँ कि किसी विवाहित स्त्री का अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति से गहरा लगाव हो। मैं समझती हूँ कि इससे उसका ध्यान और उसकी लगन दूसरी दिशाओ मे भटकेगी और वह अपने पति से दूर

होती जायेगी और उसकी अन्तरात्मा भी उसे कचोटती रहेगी।

जब उससे यह पूछा गया कि क्या उसकी राय में इस समय मध्यमवर्गीय हिन्दू समाज में विवाह की जो पद्धति प्रचलित है उसमें कोई दोष है, तो सुमन ने कहा, "मैं समझती हूँ कि प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से लड़की के माता पिता से बहुत बड़ा दहेज माँगना या उसकी आशा करना बहुत अनुचित है, क्योंकि इससे माता पिता में यह भावना तक उत्पन्न हो जाती है कि बेटियाँ उन पर बहुत बड़ा बोझ हैं और किसी के बेटियाँ होना उसके लिए बहुत बड़ा अभिशाप है। अगर माता-पिता और लड़कियाँ साहस करके यह कदम उठा लें कि वे ऐसे परिवारों के लड़कों से विवाह करेंगी ही नहीं जहाँ बहुत बड़ा दहेज माँगा जाता हो या उसकी आशा की जाती हो तो यह सामाजिक बुराई धीरे धीरे दूर की जा सकती है। सम्बन्धित लड़की और लड़के की अनुमति लिये बिना केवल दोनों के परिवारों के सदस्यों की बातचीत से विवाह तय कर देने की पद्धति भी गलत है। इसके अतिरिक्त मैं यह समझती हूँ कि लड़के के परिवार के लोगों को लड़की दिखाने की पद्धति अत्यन्त घृणास्पद है। विवाह दोनों के माता पिता और सम्बन्धित युवक-युवती के बीच परामर्श से होना चाहिए, यद्यपि माता पिता की सलाह को अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए। और 16 वर्ष से कम उम्र की लड़की और 19 वर्ष से कम उम्र के लड़के का विवाह कर देना तो बुरा है ही और इस प्रचलन का त्याग दिया जाना चाहिए।"

सुमन बहुत निर्भीक, आत्मविश्वासी तथा महत्त्वाकांक्षी नहीं थी, परन्तु वह अत्यन्त संवेदनशील और आत्म-सजग थी। वह अपनी उच्च व्यावसायिक योग्यताओं के बावजूद विवाह के बाद काम करने के लिए उत्सुक नहीं थी। क्योंकि उसका विचार था कि इससे उसके सुखी गृहस्थ जीवन के कर्तव्यों तथा दायित्वों को पूरा करने में बाधा पड़ेगी। जीवन में उसका अन्तिम लक्ष्य विवाह था और अपने माता पिता तथा उस व्यक्ति के तमाम प्रयत्नों के बावजूद जिसके यह विवाह करावाली थी यह अनिश्चय तथा चिन्ता के वातावरण में अपना जीवन व्यतीत कर रही थी। अपनी साधारण सूरत शक्ल का आभास होने के कारण उसके मन में निरन्तर यह तनाव और भय बना रहता था कि कहीं उस लड़के के माँ-बाप उसे अस्वीकार न कर दें और वह अविवाहित ही रह जाये और फिर विवाह कर। का [illegible] जाय। [illegible] बताया कि वह बहुत उत्सुक थी क्योंकि उसकी सब सहेलियों के विवाह हो चुके थे और [illegible] लगता था कि वे उसकी हँसी उड़ायेंगी कि उसे अपने लिए पति नहीं मिल सका।

नीचे व्यक्ति के व्यक्ति अध्ययन के कुछ उद्धरण दिये जा रहे हैं जिनका परिचय दूसरे अध्याय में दिया जा चुका है और [illegible] ऐसा ही चित्र उभरकर सामने आता है।

व्यक्ति अध्ययन संख्या 19 जब उससे पूछा गया कि विवाह एक आवश्यकता क्या है तो उन्होंने कहा कि इसका मुख्य कारण यह है कि यह भारतीय संस्कृति का परम्परा है कि उचित आयु हो जाने पर हर लड़की का विवाह हो जाना चाहिए। [illegible]

वह यह महसूस करती थी कि विवाह पारम्परिक ढग से सपन्न किया जाना चाहिए। उसका मत था कि एकविवाही पद्धति विवाह की सबसे अच्छी प्रणाली है और वह इस बात की कट्टर विरोधी थी कि जब तक किसी स्त्री का पति या किसी पुरुष की पत्नी जीवित हो तब तक वह दूसरा विवाह करे। उसका विश्वास था कि सामान्यत विवाह का बधन अटूट होता है और उसके लिए आजीवन निष्ठा तथा निवाह का सकल्प आवश्यक है।

वह तलाक के पक्ष मे नही थी। वह इस बात की भी घोर विरोधी थी कि कोई स्त्री अपने पति को छोडकर दूसरा विवाह कर ले। उसका मत था कि इस प्रकार की स्त्री को उसका नया पति कभी सम्मान की दृष्टि से नही देख सकता और वह निराश तथा अपने आपसे असतुष्ट हो जायेगी। उसका विश्वास था कि तलाक केवल उस दशा मे लिया जाना चाहिए जब और कोई उपाय न रह जाये, अन्यथा पत्नी को अपने पति के साथ सामजस्य स्थापित करने की कोशिश करनी चाहिए और केवल स्नेह और त्याग के माध्यम से उसे नये साचे मे ढालने का प्रयत्न करना चाहिए। वह महसूस करती थी कि तलाक का विचार ही पति पत्नी के इस बात के प्रयासो के माग मे बाधा बन जाता है कि वे एक दूसरे के प्रति सामजस्य स्थापित करें और वैवाहिक जीवन की कठिनाइयों को यथासभव हल करें। उसका विश्वास था कि यदि दोनो ओर से हार्दिक प्रयत्न किये जायें तो पति पत्नी एक दूसरे की ओर विवाह के बाद की किसी भी अरुचिकर स्थिति की कठिनाइया तथा कमिया को दूर कर सकते है। फिर भी उसका मत था कि कुछ परिस्थितियो में स्त्री का तलाक का अधिकार होना चाहिए, जैसे यदि उसका पति क्रूर अथवा दुश्चरित्र हो। उसने कहा कि तलाक उस समय तक कभी नही लिया जाना चाहिए जब तक कि वह बिलकुल ही अनिवाय न हो जाये क्योंकि यह हिन्दू परम्परा के विरुद्ध है और इसलिए भी कि समाज तलाक लिये गये लोगो का तिरस्कार की दृष्टि से देखता है।

वह इस बात के पक्ष मे थी कि यदि कोई स्त्री युवावस्था मे ही विधवा हो गयी हो और उसके कोई सतान न हो तो वह दुबारा विवाह कर सकती है, अन्यथा वह न इसे उचित समझती थी और न अनुचित, उसकी राय मे इसका निणय हर विधवा की विशिष्ट स्थिति अथवा परिस्थितियो पर निभर करता है।

उससे पूछा गया "क्या तुम इसे उचित समझती हो कि कोई विवाहित स्त्री अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति के प्रति गहरा लगाव रखे?" इस प्रश्न के उत्तर मे उसने कहा, बिलकुल नही मैं इसे बिलकुल उचित नहीं समझती। मैं यह अनुभव करती हूँ कि उसे अपने पति अपने घर-बार तथा अपने बच्चो के प्रति पूणत निष्ठावान होना चाहिए और उसे दूसरे लगावो की आवश्यकता ही नही अनुभव करनी चाहिए। उसे अपनी सारी आवश्यकताएँ विवाह की परिधि मे रहकर ही पूरी कर लनी चाहिए। मैं इस बात को बहुत अनुचित समझती हूँ कि किसी विवाहित स्त्री का अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति से गहरा लगाव हो। मैं समझती हूँ कि इससे उसका ध्यान और उसकी लगन दूसरी दिशाओ मे भटकेगी और वह अपने पति से दूर

होती जायेगी और उसकी अन्तरात्मा भी उसे कचोटती रहेगी।

जब उससे यह पूछा गया कि क्या उसकी राय मे इस समय मध्यमवर्गीय हिंदू समाज मे विवाह की जो पद्धति प्रचलित है उसमे कोई दोष है, तो सुमन ने कहा, मैं समझती हूँ कि प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से लडकी के माता पिता से बहुत बडा दहेज मागना या उसकी आशा करना बहुत अनुचित है क्योकि इससे माता पिता म यह भावना तक उत्पन्न हो जाती है कि बेटियाँ उन पर बहुत बडा बोझ है और किसी के बेटिया होना उसके लिए बहुत बडा अभिशाप है। अगर माता-पिता और लडकिया साहस करके यह कदम उठा लें कि वे ऐसे परिवारो के लडको स विवाह करगी ही नही जहा बहुत बडा दहेज मागा जाता हो या उसकी आशा की जाती हो तो यह सामाजिक बुराई धीरे धीरे दूर की जा सकती है। सम्बंधित लडकी और लडके की अनुमति लिये बिना केवल दोनो क परिवारो के सदस्यो की बातचीत से विवाह तय कर देनी की पद्धति भी गलत है। इसके अतिरिक्त मैं यह समझती हूँ कि लडके के परिवार के लोगो को लडकी दिखाने की पद्धति अत्यन्त घृणास्पद है। विवाह दोनो के माता पिता और सम्बन्धित युवक-युवती के बीच परामर्श से होना चाहिए, यद्यपि माता पिता की सलाह को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। और 16 वष से कम उम्र की लडकी और 19 वष से कम उम्र के लडके का विवाह कर देना तो बुरा है ही और इस प्रचलन को त्याग दिया जाना चाहिए।"

सुमन बहुत निर्भीक, आत्मविश्वासी तथा महत्वाकाक्षी नही थी, परन्तु वह अत्यन्त सवेदनशील और आत्म सजग थी। वह अपनी उच्च व्यावसायिक योग्यताओ के बावजूद विवाह के बाद काम करन के लिए उत्सुक नही थी। क्योकि उसका विचार था कि इसस उसके सुखी गृहस्थ जीवन के कर्त्तव्यो तथा दायित्वो का पूरा करन म बाधा पडेगी। जीवन मे उसका अंतिम लक्ष्य विवाह था और अपने माता पिता तथा उस व्यक्ति के तमाम आश्वासनो के बावजूद जिससे वह विवाह करनेवाली थी, वह अनिश्चय तथा चिन्ता के वातावरण मे अपना जीवन व्यतीत कर रही थी। अपनी साधारण सूरत शक्ल का आभास होने के कारण उसके मन मे निरंतर यह तनाव और भय बना रहता था कि कही उस लडके के मा-बाप उसे अस्वीकार न कर दे और वह अविवाहित ही रह जाये और फिर विवाह करन का समय निकल जाय। उसने बताया कि वह बहुत उत्सुक थी क्योकि उसकी सब सहेलियो के विवाह हो चुके थे और उसे ऐसा लगता था कि वे उसकी हँसी उडायेंगी कि उसे अपने लिए पति नही मिल सका।

नीचे ज्योति के व्यक्ति अध्ययन के कुछ उद्धरण दिये जा रहे है, जिसका परिचय दूसरे अध्याय मे दिया जा चुका है और उनसे भी ऐसा ही चित्र उभरकर सामने आता है।

**व्यक्ति अध्ययन सख्या 19** जब उससे पूछा गया कि विवाह एक आवश्यकता क्यो है तो ज्योति ने कहा कि इसका मुख्य कारण यह है कि यह भारतीय संस्कृति की परम्परा है कि उचित आयु हो जाने पर हर लडकी का विवाह हो जाना चाहिए। उसका

विन्नार था कि स्त्री के लिए विवाह करने की सबसे उपयुक्त आयु 20 से 24 वर्ष के बीच होती है। वह तय किए हुए विवाह के पक्ष मे थी पर उसका विचार था कि अन्तिम रूप म अपनी अनुमति देने स पहले लड़की के लिए लड़के को थोडा बहुत जानना आवश्यक है। उसका विश्वास था कि विवाह वदिक रीति से सम्पन्न किया जाना चाहिए। उसकी राय मे दहेज की प्रथा हिदू समाज का सबसे बडा अभिशाप था।

काम करना आरम्भ करने से पहले वह तलाक की दढ विरोधी थी और यह मानती थी कि लडकी को अपना सारा जीवन अपने पति के साथ व्यतीत करना चाहिए, जिन परिस्थितियो मे भी वह उसे रखे। परतु साक्षात्कार के समय उसका विश्वास था कि यदि पति मानसिक रूप से रोगी हो या क्रूर हो या शराबी हो तो पत्नी को उसस तलाक ले लेना चाहिए, उसे कोई काम करना और अपना अलग जीवन बिताना आरम्भ कर देना चाहिए। उसकी धारणा थी कि विवाह के बाद पत्नी को अपने पति के सुख के लिए, काफी हद तक अपनी रुचियो का बलिदान कर देना चाहिए, लेकिन पति को भी उसे अपने से घटिया नही समझना चाहिए।

वह अपनी जाति, अपने प्रदेश और अपने धर्म से बाहर के किसी आदमी के साथ विवाह के पक्ष मे नही थी क्योकि वह मानती थी कि सुखी जीवन के लिए यह बात महत्वपूर्ण है कि दोनो के परिवारो की पृष्ठभूमि एक जैसी हो और पति पत्नी एक ही भाषा बोलते हो तथा उनकी खाने-पीने की आदतें एक जसी हो। उसे इस बात म कोई आपत्ति नहीं थी कि कोई युवक और युवती अपने माता पिता की अनुमति लेकर विवाह करें लेकिन वह इसकी दढ विरोधी थी कि नवयुवतियाँ अपना जीवन साथी स्वय चुनें।

ज्योति का विश्वास था कि उसके जीवन का अंतिम लक्ष्य तय किया हुआ विवाह था। अपनी आर्थिक आत्मनिर्भरता और सास्कृतिक उपलब्धियो के बावजूद, उसके मन मे विवाह की सास्कृतिक तथा पारम्परिक आवश्यकता के प्रति दढ आस्था थी और इस बात के प्रति भी कि स्त्री की यह मूल प्रवत्ति होती है कि वह अपने पति की होकर रहे, उसका अपना घर और बच्चे हो, जिसके बिना उसका जीवन सूना रह जायेगा। उसने कहा कि वह इसलिए भी विवाह करना चाहती है कि यह सामाजिक प्रथा है और सभी लोग विवाह करते हैं और जिनका विवाह नही होता उन्हे तिरस्कार की दष्टि से देखा जाता है। उससे जब पूछा गया कि वह विवाह क्यो करना चाहती है तो वह कुछ सिट पिटा सी गयी। उसने उत्तर दिया 'मैं बस इसलिए विवाह करना चाहती हूँ कि मैं विवाह करना चाहती हूँ।

उसे इस बात पर कोई विशेष आग्रह नही था कि उसका पति अच्छी स्थिति वाले परिवार का हो या धनवान हो और अच्छा वेतन पाता हो या बहुत मिलनसार और चुस्त चालाक हो। वह बस इतना चाहती थी उसका पति दूसरे का ध्यान रखने वाला हो, वह उसके समान रुचियाँ रखता हो, उसम व गुण हो जो उसे पसद हैं वह सच्चा ईमानदार और बहुत प्यार करनेवाला हो। वह सबसे अधिक महत्व मनुष्य के सच्चरित्र होने को देती थी।

ज्योति इस बात की दृढ़ विरोधी थी कि किसी स्त्री का अपने पति के अतिरिक्त किसी दूसरे व्यक्ति से लगाव हो। उसका विश्वास था कि इससे वैवाहिक सम्बन्धों मे विघ्न पड़ता है और इसके फलस्वरूप पत्नी का आचरण भी अवांछनीय हो जाता है।

नीचे रश्मि का जो व्यक्ति अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है वह ऐसी श्रमजीवी महिलाओं के उदाहरणों का प्रतिनिधित्व करता है, विवाह के बारे मे जिनकी अभिवृत्तियाँ न तो बहुत परम्परागत थी और न ही बहुत आधुनिक। कंचन (जिसका परिचय दूसरे अध्याय म दिया गया था) के व्यक्ति अध्ययन के उद्धरणो से भी इससे मिलती-जुलती स्थिति ही सामने आती है।

## व्यक्ति-अध्ययन संख्या 32

रश्मि लडकियो के एक हाईस्कूल की प्रधान अध्यापिका थी। जिस समय दस वर्ष बाद दुबारा उससे साक्षात्कार किया गया उस समय उसकी आयु 37 वर्ष थी। वह 450 रु० महीना कमाती थी। वह एम० ए०, बी० टी० पास थी और पिछले तेरह वर्षों से अध्यापिका का काम कर रही थी। वह देखन म बहुत हँसमुख थी और उसकी सूरत भी आकर्षक थी पर उसका शरीर कुछ मोटा था। उसके बाल सफेद हो चले थे और उसके चेहरे पर चिंता तथा उदासी का भाव रहता था। वह सौंदर्य-प्रसाधनो का प्रयोग बिल्कुल नही करती थी।

उसके पिता की मृत्यु कुछ वर्ष पहले हो गयी थी। उसके एक भाई था और वह अपने माता पिता की अकेली बेटी थी। उसका भाई पहले सरकारी नौकरी करता था परन्तु किसी बीमारी के कारण जब वह छ महीने तक काम पर नही जा सका तो उसे नौकरी से निकाल दिया गया। वह बचपन ही म आलसी था और दायित्व सँभालने से कतराता था, इसलिए वह भी उसके पास ही आ गया था और अपनी पत्नी तथा चार बच्चो के साथ उसी के यहाँ रहता था। पिता की मृत्यु के बाद उसकी मा भी आकर उसके साथ ही रहने लगी थी।

रश्मि का बचपन काफी सुखद रहा था। उसके पिता सरकारी नौकर थे और मामूली वेतन पाते थे, और उनके दो ही सन्तानें थी—एक बेटा और एक बेटी। वह बचपन म बहुत सुन्दर और तेज थी और सभी उसकी प्रशसा करते थे। उसे हमेशा पहनने को अच्छे कपड़े और खाने को अच्छा भोजन मिलता था। उसके पिता बचपन मे भी हमेशा उससे कहा करते थे कि वह आगे चलकर अध्यापिका बनेगी क्योंकि वह अपने भाई की तुलना म, जो मरियल और सुस्त था, आरम्भ से ही बहुत तेज थी। उसने छोटे छोटे शहरो के साधारण स्कूलो मे शिक्षा पायी थी। मैट्रिक पास कर लेने के बाद उसकी मा नहीं चाहती थी कि वह कालेज म पढे बल्कि यह चाहती थी कि वह विवाह करे। लेकिन उसके पिता उसे आगे पढाना चाहते थे और यही उसकी अपनी इच्छा भी थी। इसलिए उसने कालेज मे नाम लिखा लिया और सफलतापूर्वक अपनी एम० ए० की पढाई पूरी कर ली। लेकिन उस समय तक उसमे अध्यापिका बनने की

तीव्र इच्छा जागृत हो चुकी थी और उसने बी० टी० करने का आग्रह किया।

चूंकि उसकी सूरत शक्ल अच्छी थी और शरीर का गठन भी अच्छा था, इसलिए उसके पिता ने उसके विवाह के लिए कुछ अच्छे लड़कों का प्रस्ताव रखा लेकिन उस समय तक वह अपनी एक सहेली के रिश्ते के भाई से प्रेम करने लगी थी और इसलिए उसने उन सभी प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया। उसके माता पिता बहुत झुंझलाये और उस पर आरोप लगाया कि उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद उसमें बहुत अहंकार आ गया है। घर में दूर रहने और आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बन जाने के लिए उसने नौकरी कर ली। उसका भाई एक सरकारी दफ्तर में काम करता था और उसका विवाह उसी समय हो गया था जब रश्मि कालेज में पढ़ती थी। अपने विवाह के बाद उसके भाई ने रश्मि तथा उसके माता पिता की ओर बिल्कुल ही ध्यान देना छोड़ दिया। मां को बेटे से बड़ा लगाव था। कुछ समय बाद रश्मि को एक दूसरे शहर में नौकरी मिल गयी इसलिए उसे अपने माता पिता को छोड़कर वहां जाकर अध्यापकों के क्वार्टरों में रहना पड़ा।

वह बहुत प्रसन्न थी कि अब वह आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी है, उसका अपना घर है और वह अपना जीवन जिस तरह चाहे व्यतीत कर सकती है और अपने मित्र को आकर अपने साथ रहने का निमन्त्रण दे सकती है। रश्मि ने उसको पत्र भी लिखा लेकिन उसने आने से इन्कार कर दिया और कुछ समय बाद अपने माता पिता की पसन्द की किसी लड़की से विवाह कर लिया। रश्मि को इससे बहुत आघात पहुंचा और वह घोर निराशा में डूब गयी। यहां तक कि वह अनुभव करने लगी कि अब वह कभी विवाह ही नहीं करेगी।

कुछ ही वर्षों बाद अचानक उसके पिता की मृत्यु हो गयी। उसे उनसे इतना गहरा लगाव था कि बहुत समय तक वह इस आघात की पीड़ा से मुक्त न हो सकी। उसकी मां आकर उसके साथ रहने लगी और घर का काम काज देखने लगी। इस प्रकार यद्यपि मानसिक रूप से वह अत्यन्त निराश थी पर भौतिक सुख-सुविधाओं की उसे कोई कमी नहीं थी। निरन्तर बीमार रहने के कारण उसके भाई ने नौकरी छोड़ दी थी और अपनी पत्नी तथा चार बच्चों सहित आकर उसी के साथ रहने लगा था। उस समय तक रश्मि लड़कियों के एक हाइस्कूल की प्रधान अध्यापिका बन चुकी थी।

वह एक प्राइवेट स्कूल था और चूंकि वह हार्दिक स्नेह तथा मित्रता के लिए तरस रही थी, इसलिए मनेजर साहब के साथ उसकी मित्रता हो गयी जो स्कूल के मालिकों में भी थे। वे अधेड़ उम्र के थे विवाहित थे और उनके कई बच्चे भी थे। उनकी ओर आकृष्ट न होने का लाख प्रयत्न करने पर भी उनके साथ उसकी घनिष्ठ मित्रता हो गयी, जिसके फलस्वरूप लोग उनके बारे में तरह-तरह की चर्चाएँ करने लगे। वह इतनी उलझन और परेशानी में पड़ गयी कि नौकरी तक छोड़ देने की बात सोचने लगी। लेकिन उसका भाई जो बेहद आलसी और मां के लाड़-प्यार में बिगड़ा हुआ था, किसी तरह अपनी जीविका कमाने के लिए कोई काम शुरू ही नहीं करता

था। अपने निजी स्वार्थों के कारण उनमें से कोई भी इसके लिए उत्सुक नहीं था कि रश्मि विवाह कर ले। उसे तनिक भी मानसिक शान्ति नहीं मिलती थी और वह विवाह करने के लिए बेचैन थी। अपनी नौकरी के प्रति उसे बहुत उत्साह नहीं रह गया था, फिर भी काम करते रहने में उसे अपने महत्त्व तथा आत्मविश्वास का आभास रहता था और वह व्यस्त रहती थी और उसे अपनी अरुचिकर परिस्थितियों पर कुढ़ते रहने के लिए समय ही नहीं मिलता था। फिर भी, अच्छी नौकरी होने के बावजूद वह सुखी नहीं अनुभव करती थी और उसका स्वास्थ्य भी बहुत गिर गया था।

आर्थिक आवश्यकता के कारण रश्मि नौकरी करती रही, क्योंकि उसे अपनी माँ, अपने भाई तथा उसके परिवार का भरण पोषण तो करना ही था, हालांकि मूलतः उसने आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी बनने के लिए काम करना आरम्भ किया था। उसे अपनी नौकरी से मानसिक तथा भौतिक दोनों ही प्रकार का सन्तोष मिलता था, लेकिन इधर कुछ समय से उसे केवल भौतिक सन्तोष ही मिलता था, क्योंकि वह उदास और थकी-थकी-सी रहने लगी थी और अकेलापन महसूस करती थी। यदि उसे सुखी विवाहित जीवन मिल जाता तो वह कभी न चाहती कि काम करती रहे।

रश्मि विवाह को इसलिए एक आवश्यकता समझती थी कि जीवन साथी, घर और बच्चों की इच्छा और इसके साथ ही पूरी तरह किसी की होकर रहने, अर्थात् पूरी तरह किसी की हो जाने और किसी को अपना लेने की इच्छा एक मूल प्रवृत्ति है। उसकी राय में किसी लड़की के लिए विवाह करने की सबसे उपयुक्त आयु 20 और 24 वर्ष के बीच होती है क्योंकि उसका विचार था कि उसके बाद लड़की इतनी अधिक स्वतन्त्र हो चुकी होती है कि वह अपने को पति के अनुसार ठीक से ढाल नहीं सकती। वह सिविल विवाह की अपेक्षा वैदिक विवाह पद्धति को अधिक पसन्द करती थी और उसका विश्वास था कि पति की उम्र पत्नी से 2 से 6 वर्ष तक अधिक होनी चाहिए।

जीवन साथी चुनने में अपने गलत निर्णय के कारण उसने जो कुछ झेला था उसके बाद अब वह माँ बाप की ओर से तय किये गये विवाह का अनुमोदन करने लगी थी, पर उसका यह भी विचार था कि लड़के और लड़की के एक दूसरे को जान लेने के बाद उनकी भी अनुमति ले ली जानी चाहिए। अपने जीवनकाल के तीसरे दशक में उसका विश्वास था कि हर लड़की को अपना जीवन साथी चुनने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, परन्तु स्वयं अपने अनुभव के बाद और अपनी सहेलियों के अनुभवों की जानकारी प्राप्त होने के बाद अब उसका यह विश्वास हो चला था कि उन्हें ऐसा करने से निरुत्साह किया जाना चाहिए। इस प्रसंग में उसने कहा, "तय किये हुए विवाह से जीवन साथी चुनने में निजी निर्णय की त्रुटि से उत्पन्न होनेवाली चिन्ता बहुत कम हो जाती है। मैं समझती हूँ कि सन्तान की भावनाओं को समझनेवाले माता पिता अपनी बेटी के लिए ज्यादा अच्छी तरह उपयुक्त वर खोज सकते हैं, परन्तु लड़की दिखाने की परम्परागत प्रणाली बहुत ही अपमानजनक है और उसे निश्चित रूप से बदल दिया जाना चाहिए। परम्परागत पद्धति के अनुसार जिस वातावरण में

लडकी तथा लडके और उनके माता पिता के बीच भेंट तथा बातचीत होती है उसमे अधिक सौहार्दपूर्ण तथा कम तनावपूर्ण वातावरण म उन्हे एक दूसरे से मिलकर बात चीत करनी चाहिए।'

आगे चलकर उसने यह भी सुझाव दिया कि "लडके और लडकी का औपचारिक रूप से एक दूसरे स परिचय करा दिया जाना चाहिए और पहली भेंट के बाद यदि सभी लोग उत्सुक हो कि विवाह हो जाये तो उन्हे कुछ बार और एक-दूसरे स मिलने और एक दूसरे को ज्यादा अच्छी तरह जान लेने का अवसर दिया जाना चाहिए। इन मुलाकातो के दौरान वे विचारो का आदान प्रदान कर सकते हैं, एक-दूसरे की रुचियो तथा अरुचियो का पता लगा सकते हैं और चूकि उनके बारे म अन्य बातो का पता उनके माता पिता पहले ही लगाकर छान-बीन कर चुके होगे, इसलिए लडके और लडकी को उन बातो की चिन्ता नही करनी चाहिए। और यदि वे एक-दूसरे को पसन्द करें तो वे अपने माता पिता को अपनी हार्दिक अनुमति दे सकते हैं। इस प्रकार के तय किये हुए विवाहो से युवा लडके और लडकियाँ बहुत-सी चिन्ता से बच जाते हैं और मैं दृढतापूर्वक इस प्रकार के तय किये हुए विवाहो के पक्ष मे हूँ।'

उसने कहा कि उसे इस बात म कोई आपत्ति नही है कि कोई लडकी किसी दूसरी जाति के लडके स विवाह करे, लेकिन इसके लिए आवश्यक है कि उसमे परिपक्वता हो और उस लडके म वे गुण हो जो उसे पसन्द है। उसे स्वय भी किसी दूसरी जाति के लडके से विवाह करने मे कोई आपत्ति नही होगी लेकिन वह ऐसे व्यक्ति से विवाह करना चाहेगी जिस पर भरोसा किया जा सके, जो स्वस्थ हो और काफी अच्छी नौकरी करता हो। वह हर चीज से बढकर यह चाहती थी कि उसका पति स्नेहमय और ईमानदार हो। उसका विश्वास था कि पत्नी और पति दोनो ही को एक दूसरे के लिए त्याग करना चाहिए और एक दूसरे का सम्मान करना चाहिए। वह न तो इस बात के पक्ष मे थी और न इसकी विरोधी कि किसी पत्नी का अपने पति के अतिरिक्त अन्य किसी पुरुष से लगाव हो और यदि वह शारीरिक स्तर पर न होकर केवल बौद्धिक स्तर पर हो तो वह उसे निन्दनीय भी नही समझती थी। वह इसे बहुत बुरा नहीं समझती थी कि कोई स्त्री अपने पति को छोडकर दुबारा विवाह कर ले, फिर भी वह समझती थी कि तलाक का विचार निश्चित रूप स वैवाहिक समायोजन म बाधक होता है और वह यह भी अनुभव करती थी कि तलाक स असन्तोषप्रद विवाहो की सख्या म कोई कमी नही होती।

उसने कहा कि चूकि उसकी आयु अब 37 वर्ष की हो चुकी है और उसकी आदतें और रुचियाँ तथा अरुचियाँ दृढ हो चुकी हैं, इसलिए वह किसी ऐसे व्यक्ति स विवाह नही करना चाहेगी जिसे वह अच्छी तरह न जानती हो। वह विवाह करना तो चाहती थी पर कुछ हद तक तो इसलिए नही करती थी कि वह सोचती थी कि वह गृहस्थी चलाने और बच्चे पालने का बोझ नही सँभाल सकेगी और इसलिए इस दायित्व स कतराती थी, और कुछ हद तक इसलिए भी कि उसे कोई ऐसा उपयुक्त व्यक्ति नही

मिला था जिससे वह विवाह करे । फिर भी उसने कहा, वह विवाह करने के लिए इसलिए बहुत उत्सुक थी कि वह घर के अरुचिकर तथा असुखकर वातावरण से बच सके और अपने अविवाहित, एकान्त तथा नैराश्यपूर्ण जीवन की नीरसता को दूर कर सके। उसने आगे चलकर कहा कि वह विवाह करने के लिए इसलिए भी उत्सुक थी कि उसे आशा थी कि उसका पति उसे जीवन की अनेक समस्याओं को हल करने में सहायता देगा और सारी जिम्मेदारी स्वयं संभाल लेगा।

रश्मि का पालन पोषण बँधी लीक पर चलनेवाले एक साधारण हिन्दू परिवार में हुआ था, इसलिए आर्थिक रूप से स्वावलम्बी बनने और अपनी इच्छानुसार कहीं भी आ-जा सकने की स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए उसने नौकरी कर ली थी। प्रेम में निराश होने के कारण उसे अपना विकास केवल अपने व्यवसाय के लिए करने का प्रोत्साहन मिला। उसने सोचा था कि नौकरी कर लेने पर उसका जीवन परिपूर्ण हो जायेगा। परन्तु बाद में चलकर चूंकि उसका व्यावसायिक जीवन भी बहुत रोचक नहीं रह गया और बहुत से लोग साथ रहने के कारण घर पर भी उसे कोई शान्ति न मिल सकी, इसलिए वह केवल सुखी विवाहित जीवन के लिए लालायित रहने लगी।

पता यह चला कि रश्मि की अभिवृत्तियां उसके माता पिता के परम्परागत सोचने के ढंग और स्वयं उसके अपने जीवन के निजी अनुभवों का मिला-जुला परिणाम थीं। वह मुख्यतः आर्थिक आवश्यकता के कारण नौकरी करती रही। प्रेम और घरेलू जीवन दोनों ही में निराशाजनक अनुभवों के कारण ही उसकी अभिवृत्तियों में परिवर्तन आया था। अपने प्रेम सम्बन्ध में उसे पहले जो निराशा हुई थी उसे दूर करने के लिए और इसके साथ संवेगात्मक सुरक्षा के अभाव की भावना को दूर करने के लिए वह विवाह की आवश्यकता अनुभव करने लगी थी। और इससे उसकी अभिवृत्तियों में भी परिवर्तन आ गया था।

**व्यक्ति अध्ययन संख्या 55**—कंचन पति और बच्चों की आवश्यकता और पूरी तरह किसी की होकर रहने की इच्छा के कारण विवाह को आवश्यक समझती थी। उसका विचार था कि 20 वर्ष के बाद कोई भी आयु लड़की के लिए विवाह करने के लिए उपयुक्त है, इसका निर्णय इस पर निर्भर है कि वह विवाह करने की आवश्यकता अनुभव करे और उसे कोई उपयुक्त वर मिल जाये। लेकिन बेहतर यह होगा कि 20 और 24 वर्ष की आयु के बीच लड़की विवाह कर ले क्योंकि उस समय तक उसके विचार इतने दृढ़ नहीं हो पाते कि उन्हें बदला न जा सके। वह पूरी तरह तय किये हुए विवाह के पक्ष में नहीं थी। उसका विचार था कि माता पिता अपनी बेटी के लिए कोई उपयुक्त वर चुन सकते हैं, लेकिन लड़की को अपनी अनुमति देने से पहले उस पुरुष को जानने के लिए थोड़ा समय अवश्य दिया जाना चाहिए, और उसकी अनुमति को ही अन्तिम माना जाना चाहिए।

उसन कहा कि पहले वह प्रेम विवाह क पक्ष म हुआ करती थी पर उसकी कुछ
सहेलियो न उचित आदमी चुनने म बहुत धोखा खाया था और इसलिए अब वह यह
अनुभव करने लगी थी कि माता पिता के तय किय हुए विवाह बेहतर होते है। तय
किय हुए विवाह से उसका अभिप्राय यह था कि माता पिता भावी पति के लिए जिस
लडके का सुझाव दें उसस लडकी को अपनी अनुमति देन स पहले माता पिता के
निर्देशन म कई बार मिलने का अवसर दिया जाना चाहिए और उसकी अनुमति का
ही अतिम निर्णय माना जाना चाहिए।

उसका विचार था कि 20 वर्ष स कम आयु की लडकी के लिए माता पिता को
वर पसन्द करना चाहिए लेकिन उसकी हार्दिक अनुमति से परन्तु 20 से 25 वर्ष तक
की लडकी को उचित वर ढूढने मे केवल सहायता दी जानी चाहिए, उसके बाद उसे
अपना पति चुनने की पूर्ण स्वतन्त्रता द दी जानी चाहिए। आग चलकर उसन कहा
कि एक निश्चित आयु के बाद पढी लिखी लडकी को अपना पति स्वय चुनने के लिए
प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, पुरुषो के साथ घूमने फिरने की बहुत अधिक छूट देकर
नहीं, बल्कि उसका मार्गदर्शन करके ताकि वह अपना जीवन-साथी चुनन म परिपक्वता का
परिचय द सक। उसन कहा कि उस इसम कोई आपत्ति नही होगी कि यदि लडकी
प्रौढ हो तो वह अपनी पसन्द के पुरुष स विवाह कर ले, चाहे वह किसी दूसरी जाति
का ही क्यो न हो, परन्तु अपन माता पिता की अनुमति क बिना नही। उसे अन्तर्जातीय
विवाहो मे कोई आपत्ति नही थी परन्तु विभिन्न प्रजातियो (नस्लो) तथा विभिन्न धर्मो
के लोगो के आपस म विवाह करन के वह बहुत पक्ष म नही थी क्योकि उसका विश्वास
था कि रीति रिवाजो, प्रजातीय आदतो और रहन-सहन म अन्तर होन के कारण उन
विवाहो मे समायोजन अधिक कठिन हो जायगा।

वह इस बात को अच्छा नही समझती थी कि किसी स्त्री का अपन पति के
अतिरिक्त किसी दूसरे पुरुष से गहरा लगाव हो। उस इसम कोई आपत्ति नही थी कि
यदि दोनो सर्वथा असगत हो तो स्त्री अपन पति को छोडकर दूसरा विवाह कर ल।
फिर भी वह इसके बहुत पक्ष म नही थी और उसका मत था कि तलाक कोई दूसरा
उपाय न रह जाने पर ही लिया जाना चाहिए, क्योकि यदि कोई स्त्री अपन पति को
छोड दे और दुबारा विवाह करना चाह तो उसे सम्मान की दृष्टि से नही देखा जाता।
उस एसा लगता था कि भारत म बहुत थोडे ही पुरुष एस होगे जो सहर्ष किसी एसी
स्त्री से विवाह कर लें जो तलाक ले चुकी हो। वह बच्चे पैदा हो जाने के बाद तलाक
क पक्ष मे नही था। वह अनुभव करती थी कि पत्नी को अपनी कुछ रुचियो का बलि
देकर अपने पति की रुचियो तथा इच्छाओ क अनुसार अपन को ढाल लेना चाहिए।
लेकिन इसी तरह पति को भी पारस्परिक सुख के लिए अपनी कुछ रुचियो की बलि
देनी चाहिए। उनके बीच एक-दूसरे के प्रति सहिष्णुता की भावना व्याप्त रहनी चाहिए।
उसन जोर देकर कहा 'मेरी दृढ भावना है कि पारस्परिक प्रेम, सम्मान तथा मित्रता
ही विवाह का आधार होना चाहिए और इस उद्देश्य स दोनो ही को यह प्रयत्न करना

चाहिए कि वे कोई ऐसा काम न करें जिससे दूसरे की दृष्टि तथा हृदय में उसका सम्मान और प्रेम घट जाये। दोनों ही को एक-दूसरे को सुखी तथा सन्तुष्ट रखने का प्रबन्ध करना चाहिए।"

उसने कहा कि वह अपने लिए ऐसा पति चाहेगी जो बहुत पढ़ा-लिखा हो, जिसकी रुचियाँ उसकी रुचियाँ जैसी ही हों और जो कोई अच्छी नौकरी करता हो। उसने कहा कि वह किसी व्यक्ति से तभी विवाह करना चाहेगी जब वह उसे अच्छी तरह जान ले और जब वह उसके प्रति गहरा लगाव अनुभव करे।

यह प्रश्न पूछे जाने पर कि इस समय मध्यमवर्गीय हिन्दू समाज में जो विवाह-पद्धति प्रचलित है उसमें क्या दोष है, उसने कहा कि विवाहोत्सव के साथ बहुत समय लेनेवाली और थका देनेवाली जो परम्परागत प्रथाएँ तथा रस्में जुड़ी हुई हैं और विवाह के समय जो हुल्लड़ होता है और जैसा शालीनता रहित वातावरण व्याप्त रहता है वह अवांछनीय है। उसने कहा कि विवाह संस्कार बहुत सीधे सादे ढंग से गरिमामय तथा अर्थपूर्ण वैदिक पद्धति के अनुसार शालीनता के वातावरण में सम्पन्न होना चाहिए। निरर्थक प्रथाओं तथा रस्मों का तो अन्त कर दिया जाना चाहिए परन्तु मूलतः विवाह संस्कार का स्वरूप सिविल न होकर वैदिक होना चाहिए। इसके अलावा, उसने मत व्यक्त किया कि वधू के अतिथियों के साथ लड़के के परिवार वालों तथा मित्रों अर्थात् बरातियों को ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए जैसे श्रेष्ठतर हों और लड़की के अतिथि निम्नतर कोटि के, और न ही लड़कीवालों को अपने-आपको हीन समझना चाहिए। विवाह एक हार्दिक और मैत्रीपूर्ण अवसर होना चाहिए जिसमें दोनों पक्ष सौहार्द का परिचय दें। वह कहती रही कि विवाह संस्कार के समय केवल निकट सम्बन्धियों तथा घनिष्ठ मित्रों को ही उपस्थित रहना चाहिए और बाद में बड़े भोज या दावत का आयोजन किया जा सकता है।

नीचे कमला का जो व्यक्ति अध्ययन दिया जा रहा है वह उन शिक्षित श्रम-जीवी स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करता है जिनका पालन पोषण कट्टर और रूढ़िवादी हिन्दू परिवारों में हुआ है, लेकिन जिसमें आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी हो जाने के बाद कट्टरता के विरुद्ध यह प्रतिक्रिया हुई थी कि वह हर उस चीज़ को जो परम्परागत और कट्टरपंथी हो, बुरा समझने लगी थी और हर उस चीज को जो परम्परा से हट कर तथा आधुनिक हो अच्छा समझने लगी थी।

## व्यक्ति-अध्ययन संख्या 49

पैंतीस वर्षीया कमला एम० ए०, बी० एड० थी और पिछले सात वर्षों से एक अर्ध सरकारी संगठन में काम कर रही थी। उसका वेतन 600 रु० मासिक था। वह न तो बहुत सुन्दर ही थी और न ही बहुत कुरूप, पर उसका शरीर बहुत सुडौल था और उसके हाव भाव में शालीनता तथा आत्मविश्वास था। यद्यपि देखने में वह बहुत अभिमानी लगती थी पर वास्तव में वह बहुत हँसमुख स्वभाव की थी। उसके पिता

सरकारी ठेकेदार थे जो छोटे-छोटे शहरों में रहे थे और वहीं उन्होंने अपना काम किया था।

कमला अपने माता पिता की सबसे छोटी सन्तान थी, उसकी दो बहनें और दो भाई थे। परिवार में उसका पालन-पोषण ऐसे समय पर हुआ था जब परिवार के सदस्यों के बीच प्राय कोई हार्दिकता नहीं थी। उसके पिता के पास आराम से रहने, अपने परिवार के सदस्यों को सामान्य सुख सुविधाएँ उपलब्ध करने और अपने बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाने भर को काफी पैसा था। परन्तु अपनी पत्नी तथा बच्चों पर पैसा खर्च करने की न तो उसमें रुचि ही थी और न ही उनका दिल चाहता था और चूंकि वह उन्हें आवश्यक वस्तुएँ खरीदने के लिए भी पैसा नहीं देते थे, इसलिए उन लोगों को बड़ी मुसीबतें झेलनी पड़ती थीं। दकियानूसी आदमी होने के कारण वह अपनी बेटियों को उच्च शिक्षा दिलाने में विश्वास नहीं रखते थे, इसलिए कमला की बहनों को मैट्रिक पास करने के बाद घर पर रहकर घर के काम काज में अपनी मां का हाथ बँटाने को कह दिया गया। उसके पिता बहुत कठोर थे और बेटियों को किसी को साथ लिये बिना अपनी सहेलियों तक के साथ घर से बाहर नहीं जाने देते थे, और उन्हें अकेले में किसी से बात तक नहीं करने दी जाती थी। वे जहां भी जाती उनकी माँ को उनके साथ जाना पड़ता।

उसके पिता कठोर और दकियानूसी ही नहीं थे बल्कि वह अपने बच्चों तथा पत्नी के साथ सख्ती का व्यवहार भी करते थे। कमला को कभी अपने पिता का स्नेह और प्यार नहीं मिला, और इसीलिए वह कभी उनका सम्मान नहीं कर सकी हालांकि वह उनसे डरती बहुत थी। उसे अपनी मां से बहुत प्यार था क्योंकि वह अपने बच्चों में बहुत दिलचस्पी लेती थी, पर साथ ही उसे उन पर तरस भी आता था क्योंकि उसके पिता उनके साथ प्रेम और सम्मान का व्यवहार नहीं करते थे। कमला ने हमेशा अपनी माँ को बड़े भक्ति भाव से उसके पिता की सेवा करते देखा था पर इसके बदले में उन्हें कभी प्रशंसा या स्नेह का एक शब्द भी न मिला था। शुरू से ही उसे दकियानूसी विचारों से चिढ़ थी और वह उच्च शिक्षा और आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करना चाहती थी, मुख्यत इसलिए कि उसके पिता इसके विरुद्ध थे और वह उनकी अवज्ञा करना चाहती थी और परिवार के परम्परागत दृष्टिकोण को भंग करना चाहती थी। वह आर्थिक दृष्टि से इसलिए भी स्वतन्त्र होना चाहती थी कि उसके बाप ने उसे कभी पैसा नहीं दिया था और वह सिद्ध कर देना चाहती थी कि वह स्वयं पैसा कमा सकती है।

चूंकि उसके पिता उच्च शिक्षा में विश्वास नहीं रखते थे, इसलिए उसकी बड़ी बहनों का विवाह स्कूल की पढ़ाई पूरी करने पर ही कर दिया गया था जब उनकी आयु मुश्किल से 16 या 17 वर्ष की रही होगी। चूंकि कमला सबसे छोटी थी और पढ़ने में तेज थी, इसलिए उसके अध्यापकों ने और उसकी माँ ने उसे उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया। जब उसने मैट्रिक पास कर लिया तो उसके पिता ने

उसे और आगे पढाने से इन्कार कर दिया, विशेष रूप से इसलिए कि वहा लडकियो का काई अच्छा कालेज नही था। लेकिन कमला के बार-बार आग्रह करने पर और उसकी मा के समझाने बुझाने पर उसके पिता ने उसे अपनी मौसी के यहाँ जाकर आगे पढने की इजाजत दे दी।

वहाँ अपनी पढ़ाई के दौरान कमला को घूमने फिरने की कुछ स्वतन्त्रता मिली और उसकी एक लडके से दोस्ती हो गयी और वह उससे मिलने लगी और उसके साथ बाहर जाने लगी, कुछ तो अपने पिता की कठोरता की प्रतिक्रिया के रूप मे और कुछ इसलिए कि यह बात परम्परा के विरुद्ध समझी जाती थी। जब उसके पिता ने यह सुना तो उन्होने उसकी मौसी के यहा आकर उसे बहुत डाँटा फटकारा और एक पुरुष के साथ दोस्ती करने पर उसे बहुत गालिया दी, जो उनके अनुसार बहुत ही अवाछ-नीय व्यवहार था। उसे घर पर ही रहकर पढने का आदेश दिया गया और उसने प्राइवेट छात्र के रूप मे बी० ए० की शिक्षा पूरी की। इसके बाद उसके पिता इस बात के लिए बहुत उत्सुक थे कि वह उनकी पसन्द के किसी आदमी से विवाह कर ले। उसे यह विचार बहुत नापसन्द था और वह किसी न किसी प्रकार विवाह को टालती रही और अपने भाई की सहायता से, जिसने उस समय तक काम करना आरम्भ कर दिया था, बी० एड० करने के लिए कालेज मे नाम लिखा लिया।

बी० एड० कर लेने के बाद उसने लडकियो के एक स्कूल म पढाना आरम्भ कर दिया, केवल यह सिद्ध करने के लिए कि स्त्री भी आर्थिक दृष्टि स स्वतन्त्र हो सकती है और स्वतन्त्र जीवन व्यतीत कर सकती है। अपनी बात पूरी करने के लिए और अपनी स्वतन्त्रता के लिए उसने एक बडे शहर मे नौकरी कर ली और वहाँ चली गयी। अधिक योग्यता प्राप्त करने के लिए, अपनी नौकरी की सम्भावनाएँ अधिक उज्ज्वल बनाने के लिए और अपने पिता तथा अन्य सम्बन्धियो के सामने अपनी क्षमताएँ प्रमाणित करने के लिए वह स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त करने को बहुत उत्सुक थी। इसलिए उसने नौकरी करने के साथ साथ एम० ए० भी पास कर लिया। जिन दिनो वह नौकरी कर रही थी वह पूर्ण स्वच्छन्दता से अपने मित्रो के साथ घूमने फिरने लगी, जिनमे से अधिकाश पुरुष थे। यद्यपि इस बात पर उनके पिता उससे बहुत नाराज थ पर उसने इस बात पर कोई ध्यान नही दिया। उसका अपना सामाजिक जीवन था और वह दफ्तर मे तथा क्लब मे विभिन्न प्रकार के लोगो से मिलती थी। वह बहुत प्रतिभा सम्पन्न थी और उसके साथी तथा मित्र उसे बहुत पसन्द करते थे।

कुछ समय बाद उसके मन म एक नवयुवक के प्रति स्नेह जागृत हुआ जो दूसरी जाति और धर्म का था। वह बहुत अच्छी नौकरी पर लगा हुआ था, बहुत पढा लिखा था और आगे चलकर उसके बहुत उन्नति करने की सम्भावना थी। वह उसके निर्भीक तथा आत्मविश्वासी व्यक्तित्व को बहुत पसन्द करता था और उसकी प्रतिभा की सराहना करता था। उसका लगाव गहरा होता गया और वह उससे विवाह करने की बात सोचने लगी यद्यपि वह दूसरी जाति और धर्म का था और वह जानती थी कि उसे

पिता पर इसकी प्रतिक्रिया बहुत भीषण होगी । लेकिन उसे पता चला कि उस नवयुवक का विवाह हो चुका था और उसकी पत्नी उसके साथ इसलिए नहीं रहती थी कि वह उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करता था और किसी दूसरी स्त्री के साथ उसका बहुत गहरा प्रेम था । इस बात से उसे बहुत आघात पहुंचा और वह घोर निराशा में डूब गयी । इसके अतिरिक्त लोग उसके बारे में तरह-तरह की चर्चा भी करने लगे थे। फिर भी केवल यह साबित करने के लिए कि उससे मित्रता करके उसने कोई गलती नहीं की थी, उसने औपचारिक स्तर पर उसके साथ सम्बन्ध बनाये रखे । इस घटना से वह घोर निराशा और मानसिक उलझनों का शिकार हो गयी और यह विश्वास करने लगी कि अच्छे प्रेम सम्बन्ध होते ही नहीं हैं और यह कि सार्थक मानव-सम्बन्ध विकसित ही नहीं किये जा सकते हैं । इसके बाद उसने फैसला किया कि उसके माता पिता जिस आदमी से भी कहेंगे उससे वह विवाह कर लेगी यदि वह काफी पढ़ा लिखा होगा और उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी होगी ।

उसके माता-पिता ने एक ऐसे नवयुवक के साथ उसके विवाह का सुझाव रखा जो बहुत पढ़ा लिखा तो नहीं था लेकिन बहुत पैसे वाला था । उस आदमी ने और उसके माता पिता ने आकर बाकायदा उसे देखा और उसने भी उस आदमी को देखा । उन लोगों ने उसे पसन्द भी किया और उसने पिता का सुझाव स्वीकार कर लिया । परन्तु कमला पर उस व्यक्ति का या उसकी भावी सम्भावनाओं का अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा । फिर भी इस बात से झुंझलाकर कि उसके पिता बहुत कठोर और दकियानूसी थे, और वह अकेलेपन का जीवन व्यतीत कर रही थी उसने केवल अपनी विवाह करने की इच्छा पूरी करने के लिए वह उसके साथ विवाह करने पर सहमत हो गयी । उसने यह भी स्वीकार किया कि बहुत बड़ी हद तक तो उसने आर्थिक सुरक्षा की दृष्टि से भी उससे विवाह किया था ।

कमला का विवाह बहुत सन्तोषजनक नहीं रहा क्योंकि वह अपने पति की न सराहना कर सकती थी, न सम्मान और न ही वह उसके प्रति अपने मन में प्रेम विकसित कर पायी थी । वह उस प्रकार का व्यक्ति था ही नहीं जैसा वह अपने पति के रूप में चाहती थी । न तो वह उसकी बौद्धिक रुचियों का भागीदार बन सकता था और न वह उसकी सामाजिक हैसियत का रोब मानती थी । उसका पति उसे कोई प्रेरणा नहीं दे सकता था और सबसे बड़ी बात यह थी कि वह वैसा उदार विचारों वाला नहीं था जैसा कि वह चाहती थी । वह इस बात पर आग्रह करता था कि वह घर के काम काज में अधिक दिलचस्पी ले और अपने व्यवसाय तथा अन्य गतिविधियों में कम । जब वह अपनी नौकरी, अपने मित्रों, अपनी रुचियों तथा गतिविधियों को बहुत अधिक महत्व देने के लिए और उसके स्वतन्त्र, आत्मविश्वासपूर्ण तथा आग्रहपूर्ण स्वभाव के लिए उसकी आलोचना करता तो उसे बहुत बुरा लगता । वह कहता कि वह स्वकेन्द्रित और अपने हित का पूरा हिसाब रखनेवाली है और केवल अपनी आवश्यकताओं की ही चिन्ता रखती है । इस सबके बावजूद वह अपनी नौकरी करती रही क्योंकि उसका

दृढ विश्वास था कि यदि किसी विवाहित स्त्री का पति काफी पैसा कमाता हो तब भी उस काम करना चाहिए ताकि वह स्वय अपने अधिकार से एक व्यक्ति की हैसियत रख सके और उसे घूमने फिरने को स्वतन्त्रता मिल सके।

वह अपने सहयोगिया और अन्य ऐसे पुरुषो के साथ मित्रता पैदा करती रही जो अच्छे पदो पर थे, प्रज्ञ और उदार विचारो वाले थ और जिनमे नेतृत्व के गुण थे। वह ऐसा इसलिए भी करती थी कि यह परम्परा के विरुद्ध था। वह उनसे प्रेरणा प्राप्त करती रही और अपनी बौद्धिक आवश्यकताओ को और प्रशसा तथा सराहना प्राप्त करने की आवश्यकता को पूरा करती रही। घर स बुरी तरह निराश होकर वह स्नेह और बौद्धिक उद्दीपन के लिए दूसरे पुरुषो की सगत की खोज म रहती। अपने विवाह सम्बन्ध की परिधि के भीतर ध्यान, प्रशसा तथा रुचियो मे पूरी भागीदारी के अभाव के कारण उसे एक नौजवान अफसर से बहुत गहरा लगाव हो गया जो उम्र मे उससे बहुत छोटा था। चूकि उससे उसे वह सहानुभूति प्रोत्साहन और बौद्धिक उद्दीपन मिलता था जिसकी उस बहुत आवश्यकता थी, इसलिए वह उसका बहुत सम्मान करती थी। लेकिन एक बार फिर लोगो न उसे गलत समझा। परन्तु उसे इसकी तनिक भी चिन्ता नही थी।

इस प्रश्न के उत्तर मे कि क्या वह तलाक लेने का इरादा रखती है, उसने कहा, 'नही, अभी मेरी इस प्रकार की कोई योजना नही है। मैं मानती हू कि अपने पति के प्रति मेरा कोई सवेगात्मक लगाव नही है और हमारी रुचिया मे कोई समानता नही है। मेरा अपना व्यवसाय, अपनी रुचिया, अपने सहयोगी और अपनी महत्त्वाकाक्षा है जिनसे मुझे बौद्धिक साहचर्य का सन्तोष भी मिलता है और हार्दिकता भी। आप आश्चय करते होंगे कि जब मुझे अपने पति से प्रेम नही है और उसके लिए अधिक कुछ करने की मेरी इच्छा भी नही है तो मैं उसके साथ रहती क्या हू। बात यह है कि मैं विवाह के साथ किसी पवित्रता का या धार्मिक भावना का सम्बन्ध नही मानती। मैं अपनी सुख सुविधाओ, अपनी ख्याति और सामाजिक प्रतिष्ठा तथा सामाजिक सुरक्षा के लिए उसके साथ रहती हूँ और इसलिए कि आवश्यकता पडने पर कोई ऐसा हो जिसका सहारा ले सकू। और सबसे बढकर मैं उसके साथ इसलिए रहती हूँ कि मुझे अब तक कोई ऐसा व्यक्ति नही मिला है जिससे मैं विवाह करना चाहू और जो मुझसे विवाह करना चाहता हो।'

जब उससे पूछा गया, "आपकी राय मे इसका क्या कारण है कि जब आप अपने पति की परवाह नही करती और उससे प्रेम नही करती तो वह आपको छोड क्यो नही देता ? ' तो उसने उत्तर दिया, "बात यह है कि उसमे इतना साहस नही है। उसे अपनी ख्याति का भी ध्यान है और इस बात का भी कि उसके साथी क्या सोचेंगे। यह भी हो सकता है कि उसके अहभाव को इसमे सन्तोष मिलता हो कि उसकी पत्नी ऐसी है जो अपने व्यवसाय और अपने क्षेत्र मे सुविख्यात है प्रतिभाशाली और महत्त्वाकाक्षी है। उसमे आत्मविश्वास की कमी है और वह डरता है कि शायद उसे दूसरी

पत्नी न मिल सके या यह कि शायद वह अपनी दूसरी पत्नी के साथ भी सुखी न रह सके। या यह भी हो सकता है कि वह मुझे इसलिए नहीं छोड़ता कि वह मुझसे अब भी प्रेम करता है और मेरी परवाह करता है।"

उसने कहा कि वह हिंदू कोड बिल की दृढ़ समर्थक है जिसमें पति-पत्नी के बीच "असंगति' के आधार पर भी तलाक देने का अधिकार दिया गया है। उसे इसमें कोई आपत्ति नहीं थी कि अगर किसी पत्नी की अपने पति से न बनती हो तो वह उसे छोड़कर दुबारा विवाह कर ले। उसका विश्वास था कि तलाक से असंतोषजनक विवाहों की संख्या-बहुत बड़ी हद तक कम हो जाती है। वह किसी दूसरे पुरुष के प्रति किसी विवाहित स्त्री के गहरे लगाव का अनुमोदन करती थी क्योंकि उसका विश्वास था कि विवाह सम्बन्ध की परिधि के भीतर सभी बौद्धिक तथा संवेगात्मक आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जा सकता। और उसका मत था कि यदि पत्नी को कोई ऐसा व्यक्ति मिल जाये जो उसे प्रेरणा दे सकता हो या जो उसकी कुछ रुचियों तथा विचारों में उसका साझीदार बन सकता हो तो इसमें कोई बुराई नहीं है कि उससे उसका लगाव हो जाये। उसने बताया कि वह किसी ऐसे व्यक्ति से विवाह करना चाहती थी जो बुद्धि और शिक्षा में उससे श्रेष्ठतर हो, और जो कोई अच्छी नौकरी करता हो तथा उसकी रुचियां उसकी रुचियों जैसी ही हों, जिसके हृदय में उसके प्रति सम्मान तथा सराहना की भावना हो और जो बहुत उदार विचारोंवाला हो और जो उसे जो कुछ भी वह चाहे करने की पूर्ण स्वतन्त्रता दे सकता हो।

उसका विश्वास था कि पति पत्नी के बीच आयु के अन्तर का कोई अधिक महत्त्व नहीं है, पति अपनी पत्नी से बड़ा भी हो सकता है, उसके बराबर भी या उससे छोटा भी। उसने कहा कि उसे किसी ऐसे व्यक्ति से विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं होगी जिसकी आयु उससे कम हो, और यदि वह प्रौढ़ हो तो वह उसके प्रति सम्मान का भाव रख सके।

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कि वह किस प्रकार के विवाह के पक्ष में है, उसने कहा कि वह प्रेम विवाहों को बहुत अच्छा समझती है। चूंकि माता पिता का तय किया हुआ उसका विवाह बहुत बुरी तरह विफल रहा था, इसलिए अब वह युद्धत तय किये हुए विवाहों की दृढ़ विरोधी थी। उसने आगे चलकर यह भी कहा, 'पुद्धत तय किये हुए विवाहों का विचार मेरे लिए सर्वथा अरुचिकर है। यह उस समय की बहुत घिसी पिटी प्रथा है जब स्त्री को अपने जीवन के बारे में कोई निर्णय करने का प्रायः कोई अधिकार ही नहीं होता था। अब चूंकि वह शिक्षित हो गयी है और उसे इतने बहुत-से राजनीतिक तथा कानूनी अधिकार तथा सुविधाएँ मिल गयी हैं, इसलिए अपने जीवन के बारे में प्रमुख निर्णय वह स्वयं कर सकती है और उन्हीं में से एक निर्णय यह भी है कि वह किस व्यक्ति के साथ विवाह करना चाहेगी।' उसका विचार था कि 22 वर्ष की आयु के बाद लड़की को अपना पति स्वयं चुनने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। वह अन्तर्जातीय विवाहों की दृढ़ समर्थक थी और उन अलग अलग

धर्मों तथा जातियों के लोगों के बीच विवाह होने में कोई आपत्ति नहीं थी। उसे इस बात में कोई आपत्ति नहीं थी कि एक प्रौढ़ लडकी किसी ऐसे प्रौढ़ लडके से विवाह कर ले जो किसी अच्छी नौकरी पर लगा हुआ हो, चाहे वह अपने माता पिता या अभिभावक की अनुमति के बिना ही ऐसा कर ले।

उसका विश्वास था कि विवाह एक आवश्यकता है क्योंकि उससे शारीरिक संतोष तथा पूर्ति का सुख प्राप्त होता है और अन्य आवश्यकताओं की भी तुष्टि होती है जैसे पति और घर की, प्रेम तथा साहचर्य की और सामाजिक तथा संवेगात्मक सुरक्षा की आवश्यकताएँ। उसकी राय में लडकी के लिए विवाह करने की सबसे उपयुक्त आयु 20 से 24 वर्ष के बीच होती है। उसका विचार था कि सिविल विवाह तथा वैदिक रीति में सम्पन्न किये गये विवाह समान रूप से अच्छे होते हैं, पर वह स्वयं सिविल विवाह को अधिक पसन्द करती थी। उसका मत था कि विवाह एक सामाजिक अनुबंध होता है जो मुख्यतः वैयक्तिक लाभ के लिए और किसी स्त्री अथवा पुरुष के निजी सुख तथा संतोष के लिए किया जाता है। उसने यह भी कहा कि निश्चित रूप से उसने जीवन में सुख तथा संतोष प्राप्त करने के लिए ही विवाह करना चाहा था।

जब उससे पूछा गया कि उसने विवाह से किस चीज की आशा की थी, तो उसने उत्तर दिया, 'मैंने अपने पति का प्रेम, सराहना और ध्यान प्राप्त करने की, एक ऐसा सुखप्रद घर पाने की जहाँ मैं अपने मित्रों का स्वागत सत्कार कर सकूँ और एक ऐसा पति पाने की आशा की थी जो मेरी अनेक आवश्यकताओं को पूरा कर सके और जिसके प्रति मैं प्रेम तथा सम्मान का भाव रख सकूँ। सारांश यह कि मैंने विवाह से बहुत सुख और संतोष की आशा की थी। परन्तु दुर्भाग्यवश मुझे कुछ न मिल सका।" उसने आगे चलकर कहा कि उसे अब भी जीवन में पूर्ण सुख तथा संतोष पाने की आशा है। उसने कहा कि उसे अपने काम और अपने मित्र-वर्ग से बहुत संतोष मिलता है। फिर भी उसने स्वीकार किया कि वह किसी ऐसे व्यक्ति की खोज में है जो एक पति के रूप में उसकी प्रत्याशा को पूरा कर सके और तभी वह तलाक देने और दुबारा विवाह करने की बात सोच सकती है।

इस प्रश्न के उत्तर में कि उसकी राय में उस समय प्रचलित विवाह-पद्धति में क्या खराबी थी, उसने कहा, "बात यह है कि यह परम्परागत तय किये हुए विवाहों की पद्धति बहुत अरुचिकर है। मैं समझती हूँ कि जो लडका और लडकी विवाह से पहले एक दूसरे को अच्छी तरह न जानते हों और जिन्होंने आपस में विवाह करने का निर्णय स्वयं न किया हो वे एक दूसरे के साथ सुखी जीवन व्यतीत नहीं कर सकते। विवाह जीवन का सबसे बडा जुआ है।" एक और बात जिसकी उसने बहुत आलोचना की वह थी विवाह को अत्यधिक पवित्र मानने की परम्परा जिसका परिणाम यह होता है कि यह जान लेने और दृढ़तापूर्वक अनुभव करने के बाद भी कि उन दोनों के बीच कोई भी बात समान नहीं है पति और पत्नी को साथ रहना

है। उसने कहा कि तलाक को बहुत कम जटिल और बहुत कम महँगा बना दिया जाना चाहिए ताकि वह एक वास्तविकता बन सके और उन लोगों की इच्छा मात्र न रह जाये जो तलाक लेना चाहते हैं। उसने यह भी कहा कि विवाह का अर्थ स्त्री की वैयक्तिकता तथा उसकी आकांक्षाओं का अन्त नहीं होना चाहिए। उसका दृढ़ मत था कि विवाह के बाद भी उसे पूरी स्वतन्त्रता और स्वाधीनता दी जानी चाहिए और उसे जबरदस्ती केवल अपने घर से बाँध नहीं दिया जाना चाहिए।

कमला ने, जिसका पालन पोषण एक कट्टरपंथी हिन्दू परिवार में हुआ था, इसलिए संवेगात्मक असन्तोष अनुभव किया था कि उसके पिता न केवल बहुत कठोर और दकियानूसी थे बल्कि उन्हें उससे कोई स्नेह भी नहीं था। उस पर जो प्रतिबन्ध लगाये गये थे और उसके पिता ने उसके साथ जितनी कठोरता का व्यवहार किया था उसके विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में वह अपने पिता के आदेशों की अवज्ञा करना चाहती थी और समाज को भी पिता का पर्याय समझने के कारण वह उसकी परम्पराओं और स्वीकृत मानदण्डों का भी विरोध करना चाहती थी। स्वतन्त्र और अपरम्परागत जीवन बिताने की इसी इच्छा के कारण विवाह की प्रथा के विभिन्न पहलुओं के बारे में उसकी अभिवृत्तियाँ रंजित हो गयी थीं।

माया, प्रमिला, सोनिया, शालिनी और वासना उन शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं जो उन्मुक्त विचारों वाले पाश्चात्य रहन-सहन के परिवारों से सम्बन्ध रखती थीं और जिनका पालन पोषण एक अपरम्परागत वातावरण में हुआ था। माया, प्रमिला, सोनिया और वासना ने तो बहुत अपरम्परागत और कट्टरता से मुक्त विचार और विश्वास व्यक्त किये, शालिनी ने बहुत कुछ परम्परागत विचार व्यक्त किये, हालांकि दस वर्ष पहले उसने भी उन्हीं से मिलते जुलते विचार व्यक्त किये थे।

## व्यक्ति-अध्ययन संख्या 7

तेईस वर्षीया माया पिछले तीन वर्षों से एक सरकारी संगठन में काम कर रही थी और अपना काम उसे रोचक लगता था। वह ग्रेजुएट थी और 500 रु० महीना कमाती थी। वह जवान और देखने में सुन्दर थी, उसका रूप मोहक और शरीर का गठन बहुत आकर्षक था। अपने चारों ओर की हर चीज के प्रति वह बहुत उत्साहित और आन्दोलित रहती थी। वह बहुत अच्छे कपड़े पहने थी और ऐसा लगता था कि उसे अच्छे कपड़ों का चाव है। वह बहुत सुसंस्कृत तथा परिष्कृत थी और उसका चेहरा बहुत हँसमुख और सजग था। वह आत्मविश्वास से परिपूर्ण थी और सामाजिक आचार-व्यवहार में बहुत निःसंकोच तथा स्पष्टवादी थी और उन्मुक्त भाव से बातचीत करती थी और हमेशा नये लोगों से परिचय करने के लिए उत्सुक रहती थी। इस जाँच पड़ताल के दौरान लेखिका के साथ कई बार लम्बी बातचीत करके उसने बहुत हर्ष अनुभव किया। अपने विचारों तथा अभिवृत्तियों के

बार मे वह बहुत स्पष्ट थी और उसकी रुचियाँ तथा अरुचियाँ बहुत दृढ थी।

उसके पिता किसी निजी व्यापारिक सगठन म ऊँचे पद पर थे। उसके एक बहन तथा एक भाई और था और वह अपने माता पिता की सबस छोटी स तान थी। उसके माता पिता का विवाह अ तर्जातीय तथा अ तप्रा तीय था। उसकी मा एक बहुत उ नत परिवार की थी और बहुत सुसस्कृत तथा परिष्कृत थी। माया ने अपना सारा जीवन बडे बडे नगरा मे बिताया था जहा उसके पिता काम करते थे। उसके माता पिता बहुत उदार विचारा वाले थे और अपने बेटा और बटिया के प्रति समान स्नेह रखत थ और उनका समान रूप से ध्यान रखत थ। घर का वातावरण बहुत सुख शान्ति का था और लडकियो को स्कूल के दिना से ही बिना किसी रोक-टोक के अपने मित्रा के साथ घूमने-फिरने की स्वत त्रता थी और वे बिल्कुल उ मुक्त भाव से घूमती फिरती थी —लडकिया के साथ भी और लडका के साथ भी। माया की बाल्यावस्था और तरुणाई बहुत सुख सुविधा और स्वत त्रता के वातावरण म बीती थी। परिवार म सभी बच्चो के साथ ऐसे स्वत त्र यक्तियो जसा व्यवहार किया जाता था जो अपनी इच्छा के अनुसार काम कर सकते हैं। उ ह अच्छे कपड पहनने की आदत डाली गयी थी और उनमें इस बात की चेतना जागत की गयी थी कि जीवन मे वास्तविक महत्त्व इस बात का होता है कि आदमी देखने मे कसा लगता है और कसे कपड पहनता है।

उसने सबसे अच्छ कॉनवेंट स्कूल म शिक्षा पायी थी, जहा उसने यह सीखा था कि अग्रेजी मे अच्छी तरह और सुगमता के साथ बातचीत कर सकने का कितना अधिक महत्त्व है। वहा उसने पाश्चात्य ढग से बोलना, आचरण करना और यहा तक कि सोचना भी सीख लिया था। पढाई मे तो वह सामा य स्तर की ही छात्रा थी पर नाट्यकला मे बहुत निपुण थी और वह काफी लोकप्रिय भी थी क्योकि उसका व्यक्ति त्व मित्रतापूर्ण था। उसने ऐसे सस्थान मे शिक्षा पायी थी जहा लडके और लडकियाँ साथ-साथ पढते थे और जिन दिनो वह स्कूल म पढती थी तभी स उसकी कई लडका के साथ मित्रता थी जिनके साथ वह पूरी स्वत त्रता के साथ घूमती फिरती थी। सीनियर कम्ब्रिज पास करन के बाद वह कालेज मे भरती हुई और उसका छात्र-जीवन बहुत सुखमय बीता। पढाई मे उसकी रुचि कम और बाहर की गतिविधिया म अधिक थी।

चूकि उसे पढाई से अधिक रुचि नहीं थी और ग्रेजुएट हो जाने के बाद वह आगे नही पढना चाहती थी, इसलिए वह कोई एसी नौकरी कर लना चाहती थी जहा उसे विभि न प्रकार के लोगा से मिलने का, खुले वातावरण का आन द लेने का और कुछ थाडा सा रोमाचकारी जीवन बिताने का अवसर मिल सके। इसलिए उसने केवल "जीवन का आन द लेने" और विवाह होने तक का समय बिताने के लिए यह नौकरी कर ली थी।

वह काम केवल इसलिए करती थी कि पढाई का बोझ उठाये बिना छात्र जीवन का आन द लूट सके। चूकि उसकी अपनी आय थी, इसलिए उसके अहभाव को

सन्ताप मिलता था। वह अधिक आत्मविश्वास अनुभव करती थी और उसे लोगों से, विशेष रूप से विदेशियों से मिलने का बहुत चाव था। उसे पूरा विश्वास था कि वह अपने लिए कोई पति खोज लेगी और अपने भावी जीवन के बारे में उसने बहुत उज्ज्वल और रोमांटिक चित्र बना रखा था। उसने कहा कि वह विवाह के बाद भी काम करना चाहेगी ताकि उसका स्वतन्त्र व्यक्तित्व बना रहे और आर्थिक दृष्टि से वह स्वावलम्बी रहे लेकिन वह केवल उसी समय तक काम करेगी जब तक उसे कोई सन्तोष मिले।

उसकी राय में विवाह इसलिए आवश्यक था कि हर स्त्री पारस्परिक प्रेम, सेक्स जीवन साहचर्य की जरूरत और एक पति और अपने घर की जरूरत अनुभव करती है। वह इस कथन से पूर्णतः सहमत थी कि 'विवाह एक सामाजिक अनुबन्ध होता है जो मुख्यतः व्यक्ति की भलाई के लिए और उसके निजी सुख तथा सन्तोष के लिए किया जाता है।' उसने यह भी कहा कि "विवाह का मुख्य प्रयोजन अपने निजी सुख में वृद्धि करना है। इसलिए जिस ढंग से भी कोई चाहे विवाह कर सकता है—वैदिक पद्धति से, सिविल पद्धति से या दोनों ही पद्धतियों से। लड़की के लिए 10 वर्ष के बाद की कोई भी आयु विवाह करने के लिए ठीक है, इसका निर्णय इस पर निर्भर करता है कि वह इसकी आवश्यकता अनुभव करती हो।'

वह किस प्रकार का विवाह पसन्द करती है, इसके बारे में अपना मत व्यक्त करते हुए उसने कहा कि वह पूरी तरह दूसरों के तय किए हुए विवाहों की घोर विरोधी थी और 'प्रेम विवाह' के पक्ष में थी और यह भी कि वह किसी ऐसे व्यक्ति के साथ विवाह करना नहीं चाहेगी जिसे वह अच्छी तरह न जानती हो। उसने कहा, "लेकिन "प्रेम विवाह' का अर्थ यह नहीं है कि दो चार मुलाकातों में जिससे मोह हो जाये उससे विवाह कर लिया जाये। मेरी धारणा के अनुसार प्रेम विवाह अपनी पसन्द के आदमी के साथ विवाह होता है और उस पसन्द का फैसला बहुत जल्दबाजी में और केवल भावनाओं के आधार पर नहीं बल्कि बहुत सोच समझकर और तर्कसंगत आधार पर करना होता है। और इसके लिए आवश्यक नहीं है कि स्त्री या पुरुष को पूरी तरह केवल अपने प्रयासों से ही अपना जीवन साथी खोजना पड़े। सम्बन्धित व्यक्तियों को सम्भावित जीवन साथी का सुझाव माता पिता, सगे-सम्बन्धी या मित्र दे सकते हैं या फिर सम्बन्धित व्यक्ति पूरी तरह उस जोड़े के उपयुक्त होने का आश्वासन कर लेने के बाद स्वयं अपने माता पिता के सामने यह सुझाव रख सकते हैं। पहले वाली स्थिति में सम्बन्धित स्त्री तथा पुरुष का अनौपचारिक ढंग से एक दूसरे से परिचय कराया जा सकता है और उसके बाद यदि दोनों एक दूसरे को और अधिक अच्छी तरह जानना चाहते तो उन्हें इसका अवसर दिया जाना चाहिए। और जब वे एक-दूसरे को अपने लिए उपयुक्त पायें और दोनों में एक दूसरे के प्रति स्नेह पैदा हो जाय तभी उन्हें विवाह करने का निर्णय करना चाहिए। दूसरी वाली स्थिति में वे स्वयं अपने लिए साथी चुन सकते हैं और अपने माता पिता से सलाह

कर सकते हैं और अंतिम निणय करने से पहले स्वय अपनी ओर से छानबीन और मूल्याकन कर सकते हैं। यह निणय उस लडकी या लडके को करना होगा कि वह अपने माता पिता के परामश का पालन करे या न करे, और यह बात इस पर निभर होगी कि उन्होने अपना भावी जीवन साथी कितन शात और यथाथ भाव से चुना है।" उसका विचार था कि लडकी को अपन लिए उचित वर स्वय खोज करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, लेकिन उस अंतिम निणय करने से पहले पूरी समस्या पर खुलकर अपने माता-पिता से विचार विमश कर लेना चाहिए। उसकी राय मे परिवारवालो की अपेक्षा उन लागो के हितो तथा इच्छाओ को अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए जिनका आपस मे विवाह होनवाला है।

माया अलग अलग जातियो तथा प्रान्ता के लोगा के बीच, यहा तक कि अलग अलग धर्मों तथा राष्ट्रो के लोगो के बीच भी विवाह की दृढ समथक थी। उसके माता पिता भी इस विचार से सहमत थ। उन्हे इस बात म कोई भी आपत्ति नही थी कि उनकी बेटिया किसी से भी विवाह कर ल। वे केवल यह चाहत थे कि वह आदमी धनी, सुसस्कृत, उदार विचारो वाला हो और उनकी बेटी से प्रेम करता हो। लेकिन माया किसी विदेशी से विवाह करना चाहती थी। उसने कहा कि वह विदेशियो को विशेष रूप से पसन्द करती थी और वह किसी भारतीय की अपेक्षा किसी अमरीकन से विवाह करना अधिक पसन्द करेगी। दो एक विदेशियो से उसकी मित्रता भी थी जिनसे उसकी मुलाकात अपनी नौकरी या अपन सामाजिक जीवन के दौरान हुई थी।

भावी जीवन साथियो की उम्रा के अन्तर को वह बहुत कम महत्त्व देती थी। पुरुष उसकी राय मे स्त्री से बडा भी हो सकता था, उसके बराबर भी या उससे छोटा भी। उसने कहा कि उसके मन मे इस बात की कोई अडिग धारणा नही है कि वह अपने पति मे क्या क्या बातें चाहती है। उसने कहा, "मैं अपने भावी पति म किसी विशेष गुण की खोज मे नही हू। अगर किसी से मेरी बात बन गयी तो बन गयी, और पति को चुनने मे इसी बात का सबस अधिक महत्त्व ह।" वह इसी "बात बन जाने को सबसे अधिक महत्त्व देती थी, परन्तु उसके समाजीकरण की प्रक्रिया, जीवन क मूल्या और उसके विभिन्न कथनो का विश्लेपण करने पर हम यही कहग कि उसकी बात केवल किसी बहुत खात पीत, मिलनसार और चुस्त चालाक आदमी से ही बन सकती थी।

अपने भावी जीवन के बारे मे उसका दृष्टिकोण बहुत आशावान था और उसे पूरा विश्वास था कि वह अपना पसन्द के किसी ऐसे आदमी से विवाह करगी जो उसे जीवन की सारी सुख सुविधाएँ दे सकने के साथ ही उस सुखी और सन्तुष्ट भी रख सके। उसने कहा कि वह अपनी सवेगात्मक, यौन सम्बन्धी तथा भौतिक आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए और इसके साथ ही साहचय के लिए भी विवाह करना चाहती थी। वह इस बात पर सबसे अधिक जोर दती थी कि उसका

पति बहुत पढ़ा लिखा हो, उसका भविष्य बहुत उज्ज्वल हो और उसका स्वभाव प्रेममय हो।

वह दहेज प्रथा के पक्ष म नहीं थी लेकिन उसने कहा कि वह यह अवश्य चाहेगी कि जब उसका विवाह हो तो उसके माता पिता उसे जीवन की नितान्त आवश्यक वस्तुओं के अतिरिक्त सुख सुविधा की वस्तुएँ भी दें।

वह इस बात को निन्दाजनक नहीं समझती थी कि किसी स्त्री का अपने पति के अतिरिक्त किसी दूसरे व्यक्ति से गहरा लगाव हो, लेकिन केवल उसी स्थिति में जब उसका पति उसकी ओर आवश्यक ध्यान न देता हो या उसके प्रति आवश्यक स्नेह न रखता हो या वह उसकी रुचियों, विचारों अथवा सबगों म उसका साझीदार न बन सकता हो। वास्तव म वह इस बात को उचित भी समझती थी कि किसी स्त्री का अपने पति के अतिरिक्त किसी दूसरे व्यक्ति से गहरा लगाव हो, क्योंकि वह अनुभव करती थी कि यदि वह दूसरा व्यक्ति बौद्धिक उद्दीपन प्रदान कर सकता हो या दोनों के लिए साहित्य या संगीत जैसा रुचि का कोई समान स्रोत हो, तो इसमें कोई हर्ज नहीं है कि उन दोनों में एक दूसरे के लिए चाह हो। वह यह नहीं समझती थी कि तलाक के विचार से समायोजन के प्रयासों म बाधा पड़ती है। उसका विचार था कि तलाक से असन्तोषप्रद विवाहों की संख्या बहुत बड़ी हद तक कम हो जाती है। उसका विश्वास था कि पत्नी को, अपने आपको अपने पति की रुचियों तथा इच्छाओं के अनुसार ढाल लेना चाहिए, लेकिन केवल एक निश्चित हद तक। पति को भी इतनी ही हद तक अपने आपको अपनी पत्नी की रुचियों के अनुसार ढाल लेना चाहिए। वह इस बात के पक्ष म थी कि यदि दोनों एक दूसरे के लिए असंगत हों और घर पर बहुधा संघर्ष चलता रहता हो तो वे तलाक ले लें और पत्नी अपने पति को छोड़कर दूसरा विवाह कर ले।

उसने कहा, "मैं समझती हूँ कि पुरुषों तथा स्त्रियों को तभी विवाह करना चाहिए जब वे एक दूसरे से प्रेम करते हों और एक-दूसरे का सम्मान करते हों, और जब उनमें एक-दूसरे के लिए प्रेम या सम्मान न रह जाय और वे एक-दूसरे का बिलकुल भी ध्यान न रख सकें और विवाह का सम्बन्ध एक रणक्षेत्र बन जाय तो उन्हें अलग हो जाना चाहिए। मेरी दृढ़ भावना है कि प्रेम के बिना विवाह करना या प्रेम के बिना विवाह के सम्बन्ध को बनाये रखना लगभग अनैतिक है क्योंकि यह एक बेईमानी का और कायरतापूर्ण काम है।" वह इस बात की दृढ़ समर्थक थी कि यदि कोई विधवा या तलाक दी हुई स्त्री किसी भी आयु म विवाह की आवश्यकता अनुभव करे तो वह दुबारा विवाह कर ले।

जब उससे पूछा गया कि क्या वह इस बात के पक्ष में है कि पति या पत्नी को दूसरा विवाह करने का अधिकार होना चाहिए तो उसने उत्तर दिया, 'हाँ, मैं इसके पक्ष में हूँ। मैं समझती हूँ कि दोनों ही को एक से अधिक बार विवाह करने की छूट होनी चाहिए लेकिन एक-दूसरे की अनुमति से, और यदि विवाह-सम्बन्ध के दोनों पक्ष

इसके लिए सहमत हो तो समाज को भी इसे मान्यता देनी चाहिए और इसका अनुमोदन करना चाहिए। कुछ भी हो, यह उनका निजी मामला है और यदि उन्हें एक ही व्यक्ति के साथ रहना नीरस लगता हो तो वे हमेशा एक के बजाय दो व्यक्तियों के साथ विवाह-सम्बन्ध स्थापित कर सकते है, परन्तु केवल उस दशा मे जब वे इस बात के लिए परस्पर सहमत हो। यदि वे सहमत न हो तो उन्हे एक दूसरे से अलग हो जाना चाहिए, तलाक ले लेना चाहिए और उसके बाद दूसरा विवाह कर लेना चाहिए।"

यह पूछे जाने पर कि उसके जीवन का अन्तिम लक्ष्य क्या है, उसने उत्तर दिया कि निःसन्देह उसके जीवन का अन्तिम लक्ष्य अपनी पसन्द के आदमी से विवाह करना है। फिर भी उसने उस समय तक विवाह इसलिए नही किया था कि उसने अभी तक इसकी तीव्र आवश्यकता नही अनुभव की थी, क्योंकि उसका जीवन बहुत सुख-चैन से बीत रहा था।

इस प्रश्न के उत्तर मे कि "इस समय मध्यमवर्गीय हिन्दू समाज मे विवाह की जो पद्धति प्रचलित है उसमे क्या दोष है ?" उसने कहा कि विवाह तय करने के परम्परागत ढंग से लेकर विवाहोत्सव और दम्पत्ति के रहन सहन तक लगभग सभी बातें दोषयुक्त हैं। उसने कहा कि विवाह एक बहुत जटिल समस्या होती है और इसमे दो व्यक्तियों के साथ रहने और उनके हर दृष्टि से एक दूसरे के जीवन मे साझेदार होने का सवाल होता है और यदि इस क्षेत्र मे प्रवेश करनेवाले दोनो व्यक्ति हर दृष्टि से एक दूसरे को अच्छी तरह न जानते हो तो सम्भव है कि वे एक दूसरे के साथ सुखी न रह सकें। उसने कहा, "मेरी राय मे तो महीनो तक एक दूसरे से मिलते रहने के बाद भी दो व्यक्ति एक दूसरे को पूरी तरह नही जान सकते। जब पति-पत्नी साथ रहना आरम्भ करते है तभी वे पता लगा सकते हैं कि वे एक दूसरे के लिए उपयुक्त हैं या नही, उनकी दिलचस्पियाँ तथा विचार, रुचियाँ तथा अरुचियाँ, एक-दूसरे से मिलती हैं या नही, और यह कि उन्हे एक दूसरे के साथ रहने और एक-दूसरे के शारीरिक सम्पर्क से सुख मिलता है या नही। इसके लिए मेरी दृढ भावना है कि परीक्षण विवाह होने चाहिएँ। इससे मेरा अभिप्राय यह है कि यदि कोई स्त्री तथा पुरुष काफी समय तक एक दूसरे को जानने और एक दूसरे के मित्र रहने के बाद अनुभव करें कि उन्हे एक दूसरे से प्रेम है और वे विवाह करना चाहते है, तो उन्हें [illegible] की सहमति से पति पत्नी की तरह साथ रहने दिया जाना चाहिए, [illegible] इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जब तक वे यह न अनुभव करें कि वे [illegible] के लिए उपयुक्त हैं और स्थायी सम्बन्ध की प्रबल इच्छा रखते हैं [illegible] न पैदा करें। मैं समझती हूँ कि इस प्रकार वे एक दुखी वैवाहिक [illegible] से बच सकते है।"

उसने तर्क दिया, "आखिर विवाहोत्सव की [illegible] के बिना [illegible] लडके और लडकी के साथ रहने मे हर्ज ही क्या है। [illegible] सम्बन्ध को [illegible] अथवा निष्ठाहीन नही मानती। इसके विपरीत [illegible] के प्रति पूर्ण [illegible]

निभरता की आवश्यकता होती है । यद्यपि यह अनाधिकारिक तथा अनौपचारिक होता है, फिर भी यह आधिकारिक विवाह के दायित्व को सँभालने के लिए एक प्रकार की तैयारी होती है ।" उसने आगे चलकर कहा कि इस परीक्षण की अवधि मे दोनो ओर से किसी प्रकार की प्रतिबद्धता नही होनी चाहिए और यदि उनमे से कोई एक या दोनो ही उस सम्बन्ध से मुक्त होना चाहें तो उन्हे ऐसा करने की पूरी छूट होनी चाहिए और जो लोग इस पद्धति को परखना चाहे उनके लिए इस समाज की मान्यता दी जानी चाहिए ।

एक और बात जिस पर उसने जोर दिया वह यह थी कि तलाक देने की पद्धति और सुगम होनी चाहिए और उसे समाज की मान्यता मिलनी चाहिए । वह अनुभव करती थी कि जो लोग तलाक ले लेते थे उनके प्रति, विशेष रूप से स्त्रियो के प्रति, समाज का तिरस्कारपूर्ण रवैया कदापि वाछनीय नही है, क्योकि उसका विश्वास था कि तलाक से दु खी तथा असन्तुष्ट दम्पतियो की सख्या कम होती है । उसने कहा, ' मैं समझती हू कि जीवन इतना अधिक बहुमूल्य होता है कि उसे किसी ऐसे व्यक्ति के साथ व्यतीत नही किया जाना चाहिए जिससे हम किसी भी कारण प्रेम न कर सकते हो या जिसका हम सम्मान न कर सकते हो । ऐसी परिस्थिति मे यदि वे एक दूसरे के जीवन से बाहर चले जायें तो जीवन उनके लिए अधिक उपयोगी तथा अर्थपूर्ण बन सकता है ।"

अन्त मे उसने एक बार फिर जोर देकर कहा, "मैं समझती हू कि वास्तविक विवाह से पहले एक परीक्षण अवधि होनी चाहिए जिसे समाज की मान्यता प्राप्त होनी चाहिए । साथ-साथ रहने की इस अवधि के दौरान लडका और लडकी यह पता लगा सकेंगे कि प्रतिदिन एक दूसरे के साथ रहना कसा लगता है और उन्हे वास्तविकता के ठोस प्रसग मे गहराई से खोज बीन करने और अपने सम्बन्ध के बारे म प्रयोग करने का अवसर मिलेगा । मुझे आश्चर्य है कि समाज केवल सतीत्व की रक्षा करने की भ्रामक धारणा के कारण इतने महत्त्वपूर्ण अनुभव तथा ज्ञान की अनुमति नही देता तथा उसे स्वीकार नही करता जबकि स्वस्थ घनिष्ठ सम्बन्धो की स्थापना के अन्तिम लक्ष्य की तुलना मे यह नगण्य है ।"

**व्यक्ति अध्ययन सख्या 15**—विवाह की प्रथा के बारे म अपने विचार व्यक्त करते हुए पमिला ने सबसे अधिक सहमति इस कथन से प्रकट की कि "विवाह एक सामाजिक अनुबन्ध है जो मुख्यत व्यक्ति की भलाई के लिए और उसके निजी सुख-सन्तोष के लिए किया जाता है ।" परन्तु वह विवाह के लिए औपचारिक अथवा कानूनी स्वीकृति की आवश्यकता म पूर्णत असहमत थी । उसने कहा, ' मैं समझती हूँ कि स्त्री और पुरुष के घनिष्ठ सम्बन्ध को कानूनी रूप देने की कोई आवश्यकता नही है और विवाह की भी कोई आवश्यकता नही है । "उन्मुक्त प्रेम ' की छूट होनी चाहिए और लडकी को किसी प्रतिबद्धता के बिना अपनी पसन्द के किसी भी आदमी के साथ रहन की स्वतन्त्रता हानी चाहिए यदि दाना को एक दूसरे मे सन्तोष मिलता हो । यह

मिले और जब भी मैं वह सम्बन्ध बनाये रखना नही चाहूगी मैं किसी दुर्भावना, प्रतिबद्धता अथवा अपराध की भावना के बिना उसे छोड दूगी। चूकि मैं नही चाहती कि मुझ पर किसी का स्वामित्व हो, इसलिए मैं किसी पर अपना स्वामित्व रखना भी नही चाहती। मैं चाहती हू कि अपने सन्तोष और सुख के लिए जो कुछ भी मैं करना चाहूँ वह करने की मुझे पूरी स्वतन्त्रता हो। किसी भी आयु, जाति, नस्ल या धर्म के पुरुष और स्त्री के इस ढग के साथ रहने को समाज की स्वीकृति तथा मान्यता मिलनी चाहिए और इस प्रकार के सम्बन्धो से जो बच्चे पैदा हो उन्हे भी समाज मे स्वीकार किया जाना चाहिए और एक व्यक्ति के रूप मे उन्हे प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए। यहा तक कि जिन लोगो ने उन्हे जन्म दिया है यदि वे उनका पालन पोषण न कर सकते हो, या न करना चाहते हो तो राज्य को उनके पालन-पोषण का भार सँभालना चाहिए।"

**व्यक्ति अध्ययन सख्या 9**—मोना ने (जिसका परिचय चौथे अध्याय मे दिया गया है) इस बात के बारे मे अपने विचार व्यक्त किये कि उसकी राय मे किस प्रकार का विवाह करने योग्य होता है। उसने कहा "कुछ भी हो, किसी भी मानव सम्बन्ध मे विवाह मे तो और भी अधिक, दो ऐसे साझेदारो के बीच जो परस्पर एक दूसरे की स्वतन्त्रता और मूल्य को स्वीकार करते हो, पूरी ईमानदारी और स्पष्टवादिता का सम्बन्ध होना चाहिए। वह दो ऐसे मित्रो का सम्बन्ध होना चाहिए जिसमे कोई न तो दूसरे पर अपना प्रभुत्व जताता हो और न अपने को दूसरे के अधीन समझता हो और जिसमे दोनो ही अलग अलग वैयक्तिक रूप से और सयुक्त रूप से भी अपना विकास करने तथा अनुभव प्राप्त करने के लिए स्वतन्त्र हो और जिसमे एक दूसरे के लिए 'पूर्ण विश्वास' हो और ईर्ष्या या प्रभुत्व की भावना का नाम भी न हो। और सबसे बढकर उसमे पूर्ण स्वतन्त्रता' होनी चाहिए जो मेरी राय मे किन्ही भी दो व्यक्तियो के बीच सबसे दृढ और सबसे बहुमूल्य बन्धन होता है।"

बाद मे विवाह की परिधि के बाहर गहरे लगावो के बारे मे अपने विचार व्यक्त करते हुए उसने कहा, एक विवाही पद्धति में एकाधिकार स्वामित्व का विचार मुझे बेहद घृणास्पद लगता है। विवाह को एक निष्कपट तथा उन्मुक्त सम्बन्ध होना चाहिए, जिसमे प्रेम और सेक्स केवल विवाह की परिधि तक सीमित न हो बल्कि 'स्वामित्व की भावना से रहित' और 'उन्मुक्त' हो। विवाह हो जाने के दोनो साझेदारो को विकास करना और अनुभव प्राप्त करना बन्द नहीं कर देना चाहिए। इसके बजाय विवाह की परिधि के भीतर भी और उसके बाहर भी दोनो साझेदारो का विविध अनुभवो के माध्यम से विकास के अधिक अवसर तथा स्वतन्त्रता होनी चाहिए। जब दोनो साझेदारों के बीच पूर्ण स्वतन्त्रता तथा विश्वास पूरी ईमानदारी और स्पष्टवादिता होगी तो उनके लिए अपने व्यक्तित्व का विकसित करने और हर प्रकार के विवाहेतर सम्बन्धो के लिए नयी सम्भावनाएँ उपलब्ध होती रहेगी और अरुचिकर तथा घुटन पैदा कर देनेवाली ईर्ष्या तथा स्वामित्व की भावना के बिना प्रेम मे दूसरो का

भी सम्मिलित किया जा सकेगा।"

### व्यक्ति अध्ययन संख्या 2

पतीस-वर्षीया सोनिया विश्वविद्यालय म पढाती थी पर बीच-बीच मे वह काम करना छोड भी चुकी थी। उसने विवाह के पहले कुछ वर्षों तक काम किया था और इधर दो वर्षों स काम कर रही थी। उसको प्रतिमाह 700 रु० मिलत थे। शक्षिक योग्यता की दृष्टि स वह एम० ए०, पी एच० डी० थी। उसकी शक्ल-सूरत सुदर और शरीर-रचना आकर्षक थी। उसका आचार व्यवहार अत्यन्त सुखकर तथा मोहक था। वह बहुत सुसस्कृत तथा परिष्कृत और मदु भाषी तथा कामल थी। उसम कामल नारीत्व और आत्मविश्वास का एक अनोखा सम्मिश्रण था। उसके विचारो मे बडी परिपक्वता थी और उसका व्यवहार बहुत विनम्र तथा मैत्रीपूण था। वह अत्यन्त व्यक्तिवादी थी और उसका व्यक्तित्व सुविकसित था। उसका विवाह एक ऐसे व्यक्ति से हुआ था जो बहुत पढा लिखा था और अपने व्यवसाय मे सफल था। उसके एक बटा था।

उसके पिता एक बहुत बड शहर मे व्यापार करत थ। उनका व्यापार बहुत फल फूल रहा था विशेष रूप स उस समय जब सोनिया बच्ची थी। उसके एक बहन और दो भाई थे। उसन अपना बचपन बहुत सुख-सुविधा के वातावरण म बिताया था क्योकि उसके पिता के पास अपन बच्चो को एश्वय के वातावरण मे पालने के लिए काफी धन था। उनके सभी बच्चे देखने मे बहुत सु दर थ। हर आदमी उनकी बहुत प्रशसा करता था और माता पिता भी उनस बहुत प्यार करत थे। उन सभी का जन्म और पालन पोषण बडे नगर मे हुआ था।

अपनी बहन और भाइयो के साथ सोनिया ने भी कानवेंट म शिक्षा पायी थी। पढाई मे तो वह तेज थी ही, पर पाठयेतर क्रियाकलाप म और भी अच्छी थी। स्कूल की पढाई समाप्त करने के बाद उसने विश्वविद्यालय मे शिक्षा पायी थी जहा लडक और लडकियाँ साथ पढते थे। चूकि उसके माता-पिता उदार विचारो वाले थे, इसलिए उन्होने अपने बच्चो को घूमने फिरने और मित्र बनाने की स्वतन्त्रता द रखी थी। सोनिया के बहुत से मित्र थे—लडके भी और लडकिया भी। वह कुछ ऐसे लोगो के सम्पर्क मे आयी थी जो जीविकोपाजन की दृष्टि से सुस्थापित थ, जिनसे वह अक्सर मिलती रहती थी और विवाह करने के विचार स उन्ह अच्छी तरह जान लेने के उद्देश्य मे जिनके साथ वह बहुधा आती जाती रहती थी। लगभग एक वष तक उनसे मिलत रहने और उनको जान लेने के बाद उनके साथ उन्मुक्त भाव से घूमने फिरने के बाद उसने महसूस किया कि उनमे से कोई भी न तो इतना उदार विचारो वाला था और न ही किसी की रुचियाँ उसकी जैसी थी, और उनम से कोई भी बौद्धिक तथा शैक्षिक दष्टि से इतना श्रेष्ठतर या धनवान और उदार ही था कि वह उस अपना जीवन साथी बना सके। इसी बीच उसने एम० ए०, पी एच० डी० कर लिया और एक कालेज म पढाने लगी।

कुछ समय बाद एक लडका जो कालेज मे उसके साथ पढता था और उससे एक वर्ष छोटा था, जो दूसरी जाति और दूसरे प्रान्त का था और किसी दूसरे शहर म एक प्राइवेट कम्पनी म बहुत अच्छी नौकरी पर लगा हुआ था, उसी शहर म नियुक्त होकर आ गया जहा वह रहती थी। वह पढा लिखा था, उसमे आत्मविश्वास था, बहुत अच्छे वेतन वाली नौकरी करता था, उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली था, वह बाहर घूमने फिरने और सामाजिक जीवन का प्रेमी था और जीवन के बारे मे उसका दृष्टिकोण भी वही था जो सोनिया का था। सोनिया ने सोचा कि वह उसके लिए अच्छा पति रहेगा और इसलिए उसने उसके साथ मित्रता बढाने का निर्णय किया। उसने भी महसूस किया कि सोनिया देखने मे सुन्दर, पढी लिखी और सुसस्कृत है और उसका सम्बन्ध एक बहुत खाते पीते घराने से है। उसे सोनिया के साथ रहकर बहुत सुख मिलता था और वह यह जानना चाहता था कि पत्नी के रूप म वह उसके लिए कहा तक उपयुक्त रहेगी। दोनो ने एक दूसरे से मिलते रहने का निर्णय किया और कुछ ही दिना मे वे बहुत अच्छे मित्र बन गये।

चूकि सोनिया के माता पिता उदार विचारो वाले थे और उस लडके का ठीक समझते थे, इसलिए उन्होने सोनिया को रात को देर तक उसके साथ रहने की छूट दे रखी थी। दोनो को एक दूसरे के साथ रहकर बहुत सुख मिलता था और व अपनी समान रुचियो का आनन्द लेते थे। वे एक दूसरे की वैयक्तिक रुचियो तथा अरुचियो का ध्यान रखते थे और एक दूसरे को अपने अपने विचार स्वतन्त्र तथा उन्मुक्त भाव से व्यक्त करने का अवसर देते थे। दोनो को सिगरट और शराब पीने का शौक था और उनका सामाजिक जीवन बहुत उल्लासमय था। उसने बताया कि एक वर्ष से अधिक समय तक एक दूसरे को जान लेने के बाद दोनो ने बहुत ठडे दिमाग से और यथार्थता को ध्यान मे रखते हुए इस बात पर विचार विमर्श किया कि उन्हें विवाह कर लेना चाहिए या नही। वे इस बात पर भी सहमत थे कि विवाह के बाद भी दोनो को अलग अलग अपना जीवन और अलग अलग अपने मित्र रखने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। जब दोनो ने महसूस किया कि व विवाह करना चाहते है तो उन्होने अपने अपने माता-पिता को अपने इस इरादे की सूचना दी। चूकि उनके माता पिता भी रूढिवादी नही थे, इसलिए उन्होने भी सहर्ष यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और इस प्रकार माता-पिता की हार्दिक अनुमति से उनका विवाह हो गया।

सोनिया न बताया कि विवाह के बाद जब उसके बेटा हुआ था तब उसने कुछ वर्षों के लिए काम करना छोड दिया था, लेकिन जब लगभग दो वर्ष का हो गया तो उसने फिर काम करना शुरू कर दिया। उसने कहा कि वह अपने विवाहित जीवन से बहुत प्रसन्न थी और उसका पति भी बहुत प्रसन्न था। परन्तु इसका मुख्य कारण यह था कि उनके पास बहुत-सा धन था जो उनके अनुसार विवाह को सफल बनाता है और इसलिए भी कि व एक दूसरे के जीवन में हस्तक्षेप नही करते थे। सोनिया के अपने सहकर्मी और मित्र थे, और उसके पति की भी अपनी मित्र-मण्डली थी। वे

अपना सामाजिक जीवन मिलकर भी विताते थे और अलग अलग भी। दोना ही को इस बात को पूरी छूट थी कि व जो भी उचित समझें, कर सकते है।

विवाह के बारे म अपन विचारो से सम्बधित विभिन्न प्रश्नो का उत्तर दत हुए उसन कहा कि वह विवाह को एक ऐसा सामाजिक अनुबन्ध मानती है जो मुख्यत सम्बन्धित पक्षो की सुख सुविधा के लिए किया जाता है। उसन कहा कि यही कारण है कि इस प्रकार का अनुबन्ध करने के लाभो का हमेशा मूल्यांकन कर लिया जाना चाहिए, और यदि हानि की तुलना मे लाभ अधिक हो तभी यह अनुबन्ध किया जाना चाहिए। उसन कहा, "मैं समझती हूँ कि विवाह सचमुच दोनो सम्बन्धित पक्षो के लिए एक बहुत कठिन सस्था है। मेरी धारणा के अनुसार इसे दो ऐसे व्यक्तियो के बीच एक सर्वथा व्यावहारिक व्यवस्था होनी चाहिए, जिन्होने बहुत ठडे दिमाग से और बुद्धिसगत ढग म इस बात का पूरा आश्वासन कर लेने के बाद ही उसमे प्रवश करने का निणय किया हो कि साथ साथ रहने क लाभ अलग-अलग रहने की हानियो की तुलना मे बहुत अधिक है।"

जब उससे पूछा गया कि उसन विवाह करना क्यो चाहा था, उसने वास्तव मे विवाह क्यो किया और विवाह से वह क्या आशा करती है, तो उसने उत्तर दिया, 'मैं इसलिए विवाह करना चाहती थी कि मैं अपनी भौतिक, शारीरिक तथा सवेगात्मक आवश्यकताओ को पूरा कर सकू और मेरा अपना पति, घर और बच्चे हो। और मैंन विवाह किया इसलिए कि मैंने महसूस किया कि मुझे अपनी रुचि का एक ऐसा आदमी मिल गया है जो मेरा जैसा ही पढा लिखा बौद्धिक दृष्टि स और आर्थिक हैसियत तथा भावी सम्भावनाओ की दष्टि मे मुझसे श्रेष्ठतर और उदार विचारो वाला था। मैं अपन विवाह से भौतिक सुख सुविधाओ, शारीरिक सन्तोष, प्रेम, साहचय, रुचियो तथा भावनाओ मे साझेदारी की आशा करती थी और काफी हद तक मैंन उससे जो कुछ आशा की थी वह मुझे मिली भी। मेरा यह विश्वास नही था कि विवाह से बहुत अधिक या पूण सुख मिल जाता है। मैं हमेशा यही समझती थी कि विवाह से सुख तो मिलेगा लेकिन केवल तभी जब हम उसे वस्तुपरक दृष्टि से एक ऐसा अनुष्ठान मानने की बुद्धिमत्ता का परिचय दें जिसमे दोनो पक्ष अनुबन्ध की शर्तों से सन्तुष्ट हों। मैन यह समझ लिया था कि विवाह सुख का एकमात्र स्रोत नही होता, सन्तोष तथा सुख के और स्रोत भी हाते हैं—जसे नौकरी, शौक, रुचियां, मित्र, बौद्धिक क्रियाकलाप, दूसरा के प्रति स्नेह और बाहर का जीवन।"

उसने कहा कि विवाह यद्यपि आवश्यकता नही है फिर भी उससे जो सुविधाएँ और लाभ मिलते हैं उनके कारण वह महत्त्वपूण है। वह सामाजिक सुरक्षा, साहचय, प्रेम आर विभिन्न दूसरी आवश्यकता की पूर्ति प्रदान करता है। उसका विश्वास था कि 18 वप के बाद की कोई भी आयु लडकी के लिए विवाह करने के लिए उपयुक्त होती है बहुत बडी हद तक यह इस पर निभर है कि वह कितनी परिपक्व है, वह उसकी आवश्यकता अनुभव करती है या नही और उसकी अपनी पसन्द अथवा रुचि

क्या है। भावी पति पत्नी के बीच आयु में अन्तर के बारे में उसका कोई विशेष आग्रह नहीं था। पति अपनी पत्नी से 15 वर्ष तक बड़ा होने से लेकर 10 वर्ष तक छोटा हो सकता था, शर्त केवल यह है कि दोनों प्रौढ़ हों और यह समझते हों कि विवाह का अर्थ क्या है।

उसकी दृढ़ भावना थी कि लड़की में इतना आत्मविश्वास होना चाहिए कि वह अपना पति स्वयं चुन सके या अगर उसके माता पिता उसके भावी जीवन-साथी के बारे में कोई सुझाव दें या किसी को उसके लिए पसन्द कर लें तो वह उसके बारे में स्वयं कोई निर्णय कर सके। वह इस बात के पक्ष में थी कि लड़की किसी दूसरी जाति प्रान्त या दूसरे धर्म के भी आदमी से विवाह कर ले यदि उसमें वे गुण हों जिन्हें वह अच्छा समझती है। वह पूरी तरह दूसरों के तय किये हुए विवाहों की परम्परा की घोर विरोधी थी। परन्तु वह उस प्रकार के 'शुद्धत प्रेम विवाहों' की भी उतनी ही पूरी तरह विरोधी थी जिनमें एक-दूसरे को केवल बहुत थोड़े समय तक जानने के बाद शुद्धत क्षणिक मोह या केवल सेक्सगत आकर्षण से प्रेरित होकर या 'अंधे प्रेम' के वश विवाह करने का निर्णय कर लिया जाता है। उसने कहा, 'मैं इस प्रकार के प्रेम विवाह' या 'तय किये हुए विवाह' में विश्वास करती हूँ जिसमें स्त्री और पुरुष ने 'प्रेम ग्रस्त होने' से पहले, या अधिक उपयुक्त शब्दों में कहा जाये तो विवाह करने के निश्चित उद्देश्य से एक-दूसरे के प्रति प्रेम तथा स्नेह विकसित करने से पहले एक दूसरे' को अच्छी तरह जान लिया हो। अपना भावी जीवन-साथी लड़की स्वयं खोज सकती है या उसके मित्र, सगे सम्बन्धी अथवा माता पिता उसके लिए किसी के बारे में सुझाव दे सकते हैं, परन्तु हर हालत में भावी जीवन साथी के बारे में हर बात का पता बहुत बुद्धिमत्ता तथा यथार्थ ढंग से लगा लिया जाना चाहिए, और यदि वह उपयुक्त सिद्ध हो तभी उसके साथ सम्बन्ध विकसित किया जाना चाहिए। और जब वे ये महसूस करें कि वे एक-दूसरे से प्रेम करते हैं और एक दूसरे को प्राप्त करना चाहते हैं तभी उन्हें 'प्रेम विवाह या 'तय किया हुआ विवाह' करना चाहिए।'

उसे इस बात में कोई आपत्ति नहीं थी कि किसी स्त्री का अपने पति के अतिरिक्त अन्य पुरुषों के साथ गहरा लगाव हो। उसने कहा कि यदि उसके प्रति पति के प्रेम में कोई कमी हो या वह उसकी ओर उचित ध्यान न देता हो या उसकी कोई प्रबल बौद्धिक रुचि अथवा मानसिक आवश्यकता ऐसी हो जिसमें उसका पति उसका साथ न दे सकता हो तो इस प्रकार का लगाव सर्वथा उचित होगा। उसने यह भी मत व्यक्त किया कि इस प्रकार का लगाव उसके स्नेहमय परन्तु निष्कपट स्वभाव का भी परिणाम हो सकता है। पत्नी परिवर्तन की या विभिन्न प्रकार के लोगों से मित्रता की भी आवश्यकता अनुभव कर सकती है। उसने कहा कि वह इस बात को अनुचित नहीं समझती कि कोई स्त्री इनमें से किसी भी स्थिति में विवाहेतर सम्बन्ध स्थापित कर ले।

तलाक के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए उसने कहा कि यदि पति

पत्नी एक-दूसरे के लिए असगत हो तो वह तलाक के पक्ष है और इस बात से कोई विशेष अन्तर नही पडता कि तलाक इसलिए लिया गया कि उन दोनो म से कोई एक बेवफा, क्रूर या क्रोधी था या दोनो की आपस मे निभती नही थी। उसका विश्वास था कि तलाक ने अमनोरञ्जक तथा दुखी वैवाहिक जीवन को समाप्त करके नया जीवन आरम्भ करने का अवसर मिलता है। उसन कहा, "किसी ऐसे सम्बन्ध को जिसका अस्तित्व वास्तव मे समाप्त हो चुका हो और जिसमे पारस्परिक प्रेम, सम्मान, सन्तोष तथा सुख न रह गया हो सतही तौर पर खीचते रहन म कोई लाभ नही है। अपन विवाहित जीवनो को पूरी तरह नष्ट कर देने और उसके बाद भी केवल झूठी प्रतिष्ठा के विचार से या समाज की निन्दा के भय से साथ रहते जाने स तो अच्छा यह है कि जब उस सामाजिक अनुबन्ध से सन्तोष मिलना बन्द हो जाये तो साहस बटोरकर उसे भग कर दिया जाय और जब भी अवसर मिले इस प्रकार का दूसरा अनुबन्ध कर लिया जाय। वास्तव मे मैं दृढतापूर्वक यह अनुभव करती हूँ कि कोई एसा उपाय होना चाहिए, जिसे समाज की मान्यता प्राप्त हो, कि जब विवाह के बन्धन मे बधे हुए दोनो पक्ष यह अनुभव करने लगें कि उनका विवाह निभ नही रहा है तो उसी समय विवाह भग किया जा सके।'

इन प्रश्नो का उत्तर देते हुए कि क्या वह इस बात को उचित समझती है कि कोई व्यक्ति अपने पति या अपनी पत्नी के रहत हुए भी दूसरा विवाह कर ले और यह कि क्या यह वतमान विवाह पद्धति मे कोई दोष पाती है, उसने कहा कि उसे द्विविवाह प्रथा मे कोई आपत्ति नही है लेकिन यह पारस्परिक अनुमति से किया जाना चाहिए। वह इसमे कोई बुराई नही समझती थी कि कोई स्त्री अपने पति को या कोई पति अपनी पत्नी को इसकी अनुमति दे दे और सहर्ष इस पर सहमत हो जाये तो वह अपने लिए दूसरा जीवन-साथी चुन ले। उसने कहा "कुछ भी हो, विवाह का उद्देश्य मनुष्य के जीवन को अधिक सुखी, सन्तोषप्रद तथा परिपूर्ण बनाना ही तो होना है और यदि दोना म स कोई भी उस सम्बन्ध मे नीरसता अनुभव करन लगता है और वतमान सम्बन्ध मे जो शून्य उत्पन्न हो गया है उसे भरने के लिए दूसरे साथी की आवश्यकता अनुभव करता है तो उसे इस बात की छूट होनी चाहिए, लेकिन उसी दशा मे जब पहले वाला साथी इसके लिए सहमत हो।"

अन्त मे उसने कहा कि वह यह अनुभव करती है कि एक विवाही प्रथा के अन्तर्गत विवाह बहुत नीरस, प्रतिबन्धकारी और सकुचित हो सकते हैं क्योकि वे बहुत से लोगो के बजाय केवल दो या कुछ ही लोगो को तथाकथित विशेषाधिकार प्रदान करत है और यह मत व्यक्त किया कि 'सामूहिक विवाह' का प्रयोग करने मे कोई हर्ज नहीं है जो कई लोगो के प्रति प्रेम के सम्बन्धो को व्यापक बना सकता है और बढा सकता है। आगे चलकर उसन व्याख्या की कि 'सामूहिक विवाह' मे उनका क्या अभिप्राय है। उसने कहा कि बहुधा यह पुरुषो तथा स्त्रियो की बराबर बराबर सख्या पर आधारित है, समझ लीजिये छ या बारह जोडे, जिनमे से सबका विवाह सबके

साथ होता है और वे सब एक ही गृहस्थी बसाकर रहते हैं और पूरे समूह के जीवन में वित्तीय तथा शारीरिक योगदान करते हैं। उनमें से किसी एक का किसी दूसरे पर स्वामित्व नहीं होता, हर चीज में सबकी साझेदारी रहती है और उनमें कोई ईर्ष्या या स्वामित्व की भावना नहीं होती क्योंकि वे सभी अन्य सभी से प्रेम करते हैं। उसने कहा, सामूहिक विवाह में उस विवाह समूह के सदस्यों को दो या दो से अधिक विपम लिंगी व्यक्तियों के साथ रहने और प्रेम, सेक्स तथा अन्य प्रकार के बहुपक्षीय मानव सम्बन्ध रखने का अवसर मिलता है। इस प्रकार के जीवन में उन्हें एकविवाही पद्धति वाले विवाह के सीमित अनुभवों की अपेक्षा अनेक सन्तोषप्रद अनुभव प्राप्त हो सकते हैं। मैं समझती हूं कि जो पुरुष तथा स्त्रियां यह अनुभव करते हों कि वे एक ही समय में कई जीवन साथियों से गहरा प्रेम कर सकते हैं और सामूहिक विवाह में अधिक परिपूर्ण तथा अधिक सन्तोषप्रद जीवन बिता सकते हैं और उनमें उनके प्रति स्वामित्व अथवा ईर्ष्या की अनावश्यक भावना नहीं है, उनको इस प्रकार का 'सामूहिक विवाह' करने की समाज की ओर से स्वीकृति मिलनी चाहिए। इस प्रकार के विवाह में बच्चों को खेलने के लिए बहुत से समवयस्क साथी मिल सकेंगे और इसके साथ ही वे माता पिता की अधिकार सत्ता से भी मुक्त हो सकेंगे। इस प्रकार वे एक ही माता पिता के साथ बंधे रहने के बजाय अधिक व्यापक समूह के साथ अपनी रुचियां तथा भावनाएं बांट सकेंगे। मुझे मालूम नहीं कि व्यवहार में यह किस प्रकार क्रियान्वित होगा, लेकिन मैं समझती हूं कि इससे लोग कम स्वकेन्द्रित और स्वार्थी हो सकेंगे और उन्हें सभी चीजें मिल बांटकर प्रयोग करने की शिक्षा मिल सकेगी। इससे दिन प्रतिदिन एक ही व्यक्ति के साथ 'एक ही ढंग से रहते जाने की नीरसता भी कम होगी। कुछ भी हो मनुष्य सदा से इच्छाभोगी रहा है और उसे व्यवहार में एक विवाही पद्धति में जकड़कर रखना न तो सहज है और न सम्भव ही। और मैं महसूस करती हूं कि अपनी विभिन्न इच्छाओं तथा आवश्यकताओं की तुष्टि एक ऐसे सामूहिक विवाह में करना कहीं बेहतर है जिसमें छल कपट और धोखे से कुछ करने के बजाय समूह का हर सदस्य जानता हो कि क्या हो रहा है।'

उसने इस बात पर जोर दिया कि वर्तमान विवाह पद्धति में निश्चित रूप से कोई दोष है क्योंकि उसने कहा यदि ऐसा न होता तो इतना अधिक विवाहेतर सेक्स सम्भोग न होता जितना कि आजकल हमारे समाज में होता है।

**व्यक्ति अध्ययन संख्या 10**—वासना का विश्वास था कि विवाह इसलिए एक अत्यावश्यकता है कि स्त्री की यह मूल प्रवृत्ति होती है कि उसका अपना पति घर और बच्चे हों और वह चाहती है कि उसे शारीरिक सन्तोष मिले और उसकी अन्य आवश्यकताएं पूरी हों। उसने कहा "मेरी धारणा के अनुसार विवाह एक अनुबन्ध पर आधारित व्यापारिक सम्बन्ध होता है जिसमें कुछ लाभों का आदान प्रदान किया जाता है। उसने यह मत व्यक्त किया कि लड़की के लिए विवाह करने की सबसे उपयुक्त आयु 18 और 22 वर्ष के बीच होती है। वह पूरी तरह दूसरों के तय किये हुए विवाहों

की विरोधी थी, पर उसका यह भी कहना था कि यदि अभिभावक या अनुभवी सगे-सम्बन्धी कोई उपयुक्त वर ढूंढ़ें और लड़की को अपनी अनुमति देने से पहले उस व्यक्ति को अच्छी तरह जान लेने का अवसर दिया जाय तो यह बहुत उपयोगी हो सकता है। उसे दूसरी जाति, नस्ल या धर्म के व्यक्ति के साथ विवाह में कोई आपत्ति नहीं थी।

वह इसमें भी कोई हर्ज नहीं समझती थी कि पत्नी का अपने पति के अतिरिक्त दूसरे पुरुष के साथ गहरा लगाव हो, यदि वह किसी विशिष्ट आवश्यकता को पूरा करने के लिए हो—समान रुचियों या समान विचारों तथा हितों में साझेदारी से मानसिक सन्तोष प्राप्त करने के लिए—और इस बात के साथ कि शारीरिक प्रतिबन्धों का पालन किया जाये। उसका स्वयं एक लेखक से गहरा सम्बन्ध था जो उसे लिखने के लिए प्रेरणा तथा प्रोत्साहन देता था, उसकी प्रतिभा को स्वीकार करता था और उसकी रचनाओं की सराहना करता था। चूंकि उसके पति को साहित्य से कोई विशेष रुचि नहीं थी और वह उसकी प्रतिभा को समझ नहीं सकता था, इसलिए उसे अपनी सहज प्रतिभा की अभिव्यक्ति के लिए प्रेरणा प्राप्त करने की बहुत आवश्यकता थी, और वह लेखक उसकी कहानियां तथा लेख प्रकाशित कराने में उसकी सहायता करता था। वह उसके प्रति बहुत स्नेह रखती थी और उससे उसे बहुत गहरा लगाव था। वह इसमें कोई बुराई भी नहीं समझती थी।

वह इस बात को बहुत उचित नहीं समझती थी कि कोई पत्नी अपने पति को छोड़कर दूसरा विवाह कर ले क्योंकि वह अनुभव करती थी कि इस देश में लोग ऐसी स्त्री को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखते। फिर भी वह अनुभव करती थी कि यदि पति क्रूर हो, या उसमें असह्य दुर्गुण हों, या वह उसकी अधिकांश आवश्यकताओं को पूरा न कर सकता हो तो स्त्री को इसकी अनुमति होनी चाहिए कि वह अपने पति को छोड़कर दूसरा विवाह कर ले। उसका विश्वास था कि तलाक से असन्तोषप्रद विवाहों की संख्या कुछ हद तक अवश्य कम हो जाती है, क्योंकि वह अनुभव करती थी बहुत कम ही विवाह ऐसे होते हैं जो सन्तोषप्रद हों। उसका विश्वास था कि दूर के ढोल बहुत सुहावने होते हैं और जब आदमी स्वयं परिस्थितियों का सामना करता है तो असन्तोष और निराशा उत्पन्न होती है। उसका मत था कि पत्नी को केवल एक सीमा तक ही अपने को पति की रुचियों तथा इच्छाओं के अनुसार ढालने की कोशिश करनी चाहिए और पति को भी इसकी कोशिश करनी चाहिए अन्यथा उन्हें एक दूसरे के प्रति कोई दुर्भावना रखे बिना और एक दूसरे के जीवन में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप किये बिना अपने अपने ढंग से जीवन व्यतीत करना चाहिए। परन्तु वह हिन्दू कोड बिल की दृढ़ समर्थक थी और महसूस करती थी कि वह तलाक की अनुमति देता है जो ऐसे विवाहों से बाहर निकलने या पलायन का एक उपाय है जिनमें इतने अधिक तनाव तथा संघर्ष होते हैं कि उन्हें सहन करना असम्भव हो जाता है।

## व्यक्ति अध्ययन संख्या 45

शालिनी की आयु 33 वर्ष थी और वह एक अस्पताल में डाक्टर थी। उसने एम० एस० की परीक्षा पास की थी और उसे 900 रु० मासिक वेतन मिलता था। वह लगभग पिछले दस वर्ष से काम कर रही थी। वह देखने में काफी सुन्दर थी और उसका शरीर छरहरा तथा सुडौल था। वह सादे कपड़े पहनती थी और देखने में बहुत गम्भीर तथा परिपक्व लगती थी और उसके आचरण में शालीनता थी। वह प्रौढ़ और आधुनिक थी और यद्यपि उसका आचरण शान्त तथा उल्लासप्रिय था, उसके चेहरे पर किंचित निराशा और चिन्ता का भाव रहता था।

कुछ वर्ष पहले उसके पिता की मृत्यु हो गयी थी और जब वह जीवित थे तो उन्होंने अपने व्यापार में बहुत धन कमाया था, विशेष रूप से शालिनी के बचपन से लेकर उसके काम करना आरम्भ करने के चार वर्ष बाद तक। उसकी माँ भी एक धनी और सुशिक्षित परिवार से सम्बन्ध रखती थी और स्वयं एक स्नातक थी और समाज सेविका थी। शालिनी के दो भाई थे पर बहन कोई नहीं थी।

अपने माता पिता की सबसे बड़ी और इकलौती बेटी होने के नाते उसे उनका बहुत लाड़ प्यार मिला था। बचपन में वह बहुत स्वस्थ तथा सुन्दर थी और उसके सगे सम्बन्धी तथा मित्र उससे बहुत प्यार करते थे।

स्कूल और कालेज में अपने पूरे छात्र जीवन के दौरान वह पढ़ाई में काफी तेज रही थी। वह डाक्टर बनने के लिए उत्सुक थी और इसमें उसके माता पिता ने भी उसे प्रोत्साहन दिया। जिन दिनों वह कालेज में पढ़ती थी, वह काफी आकर्षक और चुस्त चालाक थी और लड़के तथा अध्यापक उसे बहुत पसन्द करते थे और वह अपने सहपाठियों तथा मित्रों के बीच बहुत लोकप्रिय थी।

घर पर वह हमेशा बहुत उदार वातावरण में रही थी और उसे अपने मित्रों के साथ, लड़कों और लड़कियों दोनों ही के साथ, घूमने फिरने की पूरी स्वतन्त्रता थी। जब वह कालेज में थी तो एक ऐसे आदमी से उसे बहुत गहरा लगाव पैदा हो गया जो दूसरी जाति और धर्म का था। उसके पास बहुत पैसा था और वह उन्मुक्त तथा स्वतन्त्र जीवन व्यतीत कर रहा था। उसके साथ शालिनी की बहुत मित्रता हो गयी और चूंकि उसके माता पिता रूढ़िवादी नहीं थे इसलिए उन्होंने अपनी बेटी को अवसर उसके साथ रहने की स्वतन्त्रता दे रखी थी। उसने बताया कि अपनी डाक्टरी की पढ़ाई पूरी कर लेने के बाद वह उससे विवाह करना चाहती थी, क्योंकि वह पढ़ा लिखा था और उसकी रुचियां बहुत परिष्कृत थीं, उसकी सामाजिक हैसियत अच्छी थी और वह उससे प्रेम करती थी। वह भी उस पर बहुत प्यार लुटाता था और बहुधा उसके साथ रहने की कोशिश करता था। लेकिन जब उसने अपनी पढ़ाई पूरी कर ली और उससे विवाह करने की इच्छा व्यक्त करने लगी तो उसने महसूस किया कि वह हमेशा विवाह की बात करने से कतराता था और धीरे धीरे वह उससे दूर खिंचता गया। शुरू में तो वह बहुत हताश हुई और उसने बहुत निराशा अनुभव

की लेकिन कुछ समय बाद उसने अपना ध्यान अपनी नौकरी और अस्पताल के काम में लगा लिया।

उसने आगे चलकर बताया कि उसने अस्पताल में साथ काम करनेवाली कुछ लड़कियों के प्रेम प्रसंग देखे थे। स्वयं उसकी भी मित्रता और घनिष्ठता एक डाक्टर के साथ हो गयी थी जो उसी अस्पताल में काम करता था और अपनी पहली पत्नी से तलाक ले चुका था, और बाद में एक सरकारी अफसर के साथ जो पहली बार एक रोगी के रूप में मिला था। यह वहाँ इलाज कराने आता था और उसकी नौकरी बहुत पक्की थी और वह एक अच्छे परिवार का था। उसने कहा कि ये दोनों ही लोग उसका बहुत ध्यान रखते थे, उसके साथ बहुत हार्दिकता का व्यवहार करते थे और उसके साथ रहने में उन्हें बहुत आनन्द मिलता था। उसे भी उनके साथ रहने में बहुत आनन्द मिलता था। और वह उनके स्वभाव और आदतों को बहुत पसन्द करती थी और उनकी बहुत सी रुचियाँ उसकी जैसी ही थीं। दोनों ही बहुत अच्छे किस्म के लोग थे और वह दोनों ही से खुलकर व्यवहार करती थी, क्योंकि वह काफी निस्संकोच तथा उन्मुक्त स्वभाव की थी। आगे चलकर उसने बताया, "वे दोनों बहुत अच्छे मित्र थे और उन्होंने मेरे लिए बहुत कुछ किया लेकिन जिस क्षण उनके प्रति मेरा लगाव बहुत बढ़ने लगा और मैं संवेगात्मक दृष्टि से उन पर निर्भर रहने लगी, तो वे मुझसे विवाह करने की जिम्मेदारी से कतराने लगे। उस समय मुझे इसका कारण समझ में नहीं आया। मेरे विचार बहुत उदार और पाश्चात्य ढंग के थे और मैं विवाह से पहले लम्बी कोर्टशिप में विश्वास रखती थी। मेरा यह भी विश्वास था कि स्त्रियों तथा पुरुषों को उन्मुक्त भाव से एक-दूसरे से मिलना चाहिए और मैं समझती थी कि केवल प्रेम विवाह ही सफल हो सकते हैं। लेकिन स्वयं मेरे अनुभवों और मेरी कुछ सहेलियों के अनुभवों ने मेरे विचारों को काफी हद तक बदल दिया है।"

इसके बाद उसने अपनी कुछ सहेलियों के विवाहों के अनुभवों का वर्णन किया। वे अपने भावी पतियों से केवल कुछ ही बार मिली थीं और अपने माता पिता की इच्छा के विरुद्ध उन्होंने पर्याप्त परिपक्वता प्राप्त करने और अपने काम पर अच्छी तरह जम जाने से पहले ही उतावलेपन में अपनी पसन्द के मर्दों के साथ विवाह कर लिया था। कुछ ही महीनों के विवाहित जीवन के बाद इन दम्पतियों की मुसीबतें आरम्भ हो गयीं, कुछ तो इसलिए कि उनके पास पैसे की कमी थी और इसलिए भी कि उन्होंने रोमांटिक प्रेम लीला से और प्रेम विवाह से आवश्यकता से अधिक ऊँची आशाएं लगा रखी थीं। न्यूनतम भौतिक सुख सुविधाएँ और संवेगात्मक सन्तोष पाकर ठोस व्यावहारिक ढंग से अपने जीवन साथियों के साथ दैनिक जीवन व्यतीत करने की वास्तविकता उनके रोमांटिक स्वप्नों तथा प्रत्याशाओं के कहीं निकट भी नहीं पहुँच पाती थी। उनके जीवन साथी वास्तव में उससे बिल्कुल भिन्न निकले। जैसे वे विवाह से पहले लगते थे और इन लड़कियों को इस बात का कुछ पछतावा था कि उन्होंने अपने जीवन
अच्छी तरह जाने बिना और अपने माता पिता तथा अभिभावकों की सलाह

मति लिये बिना जल्दबाजी में विवाह करने का निर्णय कर लिया था।

शालिनी ने अपनी स्कूल की एक सहेली का भी अनुभव बताया जिसका विवाह उसके माता पिता ने एक धनवान व्यापारी के साथ कर दिया था। वह अपने भावी पति से औपचारिक रूप में केवल एक बार मिली थी। बाद में पता चला कि उसके पति का स्वभाव उसकी रुचियां तथा अरुचियां स्वयं उसके स्वभाव तथा रुचियों और अरुचियों से सर्वथा भिन्न थी और वह इतना दकियानूसी और ईर्ष्यालु था कि उसने अपनी पत्नी का जीना दूभर कर दिया था।

कुछ समय बाद शालिनी के पिता ने उसके वर के रूप में एक अफसर को पसन्द किया। वह बहुत सुन्दर सुसंस्कृत और सुशिक्षित था और इसके अलावा बहुत अच्छे वेतन वाली नौकरी पर लगा हुआ था। वह दूसरे लोगों की उपस्थिति में औपचारिक रूप में एक दो बार उससे मिल लेने के बाद उसके साथ विवाह करने को भी तैयार था। लेकिन जब शालिनी ने विवाह करने से पहले उससे मिलने और उसे जान लेने की इच्छा प्रकट की तो वह सहमत तो हो गया पर उससे मिलने फिर कभी नहीं आया। बाद में उसकी कई ऐसे लोगों से भेंट हुई जो उसके साथ आनन्द लूटने को तो तैयार थे पर वे उसकी जैसी आधुनिक लड़की के साथ विवाह करने को तैयार नहीं थे जिसके विचार परिपक्व थे और जो अपना स्वतन्त्र विवेक रखती थी।

वह काफी निराश थी क्योंकि अपने प्रेम-जीवन में इन विफलताओं के अतिरिक्त उन्हीं दिनों उसके पिता की भी मृत्यु हो गयी थी। उसने अस्पताल में और अधिक काम करके उस उदासी को दूर करने का प्रयत्न किया। उसने कहा कि वह अपने आपको उपयोगी ढंग से व्यस्त रखने तथा आर्थिक दृष्टि से स्वावलम्बी रहने के लिए काम करती थी और साथ ही अपनी उपलब्धि तथा मान्यता की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भी। उसने कहा कि वह विवाह के बाद भी काम करना चाहेगी क्योंकि वह समझती थी कि घर के बाहर रोचक काम के बिना उसके जीवन में शून्यता रहेगी। इसके साथ ही उसने इस बात पर भी ज़ोर दिया कि वह विवाह को तिलांजलि देकर काम करना नहीं चाहेगी, क्योंकि उसका दृढ़ विश्वास था कि जीवन साथी के बिना जीवन अधूरा रहता है। उसने कहा कि विवाह पारस्परिक प्रेम तथा साहचर्य की ज़रूरत को पूरा करने के लिए आवश्यक होता है और इसलिए भी कि वह दोनों ही साथियों को और उनके परिवारों को कुछ लाभ प्रदान करता है, यद्यपि पहले उसका विश्वास था कि विवाह केवल विवाह सम्बन्ध के दोनों साझेदारों के हित के लिए होता है।

विवाह की संकल्पना के बारे में उसके सामने प्रस्तुत किये गये कथनों में अपनी सहमति व्यक्त करते हुए उसने कहा, 'यद्यपि पहले मैं सबसे अधिक सहमत इस कथन से थी कि विवाह एक सामाजिक अनुबन्ध होता है जो मुख्यतः किसी स्त्री तथा पुरुष की भलाई और उसके निजी सुख-सन्तोष के लिए किया जाता है' परन्तु अब मैं सबसे अधिक सहमत इस वक्तव्य से हूँ कि विवाह एक परम्परागत सामाजिक प्रथा है जिसका

पालन अपने सामाजिव दायित्वो को पूरा करने और व्यक्ति तथा परिवार के सुख सतोष के लिए किया जाता है।"

पहले जब उससे साक्षात्कार किया गया था तो उसने कहा था कि वह उसी व्यक्ति से विवाह करेगी जिसमे उसे प्रेम हो परन्तु दस वष बाद उसन कहा कि यह आवश्यक नहीं है कि वह उसी आदमी से विवाह करे जिसस वह प्रेम करती हो, इसके बजाय वह जिस आदमी से विवाह करेगी उसी स प्रेम करेगी। यद्यपि दस वप पहले वह सिविल विवाह म विश्वास रखती थी, परन्तु अब उसका विचार था कि वैदिक सस्कारो और कुछ पुरानी धार्मिक प्रथाओ के अनुसार वदिक विवाह प्रणाली उससे अच्छी है क्योंकि इसमे पुनीतता तथा पवित्रता की भावना होती है। फिर भी वह अनुभव करती थी कि परम्परागत विवाह समारोहो के समय उनकी लम्बी रीति-रस्मो को त्याग दिया जाना चाहिए जो वतमान प्रसग मे साथक नही रह गयी है।

अब वह यह विश्वास करन लगी थी कि 18 और 22 वष की आयु के बीच किसी समय लडकी का विवाह हो जाना चाहिए यद्यपि पहले उसका मत यह था कि लडकी के लिए विवाह करने की उचित आयु 22 और 28 वप के बीच होती है। उसने कहा कि अब उसका विश्वास यह था कि लडकी का विवाह जल्दी ही कर दिया जाना चाहिए जब वह इतनी अधिक व्यक्तिवादी और दृढ विचारोवाली न हो और अपने को विवाहित जीवन के अनुरूप अच्छी तरह ढाल सकती हो। कुछ वप पहले उसका मत था कि भावी जीवन-साथियो की उम्रो के अ तर का कोई महत्त्व नही है और यह कि पति अपनी पत्नी से बडा भी हो सकता है, उसके बराबर भी हो सकता है और उससे छोटा भी। अब उसका विचार था कि पति को अपनी पत्नी से 5 से 7 वप तक बडा होना चाहिए क्योंकि लडकी जल्दी प्रौढ हो जाती ह और यदि पति की आयु पत्नी की आयु से कम हुई तो वह उसकी तुलना मे अपरिपक्व रहेगा।

वह अब भी चाहती थी कि उसका भावी पति बुद्धि तथा शिक्षा मे उसस श्रेष्ठ-तर होने के अतिरिक्त किसी अच्छे वेतन वाले पद पर हो या कोई अच्छा धधा करता हो। विवाह को सफल बनाने म धन-दौलत के महत्त्व म वह निश्चित रूप से विश्वास रखती थी और वह इस बात म भी अनजान नही थी कि उसके पति के पास इतना काफी पैसा होना चाहिए कि वह रुपये पसे की किसी विघ्नकारी चिन्ता के बिना उन्मुक्त भाव स सुख सुविधा के साथ जीवन व्यतीत कर सके।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है दस वप पहले उसका विश्वास था कि प्रेम विवाह ही सबसे अच्छे ढग से विवाह होते है और यह कि लगभग बिल्कुल परीक्षण-विवाह की तरह विवाह से पहले कोटशिप की एक लम्बी अवधि होनी चाहिए, यद्यपि उसने 'परीक्षण विवाह की शब्दावली का प्रयोग नही किया था। परन्तु स्वय अपने कटु अनुभवो के आधार पर और अन्य लोगो के अनुभवो के आधार पर उसने कहा, उसन बहुत कुछ सीखा था और अपने मत बदल दिये थे। उसन कहा, 'मैंने यह देखा है कि आधुनिक, उन्नत तथा पाश्चात्य ढग के रहन सहन वाली स्त्री के प्रति पुरुषो का रवैया अस्थिर रहता

है। वे उसके साथ उठना बठना पसन्द करते है और इसकी इच्छा भी करते है और यदि वह तैयार हो तो उस मोटर की लम्बी सैर कराने, भोजन कराने और सिनेमा दिखाने के लिए भी उत्सुक रहते हैं और उसके साथ रहने म, उसस बातें करने म और उसके साथ घनिष्ठता बढाने म उन्हे आनन्द मिलता है। वे उसके आत्म-विश्वास उसके स्वतन्त्र स्वभाव, उसकी प्रखर बुद्धि की प्रशसा करते हैं उसके रुचिकर, सुसस्कृत तथा उन्मुक्त आचार व्यवहार की बहुत सराहना करते है और उसके साथ मित्रता बढाना उन्हे प्रिय है। परन्तु जब स्थायी रूप से उस अपना जीवन साथी बनाने और उसके साथ विवाह करने का प्रश्न उठता है तो वे हजार बार सोचते हैं और अधिकाश उदाहरणो मे उससे विवाह करने से कतराते हैं। विवाह के लिए व ऐसी लडकी चाहते है जो कम आधुनिक पुरुषो के साथ अपने व्यवहार म कम उन्मुक्त और भीरु हो और मोटे तौर पर परम्परागत ढग की, हालांकि इसके साथ ही व यह भी चाहते है कि वह खूब पढी लिखी हो और बहुत स लोग तो यह भी चाहते ह कि वह कोई काम भी करती हो। इसलिए लम्बी कोर्टशिप या परीक्षण विवाह की योजना चल नही पाती, क्योंकि लम्बी कोर्टशिप क बाद जब विवाह का सवाल आता है तो पुरुष किसी ऐसी लडकी के साथ विवाह करने म सकोच करते ह जो उनके साथ बहुत उन्मुक्त तथा घनिष्ठ रह चुकी हो।

दस वर्ष बाद वह यह महसूस करने लगी थी कि विवाह माता पिता को इस तरह तय करना चाहिए कि अपनी बेटी की आवश्यकताओ को समझकर व उसके लिए कोई उचित वर खोज लें और उसके साथ अपनी बेटी का परिचय करा दे। फिर दोनो को माता पिता की निगरानी म सीमित स्वतन्त्रता के साथ एक दूसरे को जान लेने का अवसर दिया जाना चाहिए और अन्त म यदि लडका और लडकी दोनो एक-दूसरे को पसन्द करें तो उनका विवाह कर दिया जाय। उस इसमे भी कोई आपत्ति नही थी कि लडकी अपने माता पिता के सामने अपने भावी वर का सुझाव रखे और उसके बारे म सारा ब्यौरा मालूम करने और उनकी हार्दिक अनुमति से उसके साथ विवाह करने का अन्तिम निर्णय लेने म उनकी सलाह तथा सहायता ले। लेकिन अपने स्वभाव को जानते हुए वह महसूस करती थी कि वह किसी ऐस आदमी के साथ विवाह कर ही नही सकती थी जिसे शुद्धत उसके माता पिता ने पसन्द किया हो जब तक वह उसे अच्छी तरह जान न ले और उसे पसन्द न करने लगे।

यद्यपि अलग अलग जातियो अथवा अलग अलग प्रान्तो के लोगो के एक दूसरे से विवाह कर लेने मे अब भी उसे कोई आपत्ति नही थी, परन्तु अलग-अलग नस्लो तथा अलग अलग धर्मों के लोगो क आपस म विवाह करने क पक्ष म अब वह नही रह गयी थी जिसका दस वर्ष पहले वह अनुमोदन करती थी। उसने हिन्दू कोड बिल का हार्दिक अनुमोदन किया और कहा कि यदि पति क्रूर हो या दुश्चरित्र हो या उसके साथ तिरस्कार का व्यवहार करता हो और उसके साथ पत्नी का निबाह न होता हो तो पत्नी को अपने पति को छोडकर तलाक ले लेने का अधिकार होना चाहिए।

लेकिन इसके साथ ही वह यह भी महसूस करती थी कि तलाक अन्तिम उपाय के रूप म केवल उस समय लिया जाना चाहिए जब एक दूसरे के साथ निवाह करन के उनके सारे प्रयत्न विफल हो चुके हा ।

किसी दूसर पुरुष के साथ पत्नी के लगाव की समस्या क बारे म उसने कहा, "म हमेशा से इसके पक्ष मे थी क्योकि स्त्री उन रुचिया तथा आवश्यकताओ के अतिरिक्त भी जिन्ह उसका पति पूरा कर सकता है विभिन्न दूसरी रुचियो तथा आवश्यकताओ को पूरा करने की जरूरत महसूस करती है, लेकिन इसके लिए शत यह है कि दोनो परिपक्व हा । फिर भी, अब मैं यह महसूस करती हूँ कि इससे दोनो के बीच एक खाई पैदा हो जायेगी और हा सकता है कि व एक दूसरे से दूर होते जायें । इसलिए अब मैं इसके बहुत अधिक पक्ष मे नही हू, लेकिन मैं इसमे कोई हज नही समझती ।'

इस प्रश्न के उत्तर म कि आज मध्यमवर्गीय हिन्दू समाज म विवाह की जो पद्धति प्रचलित है उसम कोई खराबी है, उसन कहा कि बहुत छोटी अवस्था मे शुद्धत दूसरा के तय किये हुए विवाह की पद्धति गलत है, दहज की प्रथा बहुत अनुचित है और लडके के माता पिता के सामने लडकी क माता पिता का भीगी बिल्ली बने रहना और लडके के रिश्तदारो का जीवन भर रोब जमाना बहुत अवाछनीय है ।

अन्त मे एक विवाह पद्धति के बारे म चचा करत हुए उसने कहा कि वह इस बात को उचित नही समझती कि जब तक किसी पुरुष अथवा स्त्री का जीवन-साथी जीवित हो और उसके साथ रहता हो तब तक वह दूसरा विवाह करे । उसने कहा, "कुछ वष पहले तक मैं सोचती थी कि जीवन भर एक ही आदमी क साथ रहना बहुत नीरस होता होगा और किसी प्रकार का सामूहिक विवाह उसस बेहतर होगा जिसमे विविधता और परिवतन तो होगा ही, उसके साथ ही वध घनिष्ठ सम्बन्धो का वत्त भी अधिक बडा होगा । परन्तु अब मैं महसूस करती हूँ कि जब अपनी पसन्द का एक ही आदमी मिलना इतना कठिन है जिसके साथ कोई विवाह करना चाहे और अपना जीवन तथा रुचियां मिल बाटकर रहना चाह, तो ऐसे पुरुषो तथा स्त्रियो का एक पूरा समूह जुटा पाना कितना अधिक कठिन और जटिल होगा जो घनिष्ठ तथा सामुदायिक जीवन मे समूह के सभी सदस्यो के साथ प्रेम कर सकें और मिल जुलकर रह सकें । अब म यह समझती हूँ कि एक विवाही पद्धति ही सबसे अच्छी है ।'

शालिनी ने स्वीकार किया कि यद्यपि वह अपने जीवन से सुखी थी पर कोई चीज ऐसी थी जो उस उसका पूरा सुख नही मिलने देती थी । उसे बीती हुई बातो की कोई शिकायत नहीं थी, फिर भी अपने अनिश्चित भविष्य के बारे मे वह निराश और चिन्तित रहती थी । उसे यह आशका रहती थी कि उस कभी अपनी पसन्द का जीवन-साथी मिल भी पायेगा या नही और उसका विवाहित जीवन सुचारु रूप से चल सकेगा या नही । उसने कहा कि यद्यपि उसे सारी भौतिक सुख सुविधाएँ प्राप्त थी, बहुत सन्तोषप्रद नौकरी थी, अपने सहकर्मियो के बीच वह लोकप्रिय थी, और कुछ अच्छे

मित्र भी थे, फिर भी वह बहुधा बहुत उदास रहती थी और अकेलापन अनुभव करती थी और हमेशा एक प्रेम करनेवाले जीवन साथी और एक आरामदेह तथा सखी विवाहित जीवन के लिए लालायित रहती थी।

वह अनुभव करती थी कि यदि किसी विवाहित लडकी के पास और सब कुछ भी हो तब भी एक प्रिय पति, एक सुखद घर और प्यार करनेवाले बच्चा के बिना उसका जीवन अधूरा ही रहता है। उसने कहा कि उसके जीवन की आकाक्षा केवल नौकरी ही नही, वह कितनी ही आकर्षक क्या न हो, बल्कि विवाह है। उस अपनी नौकरी के सम्बन्ध मे कोई विशेष महत्त्वाकाक्षा नही थी, बल्कि वास्तव मे वह अपनी पसन्द का कोई एसा आदमी पाने की इच्छा रखती थी जो उसके साथ सुखी विवाहित जीवन व्यतीत कर सके। उसने कहा कि वह विवाह करने का इसलिए भी बहुत उत्सुक थी कि वह सारे दायित्व अकेले ढाते-ढोते उकता गयी थी और वह चाहती थी कि उस उनसे छुटकारा मिल जाये और विवाह के बाद वह पूरी तरह अपने पति पर निर्भर रहना चाहती थी। उसने यह माना कि वह बचपन से ही बहुत जिद्दी, नखरीली और सबकी आलोचना करनेवाली रही थी। बचपन म उसके माता पिता न बहुत लाड-प्यार करके तथा उस बहुत स्वतन्त्रता दकर और बाद मे उसकी नौकरी न उसे बहुत व्यक्तिवादी, स्वतन्त्रताप्रेमी, निर्भीक और स्वच्छन्द बना दिया था। उसने कहा कि वह महसूस करती थी कि शायद कुछ हद तक अपनी इन्ही लाक्षणिक विशेषताओ और जीवन पद्धति के कारण उसे अपनी जीवन-साथी के रूप मे अपनी पसन्द का कोइ आदमी नही मिल सका था।

## अभिमत

विवाह की प्रथा के विभिन्न पहलुओ के बारे मे पूछे गये अनेक प्रश्नो के उत्तर म कुछ चुनी हुई हिन्दू शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो के प्रत्युत्तरो का विश्लेषण करने पर कुछ मोटी मोटी आधार-सामग्री सामने आती है। इस आधार सामग्री से विवाह के बारे मे इन स्त्रियो की, जिनम विवाहित तथा अविवाहित दोना ही प्रकार की स्त्रियाँ सम्मिलित हैं, बदलती हुई अभिवृत्तियो पर प्रकाश पडता है और उनकी अभिवृत्ति ने इस परिवर्तन म स्त्रियो की पूरी हैसियत और उनके पूरे दृष्टिकोण म परिवर्तन आ गया है।

यहा पर मुख्यत उस आधार-सामग्री का विवेचन किया जायगा जो लेखिका ने दो अलग अलग समया पर एकत्रित की है, और अन्य तुलनात्मक आधार सामग्री केवल उन समस्याओ के बार म दी जायगी जिनके बार म दूसरे अध्ययन किय गय हैं। इस प्रकार की अन्य आधार-सामग्री सम्भवत सार्थक तुलना प्रस्तुत न कर सके क्योंकि जहाँ तक लेखिका की जानकारी है, भारत म शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया की अभिवृत्तियो के बारे म कोई विस्तृत अध्ययन नहो किया गया है और इसलिए तुलना के लिए शिक्षित मध्यमवर्गीय स्त्रियो की अभिवृत्तियो के अध्ययना की आधार-सामग्री ही ली गयी है। फिर भी इन

अध्ययनों का उल्लेख इसलिए किया गया है कि वे उन प्रवृत्तियो को प्रस्तुत करते हैं जो उस समय प्रचलित थी जब ये अध्ययन किये गये थे।

## विवाह की सकल्पना

विवाह की सकल्पना उस एक दशाब्दी के अन्दर ही बदल गयी है, जिस अन्तराल के बाद लेखिका ने शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो की अभिवृत्तियो का अध्ययन किया था। यह देखा गया कि उन श्रमजीवी स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात जो इस सकल्पना मे विश्वास करती थी कि विवाह एक ऐसा पवित्र सस्कार है जो मुख्यत किसी व्यक्ति-विशेष के कर्तव्य को पूरा करने के लिए और परिवार की भलाई तथा कल्याण के लिए सम्पन्न कराया जाना है, 25 से घटकर 9 प्रतिशत रह गया था। उन स्त्रियो की सख्या जो यह विश्वास करती थी कि विवाह एक ऐसा सामाजिक अनुबन्ध होता है जो मुख्यत किसी स्त्री अथवा पुरुष की भलाई के लिए और उसके निजी सुख सन्तोष के लिए किया जाता है दस वर्षों मे 49 से बढकर 60 प्रतिशत हो गयी थी। उन स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात जो यह विश्वास करती थी कि विवाह एक ऐसी परम्परागत सामाजिक प्रथा है जिनका पालन किसी व्यक्ति विशेष के सामाजिक कर्तव्य को पूरा करने के लिए और उसके तथा उसके परिवार के सुख सन्तोष के लिए किया जाता है लगभग स्थिर रहा— 35 से गिरकर वह 31 प्रतिशत रह गया। इन तथ्यो का और दो विभिन्न समयो पर श्रमजीवी स्त्रियो के उन विभिन्न वक्तव्यो तथा कथनो का विश्लेषण करने पर, जो उनके व्यक्तिगत अध्ययनो मे दिये गये हैं, हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि उनकी अभिवृत्ति मे परिवर्तन विवाह को केवल एक सस्कार की अपेक्षा दो साझेदारो के बीच किया गया सामाजिक अनुबन्ध अधिक मानने की दिशा मे हुआ है। अब उसे एक धार्मिक बन्धन कम समझा जाता है और एक सामाजिक बन्धन अधिक।

मर्चेन्ट के अध्ययन मे (1935) जो उन्होने 1930-1933 की अवधि मे विवाह तथा परिवार के बारे मे बदलते हुए दृष्टिकोणो के सम्बन्ध मे तरुण बालको [illegible] बालिकाओ तथा अधेड उम्र के लोगो को आधार बनाकर किया था, इस बात [illegible] स्पष्ट सकेत मिलता है कि उस समय भी तरुण लडकियो मे विवाह को [illegible] सस्कार समझने की सकल्पना के स्थान पर "विवाह की वैयक्तिक [illegible]" [illegible] पकडती जा रही थी। बम्बई नगर की शिक्षित स्त्रियो के बारे मे [illegible] (1930) और हिन्दू समाज की पढी लिखी स्त्रियो के बारे मे उनके [illegible] और इसके साथ ही 'आधुनिक गुजराती जीवन मे स्त्रियाँ' के [illegible] (1945) से भी यही पता चलता है कि हिन्दू समाज का [illegible] रिक विवाह कमजोर होता जा रहा है और अनुबन्धात्मक [illegible] होती जा रही है।

जिस समय प्रस्तुत पुस्तक की लेखिका ने [illegible]

किया था (1969) लगभग उसी समय गुजरात के तीन बडे नगरो मे विवाह तथा वैवाहिक सम्बन्धो के प्रति ऊँची जातिवाले हिन्दू दम्पत्तियो की अभिवृत्तिया के बारे म किये गये एक अध्ययन (बारोत, 1971) पर आधारित निष्कर्षों से एक बिल्कुल ही दूसरा चित्र उभरकर सामने आता है। उनसे सकेत मिलता है कि अधिकाश—85 प्रतिशत—स्त्रियाँ अब भी विवाह को एक पुनीत तथा सामाजिक बन्धन मानती हैं और यह अनुभव करती हैं कि इस बन्धन को किसी भी दशा मे भग नही किया जाना चाहिए और केवल 27 प्रतिशत स्त्रियो का यह मत था कि विवाह शुद्धत वैयक्तिक सतोष के लिए होता है और जब भी वह असुविधाजनक हो जाये तो उसे भग किया जा सकता है। इसके अनुसार अनुबन्धमूलक विवाह और निजी सुख की कसौटी का प्रचलन अभी आरम्भ ही हुआ है और अभी तक बहुत थोडी स्त्रिया ही इसे स्वीकार करती हैं (देखिये, बारोत, 1971)। इन दो अध्ययनो के निष्कर्षों मे जो विशाल अन्तर है उसका कारण यह हो सकता है कि जिन दो स्थानो के निवासियो का अध्ययन किया गया था और इन दो नमूनो मे जिन वर्गों के लोगो को लिया गया था और व जिन राज्यो के रहनेवाले थे उनकी लाक्षणिक विशेषताओं में भी बहुत अन्तर था। इसके अलावा यह कारण तो है ही कि इन अध्ययनो मे नमूनो को निर्धारित करने की जो प्रणालिया और आधार सामग्री एकत्रित करने तथा उसका विश्लेषण करने की जो पद्धतियाँ अपनायी गयी थी वे भी भिन्न थी।

विवाह की सकल्पना के साथ विवाह की आवश्यकता से सम्बन्धित विचारो का भी घनिष्ठ सम्बन्ध है और इन विचारो से विवाह की सकल्पना के प्रति बदलती हुई अभिवृत्तियो पर और प्रकाश पडता है।

## विवाह की आवश्यकता

प्राचीन भारत म विवाह को पुरुषो तथा स्त्रियो के जीवन के ध्येय की सम्पूर्ण पूर्ति के लिए आवश्यक समझा जाता था, और यह माना जाता था कि इसके बिना वे 'मोक्ष' नही प्राप्त कर सकते। बाद मे चलकर परम्परा तथा सस्कृति के कारण और सबसे बढकर पुरुष पर स्त्री की पूर्ण आर्थिक निर्भरता के कारण इसे आवश्यक समझा जाने लगा। सभी स्त्रिया सच्चे साहचर्य की या विवाहित जीवन बिताने की इच्छा के कारण नही बल्कि आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर विवाह करती थी चाहे उनके साथ दासियो जैसा व्यवहार ही क्यो न किया जाये। शिक्षा के प्रसार और अपनी नवअर्जित स्वतन्त्रता के कारण शिक्षित स्त्रिया यह अनुभव करने लगी कि विवाह कोई आवश्यकता नही है। उन्हे जो मुसीबतें झेलनी पडी थी उनकी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उन्हे विवाह के विचार से ही डर हो गया क्योंकि वे अनुभव करने लगी कि जब वे स्वय अपनी जीविका कमा सकती है और अपने निर्वाह की व्यवस्था स्वय कर सकती हैं तो व पुरुष के अधीन क्यो रहे। यह अभिवृत्ति लगभग तीन या चार दशाब्दी पहले व्यापक रूप से प्रचलित थी जैसा कि उस समय किये गये कुछ

अध्ययनों से पता चलता है। लगभग चार दशाब्दी पहले हट न जो अध्ययन किया था (1930) उससे पता चलता है कि अविवाहित लडकियों में से 50 प्रतिशत ने अविवाहित रहने की ही इच्छा प्रकट की, जबकि 1946 में उन्हीं के अध्ययन से यह पता चला कि केवल 13 प्रतिशत स्त्रियाँ ही ऐसी थी जो विवाह नहीं करना चाहती थी। यह बात ही कि वे अविवाहित जीवन व्यतीत करने की बात सोच भी सकती थी उनके आत्मगत तथा वस्तुगत परिवेश में परिवर्तन की सूचक है।

परन्तु शीघ्र ही उन्होंने अनुभव किया कि केवल आर्थिक आवश्यकता ही नहीं बल्कि अन्य कई भावात्मक तथा जैविक आवश्यकताएँ भी ऐसी होती है जो विवाह को इतना आवश्यक बना देती हैं। धीरे-धीरे उनकी मानसिक समझ बूझ और परिवेश में परिवर्तन के साथ साथ उनकी यह अभिवृद्धि भी बदलती गयी और अब अधिकाधिक संख्या में स्त्रियाँ यह विश्वास करती जा रही हैं कि विवाह एक आवश्यकता है। इस नेशिका ने जो अध्ययन किया है उससे इस समस्या के प्रति उनकी अभिवृत्ति में होनेवाले परिवर्तन का संकेत इस बात में मिलता है कि ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत-अनुपात जिन्होंने बताया कि वे विवाह को एक आवश्यकता समझती हैं और यह कि वे अविवाहित नहीं रहना चाहती 75 से बढ़कर 93 हो गया था। इस प्रश्न के उत्तर में कि वे विवाह क्यों नहीं करती, या अब तक उन्होंने विवाह क्यों नहीं किया, यह उत्तर देनेवाली स्त्रियों की संख्या कि वे 'अविवाहित और स्वतन्त्र रहना चाहती हैं' दस वर्ष के दौरान काफी कम हो गयी थी और यह उत्तर देनेवाली स्त्रियों की संख्या कि उन्हें 'अपनी पसन्द का कोई उचित वर नहीं मिल पाया' दस वर्ष बाद काफी बढ़ गयी थी।

विवाह करने की इच्छा और यह इच्छा कि अपना घर और अपना पति हो, बहुत प्रबल थी और विवाह के समय उनकी आयु कुछ भी रही हो पर इस इच्छा में बहुत अधिक अन्तर नहीं था और दस वर्ष पहले भी यह इच्छा इतनी ही प्रबल पायी गयी थी। परन्तु खुलकर स्पष्ट शब्दों में इस इच्छा को व्यक्त करने के मामले में उनकी अभिवृत्ति में एक निश्चित परिवर्तन देखा गया। दस वर्ष पहले ऐसी अविवाहित स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात अधिक था जो यह स्वीकार करने में संकोच अनुभव करती थीं कि वे इस प्रश्न का उत्तर देने में भी बहुत झिझक और संकोच अनुभव करती थी, जबकि दस वर्ष बाद अपेक्षाकृत अधिक संख्या में लडकियाँ हो कम संकोच के साथ और अधिक खुलकर यह इच्छा व्यक्त करने लगी थी कि वे विवाह करना चाहती हैं और बच्चे पैदा करना चाहती हैं यद्यपि कम आयु वाले वर्ग की अपेक्षा अधिक आयुवाले वर्गों की अविवाहित स्त्रियों में यह इच्छा कुछ अधिक प्रबल पायी गयी।

देसाई के अध्ययन (1945) से पता चलता है कि उस समय भी जो 'जीवन-वृत्ति' लडकियों में सबसे अधिक मानी थी वह विवाह ही थी, क्योंकि उन्होंने जिन व्यक्तियों का अध्ययन किया था उनमें से 60 प्रतिशत इसी के पक्ष में

थी। यह बात अब और भी अधिक सत्य है जैसा कि इस अध्ययन के उत्तरदाताओं के उत्तरों से पता चलता है। इस प्रश्न के उत्तर में कि क्या उनके जीवन का अंतिम लक्ष्य विवाह था, बाद वाले समूह की अधिकांश औरतों ने—93 प्रतिशत ने—'हां' में उत्तर दिया और इसकी तुलना में पहलेवाले समूह की 75 प्रतिशत स्त्रियों ने ही दस वर्ष पहले ऐसा उत्तर दिया था। इसका संकेत इस बात में भी मिलता है कि दस वर्ष पहले इन स्त्रियों में से 20 प्रतिशत ने यह कहा था कि वे 'विवाह के बिना नौकरी' करना अधिक पसन्द करेंगी, लेकिन दस वर्ष बाद ऐसा कहनेवाली स्त्रियों की संख्या केवल 5 प्रतिशत थी। दिल्ली विश्वविद्यालय की ओर से आयोजित एक सर्वेक्षण में भी लड़कियों के बहुत बड़े बहुमत ने यही कहा कि ग्रेजुएट बनने के बाद वे सबसे पहली प्राथमिकता नौकरी के बजाय विवाह को देंगी। फ्रांसीसी स्त्रियों के मतों के अध्ययन के निष्कर्षों से भी यही संकेत मिलता है

> अधिकांश स्त्रियों के लिए विवाह एक स्वाभाविक लक्ष्य है जिसे प्राप्त करने का उन्हें प्रयास करना चाहिए। नारी की नियति की यह परम्परागत संकल्पना अब भी व्यापक रूप में स्वीकार की जाती है और अब भी उसका सामाजिक महत्त्व है नारी बनी ही विवाह के लिए है, उसके बिना वास्तव में उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है, उसका व्यक्तित्व, उसकी जीवनवृत्ति उसके आदर्श—सभी उसकी स्थिति में इस परिवर्तन के सामने गौण महत्त्व रखते हैं जिससे उसकी आत्म सिद्धि के मुख्य चरण का सूत्रपात होता है।
>
> इस परम्परागत दृष्टिकोण को समाज के सभी वर्गों में स्वीकार किया जाता है। इसके बारे में अधिकांश शंकाएँ छात्रों और बुद्धिजीवियों के बीच उठायी जाती हैं। (रेमी तथा वुग, 1964, पृष्ठ 139)

ब्रिटेन में 22 से 29 वर्ष तक की आयु के नवयुवकों तथा नवयुवतियों के बारे में किये गये एक अध्ययन में यह पता चला कि 78 प्रतिशत लड़कियाँ अपनी किशोरावस्था में ही विवाह के बारे में सोचने लगी थीं। इससे "इस बात की पुष्टि होती है कि उच्चतर शिक्षा तथा जीविका कमाने के अवसरों में वृद्धि के बावजूद लड़कियों का मुख्य उद्देश्य अब भी विवाह ही है" (चाटहम, 1970, पृष्ठ 77)।

फिर भी, लेखिका ने भारत में जिन शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियों का अध्ययन किया है उनमें यह बात पायी गयी कि विवाह उनका एकमात्र उद्देश्य नहीं है। इसका प्रमाण इस बात में मिलता है कि इस प्रकार की अधिकाधिक स्त्रियाँ इसके साथ ही नौकरी करने की भी इच्छा प्रकट करती हैं और इस बात में कि उनकी रुचियाँ बहुमुखी होती हैं। इस बात से इसकी और भी पुष्टि होती है कि एक ही दशाब्दी के अन्दर ऐसी स्त्रियों की संख्या जो विवाह के साथ ही नौकरी भी करना चाहती थीं 35 प्रतिशत से बढ़कर 65 प्रतिशत तक पहुंच गयी थी, जबकि उन स्त्रियों की संख्या जो नौकरी की अपेक्षा विवाह को प्रमुखता देती थीं 45 प्रतिशत से

घटकर 30 प्रतिशत रह गयी थी। उनमे से अधिकाश इस परम्परागत मध्यमवर्गीय विचार को स्वीकार नही करती कि स्त्री के लिए एकमात्र जीवन-वृत्ति उसका विवाहित जीवन है। फिर भी दस वर्ष बाद ऐसी स्त्रियो का प्रतिशत-अनुपात निश्चित रूप से बहुत अधिक था जो विवाह और पारिवारिक जीवन को नौकरी या जीविकोपार्जन की तुलना मे प्राथमिकता देती थी।

उनकी अभिवृत्ति मे परिवर्तन का संकेत इस बात मे भी मिलता है कि दस वर्ष पहले उन स्त्रियो मे जो पति के अतिरिक्त किसी दूसरे पुरुष से स्त्री के गहरे लगाव मे कोई आपत्ति नही समझती थी सबसे अधिक प्रतिशत संख्या ऐसी स्त्रियो की थी जो इसका अनुमोदन केवल उस परिस्थिति मे करती थी जब पति अपनी पत्नी की सर्वथा उपेक्षा करता हो या उसके प्रति कोई स्नेह न रखता हो और उसका ध्यान न रखता हो या उसके साथ दुर्व्यवहार करता हो, जबकि दस वर्ष बाद ऐसी स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात अधिक था जो इस लगाव को उस स्थिति मे भी उचित समझती थी जब यह केवल समान रुचियो पर ही आधारित हो और उसका उद्देश्य उनकी विविध तथा बहुमुखी आवश्यकताओ को तुष्ट करना ही हो। अपनी विभिन्न तथा विशिष्ट आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए विवाहेतर लगाव को आपत्तिजनक न मानने की दिशा मे बढती हुई प्रवृत्ति विवाह के उस परम्परागत दृष्टिकोण मे परिवर्तन की सूचक है, जिसके अनुसार विवाह के बारे मे यह माना जाता था कि वह उनकी सभी आवश्यकताओ को पूरा करता है और इसलिए प्रेरणा, प्रोत्साहन तथा वैयक्तिक सन्तोष के अन्य स्रोत खोजना न केवल निरर्थक बल्कि अत्यन्त अवाछनीय भी है।

विवाह ही एकमात्र वह चीज नही है जिसकी उन्हे सुखी रहने के लिए सबसे अधिक आवश्यकता हो, इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि यद्यपि दोनो ही समूहो की अधिकाश—75 प्रतिशत और 93 प्रतिशत—स्त्रियो ने कहा कि सुखी जीवन के लिए सबसे अधिक आवश्यकता एक सम्पन्न पति, गृहस्थी और बच्चो की होती है, लेकिन दस वर्ष बाद इनमे से ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात कही अधिक था जिन्होने सुखी जीवन के लिए अत्यावश्यक तत्वों मे "पति, गृहस्थी, और बच्चो" के अतिरिक्त "भौतिक सुख सुविधा", "अच्छा स्वास्थ्य", "यौवनमयता" और "वैयक्तिक प्रामाणिक हैसियत" का भी उल्लेख किया।

विवाह उनके लिए जीवन का एकमात्र उद्देश्य और सुख तथा सन्तोष का एकमात्र स्रोत नही है, इसका संकेत इस बात मे भी मिलता है कि ऐसी स्त्रियो की संख्या जो यह विश्वास करती थी कि विवाह अत्यधिक सुख प्रदान करता है और वे भी जो विवाह से बहुत अधिक सुख की आशा रखती थी, दस वर्ष के अन्दर ही 55 प्रतिशत से घट कर 25 प्रतिशत रह गयी, हालाकि उनकी संख्या मे यह कमी उनकी आयु मे वृद्धि के अनुपात मे ही हुई थी। इससे यह संकेत मिलता है कि एक ही दशाब्दी के अन्दर ही उनके स्वयं मे जो परिवर्तन हुआ है वह सुखद कल्पनाओं,

ओर कम झुकने की दिशा में हुआ है और कम से कम सिद्धान्त रूप में तो अब विवाह के प्रति उनमें से अधिकांश का रवैया पहले की अपेक्षा अधिक यथार्थनिष्ठ है। चेस्सर के अध्ययन में भी अविवाहित अंग्रेज स्त्रियों के बहुमत के सम्बन्ध में ऐसे ही निष्कर्षों का संकेत मिलता है जो विवाह के प्रति, कम से कम सिद्धान्त रूप में यथार्थनिष्ठ रवैया रखती थी (चेस्सर, 1969 पृष्ठ 139)।

इन सब बातों से यही पता चलता है कि अधिकाधिक संख्या में ये श्रमजीवी स्त्रियां यह विश्वास करने लगी हैं कि विवाह सुख तथा संतोष का एकमात्र स्रोत नहीं है और यह कि उन्हें इसके अतिरिक्त और चीजों की भी आवश्यकता है। हट के अध्ययनों में (1930 1936) यह निष्कर्ष निकाला गया है कि शिक्षित स्त्रियाँ अब विवाह और परिवार को "वैयक्तिक स्वतंत्रता के साथ सर्वथा असम्भव' नहीं मानती। प्रस्तुत अध्ययन से इस बात की पुष्टि होती है कि यह बात अपनी जीविका कमानेवाली युवा शिक्षित स्त्रियों के बारे में और भी सत्य है। वे विवाह को अधिक आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण समझती हैं। हुआ केवल यह है कि विवाह के बारे में उनकी संकल्पना और उसके प्रति उनकी अभिवृत्तियां बदल गयी हैं।

## विवाह के लिए उत्प्रेरणा

विवाह क्यों आवश्यक है और वे विवाह करना क्यों चाहती है या चाहती थी—ये अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न हैं जिनके उत्तरों से विवाह के बारे में उनकी संकल्पना में होनेवाले परिवर्तन का पता चलता है। लोग अपने मन में विभिन्न लक्ष्य और उद्देश्य लेकर विवाह-बन्धन में बँधते हैं। जैसा कि रसेल ने कहा है, "लोग या तो केवल सेक्स के लिए एक दूसरे के साथ हो सकते हैं जैसा कि वेश्यावृत्ति में होता है, या ऐसे साहचर्य के लिए जिसमें सेक्स का भी तत्त्व हो, जैसा कि जज लिंडसे के साहचर्य विवाह में हुआ था या अन्ततः वंश वृद्धि के उद्देश्य से साथ हो सकते हैं (रसेल, 1959, पृष्ठ 113)। लोग भौतिक कारणों से, सुरक्षा की भावना पैदा करने के लिए, अपनी सेक्स अभिव्यक्ति को सामाजिक अनुमोदन प्रदान करने के लिए या होनेवाली संतान को वैध रूप देने के लिए विवाह कर सकते हैं। वे आपस में इसलिए भी विवाह कर सकते हैं कि वे अकेले हैं और किसी का साथ चाहते हैं, या इसलिए कि वे माता पिता के हस्तक्षेप से मुक्त होकर स्वतंत्रता प्राप्त करना चाहते हैं (चेस्सर, 1969 पृष्ठ 186)। इस शोध-कार्य के दौरान एक रोचक बात यह देखने को मिली कि शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियां जिन लक्ष्यों तथा उद्देश्यों से विवाह करती हैं उनमें क्या परिवर्तन हुए हैं।

अभी कुछ ही वर्ष पहले तक, उन स्थितियों में भी जब शिक्षित स्त्री के लिए विवाह करना आर्थिक दृष्टि से आवश्यक नहीं भी होता था, तब भी वह अपनी परम्पराओं तथा संस्कृति को निभाने के लिए या आर्थिक तथा सामाजिक सुरक्षा के लिए इसे आवश्यक समझती थी। इस अध्ययन के दौरान यह देखा गया कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के पहले समूह में इस प्रश्न के उत्तर में कि विवाह एक आवश्यकता क्यों है सबसे

अधिक बार जो बातें कही गयी वे थी, "सामाजिक सुरक्षा के लिए" "शारीरिक सुरक्षा के लिए", "पति, गृहस्थी और बच्चो की होकर रहने की आवश्यकता के कारण', 'सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए और परम्परा तथा संस्कृति को निभाने के लिए", "अपना पवित्र तथा सामाजिक कर्त्तव्य पूरा करने के लिए', और "पारस्परिक प्रेम के वश'। दस वर्ष बाद सबसे अधिक बार जो कारण बताये गये वे थे "पारस्परिक साहचर्य", "भौतिक सुख सुविधाएँ' "संवेगात्मक तथा शारीरिक आवश्यकताओं की संतुष्टि', 'अकेले रहने की असुविधाओं की तुलना मे अधिक वैयक्तिक लाभ", "वैयक्तिक सुविधा", और अपना पति, गहस्थी, और बच्चे पाने के लिए।"

पहले वाले समूह की स्त्रियो की तुलना मे बाद वाले समूह की स्त्रियो ने एक आवश्यकता के रूप मे जीवन-साथी की "होकर रहने' की अपेक्षा उसे "पाने" पर अधिक जोर दिया। इसका कारण यह हो सकता है कि किसी की "होकर रहने" मे पत्नी को अपना पूरा व्यक्तित्व पति के व्यक्तित्व मे विलीन कर देना पडता है, जबकि उसे 'पा लेने" म उसके व्यक्तित्व और उसकी रुचियो मे कोई विघ्न नही पडता। इस अभिवृत्ति का प्रचलन कि विवाह निजी लाभ के लिए किया जाता है अब पहले की अपेक्षा अधिक है। इसका सकेत इस बात म भी मिलता है कि इस प्रश्न के उत्तर मे कि विवाह तय करते समय परिवारो के हितो को अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए या विवाह-सूत्र मे बँधने वाले युवक युवती के हितो को, बाद वाले समूह की 80 प्रतिशत स्त्रियो ने और पहले वाले समूह की 63 प्रतिशत स्त्रियो ने यह कहा कि युवा-दम्पत्ति के हित तथा सुविधा को अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए। यह निश्चित रूप से इस बात का सकेत है कि भारत मे विवाह तय करने की जो परम्परागत कसौटियाँ रही हैं वे अधिकाधिक बदलती जा रही हैं।

विवाह के प्रति जापानी युवा पीढी की अभिवृत्तियो के बारे मे अपने अध्ययन म इसी समस्या के सम्बन्ध म बेवर भी ऐसे ही निष्कर्षो पर पहुचे हैं, "वे अपने इस विश्वास मे लगभग एकमत हैं (लडके 98 3% और लडकियाँ 98 8%) कि युवा-दम्पत्ति के हितों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए" (बेवर, 1958, पृष्ठ 61)। विवाह और पारिवारिक सम्बन्धो के बारे मे पश्चिम अफ्रीकी समाज के छात्रो की बदलती हुई अभिवृत्तियो के अध्ययन से भी एसी ही प्रवृत्तियो का पता चलता है, इन प्रवृत्तियो मे संकेत मिलता है कि 'वे सक्रिय रूप से ऐसा वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करते हैं जो उनके माता पिता, परिवार या बिरादरी के सुख या हितो की दृष्टि से नहीं बल्कि उनके निजी सुख की दृष्टि से उनके लिए हितकर हो" (ओमरी, 1960, पृष्ठ 205)।

इस अध्ययन मे विवाह के बारे मे उनकी अभिवृत्ति मे होनेवाले परिवर्तन का सकेत उनकी कही हुई अनेक बातो तथा उनके बयानो मे मिलता है, और साथ इस बात मे भी कि अनेक बार और काफी दृढता के साथ उन्होंने इस कथन से मति प्रकट की कि पैसा विवाह को सफल बनाता है। इस कथन स दद

करनेवाली स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात पहले वाले समूह की अपेक्षा बाद वाले समूह में अधिक था। इस अभिवृत्ति की और अधिक पुष्टि इस बात से होती है कि बाद वाले समूह की अधिक स्त्रियों ने अपनी पहली पसन्द ऐसे भावी पति के लिए बतायी जिसकी आर्थिक स्थिति अच्छी हो, जो किसी अच्छी नौकरी पर लगा हो और जिसका आर्थिक भविष्य उज्ज्वल हो, और दूसरे जो बहुत पढ़ा लिखा और सच्चरित्र हो। लेकिन दस वर्ष पहले अधिक प्रतिशत स्त्रियाँ अपने भावी पति के अच्छे वेतन वाली नौकरी पर लगे होने की तुलना में इस बात को अधिक महत्त्व देती थीं कि वह सुशिक्षित हो, उसका व्यक्तित्व और चरित्र अच्छा हो। इस प्रश्न के उत्तर में कि अपने भावी पति में वे किन तीन गुणों को पहला स्थान देंगी, बम्बई में विश्वविद्यालय की महिला-छात्राओं में से अधिकांश ने शिक्षा, स्वास्थ्य और मानसिक विचार का उल्लेख किया (सरयू वाल और वानारस, 1966 पृष्ठ 30) कार्नेल यूनिवर्सिटी के कालेज छात्राओं के जिस अध्ययन का उल्लेख बोगाडस ने किया है, उसमें भी उन्होंने अपनी पहली तीन पसन्दें कुछ इसी प्रकार की बतायी हैं। उनकी तीन पसन्दें थीं—समझदारी स्वच्छता और अच्छा स्वास्थ्य (बोगाडस 1950 पृष्ठ 74 75)।

शिक्षित श्रमजीवी महिलाओं या शिक्षित छात्राओं का अपने भावी पति के गुणों में उच्च शिक्षा को प्राथमिकता देना उस पुराने परम्परागत हिन्दू विचार की ही अभिव्यक्ति है कि युवक को विवाहित जीवन में प्रवेश करने से पहले अपनी शिक्षा पूरी कर लेनी चाहिए। उसके किसी अच्छी नौकरी पर लगे होने या उसका आर्थिक भविष्य उज्ज्वल होने को सबसे अधिक प्राथमिकता देना भी, कुछ हद तक, परोक्ष रूप से इसी विचार की अभिव्यक्ति है, इसका आधारभूत तर्क यह है कि जब तक आदमी सुशिक्षित या सुयोग्य नहीं होगा तब तक न तो अच्छी नौकरी पर लगा होगा और न ही उसका आर्थिक भविष्य उज्ज्वल होगा। लेकिन अच्छी शिक्षा प्राप्त किये बिना भी किसी व्यापार या अन्य किसी काम में उसकी आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी हो सकती है, और इसीलिए दस वर्ष बाद उन्होंने अधिक प्राथमिकता इस बात को दी कि आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होने के साथ ही वे सुशिक्षित भी हों।

इसके अतिरिक्त, एक ही दशक में ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात काफी बढ़ गया था जो अपने अहंभाव की तुष्टि के लिए और अपनी इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, कि कोई उनकी रक्षा करे बुद्धिमत्ता के साथ उनका मार्गदर्शन करे वह ऐसा जीवन-साथी चाहती थीं जो उनसे श्रेष्ठतर हो ताकि वे उसका सम्मान करें, उसकी सराहना कर सकें। अपने से अधिक पढ़े लिखे पुरुष से विवाह करने को प्राथमिकता देनेवाली स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात 45 से बढ़कर 65 और बौद्धिक रूप से अपने से श्रेष्ठतर पति की इच्छा रखनेवाली स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात 65 से बढ़कर 80 हो गया था। इसके अतिरिक्त दोनों ही समयों पर एक भी स्त्री ऐसी नहीं थी जो सामान्यतः अपने से कम शिक्षित जीवन-साथी की कामना रखती हो और प्रायः सभी ऐसा पति चाहती थीं जो शिक्षा के मामले में उनके बराबर या उनसे बढ़कर हो।

कार्नेल यूनिवर्सिटी की कालेज छात्राओं के बीच भी इसी प्रकार के विचार पाये गये (गोल्डसेन तथा अन्य 1960, पृष्ठ 89)।

फ्रांसीसी जनमत संस्थान ने लगभग 1955 से 1958 तक फ्रांसीसी महिलाओं के बारे में जो एक अध्ययन किया था, उसमें यह देखा गया था कि उनमें यह चाहने की अभिवृद्धि काफी बड़ी हद तक व्याप्त थी कि बौद्धिक दृष्टि से उनका पति उन पर छाया रहे (रेमी तथा वूग, 1964, पृष्ठ 146)। उसी अध्ययन में यह भी देखा गया कि जिस चीज ने फ्रांसीसी महिलाओं के अपने भावी पति की ओर सबसे बढ़कर आकर्षित किया वह थी, चरित्र तथा व्यक्तित्व (ईमानदारी, निष्ठा प्रज्ञा, विश्वस्तता, मानसिक संतुलन), 55 प्रतिशत, रूप, 39 प्रतिशत, वित्तीय स्थिति तथा सामाजिक पृष्ठभूमि (अच्छी नौकरी, अच्छे परिवार की संतान), 5 प्रतिशत (रेमी तथा वग, 1964, पृष्ठ 136)। आश्चर्य की बात है कि इस पुस्तक की लेखिका ने भारत में शहरों की जिन पढ़ी-लिखी श्रमजीवी स्त्रियों का अध्ययन किया है और इस पूरी पुस्तक में प्रस्तुत किये गये व्यक्ति अध्ययनों में जिन पर विचार किया गया है उनकी तुलना में ये फ्रांसीसी स्त्रियाँ अपने भावी पति की वित्तीय स्थिति के प्रति आकर्षण को कम महत्त्व देती थीं। अपने भावी जीवन साथी में वे किन गुणों को सबसे अधिक महत्त्व देते हैं इसके बारे में कार्नेल विश्वविद्यालय के छात्रों की अभिवृत्तियों के बारे में भी जिन बातों का पता लगाया गया है वे भी इतनी ही आश्चर्यजनक हैं और वे उससे सर्वथा भिन्न हैं जैसा कि भारत में अधिकांश लोग समझते होंगे। जिस गुण पर जीवन साथी चुनने की कसौटी के रूप में सबसे कम जोर दिया गया था वह था "विवाह के समय पैसा है"। केवल दो प्रतिशत से भी कम स्त्रियों ने उसे उतना ही महत्त्व दिया जितना रोमांटिक प्रेम को, जिसे उन्होंने भावी जीवन-साथी चुनने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कसौटी बताया (गोल्डसेन, तथा अन्य, 1960, पृष्ठ 90 91)।

## विवाह का प्रकार

विवाह के प्रति शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियों की अभिवृत्ति में परिवर्तन का एक और संकेत उनके द्वारा दिये गये इस प्रश्न के उत्तरों में मिलता है कि वे किस प्रकार के विवाह को सबसे अच्छे प्रकार का विवाह समझती हैं और वे स्वयं किस प्रकार का विवाह सबसे अधिक पसन्द करेंगी। शुद्धत तय किये हुए विवाहों के बारे में, अर्थात भावी जीवन साथियों की अनुमति लिये बिना, या उनकी केवल औपचारिक अनुमति लेकर, माता पिता या अभिभावकों द्वारा तय किये गये विवाहों के सम्बन्ध में तो उनके विचारों में प्रायः कोई परिवर्तन नहीं हुआ (स्त्रियों के पहले समूह के लिए भी वह अरुचिकर रहा, पर बाद वाले समूह के लिए तो वह और भी अरुचिकर हो गया) परन्तु भावी जीवन साथियों की हार्दिक सहमति से तय किये गये विवाहों के प्रति और प्रेम विवाहों के प्रति उनके विचारों में काफी परिवर्तन हुआ है। मर्चेंट अपने अध्ययन (1935) से इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि 78 प्रतिशत स्त्रियाँ अपनी पसन्द से विवाह करने

के पक्ष मे थी। हेट ने जिन लागो का अध्ययन किया (1946) उनम से 74 प्रतिशत अविवाहित लोगो का मत था कि वे अपना जीवन-साथी स्वय चुनने के पक्ष मे हैं।

दस वर्ष पहले प्रस्तुत अध्ययन की लेखिका ने यह देखा था कि शिक्षित श्रम-जीवी स्त्रियाँ न केवल गुरुत तय किये हुए विवाहो को नापसन्द करती थी बल्कि उनमे स अधिकाश—63 प्रतिशत—प्रेम-विवाहो को अधिक पसन्द करती थी। 1957-58 मे विश्वविद्यालय के छात्रो के सम्बन्ध म किये गये एक अध्ययन म यह देखा गया कि उनमे से लगभग सभी विवाह को दो व्यक्तियो का निजी मामला समझते थे और उनका मत था कि फसला जो कुछ वे करे उसी के अनुसार हाना चाहिए (शाह 1962 पृष्ठ 132)। लगभग उसी समय जापानी युवको की बदलती हुई अभिवृत्तियो के सम्बन्ध म किये गये एक अध्ययन म यह दखा गया कि जापान मे विश्वविद्यालय की 75 प्रतिशत छात्राएँ भावी पति चुनने के लिए "प्रेम व धन (पारस्परिक सहमति से प्रेम विवाह) को आदर्श तरीका मानती थी (ववर 1958, पृष्ठ 64)। परन्तु दस वर्ष बाद किये गये वतमान अध्ययन मे न केवल प्रेम विवाह के प्रति उनकी अभिवृत्ति मे परिवतन देखा गया बल्कि तय किये गये विवाहो के प्रति भी उनका रवैया वदला था, जिसे बाद मे पहले की अपेक्षा अधिक स्त्रियाँ अधिक पसन्द करने लगी थी। विवाह के प्रति कालेज के छात्रा की अभिवृत्तियो के बारे म मथ्यू के अध्ययन (1966, पृष्ठ 46 52) के निष्कर्षों से भी यही पता चलता है कि वे माता पिता के तय किये हुए विवाह को अधिक पसन्द करते थे यद्यपि व विवाह से पहले भावी जीवन-साथियो के एक-दूसरे से परिचित हो जाने के भी पक्ष म थे 64 प्रतिशत छात्राओं ने लडके और लडकी की सहमति से माता पिता के तय किये हुए विवाह के पक्ष मे अपनी रुचि व्यक्त की। पाश्चात्य ढग मे शिक्षित हिन्दू स्त्रियो के सम्बन्ध म मेहता के अध्ययन (1970) से भी इसी प्रकार के निष्कर्षों का सकेत मिलता है। कार्मेक ने अपन अध्ययन से यही निष्कर्ष निकाला कि भारत मे कालेजो तथा विश्वविद्यालयो की अधिकाश—83 प्रतिशत—छात्राओ का यह मत है कि विवाह माता पिता का लडके और लडकी की अनुमति से तय करना चाहिए (कार्मेक 1961, पृष्ठ 86)। शेठ लिखत हैं कि हाल ही म दिल्ली के मध्यमवर्गीय तथा उच्चवर्गीय परिवारो के एक अध्ययन से पता चला कि "तय किये हुए विवाहो को बहुत बडी हद तक पसन्द किया जाता है" (शेठ, 1972)।

कापडिया (1955) और रास (1961) के अध्ययनो मे हालाकि मुख्यत इस बात का विश्लेपण किया गया था कि उन्होंने जिन शिक्षित और दफ्तरो में काम करनेवाले लोगो का अध्ययन किया था उनके विवाह के समय उनके परिवार वाले वास्तव म किस आचरण का पालन करते थे, फिर भी परोक्ष रूप से उनमे इन लोगो की बदलती हुई अभिवृत्तियो की दिशाओ का भी सकेत मिलता है। कापडिया क अध्ययन म 38 प्रतिशत विवाहित अध्यापको ने बताया कि उन्होंने अपना जीवन साथी स्वय चुना था यद्यपि उनम से 90 प्रतिशत ने अपनी पसन्द निश्चित करने में अपने माता पिता या अपने अभिभावको स सलाह ली थी (कापडिया, 1955, पृष्ठ 70 71)।

रास अपने अध्ययन के फलस्वरूप इस निष्कर्ष पर पहुची कि उन्होने जिन विवाहित स्त्रियो का अध्ययन किया था उनम से 12 प्रतिशत को अपना पति चुनने म पूर्ण स्वतन्त्रता थी (रास, 1961, पृष्ठ 252)। गोरे ने अपने अध्ययन मे यह देखा कि उन्होने दिल्ली के जिन अग्रवाल परिवारो का अध्ययन किया था उनमे से 42 प्रतिशत उत्तरदाताओ का मत था कि विवाह परिवार के बडे-बूढो का तय करने चाहिएँ, परन्तु जिन लोगो का विवाह होने जा रहा हो उनसे भी परामर्श किया जाना चाहिए। उन्होने यह भी बताया है कि लडके या लडकी स उसके विवाह के बारे म परामर्श करनेवालो का अनुपात अशिक्षित लोगो मे 25 प्रतिशत से बढकर ग्रेजुएट स्तर की या उससे अधिक शिक्षा पाये हुए लोगो मे 82 प्रतिशत तक पहुच गयी थी। उनकी आधार सामग्री से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि शिक्षा के स्तर और विवाह तय करते समय लडके या लडकी से उसके लिए चुने गये जीवन-साथी के बारे मे परामर्श करने की तत्परता के बीच प्रत्यक्ष सम्बन्ध है (गोरे, 1968, पृष्ठ 207-210)।

प्रस्तुत अध्ययन के अनुसार दूसरो के तय किये हुए विवाहो की विभिन्न कोटियो को सबसे अधिक पसन्द करनेवाली स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात 37 से बढकर 52 हो गया था और प्रेम विवाह को पसन्द करनेवाली स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात 63 से घटकर 48 रह गया है, जिससे पता चलता है कि अब वे प्रेम विवाहो की अपेक्षा तय किये हुए विवाहो को अधिक पसन्द करने लगी हैं। फिर भी यदि हम इन प्रतिशत अनुपातो के अलग अलग खडो की जाँच करें तो हम देखेंगे कि भावी जीवन साथियो की हार्दिक सहमति से तय किये गये विवाहो को अधिक पसन्द करनेवालो मे और माता पिता की हार्दिक सहमति से प्रेम विवाह को अधिक पसन्द करनेवालो म भी एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया है। इन दोनो ही कोटियो की स्त्रियो की सख्या म काफी वृद्धि हुई है, जिसस यह पता चलता है कि कुछ अर्ध पारम्परिक ढग से ऐसे विवाह को अधिक पसन्द करने की प्रवृत्ति उनमे बढती जा रही है, जिसम, चाहे वह "तय किया हुआ" हो या "प्रेम पर आधारित" हो, माता पिता की हार्दिक सहमति को वाछनीय समझा जाता है। इससे सकेत मिलता है कि वे बीच का मार्ग अपनाना ही पसन्द करती हैं, जो कुछ हद तक तो उनमे आत्म विश्वास की कमी का परिणाम है लेकिन अधिकाशत यह सुरक्षित मार्ग अपनाने और अपना जीवन साथी चुनने की पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेने से बचने की बढती हुई प्रवृत्ति का परिणाम है।

यह प्रवृत्ति बम्बई मे विश्वविद्यालय की छात्राओ के बीच भी पायी जाती है। एक अध्ययन के अनुसार, "अधिकाश लडकियो ने बीच के मार्ग वाले हल के पक्ष म ही अपनी रुचि प्रदर्शित की, अर्थात यह कि विवाह चाहे तय किया हुआ हो या न हो वे माता पिता की सहमति तथा उनके समर्थन को अत्यधिक आवश्यक तथा वाछनीय मानती हैं" (शरयु बल और वाणारसे, 1966 पृष्ठ 30)। फोनसेका द्वारा किये गये एक अध्ययन मे छात्रो से अतिरिक्त शिक्षित दफ्तर मे काम करनेवाली स्त्रियो म से 59 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने यह बताया कि वे विवाह के लिए अपना जीवन साथी तो स्वय

चुनना चाहेंगी अर्थात वे अपनी पसन्द का जीवन साथी चाहेंगी, लेकिन उनमें से लगभग एक-चौथाई न अपने माता-पिता स परामर्श करन तथा उनकी अनुमति प्राप्त कर लेन की इच्छा भी प्रकट की (फोनसका, 1966, पृष्ठ 137 38)।

वतमान अध्ययन मे यह बात देखी गयी है कि एक ओर जहाँ ऐसी स्त्रियो की सख्या कम हुई है जो माता पिता की अनुमति स या उसके बिना प्रेम विवाहो का अनुमोदन करती हैं या उनम विश्वास रखती है, तो दूसरी ओर ऐसी स्त्रियो की सख्या बढी है जो माता पिता की हार्दिक अनुमति स प्रेम विवाह मे विश्वास रखती है। एक प्रकार स यह इस बात का भी सकेत हो सकता है कि व विवाह के मामले मे परम्परागत मानदडो की ओर झुकती जा रही हैं। लेकिन इसस भी अधिक यह इस बात का सकेत है कि जीवन साथी चुनने की परम्परागत धारणा के प्रति और इस बात के प्रति कि विवाह किस प्रकार का हो उनके विचार कुछ ढुलमुल है। एक ओर तो अब व अधिकाधिक सख्या मे निजी पसन्द के आधार पर जीवन साथी चुनने की कसौटियो का अनुमोदन करती ह पर दूसरी ओर एसी स्त्रियों की सख्या भी बढती जा रही है जो माता पिता की सलाह, उनके सुझाव और उनकी हार्दिक सहमति प्राप्त कर लेने का भी अनुमोदन करती हैं पहले वाले समूह की केवल 15 प्रतिशत स्त्रियो ने इस बात का अनुमोदन किया कि लडकी माता पिता की सहमति के बिना ही अपनी पसन्द के व्यक्ति स विवाह कर ले। जीवन-साथी चुनने स सम्बन्धित रवये मे ऐसी ही ढुलमुल स्थिति पजाब विश्वविद्यालय की छात्राओ के रवय मे भी पायी गयी है (महाजन, 1965)। जीवन-साथी चुनने के सवाल के बारे म जापान की नौजवान लडकियो म भी वेवर न एसा ही ढुलमुल रवया पाया पति चुनने के मामले मे "कुल मिलाकर अधिकाश (अस्सी प्रतिशत स अधिक) लडकिया सुरक्षा और आत्मनिर्भरता के बीच खींचा तानी म पडी रहती हैं (वेवर, 1958 पृष्ठ 67)।

काम करनेवाली शिक्षित लडकिया का पहले की अपेक्षा कहीं अधिक सख्या मे इस बात की आवश्यकता पर ज़ोर देना कि उनकी हार्दिक सहमति प्राप्त की जाये और व अपने भावी जीवन साथी को अच्छी तरह जान लें, उस जीवन-साथी को उनके माता पिता न ही क्यो न पसन्द किया हो इस बात का द्योतक है कि इस प्रकार की अधिकाधिक लडकियाँ अब अपने विवाह के मामले म निष्क्रिय नही रहना चाहती बल्कि सक्रिय भूमिका अदा करना चाहती हैं।

इस बात के अतिरिक्त कि माता पिता की विधिवत सहमति स प्रेम विवाह को बहतर समझने वाली स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात 27 स घटकर 13 प्रतिशत और माता पिता की सहमति के बिना ही प्रेम विवाह को बहतर समझनेवाली स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात 11 मे घटकर 2 प्रतिशत रह गया है और विवाह सूत्र म बधनवाल दोनो पक्षो की हार्दिक सहमति स तय किय हुए विवाह को पसन्द करनेवाली स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात 24 स बढकर 45 प्रतिशत हो गया है, इन श्रमजीवी स्त्रियो क व्यक्ति अध्ययनो म उनके मत विचार तथा व्यावहारिक योजनाएँ जिस रूप मे व्यक्त

की गयी हैं उनका विश्लेषण करने से इस बात का प्रबल संकेत मिलता है। इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि इन्होंने विवाह करने के जो कारण बताये उनमे से दस वर्ष पहले की तुलना में दस वर्ष बाद इस कारण का उल्लेख इन्ही स्त्रियो ने बहुत कम बार किया कि उन्होने विवाह उस पुरुष से प्रेम के कारण किया या यह कि उन्हे उस पुरुष से प्रेम हो गया था। इससे यह पता चलता है कि सही अर्थ मे "प्रेम विवाह" के प्रति उनका रवैया समय बीतने के साथ अब उतना अनुकूल नही रह गया है और अब वे प्रेम-विवाह के एक नये रूप की पक्षधर हो गयी हैं।

यदि हम इन शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो के व्यक्ति अध्ययनो मे दिये गये उनके प्रत्युत्तरो, वक्तव्यो, कथनो तथा आचरणो का विश्लेषण करें तो हमे स्पष्ट दिखायी देगा कि अब उनके लिए प्रेम-विवाह का यह अर्थ अभी दस ही वर्ष पहले की तुलना मे बहुत कम रह गया है कि वह 'शुद्ध प्रेम', 'सम्मोहन', "सेक्स आकर्षण", "त्वरित प्रेम", "देखते ही प्रेम हो जाने" या "अन्धे प्रेम" के आधार पर किया गया विवाह होता है। अब उनके लिए पहले की अपेक्षा कही अधिक हद तक इसका अर्थ है "शान्त भाव मे तथा सोचे समझे ढग मे किये गये प्रेम", "तर्कसगत प्रेम" या "व्यावहारिक प्रेम" पर आधारित ऐसा विवाह जो भावी पति के भौतिक तथा भावात्मक गुणो के बारे मे उनकी जानकारी तथा मूल्याकन का परिणाम होता है।

अब स्थिति उससे भिन्न है जैसी कि पानुजिया ने (1939 पृष्ठ 150) जीवन-साथी के स्वत स्फूर्त चुनाव के बारे मे बयान की थी, जिसमे युवा व्यक्तियो की पसन्द 'जिस हद तक भी वे पसन्द करते हैं, बहुत बडी हद तक विवेकहीन होती है। वास्तव मे वे पसन्द करते ही नही हैं, बल्कि प्रेम मे 'फँस' जाते है, और बहुधा यह फँसाव उनके पूरे जीवन को नष्ट कर देता है' (देखिये, प्रभु, 1954, पृष्ठ 188)। अब शिक्षित स्त्रियो की पसन्द अधिक विवेकपूर्ण तथा ठोस होती है। अब वे इस बात को ज्यादा अच्छी तरह समझती है कि किसी पुरुष के "प्रेम पाश मे फसने" के लिए वे उसमे क्या-क्या बातें चाहती हैं।

इसकी और भी अधिक पुष्टि इस बात से होती है कि दस वर्ष बाद ऐसी स्त्रियो की सख्या कही अधिक पायी गयी जो ऐसे पुरुष के प्रेम-पाश मे पडने को अधिक "तैयार" थी जो उन वस्तुगत आवश्यकताओ को पूरा करता हो और उसमे इस लक्षण का होना उनके लिए विवाह की एक आवश्यक शर्त बन गयी थी। यही कारण है कि अब पहले की तुलना मे कही अधिक सख्या मे शिक्षित स्त्रिया भावी पति को अच्छी तरह जान लेने और उसके प्रति अपने मन मे प्रेम की भावनाएँ विकसित कर लेने के बाद ही विवाह करने मे विश्वास रखती हैं तथा ऐसे ही विवाह का अनुमोदन करती है। इस बात की पुष्टि पजाब विश्वविद्यालय की छात्राओ की अभिवृत्तियो के अध्ययन से भी होती है, हालाकि यह अध्ययन श्रमजीवी स्त्रियो का नही है और इसलिए इससे तुलना के लिए बिल्कुल समानान्तर तथ्य सामग्री उपलब्ध नही होती। उस
मे बताया गया है कि जिन छात्राओ का अध्ययन किया गया उनमे से

(62 84 प्रतिशत) का विचार यह था कि भावी जीवन-साथियों को काफी पहले से जान लेने से विवाहित जीवन को सुखी बनाने में बहुत योग मिलता है। इस अध्ययन के अनुसार भावी जीवन साथी को अच्छी तरह जान लेना और प्रेम पर बल देना जीवन-साथी चुनने की परम्परागत कसौटियों से बहुत भिन्न है और इससे पता चलता है कि शिक्षित लड़कियाँ अब अपने विवाह में न तो निष्क्रिय भूमिका अदा करना चाहती हैं और न ही करती हैं (महाजन, 1965)। यह बात उन्नत परिवारों की बड़े शहरों में काम करनेवाली शिक्षित युवतियों के बारे में और भी सच है।

तय किए हुए विवाहों के बारे में अब पहले की अपेक्षा अधिक हद तक उनका यह विश्वास है कि विवाह माता-पिता या अभिभावकों द्वारा तय किये जाने चाहिएँ। परन्तु अब तय किए हुए विवाह के बारे में उनकी यह धारणा पहले की तुलना में बहुत कम है कि यह शुद्धतः माता पिता द्वारा तय किया हुआ विवाह होता है जिसमें अंतिम निर्णय दोनों परिवारों का होता है और भावी जीवन साथियों की अनुमति या तो ली ही नहीं जाती या केवल औपचारिक रूप से ली जाती है। अब अधिक हद तक इसका अर्थ ऐसा विवाह होना है जिसके बारे में वे समझती हैं कि माता पिता,को अपनी बेटी के लिए एक वर चुनकर उसका परिचय अपनी बेटी से करा देना चाहिए। उनकी दृढ़ भावना है कि आगे चलकर विवाह के सूत्र में बंधनेवाले जीवन साथियों को अनेक बार एक दूसरे से मिलने और एक दूसरे को जान लेने का अवसर दिया जाना चाहिए और अपने विवाह के बारे में अंतिम निर्णय लेने से पहले दोनों में एक दूसरे को चाहने या प्रेम करने की भावनाएँ उत्पन्न होनी चाहिए। पहले की अपेक्षा अब उनमें से कहीं अधिक प्रतिशत स्त्रियाँ विवाह के लिए अपना साथी चुनने की इसी पद्धति का अनुमोदन करती हैं।

जापान में भी, जहाँ परम्पराओं की जकड़ अब भी काफी मजबूत है, अधिकांश नवयुवतियों ने यही बताया कि सबसे अच्छा तरीका तय किया हुआ विवाह करना है यदि माता-पिता लड़की और लड़के को एक दूसरे को जान लेने के लिए काफी समय दें (दखिय, बेबर, 1958 पृष्ठ 67-68)।

प्रस्तुत अध्ययन में यह देखा गया है कि अब पहले की अपेक्षा कहीं अधिक हद तक श्रमजीवी स्त्रियाँ सुरक्षित मार्ग अपनाना चाहती हैं और इसके लिए वे अपने माता पिता पर भरोसा करती हैं कि उनके लिए किसी वर का सुझाव दें तथा उसे पसन्द कर लें और फिर वे स्वयं उससे मिलकर यह पता लगायें कि वे एक दूसरे को पसन्द हैं कि नहीं। इसलिए हालाँकि अब वे तय किए हुए विवाहों का पहले की अपेक्षा अधिक पसन्द करती हैं परन्तु इनके बारे में उनकी धारणा बदल गयी है और न्यूनाधिक रूप में यह विवाह भी प्रेम विवाह की उनकी नयी कल्पना के अनुरूप हो गया है और इन दोनों कल्पनाओं के बीच एक बहुत महीन विभाजन-रेखा रह गयी है। अंतर केवल इतना है कि प्रेम विवाह में वे स्वयं अपने काम करने की जगह पर या सामाजिक समारोहों में या मित्रों के माध्यम से मिलती हैं जबकि तय किए हुए विवाह में भावी पति

का सुझाव माता पिता या अन्य सगे सम्बन्धी देते है। प्रेम विवाह मे लडका और लडकी वस्तुपरक ढग से ठडे दिमाग स एक दूसरे के बारे म जानकारी प्राप्त करत है, और इस बात का पूरी तरह आश्वासन कर लेन के बाद ही कि वे विवाह की दृष्टि से दूसर पक्ष के लिए उपयुक्त हैं, वे परस्पर स्नेह विकसित करत है और बाद मे जाकर ही वे अपने माता पिता की सलाह या अनुमति लेते है। तय किये हुए विवाह मे भावी जीवन-साथियो का एक दूसरे से परिचय कराने से पहल माता पिता यह सारी जानकारी प्राप्त करके अपन आपको सन्तुष्ट कर लेते है। दोनो ही स्थितियो मे अन्तिम निणय वस्तुत उन व्यक्तिया पर छाड दिया जाता है जिन्हे उस सम्बन्ध के सूत्रो मे बँधना हाता है।

प्रस्तुत अध्ययन म लेखिका ने यह देखा है कि शहरो के मध्यम वर्गीय परिवारा की शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियो के बीच पिछले दस वर्षों के दौरान ही "शुद्धत तय किये हुए विवाह" और "शुद्धत प्रेम विवाह" दोना के प्रति अस्वीकृति की अभिवत्ति अधिक स्पष्ट हो गयी है। अब वे दढतापूवक इन दोना ही प्रकार के विवाहा का अस्वीकार करती ह और उनके व्यक्ति अध्ययनो म जिन "आधुनिक ढग के तय किये हुए विवाहो" और "बुद्धिसगत ढग से प्रेम विवाहो" का वणन तथा व्याख्या की गयी है उन्हे अधिक पसन्द करती है।

फ्रासीसी स्त्रिया के सम्बन्ध म किय गय अध्ययन से भी यही पता चलता है कि शुद्धत प्रेमवश किय जानवाले विवाहो के बारे म उनके विचार भी कुछ इसी प्रकार के है। उसम बताया गया है कि "प्रेममूलक विवाह' बहुत अधिक होते हो ऐसा प्रतीत नही होता। उनकी सख्या का अनुमान लगभग 20 प्रतिशत है (रेमी तथा वूग, 1964, पष्ठ 141 142)।

## अन्तर-वर्णीय, अन्तर-प्रान्तीय, अन्तर-धार्मिक तथा अन्तर-जातीय विवाह

भारत मे परम्परा के अनुसार लडकी का विवाह उसी के वण, प्रान्त तथा धम के किसी पुरुष के साथ किया जाता है, और कभी कभी इस प्रतिबन्ध के कारण उसके लिए उपयुक्त वर खोजना कठिन हो जाता है। इम प्रतिबन्ध के बारे मे शहरो की मध्यम वर्गीय शिक्षित स्त्रियो की अभिवत्तिया बदल गयी है। प्रस्तुत अध्ययन के दौरान यह देखा गया कि दस वष के भीतर ऐसी स्त्रिया का प्रतिशत अनुपात काफी बढ गया था, जो दूसरो के लिए, अपन रिश्तेदारो के लिए और स्वय अपने लिए अन्तर वार्णिक तथा अन्तर-प्रान्तीय विवाह का या तो अनुमोदन करती थी या उसम उन्हे कोइ आपत्ति नही थी। अन्तर वार्णिक विवाह को स्वीकार करने की दिशा मे यह परिवतन बहुत पहले घुर्ये ने देखा था, "पहले अपने वण के बाहर विवाह करन की कल्पना भी नही की जा सकती थी, पर आज बहुत से शिक्षित युवक तथा युवतिया पारस्परिक प्रेम अथवा आकपण के कारण आवश्यक हान पर इस बन्धन को तोड दन के लिए तैयार हैं' (घुर्ये, 1950, पृष्ठ 188 189)। कानन न अपन

अध्ययन मे यह दिखाया है कि 1917 के बाद से अतर वार्णिक विवाहो मे निरन्तर वृद्धि हुई है पर 1946 के बाद से इस वृद्धि की रफ्तार बहुत तेज हो गयी है। इससे सकेत मिलता है कि अन्तर वार्णिक विवाह का विरोध काफी कम हो गया है (कान्नन, 1963, पृष्ठ 203 211)। देसाई ने अपने अध्ययन के दौरान यह देखा कि उनकी महिला उत्तरदाताओ मे से 45 प्रतिशत अतर वार्णिक विवाह के पक्ष मे थी (देसाई, 1945, पृष्ठ 48 49)। कापडिया ने यह देखा कि उन्होने विश्वविद्यालय के जिन स्नातको से साक्षात्कार किया था उनमे से 51 प्रतिशत ने अपनी सन्तान का विवाह अपनी जाति के बाहर करने की तत्परता व्यक्त की।

कापडिया के अध्ययनो (1954, 1955 और 1958) का हवाला देते हुए दास ने बताया है कि "इन मत सर्वेक्षणो से सकेत मिलता है कि बम्बई क्षेत्र मे जिन लोगो मे साक्षात्कार किया गया उनका बहुत बडा भाग अतर-वार्णिक विवाहो के पक्ष मे था और उन्होने अपने बच्चो को इस प्रकार के विवाह करने की अनुमति देने की तत्परता व्यक्त की" (दास 1971 पृष्ठ 25)। मेहता के अध्ययन (1970) से यह निष्कर्ष निकला कि पाश्चात्य ढग की शिक्षा प्राप्त की हुई 42 प्रतिशत हिन्दू स्त्रिया स्वजातीय विवाह के पक्ष मे दृढ नही थी, लेकिन केवल 22 प्रतिशत ऐसी थी जिन्हे अतर वार्णिक तथा अतर प्रान्तीय विवाह मे कोई आपत्ति नही थी। यह निष्कर्ष उन निष्कर्ष से भिन्न है जो प्रस्तुत अध्ययन से निकाला गया है। परन्तु इसका कारण यह हो सकता है कि मेहता के अध्ययन का नमूना बहुत छोटा और सीमित था और इसके अतिरिक्त उसमे दूसरी ही कोटि की स्त्रियाँ शामिल की गयी थी तथा नमूना चुनने के लिए भिन्न पद्धति अपनायी गयी थी।

प्रस्तुत अध्ययन मे पहले की तुलना मे अधिक हद तक यह देखा गया कि श्रमजीवी स्त्रिया अपना जीवन-साथी चुनने की परिधि को अपने वर्ण तथा प्रान्त तक सीमित रखने को तैयार नही हैं। दूसरी ओर ऐसी स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात घट गया था जो अपने ही वर्ण तथा अपने ही प्रान्त मे विवाह करने मे विश्वास रखती थी। अन्तर-धार्मिक तथा अतर जातीय विवाहो के बारे मे भी देखा गया कि उनकी अभिवृत्ति काफी व्यापक हो गयी है, जिसका प्रमाण इस बात मे मिलता है कि ऐसी स्त्रियो की सख्या काफी बढ गयी थी जिन्होने बताया कि उन्हे इसमे कोई आपत्ति नही है। परन्तु जहा तक ऐसे विवाहो का अनुमोदन करने का सवाल है उनकी अभिवृत्ति अपेक्षाकृत बहुत नही बदली है। दस वर्ष बाद भी ऐसे विवाहो का अनुमोदन करनेवाली स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात बहुत अधिक नही बढा था, उनमे से बहुमत का विश्वास अब भी यही था कि अतर धार्मिक तथा अन्तर जातीय विवाहो मे पारस्परिक समझदारी की और रुचियो, पसन्दो तथा विचारो मे समानता पैदा करने की समस्या कही अधिक बडी हो सकती है। एक अन्य अध्ययन से कालेज तथा विश्वविद्यालय की केवल 31 प्रतिशत छात्राओ ने यह कहा कि उनकी राय मे 'विवाह किसी के भी साथ हो सकता है' (कार्मेन, 1961 पृष्ठ 87)। अमरीका मे विश्वविद्यालय के कैथोलिक छात्रों की

अभिवृत्तियों के बारे में किये गये अध्ययन में 70 प्रतिशत स्त्रियों ने इस कथन से सहमति प्रकट की कि विवाह अपनी ही आस्था (धर्म) की परिधि के भीतर करना चाहिए, और लगभग 70 प्रतिशत छात्राओं ने कहा कि धार्मिक समस्याओं पर उत्पन्न होनेवाले मतभेदों से अन्य वैवाहिक समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं (प्रिन्स, 1971, पृष्ठ 105-108)। अमरीका में ही कालेजों के यहूदी छात्रों के एक अन्य अध्ययन में सुधार समर्थक छात्रों में से लगभग आधे छात्रों ने और रूढ़िवादी यहूदियों में से 70 प्रतिशत ने यह कहा कि वे अपने धर्म की परिधि के बाहर विवाह नहीं करेंगे (कावान, 1971, पृष्ठ 96)।

वर्तमान अध्ययन के दौरान जो एक और दिलचस्प परिवर्तन देखा गया उसका सम्बन्ध इस बात से था कि उन्हें किसी विदेशी से, विशेष रूप से किसी अमरीकी या यूरोपवासी से विवाह करने में न केवल कोई आपत्ति नहीं थी बल्कि वे उससे विवाह करना चाहती थीं, बल्कि यहां तक कि वे इसके लिए लालायित थीं। यद्यपि विदेशी को दूसरों से अधिक पसन्द करने की यह प्रवृत्ति केवल ऐसी बहुत ही कमसिन लड़कियों में पायी गयी जिनका पालन पोषण तथा शिक्षा दीक्षा पाश्चात्य प्रभाव के अधीन हुई थी परन्तु अन्तर्जातीय तथा अन्तर धार्मिक विवाहों पर आपत्ति न करने की अभिवृत्ति दिल्ली की शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों में से काफी में पायी गयी। परन्तु किसी विदेशी से विवाह करने की इच्छा रखने की वह उदीयमान प्रवृत्ति स्त्रियों के पहले समूह में अधिक व्यापक थी, जबकि दस वर्ष बाद जो प्रवृत्ति उनमें अधिक व्यापक थी, वह थी किसी ऐसे भारतीय से विवाह करने की इच्छा रखने की जो अमरीका या यूरोप में अच्छे वेतन वाली नौकरी करता हो या अच्छी आमदनी वाला व्यापार करता हो।

## विवाह के समय आयु और पति तथा पत्नी की आयु में अन्तर

विवाह के लिए स्त्री की उपयुक्त आयु से सम्बन्धित अभिवृत्ति के बारे में मर्चेन्ट के अध्ययन (1935) में यह देखा गया कि युवतियाँ जिस आयु में विवाह के पक्ष में थीं उसका औसत 19.7 था। प्रस्तुत अध्ययन में यह देखा गया कि 1959 में अधिकांश शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियां यह समझती थीं कि किसी भी लड़की के लिए विवाह करने की सबसे उपयुक्त आयु 20 से 24 वर्ष के बीच है, परन्तु 1969 में अधिकांश स्त्रियों ने यह बताया कि वे 18 से 22 वर्ष के बीच की आयु को विवाह के लिए सबसे उपयुक्त समझती हैं। परन्तु इन दोनों ही समयों पर उन स्त्रियों में से जिन्होंने विवाह करने की इच्छा प्रकट की अधिकांश ने यही कहा कि वे 25 वर्ष की आयु से पहले विवाह कर लेना चाहती हैं। एक भारतीय विश्वविद्यालय की छात्राओं के अध्ययन के अनुसार 84 प्रतिशत छात्राएँ स्त्री के लिए विवाह करने की सबसे उपयुक्त आयु 22 से 24 वर्ष के बीच मानती थीं (मैथ्यू, 1966, पृष्ठ 47)। कार्नेल विश्वविद्यालय की छात्राओं के अध्ययन (गोल्डसेन तथा अन्य, 1960, पृष्ठ 84) के दौरान लगभग सभी ने कहा कि वे 20 से 25 वर्ष की आयु के बीच ही किसी समय विवाह करना चाहेंगी। इससे पता

चलता है शिक्षित युवा वर्ग विभिन्न संस्कृतियों की परस्पर क्रिया को किस प्रकार प्रभावित करता है और उसमें किस प्रकार प्रभावित होता है।

परन्तु प्रस्तुत अध्ययन में एक अन्तर यह देखा गया है कि एक दशक के भीतर ही उनके विचार इस सम्बन्ध में अधिक स्पष्ट तथा सुनिश्चित हो गए हैं कि व किस आयु में विवाह करना चाहेंगी। पहले वाले समूह में पन्द्रह प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इस प्रश्न का उत्तर देने में बहुत संकोच अनुभव किया था और यही कहा था कि उन्होंने इसके बारे में कभी सोचा ही नहीं है या फिर यह कि उन्हें 'मालूम नहीं'। दस वर्ष बाद जब उनसे यही प्रश्न पूछा गया तो उनमें से मुश्किल से एक प्रतिशत ने यह कहा कि उन्हें 'मालूम नहीं' या उन्होंने 'इसके बारे में सोचा नहीं'। इससे निश्चित रूप से पता चलता है कि यद्यपि पहले भी इसके सम्बन्ध में उनके विचार काफी स्पष्ट थे पर अब विवाह की अधिकतम आयु सीमा से सम्बन्धित मानदंड के बारे में उनके विचार अधिक स्पष्ट हो गए थे।

विचित्र बात है कि दस वर्ष के अन्तर यह देखा गया कि उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बढ़ गया है जो आयु की उन सीमाओं को घटा देने के पक्ष में हैं जिनके बीच लड़की को विवाह कर लेना चाहिए और इसके साथ ही ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत-अनुपात काफी बढ़ गया है जो अपनी पसन्द के पुरुष से विवाह करना चाहती हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि इस बात के बारे में भी उनके विचार बदल गये हैं कि लड़की किस उम्र में समझदार और प्रौढ़ हो जाती है। अब वे पहले की अपेक्षा इस बात पर अधिक विश्वास करने लगी हैं कि 17 वर्ष की आयु के बाद लड़की इतनी काफी प्रौढ़ हो जाती है कि उसका विवाह हो जाये।

यद्यपि दो विभिन्न समयों पर अपने विचार व्यक्त करनेवाली स्त्रियों के दो समूहों में से प्रत्येक समूह की स्त्रियों ने लगभग बराबर ही संख्या में आयु की लगभग एक जैसी ही सीमाओं की सिफारिश की जिनमें लड़की का विवाह कर लेना चाहिए परन्तु दस वर्ष बाद ऐसी स्त्रियों की संख्या कहीं अधिक हो गयी थी जिन्होंने यह सुझाव दिया "लड़की के विवाह के लिए 18 या 20 वर्ष के बाद की कोई भी उम्र उपयुक्त है यदि वह इसकी आवश्यकता अनुभव करती हो और उसकी पसन्द अथवा सहमति के अनुकूल वर उपलब्ध हो।" इससे यह पता चलता है कि विवाह के लिए सबसे उपयुक्त आयु के प्रश्न पर पिछले दस वर्षों में परिवर्तन केवल न्यूनतम आयु को घटा देने के सम्बन्ध में आया है परन्तु ऊपरी आयु-सीमा के सम्बन्ध में उनका रवैया बहुत उदार हो गया है। इसका प्रमाण इस बात में मिलता है कि दस वर्ष बाद उन्होंने कहीं अधिक बड़ी संख्या में यह विचार व्यक्त किया कि 18 या 20 वर्ष के बाद 'कोई भी आयु' विवाह के लिए उपयुक्त है।

जहां तक पति और पत्नी की आयु में अन्तर का सवाल है, दोनों ही समयों पर जब यह अध्ययन किया गया, उनमें से बहुत बड़े बहुमत ने इस बात के पक्ष में अपना मत प्रकट किया कि पति को पत्नी से बड़ा होना चाहिए, जबकि किसी ने भी

यह मत नहीं व्यक्त किया कि पति को छोटा होना चाहिए। यह भी देखा गया कि आयु में कितना अंतर हो इसके सम्बन्ध में उत्तरदाताओं के मत उनके आयु वर्ग के अनुसार अलग अलग थे। अपेक्षाकृत छोटे आयु वर्गों की स्त्रियां इसके पक्ष में थीं कि पति को पांच वर्ष या उससे भी अधिक बड़ा होना चाहिए, जबकि अपेक्षाकृत बड़े आयु वर्गों की स्त्रियां इसके पक्ष में थीं कि पति को दो से चार वर्ष तक बड़ा होना चाहिए, या पत्नी के बराबर आयु का होना चाहिए। अंग्रेज स्त्रियों के सम्बन्ध में किये गये एक अध्ययन में भी चेस्सर इसी निष्कर्ष पर पहुंचे कि, "बहुमत स्त्रियां अपने से बड़ी उम्र के पुरुष से विवाह करना चाहती थीं, अपने से छोटे से कोई भी नहीं। परन्तु आयु में इस अन्तर के महत्व के बारे में उत्तरदाताओं के मत उनकी आयु के अनुसार अलग अलग थे, बड़ी उम्र की स्त्रियां अपनी ही उम्र के पुरुष से विवाह करना चाहती थीं, जबकि आमतौर पर कम उम्र की स्त्रियां किसी ऐसे पुरुष से विवाह करना चाहती थीं जो उम्र में उनसे बड़ा हो" (चेस्सर, 1969, पृष्ठ 128)। कार्नेल विश्वविद्यालय की छात्राओं में से 75 प्रतिशत ऐसा पति चाहती थीं जो उम्र में उनसे बड़ा हो और "जिन छात्राओं का अध्ययन किया गया उनमें से शायद ही कोई ऐसी होगी जिसने यह कहा हो कि वह अपने से छोटी उम्र के पुरुष से विवाह करना चाहती है।" (गोल्डमेन तथा अन्य, 1960, पृष्ठ 89)।

प्रस्तुत अध्ययन में भी दस वर्ष बाद भी अधिकांश श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियों ने ऐसे ही युवकों के साथ विवाह करने के पक्ष में अपना मत व्यक्त किया जो उम्र में उनसे बड़े हों, और शायद ही किसी ने यह कहा हो कि सामान्य परिस्थितियों में वह अपने से छोटे पुरुष से विवाह करना चाहेगी। फिर भी आयु में अन्तर के प्रश्न पर उनकी अभिवृत्तियों में दो बातों में परिवर्तन देखा गया। पहली यह कि यद्यपि उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात लगभग उतना ही रहा जो इसके पक्ष में थीं कि पति को पत्नी से उम्र में बड़ा होना चाहिए, परन्तु दोनों समूहों में इस प्रश्न पर अन्तर पाया गया कि उनके मतानुसार पति को पत्नी से कितने वर्ष बड़ा होना चाहिए, पहलेवाले समूह में बहुमत ने 7 से 10 वर्ष तक के अन्तर के पक्ष में अपना मत व्यक्त किया, जब कि बादवाले समूह में वे 2 से 7 वर्ष तक के ही अन्तर के पक्ष में थीं। दूसरी बात यह कि बादवाले समूह में ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत-अनुपात बढ़ गया था जो यह समझती थीं कि आयु में अन्तर का कोई महत्व नहीं है। उनकी धारणा के अनुसार इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि पुरुष की आयु स्त्री की अपेक्षा 2 से 12 वर्ष तक अधिक है या कम, बशर्ते कि वह उससे प्रेम करती हो और वह उसकी पसन्द का पुरुष हो और वह भी उससे प्रसन्न हो और उससे प्रेम करता हो। ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत-अनुपात 10 से बढ़कर 29 तक पहुंच गया था। इससे इस बात का भी संकेत मिलता है कि पति और पत्नी की आयु में अन्तर के सम्बन्ध में, और इससे भी बढ़कर, परम्परा के विरुद्ध अधिक उम्र की स्त्री और कम उम्र के पुरुष के बीच विवाह के बारे में उनका रवैया अधिक उदार हो गया था।

## तलाक और तलाकशुदा लोगों का पुनर्विवाह

'तलाक का अस्तित्व समाधान के रूप में है, ऐसे विवाहों से पीछा छुड़ाने के एक मार्ग के रूप में जिनमें तनाव और खींचातानी असह्य हो गयी हो" (स्टीफेंस 1963 पृष्ठ 231)। हिन्दू दर्शन के अनुसार विवाह एक ऐसा पवित्र संस्कार होता था जिसके एक बार सम्पन्न हो जाने पर मनुष्य किसी भी उपाय से उसे भंग नहीं कर सकता था। उसे एक पुनीत बन्धन समझा जाता था और उसे इसी भावना के साथ स्वीकार किया जाता था। हिन्दू समाज के विभिन्न वर्गों के विचारों पर अनेक सामाजिक आर्थिक और साथ ही राजनीतिक-वैधानिक कारकों का भी प्रभाव पड़ता रहा है। 1955 के हिन्दू अधिनियम ने लोगों को इस ढंग से सोचने पर विवश किया कि विवाह दो जीवन-साथियों के बीच एक ऐसा सामाजिक संविदा होता है जिसे कुछ विशेष परिस्थितियों में भंग भी किया जा सकता है। उसने विवाह-सम्बन्धी धारणा भी बदल दी है, उसे संस्कारमूलक न मानकर संविदामूलक माना जाने लगा है, क्योंकि उसमें तलाक की अनुमति है।

इस अध्ययन में इस अध्याय के आरम्भ में इस बात की छानबीन की गयी है कि विवाह के प्रति श्रमजीवी शिक्षित हिन्दू स्त्रियों का रवैया किस प्रकार बदलता रहा है। विवाह के प्रति उनके रवैये में परिवर्तन के साथ ही उसके भंग किये जाने अथवा तलाक के प्रति भी उनका रवैया बदलता रहा है। देसाई ने अपने अध्ययन (1945) से यह निष्कर्ष निकाला कि जिन स्त्रियों का अध्ययन किया गया था उनमें से 47 प्रतिशत तलाक के पक्ष में थीं, जबकि 49 प्रतिशत इसके पक्ष में नहीं थीं। एक और अध्ययन में 46.69 प्रतिशत स्त्रियों ने दृढ़ मत व्यक्त किया कि स्त्री अपने पति को तलाक दे सकती है, जबकि 53.31 स्त्रियाँ इस बात के विरुद्ध थीं कि स्त्री अपने पति को तलाक दे (कुप्पूस्वामी 1957)। इन अध्ययनों के निष्कर्षों से प्रस्तुत अध्ययन के लिए पूर्णतः तुलनात्मक आधार सामग्री तो उपलब्ध नहीं होती, फिर भी इनके निष्कर्षों का यहाँ इसलिए दिया गया है कि वे भारत के विभिन्न राज्यों की मध्यमवर्गीय स्त्रियों के सम्बन्ध में तथ्य प्रस्तुत करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं।

वर्तमान अध्ययन में यह देखा गया कि यद्यपि ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात, जो इस बात के पक्ष में थीं कि स्त्री अपने पति को तलाक दे सकती है बहुत बढ़ा नहीं था, बल्कि दस वर्ष के दौरान वह स्थिर ही रहा था, फिर उन कारणों अथवा परिस्थितियों की परिधि काफी व्यापक हो गयी थी जिनके अन्तर्गत वे तलाक और तलाकशुदा स्त्रियों के पुनर्विवाह को उचित समझती थीं, या कम से कम आपत्तिजनक तो नहीं ही समझती थीं। जो स्त्रियाँ दस वर्ष पहले स्त्रियों के तलाक लेने को उचित समझती थीं, उनमें से अधिकांश इसे केवल इस प्रकार के आधारों पर उचित मानती थीं कि उनका पति उनके साथ दुर्व्यवहार करता हो या क्रूरता का बर्ताव करता हो पति शराबी हो, बदचलन हो, या वह किसी ऐसे असाध्य मानसिक अथवा शारीरिक रोग से पीड़ित हो जो पत्नी के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकता हो जबकि इन स्त्रियों में से बहुत

थाडी ही सख्या ऐसी स्त्रिया की थी जिन्होने यह कहा हो कि व असगत स्वभाव' के आधार पर भी इसे उचित समझती हैं। परन्तु दस वप वाद तलाक का दृढतापूवक समथन करने के लिए ऊपर बताय गये कारणा के अतिरिक्त कुछ अन्य परिस्थितिया मे भी स्त्री की ओर से विवाह भग कर दिये जाने पर आपत्ति न करनेवाली या उसका अनुमोदन करनेवाली स्त्रिया का प्रतिशत अनुपात काफी बढ गया था। जैसे 'पति तथा पत्नी के स्वभाव का मेल न खाना', 'आपस मे उनकी पटरी न बठना', 'उनका एक-दूसरे स या अपने विवाहित जीवन से सवथा असन्तुष्ट होना' या 'उनमे एक दूसरे के प्रति लेशमात्र भी प्रेम न होना।'

इसी प्रकार जिन स्त्रिया को तलाक दे दिया गया हो उनके पुनर्विवाह के प्रति उनकी अभिवृत्ति यह थी कि पहले उन्होने इसका अनुमोदन मुख्यत उन स्त्रियो के सम्बन्ध मे किया था जो बहुत अल्पवयस्क हो, जिनके कोई सन्तान न हो, और जिन्ह आर्थिक सहारे तथा शारीरिक सुरक्षा की आवश्यकता हो। दस वप बाद उन्होने कहा कि जिस स्त्री को तलाक दे दिया गया हो वह किसी भी उम्र मे और अपने जीवन की किसी भी अवस्था मे जब भी वह इसकी आवश्यकता अनुभव करे विवाह कर सकती है और अपनी पसन्द के किसी आदमी को जीवन साथी बना सकती है।

जिन स्त्रिया का अध्ययन दो विभिन्न समया पर किया गया उनमे से जिनके व्यक्ति अध्ययन इस अध्याय मे दिये गये हैं उनके बयानो कथनो तथा प्रत्युत्तरो से इन अभिवृत्तियो का पता चलता है।

दोना ही समया पर उनम से लगभग सभी हिन्दू कोड बिल के पक्ष मे थी और उनका विश्वास था कि स्त्री को तलाक का अधिकार होना चाहिए, फिर भी उनमे स अधिकाश ने उन स्त्रियो के लिए जिनके बच्चे हा इसे उचित नही माना, जब तक कि पति के साथ रहना सवथा असह्य न हो गया हो। ऐसी स्त्रिया के सम्बन्ध मे जो काम नही भी करती, मेहता ने अपने अध्ययन (1970) मे इसी प्रकार के निष्कष प्रस्तुत किय हैं। इस बात की और अधिक पुष्टि प्रस्तुत पुस्तक की लेखिका के **विवाह और भारत की श्रमजीवी स्त्री** (कपूर 1970, पृष्ठ 434 435) नामक एक और अध्ययन के निष्कर्षों स होती है, जिसमे यह देखा गया था कि उन श्रमजीवी स्त्रिया मे से भी जिनका विवाहित जीवन अत्यन्त असामजस्यपूण तथा दुखमय था, 31 प्रतिशत अपने पति के साथ ही रह रही थी, 38 प्रतिशत उनसे अलग रहने लगी थी, 19 प्रतिशत का तलाक हो गया था और केवल 12 प्रतिशत ऐसी थी जिन्होने तलाक के बाद दुबारा विवाह कर लिया था। फिर भी इससे शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया म इस प्रवृत्ति का सकेत अवश्य मिलता है कि यदि उनका विवाहित जीवन बहुत दुखमय हो तो वे अपने पति स अलग रहने लगें, तलाक ले लें और तलाक के बाद फिर से विवाह तक कर लें।

फिर भी ऐसा लगता है कि जिन शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया का जीवन सामजस्य-पूण नही है वे भी तलाक की प्रथा को अरुचिकर मानती हैं, क्योकि उनम मे केवल 19 प्रतिशत ने तलाक लिया था। पाश्चात्य ढग की शिक्षा पायी हुई जिन स्त्रियो का

अध्ययन मेहता ने किया था उनमें से पचासीस प्रतिशत यह अनुभव करती थी कि वे अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियों में भी तलाक लेने की कोशिश नहीं करेंगी (मेहता, 1970 पृष्ठ 136)। प्रस्तुत पुस्तक की लेखिका के दोनों ही अध्ययनों में परिलक्षित इस अभिवृत्ति का मुख्य कारण यह हो सकता है कि जिस स्त्री को तलाक दे दिया गया हो उसे तिरस्कार की दृष्टि से देखने का रवैया समाज में अब भी प्रचलित है और यह भी कारण हो सकता है कि जिस स्त्री का तलाक दे दिया गया हो उसका अपने विवाह के लिए दूसरा साथी ढूँढ पाना कठिन होता है और वह इसमें असमर्थ रहती है।

## विधवा-पुनर्विवाह

विधवा-पुनर्विवाह के सम्बन्ध में शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के विचारों में होने वाले परिवर्तन का अध्ययन करने के लिए इस पुस्तक की लेखिका ने जो दो गवेषणाएँ की उन दोनों ही से पता चलता है कि यद्यपि दोनों ही समय पर उनके विशाल बहुमत ने विधवा-पुनर्विवाह का समर्थन किया, परन्तु पहले इसका अधिक अनुमोदन ऐसी स्त्रियों के सम्बन्ध में किया गया जो आर्थिक दृष्टि से पराश्रित हों और उन्हें किसी के सहारे तथा संरक्षण की आवश्यकता हो या यदि वे अल्पवयस्क हों और उनका सारा जीवन उनके सामने बिताने को पड़ा हो, जबकि दस वर्ष बाद नयी प्राप्त की हुई स्वतन्त्रता में वृद्धि के बावजूद जब विधवाएँ भी काम कर सकती हैं और अपनी जीविका कमा सकती हैं विधवा-पुनर्विवाह का अनुमोदन न केवल उसकी आर्थिक आवश्यकता के कारण या उसके बहुत अल्पवयस्क होने और उसे संरक्षण तथा सहारे की आवश्यकता होने के कारण बल्कि अन्यथा भी इस आधार पर किया गया कि वह पुनर्विवाह करना चाहती है।

यह भी देखा गया कि दस वर्ष के दौरान विधवा-पुनर्विवाह के प्रति उनकी अभिवृत्ति इस दृष्टि से काफी उदार हो गयी थी कि कहीं अधिक प्रतिशत स्त्रियों ने यह मत व्यक्त किया कि यद्यपि विधवा के लिए दुबारा विवाह करना नितान्त आवश्यक नहीं है फिर भी यदि वह स्वयं विभिन्न संवेगात्मक अथवा शारीरिक आवश्यकताओं के कारण फिर से विवाह करना चाहती हो तो वह किसी भी आयु में और किसी भी परिस्थिति में विवाह कर सकती है। इतना ही नहीं, श्रमजीवी विधवाओं ने स्वयं कहा कि यदि उन्हें अपनी पसन्द का कोई ऐसा आदमी मिल जाय जो विधवा से विवाह करने को तैयार हो तो उन्हें दुबारा विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं होगी। इस प्रकार वे विधवा पुनर्विवाह का अनुमोदन केवल आर्थिक आवश्यकता के रूप में नहीं करती थीं, बल्कि उससे भी अधिक संवेगात्मक आवश्यकताओं की तुष्टि रूप में करती थीं। देखा गया कि अभिवृत्ति में इस परिवर्तन के साथ शिक्षित हिन्दू विधवाओं की सामाजिक प्रतिष्ठा में भी परिवर्तन हो रहा है।

कट्टरपंथी हिन्दू परिवारों में विधवा को बिरादरी के बाहर समझा जाता था उससे आशा की जाती थी कि वह निरन्तर शोकग्रस्त रहे, और उसे एक ऐसी पापिनी

के रूप म तिरस्कार की दृष्टि स देखा जाता था जो 'अपने पति को खा गयी'। इसीलिए उसे दिन मे केवल एक बार भोजन दिया जाता था और बहुत ही मोटे तथा मैले कपडे पहनने को दिए जात थ। उससे आशा की जाती थी कि वह यथासम्भव अधिक से अधिक मैली कुचैली रहे और उसके बाल अस्त व्यस्त रहे और शृगार के प्रसाधना का प्रयोग उसके लिए सवथा वर्जित था। उस समाज मे अलग थलग रखा जाता था और इसलिए वह अत्यन्त दु खी तथा एकान्त जीवन व्यतीत करती थी। अब समाज के शिक्षित वग और उसस भी बढकर शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया की अभिवृत्ति बदल जाने के कारण शिक्षित विधवाएँ अच्छे कपडे पहन हुए सामान्य जीवन व्यतीत करती हुई और हर परिस्थिति का सामना बडी हिम्मत और साहस के साथ करती हुई देखी जा सकती हैं। प्रस्तुत पुस्तक की लेखिका ने देखा कि दिल्ली महानगर की शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियो म विधवाएँ बहुत प्रसन्नचित्त रहती थी वे शृगार प्रसाधनो का प्रयोग करती थी और आवश्यक कपडे पहनती थी। पहले की अपेक्षा अधिक हद तक वे पुरुषो के साथ मिलती-जुलती थीं, जीवन का आनन्द लेती थी और अपने लिए उचित वर पाने के उद्देश्य से एक बार फिर विवाह के 'बाजार में' आ गयी थी, यहाँ तक कि यह पहचान सकना भी कठिन हो गया था कि कौन स्त्री अविवाहित है, कौन विवाहित है, किसे तलाक मिल चुका है और कौन विधवा है। यह निस्स देह विधवाओ के प्रति शिक्षित स्त्रिया की अभिवृत्तिया मे परिवतन होने का सकेत है। इस प्रसग मे गुड का कहना है

> जिन स्त्रिया को तलाक़ दे दिया गया हो और विधवाओ दोना ही के पुनर्विवाह के बढते हुए अनुमोदन का स्त्रिया की स्थिति म परिवतन का सूचक माना जा सकता है परन्तु यह परिवार के परम्परागत ढाचे मे भी एक परिवतन है। छोडी हुई या विधवा पत्नी को अब परिवार मे तिरस्कृत स्थान मे ढकेल नही दिया जाता, बल्कि उसे अधिक सामान्य जीवन व्यतीत करने का अवसर दिया जाता है। (गूड, 1963 पृष्ठ 268)।

## विवाह का स्वरूप तथा सम्पन्न करने की विधि

दस वष के दौरान एक विवाही पद्धति या विवाह सम्पन्न करने की विधि के बारे म उनकी अभिवृत्तिया म अधिक परिवतन होते नही देखा गया। दोना ही समयो पर स्त्रियो के विशाल बहुमत ने एक विवाही पद्धति का दृढतापूवक समथन किया और इस बात का विरोध किया कि यदि किसी का पति अथवा किसी की पत्नी जीवित हो और दोनो साथ रहत हो तो वह विवाहित स्त्री अथवा पुरुष दूसरा विवाह कर ले। दोनो ही बार बहुमत कुछ थोडे से पुरानी धार्मिक रीति-रस्मो के पालन के साथ वैदिक विधि स विवाह सम्पन्न करने के पक्ष मे था, यद्यपि दस वष बाद ऐसी स्त्रिया की सख्या काफी बढ गयी थी जिन्होंने यह कहा कि वे इतनी ही हद तक इसके पक्ष मे भी थी कि विवाह वैदिक अनुष्ठानो को कुछ सुगम बनाकर, या सिविल विवाह की पद्धति के अनुसार या

दोनों ही के मिश्रण के आधार पर सम्पन्न किया जाय। इससे पता चलता है कि बहुत-सी शिक्षित श्रमजीवी हिंदू स्त्रियाँ अब भी विवाह संस्कार से सम्बन्धित धार्मिक अनुष्ठान के प्रति आस्था रखती हैं और विवाह संस्कार परम्परागत ढंग से सम्पन्न किये जाने के पक्ष में हैं। वे परम्परागत हिंदू विवाहों की उन रस्मों के विरुद्ध हैं जो अनावश्यक हैं। विवाह सम्पन्न करने की विधि के सम्बन्ध में बम्बई की कालेज छात्राओं की अभिवृत्तियों के अध्ययन के निष्कर्ष भी कुछ इसी प्रकार के हैं। इससे पता चलता है कि सबसे अधिक प्राथमिकता विवाह की नव वैदिक पद्धति को दी गयी, और उसके बाद क्रमानुसार पुरानी वैदिक पद्धति और सिविल पद्धति को (कॉम्यु बल यथा कानारसे 1966 पृष्ठ 27)। विश्वविद्यालय की बहुमत छात्राओं ने कहा कि वे परम्परागत ढंग से विवाह सम्पन्न किये जाने के पक्ष में हैं (कामक, 1961 पृष्ठ 87)। एक और अध्ययन में कालेज की सभी छात्राओं ने कहा कि वे चाहती हैं कि उनका विवाह परम्परागत ढंग से सम्पन्न किया जाय (मथ्यू, 1966, पृष्ठ 48)।

परन्तु सबसे रोचक तथा उल्लेखनीय परिवर्तन उन प्रत्युत्तरों की विषय वस्तु में देखा गया जो दो विभिन्न समयों पर श्रमजीवी स्त्रियों ने यह प्रश्न पूछे जाने पर दिये थे कि उस समय मध्यमवर्गीय हिंदू समाज में विवाह का जो स्वरूप प्रचलित था उसमें उनकी राय में क्या दोष था। जैसा कि इस अध्याय में दिये गये व्यक्ति अध्ययनों में प्रस्तुत किया गया है दो विभिन्न समयों पर दिये गये उनके प्रत्युत्तरों से विवाह के स्वरूप के बारे में उनकी अभिवृत्ति में होनेवाले परिवर्तन का स्पष्ट संकेत मिलता है। पहलेवाले समूह के प्रत्युत्तरदाताओं ने विवाह तय किये जाने के तरीके, दहेज प्रथा, कट्टरपंथी रस्मों तथा धार्मिक अनुष्ठानों के लम्बे तथा निरर्थक क्रम, विवाह के समय व्याप्त गम्भीरता-रहित शोरगुल तथा भीड़ भाड़ के वातावरण विवाह-संस्कार की भयावह मुद्रा और बारात के स्वागत सत्कार में धन तथा परिश्रम के अनुचित अपव्यय की आलोचना की थी। और केवल कुछ उपयुक्त तथा सार्थक वैदिक अनुष्ठानों तथा धार्मिक रस्मों का पालन करके विवाह सम्पन्न करने की विधि को सरल बनाने के सुझाव दिये गये थे। परन्तु दस वर्ष बाद ऐसी ही आलोचना तथा सुझाव अधिक दृढ़ रूप से प्रस्तुत करने के अतिरिक्त बादवाले समूह की स्त्रियों ने यह प्रश्न पूछे जाने पर कि विवाह के स्वरूप में क्या दोष हैं कुछ अत्यन्त असाधारण तथा नये विचार व्यक्त किये। इन विचारों में थे स्वयं एक विवाही पद्धति की आलोचना, उसे नीरस तथा प्रेरणाहीन और साथ ही असन्तापप्रद ठहराना और उस विवाह के सूत्र में बंधे दोनों पक्षों के सम्पूर्ण व्यक्तित्वों के पूर्ण विकास तथा अभिव्यक्ति के लिए अपर्याप्त समझना। उनके मत तथा विचार न्यूनाधिक रूप में एलिस द्वारा किये गये अमरीकियों के उस अध्ययन में अभिव्यक्त विचारों की प्रतिध्वनि थे जिसमें कहा गया है "एक विवाही पद्धति कई लोगों के लिए नीरसता प्रतिबन्धन स्वामित्व भाव और सेक्स की अतृप्ति का कारण बन जाती है, वह रोमांटिक प्रेम का हनन करती है और अन्य कई बुराइयों को जन्म देती है' (एलिस, 1962)।

–इस सम्बन्ध में भी उनके सुझाव इतने ही प्रबोधजनक थे कि विवाह का वह वैकल्पिक रूप क्या है जिसके बारे में वे यह समझती और महसूस करती है कि वह एक विवाही पद्धति से बेहतर होगा, और इस सम्बन्ध में भी कि विवाह तय करने के वैकल्पिक रूप क्या हों। दस वर्ष बाद शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों ने जिन तीन सबसे असाधारण नयी संकल्पनाओं का उल्लेख किया, वे थीं 'सामूहिक विवाह', 'परीक्षण विवाह' और 'किसी भी प्रचलित ढंग का विवाह नहीं बल्कि एक उन्मुक्त प्रेम सम्बन्ध'। इसमें सन्देह नहीं कि ये विचार बहुत ही थोड़ी सी ऐसी स्त्रियों ने व्यक्त किये थे जिनका सम्बन्ध आधुनिक तथा पाश्चात्य ढंग से रहन सहन वाले परिवारों से था और जिनका पालन पोषण तथा शिक्षा-दीक्षा बहुत ही उन्नत ढंग से हुई थी। फिर भी, उनमें भारत में विवाह की प्रथा के बारे में सोचने के ढंग तथा उसके बारे में अपना मत निर्धारित करने के ढंग में एक बहुत महत्त्वपूर्ण उभरती हुई प्रवृत्ति का संकेत मिलता है।

फिर भी, सभी नयी उभरती हुई प्रवृत्तियों के बावजूद पहले की अपेक्षा अधिकांश श्रमजीवी स्त्रियों ने विवाह के बारे में यही कहा कि वह एक आवश्यकता है और अभी दस ही वर्ष पहले की तुलना में उसका प्रचलन कहीं अधिक है। केवल उसकी पवित्रता, स्थायित्व तथा उद्देश्य के प्रति आस्था ने एक नया आयाम धारण कर लिया है। जैसा कि सिंह ने कहा है

> जीवन की गति जितनी ही तेज होती जायेगी और उसकी माँगें जितनी बढ़ती जायेंगी उतनी ही अधिक उस सुरक्षा, स्थायित्व तथा प्रेम की आवश्यकता भी बढ़ती जायेगी जिसे पुरुष तथा स्त्रियाँ एक विशेष सम्बन्ध में खोजती रहती है। आप विवाह-संस्कार सम्पन्न करायें या न करायें, युगल-बन्धन की आवश्यकता बनी रहेगी। नया आयाम यह है कि यह बन्धन स्थायी नहीं है (सिंह, 1971)।

दस वर्ष के अन्तराल से जिन स्त्रियों का अध्ययन किया गया उनके उन विभिन्न कथनों बयानों तथा प्रत्युत्तरों से, जिन्हें उनके व्यक्ति अध्ययनों में प्रस्तुत किया गया है यह संकेत मिलता है कि विवाह में निजी सन्तोष, सुख और सुविधाओं को दस वर्ष पहले की तुलना में आज अधिक महत्त्व दिया जाने लगा है। और ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात काफी बढ़ गया है जो इस बात का पक्का भरोसा कर लेने के बाद ही विवाह करना चाहती है या विवाह करने का फैसला करती हैं कि विवाह करने से उन्हें जो सोचा-समझा लाभ मिलेगा वह हानि से कहीं अधिक होगा।

इस प्रकार यह देखा गया कि विवाह के प्रति श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्ति में वैयक्तिक तथा निजी हितों तथा लाभों की प्रेरणा अधिक बलवती होती जा रही है जबकि दूसरों के हित तथा समाज के कल्याण का ध्यान क्षीण होता जा रहा है। उनकी

विचार शैली, उनके तर्क और उनके आचरण जैसाकि उन्होंने स्वयं वर्णन किया, इस संकेत को और पुष्ट करते हैं कि अब आत्मिक, परोपकारी तथा समाज के हितों के विचार से विवाह करने की प्रवृत्ति निरंतर कम होती जा रही है और अधिकाधिक विवाह व्यक्ति-विशेष की भौतिक, संवेगात्मक तथा संवेदनात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किये जाने लगे हैं।

# 4

## सेक्स–उन्मादमयी ज्वाला

सेक्स और-जीवन का जन्म एक साथ हुआ और वे एक दूसरे से अभिन्न है। सेक्स की सहज प्रवत्ति जीवन के गति चक्र मे सदा ही शक्तिशाली प्रेरक तथा आगे बढानेवाली शक्ति रही है। आदिकाल स ही मनुष्य इसकी गहराई तथा तीव्रता, इसकी व्यापकता तथा विस्तार और इसकी शक्ति तथा इसके रहस्यमय स्वरूप को अनिवायत रोमाचित होकर अनुभव करता आया है। परन्तु अब से पहले यह कभी ऐसा प्रबल उन्माद नही था जसा कि आज है। जीव-सृष्टि के आरम्भ से ही सेक्स का अस्तित्व रहा है और सेक्स मे कोई नयी बात न होते हुए भी वह हमेशा से विवाद तथा गहरे चिन्तन का विषय रहा है। सेक्स ने मनुष्य को विस्मय मे डाले रखा है और इसस उत्पन्न होनेवाले प्रश्नो मे उलझाये रखा है और यह मनुष्य के ध्यान तथा चिन्ता का केन्द्र बना रहा है।

मनुष्य के लिए सेक्स के दो मुख्य प्रयाजन ह। एक है प्रजनन और दूसरा है सुख। जैविकी आवश्यकता के रूप मे सेक्स का सदा स सभी लोगो ने हर समय और हर जगह अत्यन्त वाछनीय माना है। परन्तु केवल वासना की तृप्ति के लिए इसका उपयोग सामाजिक तथा नैतिक विवाद का विषय रहा है।

एक सेक्स का दूसरे सेक्स के प्रति आकर्षण, एक की दूसरे के लिए सेक्स-कामना तथा अततोगत्वा दोनो का ससग अत्यन्त प्राचीन काल से लगभग सभी देशो के साहित्य की विषय-वस्तु रहे है। सेक्स कामना चूकि प्रबल तथा लगभग अदम्य होती है, इसलिए वह आज के सभ्य मनुष्य की भाति आदिम मनुष्य के सामने भी यह समस्या उत्पन्न करती रही है कि "सामाजिक सामजस्य तथा कल्याण का कम स कम कुछ हद तक बढावा देने के लिए इसे किस प्रकार अनुशासनबद्ध तथा सगठित किया जाये। इसलिए विवाह की प्रथा और उसके साथ सलग्न नैतिक आचरण के मानदण्डो न विकसित हाकर सामाजिक प्रचलन का रूप धारण कर लिया। जब विवाह नियम बन गया तो विवाह की परिधि

के बाहर सेक्स आचरण पापमय अनैतिक, अवैध इत्यादि समझा जाने लगा" (पुणेकर और राव 1967, पृष्ठ 1)।

महाभारत में इस आशय के प्रसंग मिलते हैं कि प्राचीनकाल में स्वच्छन्द काम तृप्ति को पाप नहीं समझा जाता था बल्कि उसका व्यापक प्रचलन था, और स्त्रियां जो चाहती थीं करती थीं। बाद में जब स्वच्छन्द सभोग का स्थान नियमित विवाह ने ले लिया तो पुरुषों तथा स्त्रियों के लिए एक ही मानदण्ड निर्धारित कर दिया गया और स्वच्छन्द सभोग के सेक्स सम्बन्धों का पालन करनेवाले पुरुष को भी उतना ही पापी समझा जाने लगा जितना कि स्त्री को (देखिए राधाकृष्णन, 1956, पृष्ठ 144 145)।

चेस्सर का मत है कि प्रेम तथा सेक्स की दो आधारभूत मानव आवश्यकताओं के बीच सामजस्य स्थापित करने के लिए विभिन्न समाजों ने विभिन्न हल खोजने का प्रयत्न किया है। उन्होंने बहु विवाह प्रथा बहुपति प्रथा तथा एक विवाह प्रथा को आज-माया है। विवाह से पहले तथा विवाह की परिधि के बाहर स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों की परम्परा उतनी ही पुरानी है जितनी कि मानव-जाति। कुछ लोगों ने सेक्स के तकाजों की सर्वथा उपेक्षा करने की कोशिश की है और कुछ लोगों ने प्रेम को अस्वीकार किया है परन्तु इन दो चरम उपायों से कोई फलप्रद परिणाम नहीं निकले हैं (देखिए चेस्सर, 1964, पृष्ठ 111)।

यद्यपि भारत के प्राचीन शास्त्रीय साहित्य में प्रेम तथा सेक्स के बारे में प्रचुर मात्रा में उन्मुक्त तथा विवेकसम्मत विवेचना मिलती है, परन्तु सबसे पहले वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र में सेक्स-जीवन तथा सेक्स आकर्षण के विभिन्न पक्षों का सुस्पष्ट विव रण प्रस्तुत किया और 'मानव हृदय के जीवन को भरपूर तथा मर्मस्पर्शी बनानेवाले उद्वेगों का चित्रण किया। इस पूरे विवरण में, जो जीवन के गहन प्रेम और उत्कट आध्यात्मिक गम्भीरता से ओत प्रोत है उस संयम जैसी कोई बात नहीं है जिसकी साधना यातना सहन करने की दीक्षा देनेवाले करते हैं। आध्यात्मिक स्वतन्त्रता कामनाओं का स्वेच्छिक दमन करके नहीं बल्कि उनकी विवेकपूर्ण व्यवस्था करके प्राप्त की जानी चाहिए (राधाकृष्णन्, 1956, पृष्ठ 149)। फिर भी विभिन्न सामाजिक तथा नैतिक अवरोधों के कारण वात्स्यायन का काम-सूत्र लिखे जाने के कुछ ही समय बाद सेक्स को वैज्ञानिक गवेषणा की परिधि के बाहर माना जाने लगा और उसकी विवेचना प्रायः वर्जित कर दी गयी और अभी कुछ ही समय पहले तक वह वर्जित रही। परन्तु इधर कुछ समय से सेक्स खुले तौर पर विचार विनिमय का विषय बन गया है जिसकी ओर जन-साधारण तथा विद्वानों दोनों ही का ध्यान आकर्षित हो रहा है। 'आधुनिक समाज में आज विवाद का जो क्षेत्र है उसमें सेक्स उन विषयों में से है जिनकी स्थिति केन्द्रीय है। राजनीति तथा धर्म की तरह ही इसके बारे में भी एक तथाकथित क्रान्ति कारी अथवा प्रगतिशील विचारधारा है जिसका विरोध एक रूढ़िवादी अथवा प्रति क्रियावादी धारणा करती है' (फाकीन्ड 1968 पृष्ठ 195)। और 'सेक्स सातवें दशक की राजनीति है—जिस अर्ध-कल्याणकारी राज्य-व्यवस्था में हम इस समय रहते हैं उसमें

रामाच तथा साहस का अन्तिम क्षेत्र" (बारोफ, 1962)। स्टीफेंस के अनुसार "सेक्स मानव उद्वेगो मे से एक अधिक उपद्रवी उद्वेग प्रतीत होता है—सामाजिक समस्याओ का स्रोत, हर जगह उसके चारो ओर विभिन्न निषेधो तथा प्रतिबन्धो की दीवारें खडी कर दी गयी है। सेक्स-सम्बन्धी प्रतिबन्धो का उल्लघन करने वाला दड तथा यातना का भागी हो सकता है" (स्टीफेंस, 1963, पृष्ठ 145)।

विभिन्न विद्वानो ने इसका विवरण तथा परिभाषा दी है। कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार है "मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सेक्स मानव आचरण का प्रेरित करनेवाला एक आधारभूत उद्वेग है" (शाफील्ड 1968, पृष्ठ 195)। एलिस का कहना है कि "सेक्स जीवन की केन्द्रीय समस्या है सेक्स ही जीवन का मूल है, और जब तक हम सेक्स को समझना नही सीखेंगे तब तक हम जीवन के प्रति श्रद्धा का भाव रखना कभी नही सीख सकते" (एलिस, 1900 'सामान्य भूमिका')। बाद मे चलकर फ्रायड ने सेक्स का प्रयोग बहुत व्यापक अर्थ मे किया और उसे हर प्रकार के शारीरिक आनन्द और इसके साथ ही स्नेह, प्रेम तथा सभी कोमल भावनाओ का पर्याय माना। यही कारण है कि उनकी बाद की रचनाओ मे 'सेक्सीयना' के बजाय 'मनोसेक्सीय' शब्द का प्रयोग किया गया। सेक्स-जीवन से फ्रायड का तात्पर्य है "न केवल वह जिसे आमतौर पर सेक्स कहा जाता है, अर्थात प्रकट प्रौढ विलिंगी सम्बन्ध, वल्कि मनुष्यो के बीच वह समस्त व्यवहार जिसमे वे एक दूसरे के निकट शारीरिक सम्पर्क मे आते हो' (ब्राउन, 1940, पृष्ठ 157)।

फ्रायड के अनुसार दो आधारभूत सहज प्रवत्तिया अथवा आवेग होते हैं और उनके मतानुसार सहज प्रवत्तिया तथा आवेग वे आधारभूत शक्तियाँ है जो जन्मजात होती है और सीखी हुई नही होती और जिनके कारण ही मनुष्य उस प्रकार का आचरण करता है जैसा कि वह करता है। उनके अनुसार इनमे से एक सहज प्रवत्ति है जीवन की सहज प्रवृत्ति अर्थात प्रेम की सहज प्रवत्ति जो उन सभी शक्तियो का स्रोत है जो मनुष्य को स्वय अपने को तथा अपने वश का सुरक्षित रखने के लिए प्रेरित करती हैं। उनकी पूर्ववर्ती रचनाओ से यह धारणा बनती है कि उनका विश्वास यह था कि समस्त व्यवहार सेक्स से प्रेरित होता है। परन्तु उनके अनुसार काम-भावना अथवा जीवन की सहज प्रवत्ति उस व्यापक अर्थ मे सेक्स आचरण का स्रोत है जो उन्होने 'सेक्स' शब्द का दिया था। उनके अनुसार 'लिबीडो (अर्थात काम-वासना) जीवन की सहज प्रवत्ति का एक महत्त्वपूर्ण अग है और वह एक ऐसा आवेग है जो लोगो के बीच पारस्परिक निकट शारीरिक सम्पर्क स्थापित करता है। फ्रायड के अनुसार, "प्रौढ विलिंगी प्रेम सम्बन्ध बल्कि विलिंगी तथा समलिंगी दोनो ही अर्थों मे माता पिता का प्रेम, भाई-बहनो का प्रेम और घनिष्ठ मित्रता का प्रेम भी काम-वासना पर आधारित होता है' (ब्राउन, 1940, पृष्ठ 182)। फ्रायड ने 'सेक्सीयना तथा 'लिबीडो' शब्दो का प्रयोग बहुत व्यापक अर्थ मे किया है, जिनकी परिभाषा उन्होने समस्त घनिष्ठ मानव प्रेम-सम्बन्धो के प्रसग मे की है।

राइसमन ने अपने अध्ययन में (1959) यह मत व्यक्त किया है कि सेक्स पूर्ण उदासीनता के खतरे के विरुद्ध एक प्रकार की सुरक्षा प्रदान करता है। (पर निर्देशित व्यक्ति) उसकी ओर अपने जीवित होने के आश्वासन के लिए देखता है (देखिए ग्रीन, 1964 पृष्ठ 21)। किर्केडाल की प्रस्थापना यह है कि "सेक्स वही अच्छा है जो निर्माण करे, न कि पीड़ा पहुंचाये जबकि स्टोक्स का कहना है कि 'जो भी चीज़ सेक्स अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों का बढ़ावा दे वह नैतिक है' (देखिए ग्रीन, 1970, पृष्ठ 29)।

'संसर्ग की सहज प्रवृत्ति' से लेकर 'जीवन प्रेरणा' और 'जीवन शक्ति' तक सेक्स के अनेक अर्थ हो सकते हैं। अगर कोई यह कहे तो बिल्कुल गलत न होगा कि सेक्स संसर्ग की वह सहज प्रवृत्ति है जो वंशक्रम को बनाये रखने के उद्देश्य से पुरुषों तथा स्त्रियों को एक दूसरे के प्रति आकर्षित करती है और यह कि सेक्स प्रजनन की एक ऐसी सहज प्रवृत्ति है जो सभी प्राणियों में पायी जाती है। सेक्स की सहज प्रवृत्ति के बारे में गड्डीज़ ने लिखा है कि 'यह ऐसा आवेग, ऐसा उद्वेग, ऐसी प्रेरणा है जो जन्म से ही हमारे अन्दर होती है। शैशवकाल के प्रथम कुछ महीनों में ही, कभी-कभी जन्म के समय ही इसका प्रादुर्भाव होता है। मरणकाल तक इसका अस्तित्व रहता है। इसके तात्कालिकता के शिखर होते हैं (गड्डीज़, 1954, पृष्ठ 13)। इस प्रसंग में आर्नल्ड ने कहा है, 'सेक्सगत अभिरुचि उत्तेजना तथा कामना एक गहरा, आधारभूत अविकीर्य आवेग है जो आदिकाल से ही मानव-जाति में पाया जाता है। इसकी अभिव्यक्ति तथा तुष्टि के असंख्य विभिन्न रूप हुए हैं परन्तु इसका आधारभूत अस्तित्व सुख, आनन्द, ईर्ष्या भाव, घृणा तथा वंश वृद्धि प्रदान करने के लिए निरन्तर बना रहा है' (आर्नल्ड, 1965, पृष्ठ 47)। और किंग (1953) ने अनेक बार सेक्स सम्बन्धों का उल्लेख सामाजिक-सेक्सीय सम्बन्धों के रूप में किया है (बेबर, 1954 पृष्ठ 50)।

मनुष्य "जन्मजात शक्तियों द्वारा प्रजनन के लिए प्रेरित होता है। इस प्रेरणा को मुख्यतः सेक्स कहा जाता है। यद्यपि आधारभूत प्रेरणा जन्मजात होती है परन्तु उसकी अभिव्यक्ति को ढाला जा सकता है' (गेड्डीज, 1954 पृष्ठ 28)। परन्तु मनुष्य के प्रसंग में सेक्स का अर्थ केवल काम क्रिया तक ही सीमित नहीं है। डेविस लिखते हैं

> यह मनुष्य के व्यक्तित्व का अंग होता है। यह ऐसी प्रबल प्रेरणा होती है जो शायद हम जितना कि हम समझते हैं उससे कहीं अधिक प्रभावित करती है। अलग अलग व्यक्तियों की महत्वाकांक्षाओं तथा उद्देश्यों पर इसका प्रभाव अलग अलग ढंग से पड़ता है।
>
> सेक्स मनुष्य के शारीरिक तथा भावनात्मक दोनों ही पक्षों का एक रहस्यमय जटिल अंग है, जो घनिष्ठ रूप से वैयक्तिक होने के साथ ही अन्य लोगों के साथ हमारे सम्बन्धों का भी एक महत्त्वपूर्ण तत्व होता है, यह आत्मिक विकास का एक कारक और पूरे चरित्र पर एक प्रभाव है। यह जीवन की अखंड ज्योति को जलाये रखने का साधन है (डेविस 1958, पृष्ठ 9 10)।

राधाकृष्णन् का मत है कि सेक्स आवेग की तुष्टि "कॉफी की प्याली पी लेने के समान नहीं है। यह कोई तुच्छ, महत्त्वहीन घटना नहीं है जिसकी कोई याद बाकी न रहती हो। इसके फलस्वरूप स्नेह मित्रता तथा प्रेम उत्पन्न होता है। आधुनिक सेक्स-जीवन का उथलापन बढ़ती हुई अभद्रता का संकेत है' (राधाकृष्णन्, 1956, पृष्ठ 150)। प्रेम के बिना सेक्स-सम्भोग के बारे में रसल की मान्यता है कि वह "सहज प्रवृत्ति को कोई गहरा सन्तोष प्रदान नहीं कर सकता। प्रेम के बिना सेक्स-सम्भोग का कोई मूल्य नहीं है और उसे मुख्य प्रेम करने के उद्देश्य से किया जानेवाला प्रयास ही समझा जाना चाहिए' (रसल, 1959, पृष्ठ 86-87)।

हेमिंग लिखते हैं कि पशुओं के विपरीत मनुष्य में "सम्बन्धों तथा वैयक्तिक विकास के लिए सेक्स एक सशक्त बल होता है। वह एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक तथा सम्बद्धकारी गतिविधि है जो परस्पर सुख पहुँचाने के गुण में समृद्ध है। प्रजनन तो उसका केवल एक जैविकीय कार्य है (हेमिंग, 1970, पृष्ठ 13)। रोमन कैथोलिक मत के अनुसार सेक्स पवित्र और स्वभावतः अच्छा होता है। प्रजनन का विशिष्ट साधन होने के नाते वह पवित्र होता है। परन्तु जब कभी सेक्स क्रिया का सुख भोग करने और प्रजनन के पुनीत ध्येय से बचने के लिए उसका प्रयास किया जाता है तो वह पापमय हो जाता है (देखिये टामस, 1956, पृष्ठ 45 46)।

सेक्स के सम्बन्ध में वात्स्यायन की कल्पना यह थी कि इसका उद्देश्य केवल प्रजनन ही नहीं है बल्कि वह पार्थिव सुखों में से एक महानतम सुख को प्राप्त करने का स्रोत और साधन है और जिसे अनुभव करने तथा जिसका सुख भोगने का अधिकार हर व्यक्ति को है। रसेल ने कहा है कि "खाने और पीने की तरह सेक्स भी मनुष्य की स्वाभाविक आवश्यकता है। यह तो सच है कि मनुष्य इसके बिना जीवित रह सकता है, जबकि खाने-पीने के बिना वह जीवित नहीं रह सकता, परन्तु मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से सेक्स की इच्छा बिल्कुल वैसी ही है जैसी खाने पीने की इच्छा' (रसल, 1959, पृष्ठ 196)। आगे चलकर वह यह भी कहते हैं कि सेक्स का सम्बन्ध मानव जीवन की कुछ महानतम अच्छाइयों के साथ है और इसलिए इसे केवल एक स्वाभाविक भूख और खतरे का सम्भव स्थान नहीं माना जा सकता। कुछ इसी प्रकार के विचार व्यक्त करते हुए सोरेंसन लिखते हैं

> यह सच है कि सेक्स और भोजन मानव-जाति की बड़ी बुनियादी आवश्यकताएँ हैं। युद्ध या सशस्त्र विद्रोह के रूप में सामाजिक उथल-पुथल के दौरान, जिनके साथ अनिवार्यतः भुखमरी और अभाव की स्थिति भी पैदा होती है, भोजन का महत्त्व सेक्स से बढ़ जाता है, लेकिन जब स्थिति सामान्य होती है, और विशेष रूप से वास्तविक अथवा कल्पित समृद्धि के दौर में पलड़े उलट जाते हैं और सेक्स अधिक आधारभूत तत्त्व की तुलना में अधिक महत्त्व धारण कर लेता है (सोरेंसेन पृष्ठ 372-373)।

एच० जी० वेल्स ने यह मत व्यक्त किया है कि "हममे से अधिकाश लोगो के लिए सेक्स एक आवश्यकता है, और केवल ऐसी आवश्यकता भी नही जो कोई ऐसी तात्कालिक वस्तु हो जिसे उदाहरणार्थ, किसी वेश्या के पास जाकर लगे हाथ तुष्ट किया जा सके, बल्कि वह ऊर्जा, आत्मविश्वास तथा सृजनात्मक शक्ति का स्रोत होती है' (देखिए पोमेराई 1936 पृष्ठ 69)। और "इतना ही नही, सेक्स सृजनात्मकता के लिए आवश्यक होने के अतिरिक्त जीवन पर पूर्ण प्रभुत्व प्राप्त करने मे भी योगदायक है" (पोमेराई, 1936, पृष्ठ 74)।

राधाकृष्णन का दृढ मत है "यह सोचना उचित नही है कि स्त्री तथा पुरुष को एक दूसरे से केवल आनन्द के लिए शारीरिक आनन्द नही प्राप्त करना चाहिए, और केवल सन्तानोत्पत्ति के लिए ही ऐसा करना चाहिए। यह सोचना भी गलत है कि सेक्स-कामना स्वत एक बुरी चीज है और एक सिद्धान्त के रूप म उस पर प्रभुत्व प्राप्त करना तथा उसका दमन करना ही गुणकारी है" (राधाकृष्णन, 1956 पृष्ठ 189 190)। फ्रायड ने इस बात पर जोर दिया है कि सेक्स का दमन हमेशा विक्षिप्तता, उद्विग्नता तथा मानसिक विकार का कारण होता है। फ्रायड के मनोविज्ञान की आलोचना सेक्स पर आवश्यकता से अधिक बल देने के कारण की गयी है, परन्तु फ्रायड का यह कहना गलत नही था—और किसी भी योग्य प्रामाणिक व्यक्ति ने इसका खडन नही किया है—कि सेक्स के दमन के फलस्वरूप वस्तुत शारीरिक विकार उत्पन्न होते हैं। इस विचार से सहमति व्यक्त करते हुए राधाकृष्णन कहते है

> जबकि की दृष्टि से सेक्स की सहज प्रवृत्ति की तुष्टि न करने से स्नायविक अस्थिरता उत्पन्न होती है, मनोविज्ञान की दृष्टि से इसके फलस्वरूप रिक्तता तथा मनुष्य मात्र के प्रति विद्वेष की भावना उत्पन्न होती है पुरुषो तथा स्त्रियो के विशाल बहुमत के लिए और पूरी मानव जाति के लिए सेक्स सम्बन्ध सबसे आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध होते है (राधाकृष्णन्, 1956, पृष्ठ 150)।

पोमेराई का मत है कि सेक्स जीवन का एक आवश्यक अग है, "मनोविज्ञान की दृष्टि से भी उसमे कम नही जितना कि शारीरिक दृष्टि से, और उसे न तो मनुष्य के जीवन से अलग कोई चीज समझा जाना चाहिए, और न ही इसे उसका पूरा अस्तित्व माना जाना चाहिए। सबसे बढकर, सेक्स को किसी भी प्रकार लज्जाजनक नहीं समझा जाना चाहिए ' (पोमेराई, 1936, पृष्ठ 125)। और "सेक्स को कोई गन्दी या अभद्र चीज समझना नैतिक विकार का चिह्न है। सेक्स की सहज प्रवृत्तियाँ स्वभावत लज्जास्पद नहीं होतीं। ईसाई मत में जो क्रूरतापूर्ण कठोर रवैया अपनाया गया है उससे हिन्दू विचारधारा सहमत नहीं है" (राधाकृष्णन्, 1956, पृष्ठ 148)। ईसाई मत मे यह कहा गया है कि "जिस सेक्स-कामना का लक्ष्य वशवृद्धि न हो वह गन्दी और पापमय है, कि वह प्रेम नहीं वासना है। लगभग दो हजार वर्ष तक ईसाई धर्म ने सेक्स की हर उस अभिव्यक्ति को जिसे ईसाई धर्म का आशीर्वाद प्राप्त न हो

अनैतिक ठहराने की कोशिश की है और इसमें उसे बड़ी हद तक सफलता भी मिली है' (सारेंसेन, पृष्ठ 395)।

इसके विपरीत हिन्दू सेक्स-जीवन को पवित्र मानता है (देखिए, राधाकृष्णन, 1956, पृष्ठ 149)। भारत में 'सेक्स जीवन को जितना पवित्र और देवोचित स्थान दिया गया है उतना संसार के किसी और भाग में नहीं। हिन्दू स्मृतिकारों के मन में इस प्रकार का विचार कभी उत्पन्न ही नहीं हुआ कि कोई भी चीज जो स्वाभाविक हो वह अरुचिकर और अश्लील हो सकती है, यह गुण उनकी सभी रचनाओं में व्याप्त है, परन्तु इसे उनके नैतिक सिद्धान्तों के भ्रष्ट होने का प्रमाण नहीं कहा जा सकता' (एलिस, 1905)।

वात्स्यायन ने 'काम'—सेक्स—शब्द का प्रयोग प्रेम के पर्याय के रूप में किया है और उनकी रचना **कामसूत्र** सेक्स की कला तथा प्रविधि के प्रामाणिक ग्रंथ के रूप में नहीं बल्कि प्रेम की कला तथा उसके संस्कारों के प्रामाणिक ग्रन्थ के रूप में सुविख्यात है। यद्यपि उसका विषय काल्पनिक (रोमांटिक) प्रेम नहीं बल्कि सेक्स प्रेम है, फिर भी वात्स्यायन ने उसे 'प्रेम विज्ञान' कहा है, 'सेक्स विज्ञान' नहीं। इस महत्त्वपूर्ण समाज शास्त्रीय प्रामाणिक ग्रंथ में सेक्स को भरपूर यथा स्फूर्तिमय जीवन का आवश्यक अंग माना गया है। वात्स्यायन के कामसूत्र के प्रसंग में क्लाफ लिखते हैं

> वात्स्यायन सेक्स को हिंसा की सम्भावना से परिपूर्ण क्रिया मानते हैं, जिसमें प्रेम का रूप क्रोध में परिवर्तित हो सकता है। काम की मूल परिभाषा ज्ञानेन्द्रिय तथा उसके लक्ष्य के बीच विशेष प्रकार के सम्पर्क के रूप में भी की गयी है, और उसके फलस्वरूप जो आनन्द प्राप्त होता है वह काम है। काम की शिक्षा कामसूत्रों और अनुभव से प्राप्त होती है (क्लाफ, 1964, पृष्ठ 10 और पृष्ठ 14)।

वात्स्यायन के अनुसार, उन मनुष्यों के लिए जो संयम का पालन करना चाहते हैं सेक्स एक ऐसी कला और प्रविधि है जिसके सफल तथा सन्तोषप्रद क्रियान्वयन के लिए उसे सीखना पड़ता है और उसमें निपुणता प्राप्त करनी होती है। इस प्रसंग में सोमराई कहते हैं

> इस प्रकार सेक्स के सम्बन्ध में सत्य यह है कि यह मानव जीवन का एक सबसे सशक्त तथा उपयोगी उपादान होता है। यह सौन्दर्य विभिन्न कलाओं और समस्त सच्ची सृजनात्मकता का जन्मदाता है, यह स्त्रियों का पुरुषों के अन्दर और पुरुषों का स्त्रियों के अन्दर उच्च सर्वोत्कृष्ट गुणों को उद्दीप्त करने के लिए अग्नि तथा शान्ति [illegible] है, यह सामाजिक सहानुभूति तथा सहृदयता का [illegible] देता है और सदा चक्कर यह दीप्तिमान जीवन [illegible] अपार आनन्द तथा अवसादमुक्त उत्पन्न करता है (पामगार, 1936, पृष्ठ 79)।

मनुष्य में सेक्स मुख्यतः 'शरीर-क्रिया-सम्बन्धी मूल' प्रवृत्ति [illegible] होती, जैसा

रि पशुग्रा म हाती है, जिसकी प्रकट ग्रभिव्यक्ति हर जगह लगभग एक बधे हुए ढग म हाती हा। मूल प्रवृत्ति वे बुनियादी तौर पर एक जसी रहत हुए भी, मनुष्या म उसके सवग, उसकी भावनाएँ ग्रौर उसकी ग्रभिव्यक्ति के ढग बहुत बडी हद तक इनके समाजीकरण तथा परसस्कृतिग्रहण के रूपा से ग्रनुकूलित होत रहत ह ग्रौर मूल प्रवृत्ति विभिन्न प्रकार के सामाजिक-सास्कृतिक ग्रनुकूलना के ग्रनुसार बदलती रहती है। व्यवहार तथा ग्रभिवृत्तीय रूपा दोना पर ही इसका प्रभाव पडता ह। सवड कहत है, 'रीढदार जीवा के सोपान-क्रम पर हम जैसे-जैस ऊपर की ग्रोर बढते हैं, वस-वसे वैयक्तिक ग्राचरण पर समाज का नियन्त्रण बढता जाता है, यहा तक कि मानव-स्तर पर पहुँचकर हम सेक्स को केवल एक पूरी सस्कृति की पृष्ठभूमि म समझ सकत ह" (सवड, 1954, पष्ठ 1)।

स्टीफेंस का कहना है कि ससार के बहुत-से समाज विवाह स पहल सक्स सगम की ग्रनुमति दत ह। मर्डोक ने ग्रपनी सामाजिक सरचना (मर्डोक, 1949, पृष्ठ 265) म बताया हे कि विवाह स पहले के सम्बन्धा की 65 समाजा म पूरी तरह ग्रनुमति दी जाती है ग्रौर 43 म कुछ शर्तों के साथ उनका ग्रनुमोदन किया जाता है ग्रौर 9 समाजा म उन्हे केवल बहुत ही हल्के ढग स ग्रस्वीकार किया जाता है, ग्रौर केवल 44 समाजा म व सवथा वर्जित हैं। लगभग 70 प्रतिशत उदाहरणा मे विवाह स पहले हर प्रकार की छूट रहती है। शेष उदाहरणा म भी प्रतिबन्ध मुख्यत स्त्रिया पर लगाया जाता है ग्रौर ऐसा प्रतीत होता है कि यह कोई नैतिक ग्रावश्यकता न होकर मुख्यत विवाह से पहले गभधारण की रोकथाम का एक उपाय है। ग्रधिकाश समाजा मे परस्त्रीगमन के विरुद्ध नियम है हालाकि जसा कि मर्डोक ने बताया है, इसका सम्मान पालन की ग्रपेक्षा खडन के रूप मे ग्रधिक किया जाता है।" फोड तथा बीच (1951, पष्ठ 115) का बयान है कि विभिन्न ग्रन्त सास्कृतिक समाजो का जो नमूना उन्होने चुना था उसमे से 61 प्रतिशत समाजा मे परस्त्रीगमन के विरुद्ध नियम है हालाकि लगभग 17 प्रतिशत उदाहरणा म यह नियम केवल स्त्रिया पर लागू होता है। एक उदाहरण म—हिन्दू भारत म—पत्नी के परपुरुषगमन के लिए कठोर दण्ड दिया जाता है, जबकि पुरुषा पर किसी प्रकार के प्रतिबन्धा के बारे म कोई सूचना नही है" (देखिय स्टीफेंस, 1963, पृष्ठ 245-253)।

सेक्स के प्रति सास्कृतिक ग्रभिवत्तिया म जो ग्रन्तर पाय जात है उनकी सीमाएँ बहुत व्यापक हैं। इन सीमाग्रो म एक छोर पर तो मध्य प्रशान्त महासागर म भूमध्य रेखा पर स्थित द्वीपा के निवासिया—मार्विवमना की सेक्स या ग्रानन्द के रूप म बहुत मूल्यवान समझने की ग्रभिवत्ति है (कार्डिनर, 1939) तो दूसर छोर पर न्यूगिनी के एक ग्रौर समूह—मनुग्रा की सक्स की निन्दा करने ग्रौर सक्स को वस्तुत पापमय समझने की ग्रभिवृत्ति है (मीड, 1930 ग्रौर 1934)। इसके ग्रतिरिक्त समय की गति के साथ ग्रभिवत्तिया भी बदलती रहती ह, जसा कि भारत म सेक्स के सम्बन्ध म उसे पवित्र मानन से लेकर उसे गन्दा, ग्रश्लील तथा पापमय समझकर तिरस्कार की दृष्टि से

उसके पिता एक ख्यातिप्राप्त कालेज मे दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर तथा विभागाध्यक्ष थे। उनका दृष्टिकोण धार्मिक तथा दार्शनिक था, वह बहुत विद्वान् थे और अध्यापन के काम में उन्हे बहुत गहरी लगन थी। घर पर उनके विद्वतापूर्ण प्रवचनो और धर्म के दर्शन गीता के नैतिक मूल्यो तथा प्राचीन भारत की सांस्कृतिक धरोहर के बारे मे उनके सांस्कृतिक व्याख्यानो का मीता के विकासशील मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पडा था। मीता के मन मे यह धारणा बन चुकी थी कि हिन्दू समाज की संस्कृति तथा नैतिक मूल्य सबसे अच्छे है, चिरस्थापित परम्पराओ के विरुद्ध आचरण करना हितकर नही है और यह कि अपने माता पिता का अनादर करना, जो अपनी सन्तान के एकमात्र संरक्षक तथा मार्गदर्शक होते हैं, धर्म के प्रतिकूल है।

उसकी मां ठेठ पारम्परिक भारतीय पत्नी तथा माता थी। उन्होने कभी नियमित रूप से किसी स्कूल मे शिक्षा नहीं पायी थी पर हिन्दी अच्छी तरह लिख-पढ लेती थी। वह एक कट्टरपंथी परिवार की थी। मीता चूंकि बहुत सुशील बच्ची थी इसलिए उसके माता पिता और पडोसी तथा अन्य सम्बन्धी भी उसको बहुत लाड-प्यार करते थे। उसकी सबसे अच्छी मित्र उसकी स्कूल की एक सहपाठिनी थी, जिसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि उसकी जैसी ही थी और उसकी अभिरुचियां तथा विचार भी उसके जैसे ही थे, और खेल मे तथा काम मे वही उसकी संगिनी थी। मीता को अपने भाई से बहुत लगाव था। दोनो बहुत स्नेहमय स्वभाव के थे और दोनों को एक दूसरे से गहरा लगाव था। परन्तु अपने सामाजिक तथा नैतिक विचारों मे परिवार बडा कट्टरपंथी था और इसलिए मीता को लडकों से दूर रखा जाता था। मीता को न अपने भाई के मित्रों से मिलने दिया जाता था और न अपनी सबसे अच्छी सहेलियों के भाइयो से और उसे अकेले अपने भाई के साथ बाहर जाने तक की अनुमति नही थी। फलस्वरूप जब वह दस बारह वर्ष की हुई तो लडकों या मर्दों के सामने शरमा जाती थी और स्त्रियो तथा पुरुषों के मिले जुले समूहों मे जान-बूझकर उनसे अलग रहती थी।

उसने अपना बचपन और प्रारम्भिक किशोरावस्था एक छोटे-से कस्बे मे व्यतीत की थी और उसके बाद का जीवन भी एक छोटे शहर मे ही बिताया था। चूंकि परिवार रूढिवादी था और उसके माता पिता कट्टरपंथी थे इसलिए उसने अपनी स्कूल की शिक्षा ठेठ पुराने ढंग की लडकियों के स्कूल मे और कालेज की शिक्षा भी लडकियों की एक संस्था मे पायी थी। अपनी स्कूल की पढाई पूरी करने के बाद वह निर्णायक क्षण आया जब उसके माता पिता उसका विवाह कर देना चाहते थे और वह कालेज की शिक्षा प्राप्त करना चाहती थी। चूंकि उस समय उसके लिए कोई उचित वर नहीं मिला, इसलिए उसे बी० ए० पास कर लेने दिया गया। उसके माता पिता उसके लिए उचित वर ढूंढने की कोशिश करते रहे। बी०ए० पास करने के बाद वह और आगे पढना चाहती थी पर चूंकि उस शहर मे इसके लिए कोई कालेज नही था और उसे किसी सहशिक्षा संस्थान मे जाने नहीं दिया गया इसलिए वह बहुत निराश हुई। फिर भी, बहुत समझाने-बुझाने के बाद उसके पिता ने उसे उस कालेज मे पढने की अनुमति दे दी

जहा वह स्वय पढाते ये ताकि वह उस पर 'निगरानी रख सके'।

शिक्षा पूरी करन क बाद कुछ समय तक वह घर पर बेकार बैठी रही क्योंकि उसके माता पिता उसके लिए किसी उचित वर की खोज में थे। खाली समय काटने के लिए उसने लड़कियो के स्कूल म अध्यापिका की अस्थायी नौकरी कर ली। परतु उसन अनुभव किया कि अध्यापन एक उदात्त व्यवसाय है क्योकि इसम वह दूसरा का ज्ञान प्रदान कर सकती ह और अनुभव प्राप्त कर सकती है। धीरे धीरे वह अपने काम म ऐसी लीन हो गयी और स्वय भी उसम इतनी रुचि लेने लगी कि अध्यापन का मूल्य घर क काम काज स उच्चतर है, जिसम स्त्री की सारी दिलचस्पी और सारी शक्ति अपने पति तथा अपन ही बच्चो पर केंद्रित रहती है जबकि अध्यापक सैकडा छोट छोटे बच्चा क कल्याण की देखभाल कर सकता ह।

किशोरावस्था म ही उसे ईश्वर के प्रति दृढ आस्था थी और वह भगवान कृष्ण की उपासना करती थी हालाकि वह पूजा-प्राथना के लिए मदिर म बहुत कम ही जाती थी। उसे अपने धम के बारे मे बहुत जानकारी थी और वह अक्सर गीता तथा अन्य धार्मिक पुस्तकें पढती रहती थी। वह स्वीकृत अधविश्वासो के प्रति आस्था रखती थी। वह अन्य सभी धर्मो को भी सम्मान की दृष्टि से देखती थी। उसे गीता के उन उपदेशो मे बहुत सुख शान्ति मिलती थी जो उसके स्नेहमय माता पिता न बचपन से ही उसके मन म बिठा दिये थे।

कुछ हद तक नौकरी उसने विवाह होने तक का खाली समय काटन के उद्देश्य से ही की थी, क्योकि इतनी शिक्षा प्राप्त करने के बाद वह खाली नही बैठना चाहती थी। अपन स्कूल मे उसके छात्र और उसके साथ की दूसरी अध्यापिकाए उसका सम्मान करती थी और यद्यपि कठिन परिश्रम के कारण वह कभी कभी थक जाती थी पर कुल मिलाकर वह सतुष्ट थी और यह अनुभव करती थी कि मान्यता प्राप्त करन की उसकी मूल प्रवृत्ति की तुष्टि हो रही है। अनेक वर्षो तक नौकरी करन क साथ साथ उसका पद भी बढता गया, और उसे अपने काम से इतनी गहरी लगन हो गयी कि वह दृढ रूप से यह अनुभव करने लगी कि विवाह हो जान के बाद भी वह अपनी नौकरी नही छोडेगी।

उसके माता पिता ने यह अनुभव करते हुए कि उन पर उसका विवाह कर देने की बहुत बडी जिम्मेदारी है, उसके लिए एक उचित वर खोज लिया। वह भी अध्यापक था। चूकि सीता का अपने माता पिता पर पूरा भरोसा था, और वह सामाजिक परम्पराओ के प्रति सवेदनशील थी और वह इतनी भीरु भी थी कि अपने माता पिता का दिल नहा तोड सकती थी, इसलिए इस मामले म उसने उनके निणय का पालन करन का फसला किया। उसन उनकी पसन्द के व्यक्ति के साथ विवाह कर लेने की सहष अनुमति दे दी और शुद्धत परम्परागत तथा कट्टरपथी पद्धति के अनुसार विवाह कर लिया। चूकि वह विवाह के बाद भी नौकरी करते रहन के लिए बहुत उत्सुक थी और उसका पति भी उसस यही चाहता था, इसलिए वह लगातार काम करती रही। उस

अपने व्यवसाय से भी लगन थी और अपने विवाहित तथा पारिवारिक जीवन से भी। परन्तु वह उन शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों का एक लाक्षणिक उदाहरण थी जो अपने व्यवसाय तथा अपने उच्च पद के बावजूद न तो अपनी भावी उन्नति के बारे में बहुत महत्त्वाकांक्षी होते हैं और न ही अपने विवाहित तथा पारिवारिक जीवन के बारे में बहुत उत्साहमय।

जिस समय उसने सेक्स तथा सेक्स सम्बन्धों के विभिन्न पहलुओं के बारे में अपने मत तथा विचार व्यक्त करने को कहा जा रहा था तो उसे उत्तर देने में अत्यधिक संकोच हो रहा था और उसने कई बार यह टिप्पणी भी की कि सेक्स जैसे सवाल-जनक विषय के बारे में ऐसे खुले तथा साफ़-साफ़ प्रश्न पूछना लेखिका के लिए बड़ी निलज्जता की बात है जो उसकी राय में भारत में विचार-विनिमय के लिए वस्तुतः एक वर्जित विषय था। बड़े धीरज के साथ बहुत समझाने-बुझाने के बाद धीरे-धीरे वह सेक्स से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं तथा प्रश्नों के बारे में अपने उत्तर, टिप्पणियां तथा विचार सामने रखने लगी।

सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता के बारे में अपने विचार व्यक्त करते समय मीना ने बड़ी दृढ़तापूर्वक यह भावना व्यक्त की कि शहरी क्षेत्रों में, विशेष रूप से बड़े शहरों में, रहनेवाले नौजवान लड़के-लड़कियों को आमतौर पर दस वर्ष पहले की तुलना में अब एक-दूसरे के साथ रहने की कहीं अधिक स्वतन्त्रता है। उसकी राय में कुल मिलाकर यह बहुत अच्छी प्रवृत्ति नहीं थी और यह विभिन्न प्रकार के अनैतिक आचरणों का कारण बन सकती थी। वह इस बात की सर्वथा विरोधी थी कि नौजवान लड़के और लड़कियां बिना किसी रोक टोक के एक-दूसरे से मिलें और खुलेआम सेक्स तक के बारे में बातें करें, क्योंकि उसका तर्क यह था कि लड़कों और लड़कियों को इस बात का बुरा प्रलोभन नहीं दिया जाना चाहिए कि वे अपने शील की बलि देकर शरीर-क्रिया-सम्बन्धी अपनी कामनाओं की तृप्ति करें। उसने कहा, "मैं भिन्नलिंगी व्यक्तियों के बीच पूर्ण स्वतन्त्रता के पाश्चात्य विचार का दृढ़तापूर्वक विरोध करती हूँ, क्योंकि स्त्रियों तथा पुरुषों के बीच इस प्रकार की स्वतन्त्रता के फलस्वरूप हर प्रकार का गलत-आचरण होता है और यह मूलतः मानसिक तथा शारीरिक दोनों ही दृष्टियों से हानि-कर है। मैं दृढ़तापूर्वक यह अनुभव करती हूँ कि लड़कों या पुरुषों से मित्रता करना किसी भी प्रकार उचित नहीं है क्योंकि भिन्नलिंगी व्यक्तियों के बीच गहरी मित्रता के फलस्वरूप विवाह से पहले और उसके बाद भी नाना प्रकार की पेचीदगियाँ पैदा हो जाती हैं।' आगे चलकर उसने कहा, "मैं इस बात को अच्छा नहीं समझती कि स्त्रियाँ ऐसे वस्त्र पहनें जिनसे उनके शरीर का अधिकांश ऊपरी भाग, पेट और पीठ खुली रहे या जो सेक्स या उभारों को उजागर करें। मैं समझती हूँ कि इस प्रकार के वस्त्र पहनना और अपने शरीर की नुमाइश करना छिछोरी और भद्दी बात है, क्योंकि इससे अनावश्यक रूप से पुरुषों का ध्यान आकृष्ट होता है और उनमें तुच्छ रति का कौतूहल जागृत होता है।'

यह प्रश्न पूछे जाने पर कि विवाह से पहले नौजवान लड़कियों और लड़कों को और विवाह के बाद पुरुषों तथा स्त्रियों को सेक्स-सम्बन्धी कितनी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए, उसने कहा, 'खेल-कूद, वाद विवाद तथा विचार विनिमय के लिए समूहों के रूप में या सामाजिक अवसरों पर मिलने के अतिरिक्त मैं इस बात के बिल्कुल पक्ष में नहीं हूँ कि कोई लड़का और लड़की या कोई पुरुष और स्त्री विवाह से पहले या विवाह के बाद एक दूसरे से घुलें-मिलें, जब तक कि वे पति और पत्नी न हों। मैं समझती हूँ कि किसी भी नौजवान लड़की या किसी विवाहित स्त्री को अकेले किसी लड़के या पुरुष के साथ नहीं जाना चाहिए। वह लड़कों या पुरुषों के साथ बाहर उसी हालत में जा सकती है जब उसके माता पिता, अभिभावक या पति उसके साथ हों। पूरे समूह के बीच तो एक दूसरे का हाथ पकड़ने में कोई हर्ज नहीं है लेकिन जब केवल दोनों अकेले हों तो यह उचित नहीं है। नौजवान लड़कियों और लड़कों के बीच चुम्बन या अन्य किसी प्रकार की शारीरिक घनिष्ठता सर्वथा अनुचित तथा अनैतिक है। परन्तु कभी-कभार केवल उन लोगों को माथे पर या गाल पर चुम्बन करने की अनुमति दी जा सकती है जिनकी मँगनी हो चुकी हो।"

उसका विश्वास था कि नौजवान लड़कियों तथा लड़कों या स्त्रियों तथा पुरुषों का खुलकर एक दूसरे से घुलना मिलना और उनके बीच शारीरिक घनिष्ठता उनकी शारीरिक कामनाओं अथवा उद्वेगों को उद्दीप्त करती है और इसके फलस्वरूप वे अनैतिक आचरण भी कर सकते हैं। उसका दृढ मत था कि शारीरिक घनिष्टता केवल विवाह के सूत्र में परस्पर बँधे हुए लोगों के बीच होनी चाहिए और वह भी खुलेआम या दूसरों की उपस्थिति में नहीं। उसने यह भी बताया कि उसकी निकटतम सहेलियों के विचार भी इसी प्रकार के हैं।

फिर भी, वह यह महसूस करती थी कि माता पिता को विशेष रूप से बेटियों के मामले में मां को और बेटों के मामले में बाप को, सेक्स के बारे में सब कुछ खुलकर बता देना चाहिए और उनका उचित मार्गदर्शन करना चाहिए। उसका दृढ विश्वास था कि सेक्स वासनाओं के सम्बन्ध में कठोर संयम का—अपने आवेशों के दमन का—पालन किया जाना चाहिए।

इस प्रश्न के उत्तर में कि 'क्या आप समझती हैं कि लड़कियों को भी उतनी ही सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए जितनी लड़कों को?' उसने कहा, 'अगर लड़कों को यह स्वतन्त्रता दी भी जाय तब भी लड़कियों को यह स्वतन्त्रता नहीं दी जानी चाहिए क्योंकि यदि स्वतन्त्रता का अर्थ है भिन्नलिंगी व्यक्तियों के साथ शारीरिक घनिष्ठता बढ़ाने की स्वतन्त्रता, तो एक स्त्री के लिए सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता के परिणाम बहुत गम्भीर हो सकते हैं जबकि पुरुष के लिए वे इतने गम्भीर नहीं हो सकते।' आगे चलकर उसने तर्क दिया "हमारे समाज में अगर कोई लड़की या स्त्री किसी भिन्नलिंगी व्यक्ति के साथ शारीरिक घनिष्ठता पैदा कर लेती है तो बदनाम हो जाती है और अपने को गिरा लेती है जबकि इससे पुरुष की प्रतिष्ठा पर कोई विशेष आंच

नहा श्राती।' उसे इस बात का तीव्र आभास था कि हमारे समाज मे नैतिकता के इन दोहरे मानदण्ड का व्यापक रूप में प्रचलन है, और यह कि उसी प्रकार के अनैतिक कर्म के लिए स्त्री को अधिक पापाचारी समझा जाता है। उसने यह भी कहा कि इतनी शिक्षा और व्यवसायों म इतनी सफलता के बावजूद बेटियाँ को अब तक बोझ समझा जाना है और यह कि घर के भीतर और बाहर दोनों ही जगह पुरुषो तथा स्त्रियो के बीच भेदभाव बरता जाता है।

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कि "आपकी राय म वह कौन-सी चीज़ है जो किसी लडकी को उस लडके के साथ, जिससे वह प्रेम करती है, सहवास करने से रोकती है' उसने कहा, 'निजी तौर पर मैं यह समझती हूँ कि बचपन मे तथा किशोरावस्था म उसके माता पिता या अभिभावक उसके मन म जो नैतिक मानदण्ड तथा सिद्धान्त बिठा देते है वही किसी लडकी को पारम्परिक अथवा सामाजिक दृष्टि से स्वीकृत तथा स्थापित प्रतिमानो की परिधि के बाहर सहवास करने से रोकते ह। जनमत का या परिवार के नाम पर कलक लगाने का या जिस व्यक्ति से वह प्रेम करती ह उसकी दृष्टि मे प्रतिष्ठा खो देने का भय भी उसे ऐसा करने स रोकता है।"

आगे चलकर उसने यह भी कहा कि उसकी राय म विवाह से पहले अपना शील बनाये रखना लडकी के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण बात है क्योंकि अब भी इतने बडे पैमाने पर तथाकथित आधुनिकीकरण के बावजूद, अच्छे परिवारो के लगभग सभी पुरुष अपने लिए वधू का चयन करते समय कौमार्य को बहुत अधिक महत्त्व देते है। उसका दृढ मत था कि यदि कोई लडकी विवाह करने म असमर्थ रहती है, या उस किसी पुरुष से बहुत गहरा प्रेम है, या उसके साथ मँगनी हो चुकी है, तब भी उसके लिए विवाह से पहले उसके साथ सेक्स सम्बन्ध स्थापित करना उचित नहीं है। उसका दृढ विश्वास था कि विवाहित स्त्री के लिए किसी भी स्थिति म यह उचित नहीं है कि वह अपने पति के अतिरिक्त किसी भी व्यक्ति के साथ सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करे। वह समझती थी कि यद्यपि सामान्य स्थिति मे किसी विवाहित पुरुष के लिए भी ऐसा करना उचित नहीं है, परन्तु कुछ परिस्थितियो म, जैसे यदि उसकी पत्नी उसके साथ सोने मे इकार कर दे या वह उसके साथ विश्वासघात करे, तो उसका दूसरी स्त्रियो के साथ सेक्स सम्बन्ध रखना उचित होगा।

इस प्रश्न के उत्तर मे कि यदि उसे पता चल जाये कि उसके पति के किसी दूसरी स्त्री अथवा दूसरी स्त्रियो के साथ सेक्स सम्बन्ध रह है या हैं तो क्या वह इसे सहन करेगी, उसने कहा कि वह इसे बर्दाश्त कर लेगी और अपनी ओर से पूरी कोशिश करेगी कि उससे इस प्रकार का आचरण छुडवा दे। उसने कहा कि वह ऐसी स्त्री को सर्वथा निन्दनीय समझेगी जिसके विवाह से पहले सेक्स सम्बन्ध रह चुके हो, पर यदि किसी पुरुष के रह चुके हो तो उसे वह बर्दाश्त कर लेगी। उसका मत था कि यदि कोई स्त्री पैसे की तगी के कारण अपने सदाचारी जीवन को त्याग देती है तरस खाने या दड दिये जाने के योग्य है परन्तु यदि कोई लडकी अपने अज्ञान के

या विवश कर दिये जाने पर गर्भवती हो जाती है तो उसे वह बर्दाश्त कर लेगी और उसके साथ उसे सहानुभूति होगी। वह यह भी समझती थी कि यदि अपरिहार्य परिस्थितियों के कारण किसी की पत्नी दूसरे पुरुष के साथ सेक्स-सम्बन्ध स्थापित कर लेती है तो पति को सहिष्णुता का परिचय देना चाहिए और उसे क्षमा कर देना चाहिए और उसे उस घटना को भूल जाने की कोशिश करनी चाहिए।

उसने कहा "मैं समझती हूँ कि सेक्स ऐसी पवित्र चीज है कि उसका अनुभव केवल एक पुरुष के साथ किया जाना चाहिए और वह पुरुष उस स्त्री का विधिवत विवाहित पति होना चाहिए। मेरी सबसे अच्छी सहेलियाँ मुझसे हमेशा इस बात में सहमत रही हैं और मेरा हमेशा यह विश्वास रहा है कि विवाह से पहले सेक्स अनुभव की कल्पना भी नहीं की जा सकती और यह कि किसी भी लड़की के लिए विवाह से पहले अपना कौमार्य नष्ट कर देना बहुत गलत है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि हर स्त्री को अपना कौमार्य अपने पति के लिए सुरक्षित रखना चाहिए क्योंकि केवल उसी स्थिति में वह उसका सम्मान कर सकता है। कोई भी पुरुष ऐसी लड़की को सच्चे सम्मान की दृष्टि से नहीं देखता जो पुरुषों को इस प्रकार की मनमानी करने की छूट देती है, वह पुरुष भी नहीं जिसे वह इस प्रकार की छूट देता है। मेरी राय में जो लोग विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्भोग करते हैं वे पशुओं जैसे होते हैं जिन्हें अपनी मूल प्रवृत्तियों अथवा आवेगों पर कोई आत्म-नियन्त्रण नहीं होता।"

विवाह की परिधि के भीतर सेक्स के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए उसने इन कथनों से सहमति प्रकट की कि 'विवाह को सफल बनाने के लिए सन्तापजनक सेक्स सम्बन्धों का सर्वाधिक महत्त्व होता है", कि "सेक्स विवाह का एक महत्त्वपूर्ण अंग है" और यह कि "पति और पत्नी दोनों ही को अपने सेक्स सम्बन्धों में एक दूसरे का ध्यान रखना चाहिए उनमें परस्पर सहानुभूति होनी चाहिए और धैर्य से काम लेना चाहिए।" परन्तु वह इन कथनों से असहमत थी कि 'विवाह की परिधि में पति तथा पत्नी दोनों ही बराबर सेक्स-तुष्टि प्राप्त कर सकते हैं" या यह कि "स्त्री की शारीरिक आवश्यकताएँ उतनी ही बड़ी होती हैं जितनी पुरुष की।" इस बात से तो वह कुछ हद तक सहमत थी कि विवाह की परिधि के भीतर सेक्स का आनन्द प्राप्त करने या सेक्स-तुष्टि प्राप्त करने का पुरुषों तथा स्त्रियों का समान अधिकार है पर इस बात से वह सर्वथा असहमत थी कि दोनों ही को विवाह से पहले या विवाह की परिधि से बाहर सेक्स का आनन्द उठाने का भी समान अधिकार है। वह इन वक्तव्यों से पूरी तरह सहमत थी कि जब सेक्स का सवाल आता है तो स्त्रियों के लिए एक मानदंड होता है और पुरुषों के लिए दूसरा, कि लड़कों के लिए विवाह से पहले सेक्स अनुभव प्राप्त करने की अनुमति है पर लड़कियों के लिए नहीं और यह कि विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्बन्ध रखने की छूट पुरुषों के लिए है पर स्त्रियों के लिए नहीं।

अन्त में उसने इस बात से असहमति प्रकट की कि प्रत्येक व्यक्ति का इस बात

का निणय स्वय करना चाहिए कि उसके लिए क्या उचित है और क्या अनुचित। उसने कहा, "मैं समझती हूँ कि हमारे धम या नैतिक आचार-सहिता म, संस्कृति अथवा समाज म जिस बात को अनुचित और जिस बात को उचित ठहराया गया है, उसे हम ज्यो का त्यो स्वीकार कर लेना चाहिए और किसी का उचित तथा अनुचित की निजी व्याख्या नहीं करनी चाहिए, क्योकि अनुभवहीनता तथा अपरिपक्वता की कच्ची उम्र म लडके और लडकियाँ स्वय इस बात का निणय नही कर सकती कि क्या उचित ह और क्या अनुचित। उन्ह सेक्स सहित पूरे मानव-आचरण के औचित्य तथा अनौचित्य के बारे म ठीक से शिक्षा दी जानी चाहिए तथा उनका मागदशन किया जाना चाहिए, और उन्ह इस बात की आजादी नही दी जानी चाहिए कि व जो भी उचित समझें करें। इस प्रकार की स्वतन्त्रता स उनके विचार और उलझ जायेंगे और उनके मन म द्वन्द्व उठ खडे होगे।

## व्यक्ति-अध्ययन सख्या 11

ललिता 31 वष की थी और बी०ए० पास थी। वह एक प्राइवेट कम्पनी म 700 रुपये मासिक पर नौकरी कर रही थी। वह पिछले सात साल स काम कर रही थी। सूरत शक्ल मे वह औसत से कुछ कम ही थी पर उसका शरीर छरहरा और सुडौल तथा कद लम्बा था। उसकी कपडो की पसन्द बहुत अच्छी थी और वह अपनी वेश भूषा और केश भूषा हमेशा बहुत आकषक रखती थी। उसके बाल कटे हुए थे और वह सौन्दय प्रसाधनो का जी खोलकर प्रयोग करती थी। उसे देखकर ऐसा लगता था कि जैसे उसे अपनी आर्थिक स्वतन्त्रता तथा निजी हैसियत पर बहुत दभ हो। वह बहुत चुस्त और बातूनी थी। इस अध्ययन के दोनो ही चरणो म उसका इन्टरव्यू लिया गया। दस वष बाद यह देखा गया कि उसके विचारो म अधिक निडरता तथा स्पष्टवादिता आ गयी थी।

ललिता एक रूढिवादी परिवार की लडकी थी। उसके पिता किसी छोटे-स शहर म वकील थे। उनकी आमदनी अच्छी-खासी थी और बहुत-सी पुश्तैनी जमीन-जायदाद भी थी, जिसकी वह रिटायर होने के बाद देखभाल करते थ। उसके दो बडी बहन और एक छोटा भाइ था। उसकी माँ धार्मिक प्रवृत्ति की थी और उनका सम्बन्ध किसी छोटे स कस्बे के कट्टरपथी परिवार से था।

ललिता का बचपन बहुत अरुचिकर था, क्योकि उसके माता पिता उसकी बहुत उपेक्षा करते थ। क्योकि जिस समय उसका जन्म हुआ था उस समय उसकी दो बडी बहनें पहले स मौजूद थी इसलिए उसके माता पिता उसके जन्म पर बहुत दुखी हुए थे और उन्होने इसका स्वागत नही किया था। वह जैसे-जैसे बडी होती गयी, उसके माता-पिता ने कभी उसकी ओर ध्यान नही दिया और न ही उस उनका प्यार मिला, इस-लिए भी कि उसकी सूरत शक्ल भी अच्छी नही थी। उसकी बडी बहनें भी उसके प्रति स्नेह नही रखती थी। इसलिए बचपन म वह बहुत अकेलापन महसूस करती थी और

अपन ना तिरस्कृत समझती थी। उस स्वय भी अपन माता पिता या बहनो से कोई लगाव नहीं था क्योंकि उनस उसे कोई स्नेह नहीं मिला था और व हर समय उसके व्यवहार की आलोचना करते रहते थे। उसके आचरण पर बहुत-से प्रतिबन्ध लगा दिये गये थे और इसकी प्रतिक्रिया के रूप में वह उनकी सत्ता की अवज्ञा करती थी और आज्ञाकारी या अच्छे आचरण वाली बच्ची बनने से इन्कार करती थी, जिसके फलस्वरूप वे उसके साथ और भी कठोरता तथा निर्ममता का व्यवहार करते थे।

अपने अत्यन्त रूढ़िवादी विचारों के कारण उसके माता पिता ने अपनी बेटियों की गतिविधियों तथा उनके आचरण के बारे में अत्यन्त कठोर तथा अनुल्लंघनीय नियम बना रखे थे और उन्हें अपनी माँ को साथ लिये बिना अपनी सहेलियों के साथ भी बाहर जाने की इजाजत नहीं थी। जाहिर है कि लड़कों के साथ घुलने मिलने की तो उनके परिवार में कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। उन पर आवश्यकता से अधिक प्रतिबन्ध लगा रखे थे और इस पर बहुत अधिक बल दिया जाता था कि क्या चीज करनी है और क्या नहीं करना है। इसके विपरीत उनके भाई को बिना रोक-टोक, घूमने फिरने, मित्र बनाने और जो भी जी चाहे करने की पूरी छूट थी। अपने घर के इस तिरस्कारपूर्ण कठोर तथा बन्द वातावरण में उसका दम घुटता था और वह अपने माता पिता के इस अन्यायपूर्ण बर्ताव के विरुद्ध विद्रोह करती थी।

उसकी स्कूल की पढ़ाई उसी छोटे-से शहर में हुई थी जहाँ उसके पिता रहते थे। दूसरों का ध्यान आकृष्ट करने के लिए स्कूल में उसका आचरण बहुत स्वच्छन्द रहता था और अपने अध्यापकों तथा अपने सहपाठियों की प्रशंसा प्राप्त करने के लिए वह कक्षा में अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए बहुत मेहनत करती थी। अपनी दूसरी बहनों की अपेक्षा वह अधिक तेज और होशियार थी, लेकिन जहाँ बहुत से लोग जमा हों वहाँ जाने से वह कतराती थी क्योंकि वह समझती थी कि चूँकि उसकी सूरत शक्ल अच्छी नहीं है, इसलिए दूसरे लोग उसे पसन्द नहीं करेंगे। वह किताबें पढ़ने में व्यस्त रहती थी।

स्कूल की पढ़ाई पूरी होने पर उसकी बड़ी बहन का विवाह हो गया। जब ललिता हाई स्कूल में पढ़ती थी तो उसे पता चला कि उसकी बहन की सास इसलिए उसे ताने देती थी और उससे नाराज रहती थी कि उसे घर-गृहस्थी का काम-काज करना ठीक से नहीं आता था। ललिता, जो शुरू से ही घर के काम-काज की ओर कोई ध्यान नहीं देती थी डर गयी और उसने फैसला किया कि वह तब तक विवाह नहीं करेगी जब तक कि उसे कोई ऐसा आदमी न मिले जो अकेला रहता हो और घर का काम-काज करने के लिए नौकर रखने की सामर्थ्य रखता हो। उसने अपना आदर्श यह बना लिया था कि वह जितना भी सम्भव होगा पढ़ेगी और तब आर्थिक दृष्टि से स्वाधीन होकर स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करेगी।

उसके दिमाग पर जिस एक और घटना का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा वह यह थी कि उसकी एक सहेली का जो उम्र में उससे बहुत बड़ी थी विवाह हो गया।

उसने ललिता को बताया कि उसका पति उससे बहुत प्रसन्न नहीं था और क्योंकि वह बहुत सुन्दर नहीं थी, इसलिए वह दूसरी स्त्रियों के पीछे भागता फिरता था। चूंकि ललिता भी हीनभावना-ग्रन्थि का शिकार थी इसलिए उसने फैसला किया कि वह तब तक विवाह नहीं करेगी जब तक कि वह व्यक्ति जिससे वह विवाह करे, उससे प्यार न करता हो क्योंकि अन्यथा उसे यह डर था कि यदि किसी ने उससे विवाह कर भी लिया तो वह उससे प्रेम नहीं करेगा। बहुत छोटी उम्र में ही उसे यह दृढ़ आभास तथा विश्वास हो गया था कि अर्थपूर्ण मानव-सम्बन्ध एक भ्रम है और इसलिए जीवन में उसका लक्ष्य यथासम्भव अधिक से अधिक पैसा कमाना हो गया और इसी से उच्चतर शिक्षा प्राप्त करने की उसकी इच्छा बलवती हुई।

दुर्भाग्यवश जिस समय वह स्कूल में पढ़ रही थी उसकी मां का देहान्त हो गया और इससे उसे बहुत आघात पहुँचा क्योंकि उसने सोचा कि शायद उससे पढ़ाई छोड़कर घर का काम काज करने या विवाह कर लेने को कहा जाय। लेकिन किसी प्रकार उसे अपनी पढ़ाई पूरी कर लेने दी गयी। हाईस्कूल पास कर लेने के बाद उससे कहा गया कि वह घर पर बैठे जब तक कि उसका विवाह न हो जाय, पर उसने इस बात को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। चूंकि वहाँ लड़कियों का कोई कालेज नहीं था, इसलिए उसने आग्रह किया कि उसे कालेज की पढ़ाई पूरी करने के लिए किसी बड़े शहर भेज दिया जाय। उसका खाना पीना छोड़कर अपने पिता के लिए एक समस्या खड़ी कर दी और शुरू में तो उन पर इसकी प्रतिक्रिया हिंसात्मक उपाय करने के रूप में हुई। परन्तु जब उनके मित्रों ने उसके साथ धीरज से काम लेने और उसे लड़कियों के किसी ऐसे कालेज में भेज देने की सलाह दी जहां औरतों के लिए अलग छात्रावास हो जहां वह अपनी पढ़ाई जारी रख सके, तो वह मान गये और उन्होंने उसे कालेज की पढ़ाई के लिए भेज दिया।

घर से दूर कालेज पहुँचकर उसे ऐसा लगा कि वह बड़ी हो गयी है और उस पर जिम्मेदारी आ गयी है। उस समय तक वह लगभग सत्रह वर्ष की हो चुकी थी और उसका डील-डौल बहुत आकर्षक निखर आया था और उसका चेहरा भी पहले से बहुत अच्छा लगने लगा था। लोग उसकी प्रशंसा और सराहना करने लगे और पहली बार उसे ऐसा लगा कि उसे सराहा जा रहा है और उसकी ओर ध्यान दिया जा रहा है। पहली बार अपने पिता की अत्यन्त कठोर निगरानी और प्रतिबन्धों से दूर पहुँचकर उसे ऐसा लगा कि वह जीवन का सुख भोगने के लिए स्वतन्त्र है। यद्यपि छात्रावास में भी अनेक प्रतिबन्ध थे पर वह चोरी-छुपे उन्हें भंग करके अपनी सहेलियों के साथ, और आगे चलकर, कुछ वर्षों बाद, उनके भाइयों और यहाँ तक कि भाइयों के मित्रों के साथ भी बाहर जाने लगी।

चूंकि उसे लड़कों के साथ उठने बैठने की आदत नहीं थी और अपने पिता के घर पर उसे किसी प्रकार की स्वतन्त्रता नहीं थी, इसलिए उसने बताया कि उसने यह महसूस किया कि घर से दूर होने का जितना लाभ हो सके उठा ले। वह लड़कों में

भी केवल इसलिए मित्रता बढाने लगी कि उसे सराहा जाये और उसकी प्रशसा की जाये और वह आश्वस्त हो सके कि उसे भी पसन्द किया जा सकता है और उससे प्यार किया जा सकता है। उसने बताया, "लडको से मित्रता बढाने और उन्हें अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए मैं अपनी ओर से जान-बूझकर परिस्थितिया उत्पन्न करती थी, केवल यह जानने के लिए कि लडको से मिलने जुलने मे क्या बुराई है और अपने बारे मे यह आश्वासन करने के लिए कि मैं उनको मित्र बनाने तथा उनमे प्रेम करने की क्षमता रखती हूँ और मैं इस योग्य हूँ कि वे मुझसे प्रेम करें, मुझे चाहे और मेरी कामना करें। और जीवन मे पहली बार जीवित होने का सुख प्राप्त किया और यह अनुभव किया कि जीवन इस योग्य है कि उसे जिया जाये।" परन्तु चूकि वह भी बहुत बडा शहर नहीं था, इसलिए लोगो का ध्यान उसकी गतिविधियो की ओर जाने लगा और वे उसे बदनाम करने लगे। वह इतनी दुखी हुई कि उसने साल भर तक अपनी पढाई पर ध्यान केंद्रित करने और बी० ए० पास करने के बाद किसी बहुत बडे शहर मे कोई नौकरी कर लेने का फसला किया जहा उसे घूमने फिरने की अधिक स्वतन्त्रता हो।

कालेज की शिक्षा से और बी० ए० पास कर लेने से उसकी सफलता प्राप्त करने की आकाक्षा की तुष्टि हुई। बी० ए० पास करने के बाद उसने अपने पिता की अनुमति लिये बिना एक बडे शहर मे किसी दफ्तर मे नौकरी कर ली। इस पर वह आग बबूला तो बहुत हुए, पर चुपचाप सन्तोष कर लेना पडा। हमेशा से उसकी यही इच्छा थी कि वह किसी दफ्तर मे मर्दों के बीच काम करे, न कि किसी ऐसे सगठन मे जहा केवल स्त्रिया काम करती हो। उसने सोचा कि एक बार आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र हो जाने के बाद वह जो भी करना चाहेगी कर सकेगी और अपने पिता की पूरी तरह अवहेलना कर सकेगी और यह साबित करके दिखा देगी कि उनके विचार तथा धारणाएँ बिल्कुल दकियानूसी हैं।

नौकरी कर लेने और श्रमजीवी स्त्रियो के हास्टल मे रहना शुरू कर देने के बाद, उसे अपने ऊपर और अधिक भरोसा हो गया था और उसके स्वभाव मे अधिक स्वतन्त्रता आ गयी थी। पुरुष सहकर्मियो तथा बडे अफसरो के साथ अपने व्यवहार मे वह बिल्कुल निसकोच थी। नौकरी करने के लिए कुछ ही महीने बाद एक आदमी से उसकी काफी मित्रता हो गयी जो उसकी प्रशसा करता था और उसे सराहता था और उसकी ओर बहुत ध्यान देता था। लेकिन जब उस आदमी ने उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की और ऐसा करने का आग्रह करने लगा तो ललिता को बडी झुझलाहट हुई। उसने सोचा कि एक मित्र के रूप मे तो वह ठीक है, परन्तु वह न तो इतना सुन्दर है, न इतना चुस्त-चालाक और न ही उसकी नौकरी इतनी अच्छी है कि वह उसका पति बन सके। इसके अतिरिक्त उसने फसला कर लिया था कि अभी कुछ वर्षों तक विवाह नहीं करेगी और एक उन्मुक्त व्यक्ति की तरह सचमुच जीवन का आनन्द प्राप्त करेगी।

जहाँ वह काम करती थी और हास्टल में भी उसने ऐसी लड़कियों से मित्रता बनायी थी जो बहुत उन्नत और पाश्चात्य ढंग के रहन-सहनवाले परिवारों की थीं क्योंकि रहन-सहन, आचरण तथा जीवन के प्रति दृष्टिकोण के बारे में उनके विचार, अभिमत तथा उनकी अभिरुचियाँ उसे हमेशा से अच्छी लगती थीं। उनके साथ रहकर उसने बहुत कुछ सीखा और अपने विचारों तथा अपने आचरण को उनके साँचे में ढाल लिया और उसे ऐसे लोगों से सम्बन्ध रखने पर बड़ा गर्व था जिन्हें वह पालन-पोषण तथा पारिवारिक पृष्ठभूमि के दृष्टिकोण से अपने से श्रेष्ठतर समझती थी।

उसके कमरे में जो दूसरी लड़की रहती थी उसको वह अपनी सारी भावनाएँ तथा अपने सारे अनुभव बता देती थी और सकारात्मक दृष्टि से वह काफी बड़ी हद तक उस पर निर्भर रहने लगी थी। उसने अपनी सहेली के जीवन को सुखी बनाने के लिए बहुत कुछ किया और उसकी जो देखभाल वह करती थी उससे उसे बहुत सन्तोष मिलता था। वे लोग हमेशा साथ रहती थीं। दुर्भाग्यवश, पाँच वर्ष से अधिक समय तक उसके साथ बहुत घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित रहने के बाद उसकी सहेली का देहान्त हो गया। अपनी सहेली की मृत्यु के बाद मनोरमा बिल्कुल अकेली और बेसहारा हो गयी और पुनः [illegible] की तरह किसी के साथ के लिए लालायित रहने लगी, विशेष रूप से पुरुषों की संगत के लिए। उसके अचेतन मन में कहीं यह इच्छा रही हुई थी कि उसे कोई ऐसा आदमी मिल जाये जो उसका अकेलापन दूर कर दे और जिस पर वह रचनात्मक सुरक्षा तथा भावनात्मक साहचर्य के लिए पूरी तरह भरोसा कर सके। परन्तु सचेतन रूप से वह अपने कुछ आन्तरिक घुटन के लिए और अपने निराले अकेलेपन को दूर करने के लिए ही पुरुषों के साहचर्य की खोज में रहने लगी।

साथ उसका निरंतर सम्पर्क रहता है।

इन प्रश्नों के उत्तर में कि "क्या आप इस बात का अनुमोदन करती हैं कि माता पिता अपने बच्चों के साथ सेक्स के बारे में खुलकर बात करें ?" और "क्या नौजवान लडकों और लडकियों को आपस में सेक्स के बारे में खुलेआम चर्चा करनी चाहिए ?" उसने कहा कि वह पूरी तरह इन दोनों बातों का अनुमोदन करती है हालांकि दस वर्ष पहले केवल यह कहा गया था कि उसे इसमें कोई आपत्ति नहीं होगी। जब उससे पूछा गया "क्या आप समझती हैं कि आज लडकों और लडकियों को दस वर्ष पहले की तुलना में अधिक सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता है ?" तो उसने कहा कि उन्हें 'कहीं अधिक' स्वतन्त्रता है, जबकि दस वर्ष पहले उसने केवल यह कहा था कि उन्हें 'थोडी अधिक' स्वतन्त्रता है। परन्तु उसने यह कहकर अपने वक्तव्यों की परिधि कुछ सीमित कर दी कि वह समझती है कि केवल बड़े-बड़े शहरों के केन्द्रों में रहने, पढने और काम करनेवाले प्रगतिशील अथवा पाश्चात्य ढंग के रहन सहन वाले परिवारों के लडकों तथा लडकियों को ही कहीं अधिक स्वतन्त्रता मिली है, जबकि छोटे कस्बों या छोटे शहरों में रहने तथा काम करनेवाले लोगों के बीच सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता में केवल थोडी सी वृद्धि हुई है।

उसने कहा, 'लेकिन मैं समझती हूँ कि कुल मिलाकर यह बहुत अच्छी बात है कि उन्हें अधिक स्वतन्त्रता दी गयी है और मेरी राय है कि छोटे शहरों तथा कस्बों में भी अधिक सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए। मेरा दृढ विश्वास है कि हर व्यक्ति को इस बात का फैसला करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि उसके लिए क्या उचित है और क्या अनुचित और उसे अपना जीवन जिस ढंग से वह सबसे अच्छा समझे व्यतीत करने देना चाहिए। माता पिता की ओर से अत्यधिक हस्तक्षेप बच्चों के जीवन को अत्यन्त दुखी तथा नीरस बना देता है।' उसका यह भी विश्वास था कि सेक्स के मामले में लडकियों को भी वैसी ही स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए जैसी लडकों को और इसके साथ ही उन्हें उच्च शिक्षा प्राप्त करने और हर प्रकार की नौकरी कर सकने के भी समान अवसर मिलने चाहिए। वह अनुभव करती थी कि लडकियाँ और लडके मनुष्य की हैसियत से समान होते हैं जिनकी क्षमताएँ तथा योग्यताएँ भी समान होती हैं और इसलिए उन्हें अपने जीवन का ढर्रा चुनने के लिए एक जैसी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए।

विवाह के पहले और विवाह के बाद नौजवान लडकों और लडकियों को किस हद तक सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए, इसके बारे में अपने विचारों की व्याख्या करते हुए उसने कहा कि वे समूह के रूप में या अकेले भी बाहर जा सकते हैं और एक-दूसरे का चुम्बन तथा आलिंगन कर सकते हैं, एक दूसरे की जननेन्द्रियों को छू सकते हैं तथा उनसे खेल सकते हैं, वे एक-दूसरे के साथ सम्भोग भी कर सकते हैं लेकिन केवल उस स्थिति में जब दोनों इसके लिए तैयार हों और उन्हें दबाव डालकर या मजबूर करके इसके लिए राजी न किया गया हो। वह यह समझती थी

कि जिन दो लोगा की मँगनी हो चुकी हो और वे विवाह करनेवाले हो उन्हे एक-दूसरे का भरपूर चुम्बन करने और एक दूसरे का चिपटाने सहलाने और यहा तक कि मैथुन भी करन की अनुमति दी जा सकती है। उसने कहा, "सबसे अच्छा यह है कि विवाह से पहले जीवन का भरपूर आनन्द लिया जाये और मौज उडायी जाये, क्योकि विवाह के बाद इतनी जिम्मेदारियो का बोझ कन्धो पर आ पडता है कि मौज उडाना सम्भव ही नही रहता। विवाह के बाद जीवन नीरस हो जाता है और कत्तव्या तथा जिन्दा रहने की ठोस हकीकता मे अधिक बँध जाता ह।"

विवाहित पुरुषो तथा स्त्रिया के बारे मे उसका विचार था कि यदि पति और पत्नी दोना ही विवाह की परिधि क बाहर सेक्स सम्बन्ध स्थापित करने पर सहमत हा और ऐसा करके वे किसी को हानि न पहुँचा रहे हो, तो इसमे कोई भी हज नही ह और इसलिए इसकी अनुमति होनी चाहिए। फिर भी उसका यह विचार था कि दोना को एक-दूसर का धोखा नही देना चाहिए और किसी तीसरे व्यक्ति को हानि नही पहुँचाना चाहिए। ऊपर बतायी गयी समस्याओ पर अपने विचार व्यक्त करते हुए दस वष पहल उसन कहा था कि लडका और लडकियो के चुम्बन, आलिगन और एक-दूसरे के गुप्ताागा से थाडा-बहुत खेलने तक ही सीमित रहना चाहिए लेकिन इससे आग नही बढना चाहिए और यदि उनकी मँगनी भी हो चुकी हो तब भी विवाह स पहले सेक्स सभोग नही करना चाहिए। विवाह की परिधि से बाहर सेक्स-सम्बन्धा के बारे म उसन कहा था कि विवाहित स्त्री तथा पुरुष के अपन विवाह की परिधि के बाहर भिन्नलिंगी मित्र तो हो सकत ह और वे उनका चुम्बन तथा आलिगन भी कर सकते हैं पर उन्हे यथासम्भव सेक्स सभाग नही करना चाहिए। पहले वह यह महसूस करती थी कि विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स मैथुन बहुत उचित नही है, विशेष रूप से स्त्री के लिए। लेकिन दस वष बाद उसने अपने विचार उस रूप मे व्यक्त किय जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है और कहा कि "किसी भी चीज मे कोई बुराई नही ह और किसी भी सेक्स क्रिया म कोई नैतिक दाप नही है यदि दोनो पक्ष हर काम सहप तथा स्वेच्छापूवक करें और उन्ह किसी प्रकार विवश न किया गया हा और वे अपन आपका या किसी अन्य व्यक्ति को कोई हानि न पहुँचा रह हा।"

उसन बताया, "जब म स्कूल म पन्ती थी तो मेरी मा, रिश्त की दूसरी औरतें और अन्य लाग हमेशा मुझसे यही कहते थे कि अगर कोई स्त्री पुरुषो को छूट देती है ता वे उसका अनुचित लाभ उठात ह और उसे मुख्यत और पूणत केवल भाग-विलास का साधन समझते है। मैं निश्चित रूप से यह समझती हूँ कि पुरुप स्त्रिया को मुख्यत सेक्स तथा भाग विलास का साधन समझते ह, लेकिन अब मैं उसी तरह यह भी महसूस करती हूँ कि स्त्रिया भी इस बात का लाभ उठाती हैं कि पुरुष स्त्रिया को ऐसा समझते हैं। वे महसूस करती हैं कि चूकि व स्त्री हैं और सेक्स तथा विलास का साधन हैं, इसलिए वे पुरुषो का आकर्षित कर सकती हैं और उनसे अपना काम करा सकती हैं। कितनी बार ऐसा होता है कि स्त्रियाँ किसी लक्ष्य-विशेष को पूरा करने के

लिए, जैसे पति फासन, नौकरी हासिल करने या दफ्तर के काम म तरक्की पाने के लिए, पुरुषो को छूट देती हैं और उन्हें मित्रता बढाने तथा अपने निकट आने का अवसर देती है। इसलिए मैं समझती हूँ कि स्त्रियाँ तथा पुरुष दोनो ही एक दूसरे का लाभ उठाते है, हालांकि आमतौर पर पुरुषो का लक्ष्य मुख्यत स्त्रियो से सुख प्राप्त करना या सेक्स कामना को तुष्ट करना होता है।

अन्य प्रश्नो के उत्तर देते हुए ललिता ने कहा कि उसे इस बात मे कोई आपत्ति नहीं होगी कि कोई स्त्री या पुरुष विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बन्ध स्थापित करे और यदि किसी दबाव अथवा विवशता के बिना भी कोई स्त्री अवैध गर्भ धारण कर लेती है तो वह उसे बर्दाश्त कर लेगी और उसके साथ सहानुभूति करेगी। उसकी दृढ भावना थी कि "दूसरी स्त्री अथवा पुरुष के साथ सेक्स-सम्बन्ध रखना पति तथा पत्नी दोनो ही के लिए समान रूप से अच्छा या बुरा है और यदि उन दोनो मे से कोई भी ऐसा करता है तो पति और पत्नी दोनो ही को इस बात को भूल जाना चाहिए और उसे क्षमा कर देना चाहिए। यदि मेरा भावी पति ऐसा करे तो कम से कम मैं तो उसे क्षमा कर दूँगी और निश्चित रूप से मैं अपने पति से भी यही आशा रखूँगी कि यदि मैं ऐसा करूँ तो वह भी मुझे क्षमा कर देगा और इस बात को भुला देगा।'

दस वर्ष बाद इस प्रश्न के उत्तर मे 'यदि आप विवाह से पहले या विवाह की परिधि से बाहर किसी से सेक्स सम्बन्ध स्थापित करें तो क्या आप अपराधी अनुभव करेंगी ?' उसने कहा, 'ऐसा है कि यदि मैं अपनी इच्छा से किसी ऐसे व्यक्ति के साथ इस प्रकार का सम्बन्ध स्थापित करूँ जिससे मुझे प्रेम हो और जो स्वय भी मेरे प्रति प्रेम की भावनाएँ रखता हो और सच्चे हृदय से उसकी कामना रखता हो तो मैं नहीं समझती कि मुझमे इसके बारे मे कोई अपराध की भावना होगी। बहरहाल इसमे बुराई क्या है ? यह तो पारस्परिक भावनाओ तथा कुछ भावो की केवल अन्तरग अभिव्यक्ति है। लेकिन अगर बाद मे मुझे पता चले कि मेरा अनुचित लाभ उठाया जा रहा था और मुझे केवल एक साधन के रूप मे इस्तेमाल किया जा रहा था, तो हो सकता है मैं अपराधी अनुभव करूँ और मुझे क्षमा करने पर खेद हो परन्तु यदि यह काम पारस्परिक भावनाओ के साथ किया जाय तो मै नही समझती कि इसमे बुरा लगने की कोई बात है और मेरी अधिकाश सहेलियो का भी यही विश्वास है। इसमे सन्देह नही कि दस वर्ष पहले जब मै अच्छी तरह इन बातो को तरह जानती नही थी और मुझे इन की अधिक जानकारी नही थी, तो उस समय मैं निश्चित रूप से यह महसूस करती थी कि यदि विवाह से पहले या विवाह के बाद अपने पति के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति के साथ मेरा सेक्स-सम्बन्ध स्थापित हो गया तो मैं बहुत अपराधी अनुभव करूँगी। लेकिन अब दस वर्ष तक इस बडे शहर मे काम करने, हर तरह के लोगो से मिलने और विशेष रूप से उनसे विचारो का आदान प्रदान करने और विभिन्न स्त्रियो के अनुभवो को सुनने के बाद मैंने अपने विचार काफी बदल लिये हैं।' जब

उसस यही प्रश्न दस वर्ष पहले पूछा गया था तो उसने इन्टरव्यू लेनेवाले (लेखिका) पर इस प्रकार के अभद्र तथा अनैतिक प्रश्न पूछने पर निर्लज्जता तथा धृष्टता का आरोप लगाया था।

विवाह म सेक्स के बार म अपने विचार व्यक्त करते हुए उसने कहा कि वह इन वक्तव्यों से सहमत है "विवाह को सफल बनाने म सन्तोषजनक सेक्स-सम्बन्धो का सर्वाधिक महत्त्व है", 'स्त्रियों के लिए सेक्स विवाह का एक महत्त्वपूर्ण अंग है और पति तथा पत्नी दोनो ही को सेक्स सम्बन्धो मे एक-दूसरे की सुविधा का ध्यान रखना चाहिए उन्हें एक दूसरे के प्रति सहानुभूति होनी चाहिए और एक दूसरे के साथ धीरज से काम लेना चाहिए' 'विवाह की परिधि के अन्दर पति और पत्नी दोनो ही समान रूप से सेक्स-तुष्टि प्राप्त करने की क्षमता रखते हैं', और "दोनो ही को विवाह की परिधि के अन्दर सेक्स का आनन्द प्राप्त करने तथा सेक्स-तुष्टि का समान अधिकार है।"

इसकी व्याख्या करते हुए उसने कहा, "मैं किसी ऐसे व्यक्ति को अपने पति के रूप म नही चाहूँगी जो जब भी उसके मन म आए मेरे साथ सेक्स-सम्भोग करना चाहे इस बात की चिन्ता किये बिना कि उस समय मेरी मनोवृत्ति और इच्छा क्या है। और मुझे ऐसे जीवन-साथी से तो घृणा होगी जिसे केवल अपनी सेक्स-तुष्टि में दिलचस्पी हो और जो अचानक तथा बहुत जल्दी-जल्दी सेक्स क्रिया पूरी कर ले। मैं चाहूँगी और उससे आशा रखूँगी कि वह हम दोनो ही की समान तुष्टि के लिए बडे स्नेह तथा प्यार के साथ सेक्स क्रीडा को एक पारस्परिक तथा सयुक्त प्रयास बनाने की कोशिश करे।' दस वर्ष पहले उसने कहा था कि उसका विचार था कि विवाह की परिधि मे सेक्स मुख्यत केवल पुरुष पक्ष की सन्तुष्टि के लिए होता है और स्त्री तो केवल बहुत निष्क्रिय पक्ष होती है जिससे केवल यह आशा की जाती है कि जब भी उसका पति चाहे वह उसे सन्तुष्ट कर दे। दस वर्ष बाद उसने अपना मत व्यक्त करते हुए कहा, 'मैं समझती हूँ कि पति तथा पत्नी दोनो ही को समान अधिकार है कि वे एक दूसरे से सेक्स-सन्तुष्टि प्राप्त करें।"

कुछ अन्य वक्तव्यों से, जैसे दोहरे मानदंडो और सेक्स का आनन्द प्राप्त करने के पुरुषों तथा स्त्रियों के समान अधिकार से सम्बन्धित वक्तव्यो म अपनी सहमति अथवा असहमति इंगित करते हुए उसने उन दो अवसरो पर जब उसके इन्टरव्यू लिये गये काफी भिन्न मत व्यक्त किये। दस वर्ष पहले उसने इन कथनो से सहमति व्यक्त की थी कि "विवाह से पहले सेक्स का अनुभव लडकों के लिए तो ठीक है पर लडकियो के लिए नही" और यह कि "विवाह की परिधि के बाहर सेक्स अनुभव पुरुषों के लिए तो ठीक है पर स्त्रियों के लिए नही और यह कि 'जब सेक्स का सवाल आता है तो स्त्रियों के लिए एक मानदंड होता है और पुरुषों के लिए दूसरा", और यह कि "यदि स्त्री और पुरुष दोनो ही विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करें तो पुरुष की अपेक्षा स्त्री को अधिक पापाचारी समझा जाता है।" दस

वर्ष बाद, यद्यपि उसका विश्वास अब भी यह था कि समान आचरण तथा कृत्या के लिए पुरुष की अपेक्षा स्त्री को अधिक बदनाम किया जाता है, पर उसकी दृढ़ भावना थी कि ऐसा नहीं होना चाहिए। उसने ज़ोर देकर कहा, "यदि कोई काम स्त्री के लिए अवाञ्छनीय है तो वह पुरुष के लिए भी उतना ही अवाञ्छनीय होना चाहिए और यदि कोई काम या आचरण पुरुष के लिए उचित है तो स्त्री के लिए भी उसे उतना ही उचित होना चाहिए।"

दस वर्ष बाद भी हालांकि वह इस प्रस्थापना से पूरी तरह सहमत थी कि सेक्स-आचरण के सम्बन्ध में स्त्रियों के लिए एक मानदंड प्रचलित है और पुरुषों के लिए दूसरा, पर वह इस बात से सहमत नहीं थी कि विवाह से पहले और विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बन्ध पुरुषों के लिए तो ठीक है पर स्त्रियों के लिए नहीं। उसने कहा कि पुरुषों तथा स्त्रियों दोनों ही को विवाह से पहले और विवाह की परिधि के बाहर भी सेक्स का आनन्द देने या सेक्स-तुष्टि प्राप्त करने का समान अधिकार है, जबकि दस वर्ष पहले वह इस बात से सहमत नहीं थी। उसने अब इन कथनों से सहमति प्रकट करके अपने बाद वाले मत के पक्ष में तर्क दिया कि "स्त्री की शारीरिक आवश्यकता उतनी ही प्रबल होती है जितनी पुरुष की," कि "सेक्स एक ऐसा सुख है जिसे स्वयं उसके लिए ही प्राप्त करने की कोशिश की जानी चाहिए," कि "सेक्स तथा प्रेम प्रत्येक मनुष्य की दो अलग अलग प्रकार की और भिन्न आवश्यकताएँ हैं' और यह कि "प्रत्येक व्यक्ति को इस बात का निर्णय स्वयं करना चाहिए कि क्या उचित है और क्या अनुचित।' दस वर्ष पहले उसने ऊपर बताये गये वक्तव्यों में से अन्तिम वक्तव्य का दृढ़तापूर्वक समर्थन किया था परन्तु पहले दो वक्तव्यों के बारे में उसकी कोई राय नहीं थी वह उनसे न सहमत थी न असहमत।

अन्त में ललिता ने कहा, आप जानती हैं कि जब मैं छोटी सी लड़की थी तब मेरे माता पिता दिन-रात मेरे मन में यह बात बिठाते रहते थे कि हर वह चीज़ जिसका सम्बन्ध लड़कों तथा लड़कियों के एक दूसरे से मिलने से हो वह गलत है, कि लड़कों और लड़कियों को एक दूसरे से बिल्कुल अलग रखा जाना चाहिए और जब तक उनके माता पिता साथ न हों तब तक उन्हें एक दूसरे से मिलने नहीं दिया जाना चाहिए, कि सेक्स लज्जास्पद तथा गन्दी चीज़ है, और यह कि विवाह की परिधि को छोड़कर सेक्स से सम्बन्धित हर चीज़ पापमय है। और मेरे ऊपर इतनी निगरानी रखी जाती थी और इतने प्रतिबन्ध लगा रखे थे, और सो भी ऐसी हालत में जब उनके तथा मेरे बीच कभी स्नेहपूर्ण बातचीत तक नहीं होती थी, कि मैं हमेशा यही महसूस करती थी कि मुझे पता लगाना चाहिए कि हर उस बात में जिसे वे गलत कहते हैं, क्या बुराई है। मैं उनके आदेशों का उल्लंघन करना चाहती थी और स्वयं मालूम करना चाहती थी कि क्या उचित है और क्या अनुचित। मैं सोचती रहती थी कि आखिर उस सेक्स का अर्थ है क्या, जिसका मेरे माता-पिता हमेशा मुझे इतना आभास दिलाते रहते थे। लेकिन सौभाग्यवश मैं उनके चंगुल से निकल आयी और अब मैं पढ़े-लिखे आधुनिक

तथा सुसंस्कृत लोगों के बीच उठती बैठती हूँ, और मुझे लगता है कि सेक्स में कोई बुराई नहीं है। कभी-कभी मैंने इस निश्चित उद्देश्य से बहुत स्वच्छन्द जीवन भी व्यतीत किया है कि मेरे पिता को यह आभास हो सके कि अब मैं बिल्कुल स्वतन्त्र व्यक्ति हूँ, जो भी मैं करना चाहूँ वह करने के लिए स्वतन्त्र हूँ और जान-बूझकर ऐसे काम करूँ जिनके बारे में मेरे माता-पिता कहा करते थे कि व पापमय तथा अनैतिक है।'

अन्त में उसने यह भी कहा, "मेरा दृढ विश्वास है कि हर व्यक्ति का जो भी वह पसन्द करे उसे करने का अधिकार है और यह कि हर व्यक्ति का निजी आचरण, जिसमें सेक्स आचरण भी शामिल है, उसका निजी मामला है और किसी का भी उसमें हस्तक्षेप नहीं करने दिया जाना चाहिए।"

## व्यक्ति-अध्ययन संख्या 39

आरती एक सरकारी संगठन में 300 रु० मासिक वेतन पर काम कर रही थी। वह एम० ए० पास थी और उसकी उम्र 22 वर्ष की थी। वह पिछले तीन साल से काम कर रही थी। वह नौजवान और चुस्त-चालाक लड़की थी और उसका डील-डौल काफी आकर्षक था। वह बहुत सजग, शालीन तथा गम्भीर थी। उसके चेहरे की मुद्रा विचारशील थी और आंखों में उदासी झलकती थी। उसकी मनोवृत्ति स्नेहमयी तथा स्वभाव सहयोगपूर्ण था।

उसके स्वर्गीय पिता इंजीनियर थे और किसी ऐसे शहर में काम करते थे जो न बहुत बड़ा था और न बहुत छोटा और उनकी आय औसत थी। उसके दो बड़े भाई और दो छोटी बहनें थीं। उसकी माँ सामाजिक कार्यकर्ताओं के एक सुशिक्षित तथा सुसंस्कृत परिवार की थी और उन्होंने स्वयं दो वर्ष तक कालेज में शिक्षा पायी थी। उसके माता पिता विशेष रूप से उसकी मां, बहुत स्नेहमयी थी और दूसरों की सुख सुविधा का बहुत ध्यान रखती थीं, और हालांकि उसके पिता के पास बच्चों के साथ बिताने के लिए बहुत समय नहीं होता था, फिर भी वह यथासम्भव उनके साथ अधिक से अधिक समय बिताते थे।

बचपन में और किशोरावस्था में आरती और उसके भाई-बहनों के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाता था और उनका एक जैसा ध्यान रखा जाता था। चूंकि उसके पिता की आय बस इतनी थी कि मान-मर्यादा के साथ जीवन व्यतीत कर लें, इसलिए उनका रहन-सहन सुख सुविधा का तो था पर ऐश आराम की जिन्दगी नहीं थी। घर का वातावरण बहुत सुखद था और सभी भाई-बहनों में आपस में बड़ी सद्भावना और स्नेह था। और सभी मिलकर एक सुखी समूह थे। उनके माता पिता ने उन्हें इतनी स्वतन्त्रता दे रखी थी कि वे अपनी मित्र-मण्डली के साथ बाहर जा भी सकते थे और उन्हें घर पर बुला भी सकते थे, परन्तु उन्हें किसी भिन्नलिंगी व्यक्ति के साथ अकेले बाहर जाने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता था। वे अपने माता-पिता के सामने विभिन्न रोचक विषयों पर चर्चा कर सकते थे और उन्हें उनके साथ

किसी भी विषय पर बात करने में संकोच नहीं होता था। यद्यपि बच्चों को पूजा-प्रार्थना करने के लिए कभी बाध्य नहीं किया गया, फिर भी आरती नियमित रूप से पूजा करती थी क्योंकि वह अपने माता-पिता को ऐसा ही करते हुए देखती थी।

आरती पढ़ाई में हमेशा बहुत अच्छी रही थी और उसके सभी भाई-बहनों को पढ़ाई से रुचि थी। जब वह स्कूल में पढ़ती थी तभी से उसकी आकांक्षा थी कि वह सरकारी नौकरी करके बड़ी अफसर बने। उसने एक अच्छे भारतीय स्कूल में शिक्षा प्राप्त की थी और उसकी अध्यापिकाएँ तथा सहपाठी सभी उसे पसन्द करते थे और उसकी सराहना करते थे। वह बहुत स्नेहमयी तथा सहृदय थी और उसकी सहेलियाँ बहुत अच्छी थीं।

स्कूल की शिक्षा समाप्त कर लेने के बाद वह सहशिक्षा के एक कॉलेज में भरती हो गयी। यद्यपि उस पर कोई कठोर प्रतिबन्ध नहीं थे फिर भी वह स्वयं ही लड़कों से बहुत मेलजोल नहीं पैदा करती थी और कुछ अलग अलग ही रहती थी। उसकी दो-तीन बहुत अच्छी सहेलियाँ थीं जिन्हें वह बहुत पसन्द करती थी। वे अपने भाइयों के साथ उसके घर आती थीं और आरती को उनके साथ बातें करने तथा विभिन्न विषयों पर चर्चा करने में बहुत आनन्द मिलता था। वह काफी भावुक थी और मन ही मन उन्हें सराहती रहती थी। वह अपने स्नेह का बहुत प्रदर्शन नहीं करती थी और अपनी भावनाओं को व्यक्त करने में बहुत शालीन थी। वे लोग भी उसके प्रति बहुत स्नेह तथा सम्मान की भावना रखते थे।

जिस वर्ष उसने बी० ए० पास किया उसी वर्ष थोड़े ही दिन की बीमारी के बाद उसके पिता स्वर्ग सिधार गये। उसे बहुत गहरा संवेगात्मक आघात पहुँचा क्योंकि उसे उनसे बहुत लगाव था और वह उनके बहुत अच्छे चरित्र और आचरण के लिए उनकी सराहना करती थी। चूँकि उसके बड़े भाई अभी तक वहीं ठीक से जम नहीं पाये थे और उसकी छोटी बहनों को कालेज की शिक्षा दिलानी थी, इसलिए उसने रुपये पैसे से अपनी माँ तथा बहनों की सहायता करने के लिए नौकरी कर ली। और चूँकि वह और आगे पढ़ने के लिए भी उत्सुक थी, इसलिए उसने नौकरी करने के साथ-साथ एम० ए० भी पास कर लिया था।

नौकरी करने के दौरान उसे उसी दफ्तर में काम करनेवाले एक अफसर से बहुत लगाव हो गया। वह उसके साथ बड़ी सहृदयता तथा स्नेह का व्यवहार करती थी और वह भी उसके प्रति बहुत स्नेह दिखाते थे तथा उसका बड़ा ध्यान रखते थे। वह उनके साथ घूमती फिरती थी पर जब कभी रात को वह उनके साथ जाती थी तो आमतौर पर अपने भाइयों या बहनों को भी साथ ले लेती थी। उसे इस बात से बड़ा सन्तोष मिलता था कि वह अपनी छोटी बहनों को सहारा दे सकी थी और उन्होंने बी० ए० पास कर लिया था।

जब उससे सेक्स तथा सेक्स-सम्बन्धों के बारे में प्रश्न पूछे गये तो उसे कुछ अटपटा-सा लगा और उनका उत्तर देने में उसे कुछ संकोच भी हुआ परन्तु धीरे धीरे

उसने अपने मिजाज पर काबू पा लिया और वह अपने विचार बहुत सोचसमझकर तथा दार्शनिक ढंग से प्रकट किए।

वह इस बात के पक्ष में थी कि माता पिता अपने बच्चों से सेक्स की समस्याओं के बारे में चर्चा करें और उन्हें इनके बारे में उचित शिक्षा दें, लेकिन वह इस बात के पक्ष में नहीं थी कि माता पिता तथा उनके बच्चों के बीच या नौजवान लड़कों तथा लड़कियों के बीच नग्न और भद्दे ढंग से सेक्स पर चर्चा हो। वह यह महसूस करती थी कि अब नौजवान लड़कों तथा लड़कियों को दस वर्ष पहले की तुलना में अधिक सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता है। उसने कहा कि अत्यधिक स्वतन्त्रता केवल महानगरों में रहनेवाले पाश्चात्य ढंग के रहन-सहन वाले परिवारों में ही पायी जाती है। उसका विश्वास था कि भिन्नलिंगी लोगों के बीच सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता अच्छी चीज है परन्तु वह उचित मार्ग-दर्शन तथा कुछ सीमाओं के भीतर ही दी जानी चाहिए। उसने कहा, "एक-दूसरे के साथ बाहर आने-जाने या एक-दूसरे से प्रेम मिलन का आयोजन करने को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए क्योंकि इससे भिन्नलिंगी लोगों को जानने का अवसर मिलता है और यह उनको उनके साथ निर्वाह करना सिखाता है।"

अविवाहित लड़के लड़कियों तथा विवाहित स्त्री-पुरुषों को विवाह की परिधि के बाहर किन सीमाओं तक सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए, इसके बारे में उसने कहा कि वह इस बात का अनुमोदन करती है कि भिन्नलिंगी लोग सामूहिक रूप से और व्यक्तिगत रूप से भी एक-दूसरे से मिलें लेकिन कुछ सीमाओं के भीतर। उसने बताया कि उन्हें शुरू से स्कूलों तथा कालेजों में ही एक-दूसरे से मिलने-जुलने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि आगे चलकर वे भिन्न लिंगी लोगों के बीच अटपटा-या उत्तेजित अनुभव न करें।

उसने कहा, "निजी तौर पर मैं समझती हूँ कि टहलने के लिए, बातचीत करने के लिए पार्टियों के लिए बाहर जाने के अतिरिक्त और एक-दूसरे का हाथ पकड़ने, कभी-कभार चुम्बन और आलिंगन कर लेने के अलावा उनके बीच विवाह से पहले और विवाह के बाद भी गहरी घनिष्ठता अच्छी नहीं है, यदि वे पति और पत्नी हों तो बात और है।" उसने कहा कि जब वह कालेज में पढ़ती थी तब उसका विश्वास था कि विवाह से पहले और विवाह की परिधि के बाहर भिन्नलिंगी लोगों के बीच कभी-कभार चुम्बन तथा आलिंगन भी अनैतिक है। उसने यह भी बताया कि उन दिनों वह यह महसूस करती थी कि हर लड़की को लड़कों से अपनी दूरी बनाये रखना चाहिए और शारीरिक निकटता अथवा घनिष्ठता की अनुमति नहीं देनी चाहिए, क्योंकि चुम्बन के बाद आलिंगन की बारी आती है और आलिंगन में दोनों के गुप्तांग एक-दूसरे के बहुत निकट सम्पर्क में आते हैं, जिससे आवेग जागृत हो सकते हैं और उसके फलस्वरूप सेक्स-सम्बन्ध भी स्थापित हो सकते हैं। और इसलिए उसका मत था कि ज्यादा अच्छा यही होगा कि स्नेह की अभिव्यक्ति के रूप में हाथ पकड़ने और हाथों, माथे या गालों पर हल्के से चुम्बन की भी अनुमति न दी जाये।

आगे चलकर उसने कहा, "लेकिन अब इतने बड़े शहर में काम करते रहने, आधुनिक लोगों के बीच उठने-बैठने और लोगों को देखने तथा जानने के बाद मैं महसूस करती हूँ कि केवल स्नेह, महत्ता तथा लगाव की अभिव्यक्ति के रूप में चुम्बन तथा आलिंगन में कोई बुराई नहीं है। कुछ भी हो, प्रेम कोई पारलौकिक चीज तो होता नहीं और हर कोई भी व्यक्ति जिससे प्रेम करता है वह निश्चय ही शारीरिक रूप से उसके निकट आना चाहता है और चुम्बन तथा आलिंगन केवल इस इच्छा की अभिव्यक्तियाँ हैं। विश्वास कीजिये, स्नेह भरा चुम्बन तथा आलिंगन उन लोगों के लिए जो इनमें भाग लेते हैं सचमुच बहुत ही सुन्दर, प्रेममय तथा अत्यन्त सन्तोषप्रद होता है। थपकना भी हार्दिक पसन्द या सच्चे प्रेम की शारीरिक अभिव्यक्ति हो सकती है, यह सोचना केवल मूर्खतापूर्ण तथा पुराणपंथी पूर्वग्रह है कि ऐसा करना हमेशा अनैतिक तथा गलत होता है। परन्तु चुम्बन तथा आलिंगन के अतिरिक्त अन्य घनिष्ठताओं से बचना चाहिए, क्योंकि उनमें समस्याएँ उठ खड़ी हो सकती हैं और बहुत ही निराशाजनक सिद्ध हो सकती है।'

अपनी बात जारी रखते हुए उसने कहा कि उसकी राय में यदि दो व्यक्ति एक-दूसरे से प्रेम करते हों और उनकी मँगनी हो चुकी हो तो उनके बीच आवेशपूर्ण चुम्बन एवं दूसरे को गले लगाने, थपकने और जननेंद्रियों को छूने तथा सहलाने जैसी निकट शारीरिक घनिष्ठताओं में भी कोई हर्ज नहीं है, लेकिन जहाँ तक हो सके सेक्स सम्भोग केवल पति के साथ ही किया जाना चाहिए। उसने अपना मत व्यक्त करते हुए कहा कि 'विवाह से पहले सेक्स सम्भोग अनुचित है, पर विवाह से पहले अपने मँगेतर के साथ या किसी ऐसे व्यक्ति के साथ जिससे हार्दिक तथा सच्चा प्रेम हो सक्स का थोड़ा-बहुत अनुभव अच्छा है।" आगे चलकर उसने कहा, "मैं समझती हूँ कि विवाह से पहले मैथुन उन जोड़ों के लिए उचित हो सकता है जिन्हें पूरा निश्चय हो कि आगे चलकर उनका विवाह हो ही जायेगा। परन्तु मेरी राय में ऐसे लोगों के बीच मैथुन नैतिक रूप से अनुचित है, जिनका विवाह करने का कोई इरादा न हो।"

उसने कहा कि एक और स्थिति, जिसमें एक अविवाहित लड़की का सक्स-सम्बन्ध स्थापित कर लेना आंशिक रूप से उचित ठहराया जा सकता है वह है जिसमें किसी संयोगवश या परिस्थितियों के कारण उसे विवाह करने में बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ रहा हो और उसके तथा उसके माता पिता के पूरी कोशिश कर लेने पर भी कोई उससे विवाह करने को तैयार न हो रहा हो। लेकिन इसके साथ ही उसने यह भी कहा कि ऐसा केवल एक व्यक्ति के साथ, वह विवाहित हो या अविवाहित, किया जाना चाहिए जो उसके प्रति वफादार हो और उस सचमुच उसके कल्याण की चिंता हो। उसकी राय में ऐसी ही परिस्थितियों में अविवाहित पुरुष का भी सक्स-सम्बन्ध स्थापित करना उचित ठहराया जा सकता है और वह ऐसा कर सकता है यदि वह निष्ठावान हो और व्यभिचारी न हो।

इस प्रश्न के उत्तर में कि "कोई लड़की उस व्यक्ति के साथ जिससे वह प्रेम

करती हो, सेक्स-क्रम क्या न करें ?" उसने कहा, "स्वय अपने सिद्धान्तो तथा नैतिक मानदण्डो के कारण और उसकी दृष्टि म अपनी प्रतिष्ठा तथा अपना आत्म-सम्मान खो देने के भय के कारण और स्वय अपने तथा परिवार के नाम पर कलक लगा देने के भय के कारण भी।" आगे चलकर अन्य प्रश्नो का उत्तर देते हुए उसने कहा कि वह इन्द्रियदमन अर्थात सयम म बहुत विश्वास रखती है विशेष रूप से सेक्स या आनन्द प्राप्त करने के मामले म। लेकिन उसकी राय थी कि लडकियो को लडको जैसी सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता नही दी जानी चाहिए, क्योकि उसका तर्क था, आधुनिक समाज म भी लडकी की नेकनामी का बहुत महत्त्व है और यह कि जो लडकी या स्त्री सेक्स के मामले म बहुत स्वच्छन्द हो और पुरुषो स बहुत घनिष्ठता रखती हो और उनके साथ उसके शारीरिक सम्बन्ध भी रह चुके हो तो आमतौर पर पुरुष उसे सम्मान की दृष्टि स नही देखते। उसने यह भी बताया कि किसी पुरुष के साथ अत्यधिक सेक्स-सम्बन्धी घनिष्ठताओ का परिणाम उस पुरुष की अपेक्षा लडकी के लिए कही अधिक गम्भीर हो सकता है।

वह इन कथनो स सहमत नही थी, 'विवाह स पहले सेक्स का अनुभव लडको के लिए ठीक है पर लडकियो के लिए नही और विवाह की परिधि के बाहर सेक्स का अनुभव पुरुषो के लिए ठीक है पर स्त्रियो के लिए नही।" उसने कहा कि विवाह से पहले सेक्स का अनुभव न लडको के लिए ठीक है न लडकियो के लिए और विवाह के बाद भी विवाह के सूत्र मे साथ बँधे हुए दूसरे पक्ष के अतिरिक्त अन्य किसी व्यक्ति के साथ भी नही। "लेकिन, उसने कहा, "हमारी सामाजिक परिस्थितियो म विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर किसी लडके या पुरुष का सेक्स-सम्बन्ध स्थापित कर लेना तो बर्दाश्त कर लिया जाता है और इसलिए वह ठीक हो सकता है, परन्तु किसी लडकी के ऐसा करने को चूकि निन्दा की दृष्टि से देखा जाता है, इसलिए वह ठीक नही है।"

वह इस निष्कर्ष से पूरी तरह सहमत थी कि जब सेक्स का सवाल आता है तो स्त्रियो के लिए एक मानदण्ड होता है और पुरुषो के लिए दूसरा, और यह कि यदि स्त्री और पुरुष दोनो ही विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बन्ध स्थापित करें तो लोग अब भी स्त्री को पुरुष की अपेक्षा अधिक दुराचारी समझते हैं। उसका यह निश्चित विश्वास था कि विवाह के समय लडकी को अक्षत योनि होना चाहिए क्योकि सबसे पहले उसके पति को ही उसके साथ सम्भोग करना चाहिए और यदि उसे यह पता चल जाये कि वह अक्षतयोनि नही है तो वह उसे कभी सम्मान की दृष्टि स नही देखेगा। उसका विचार था कि अब भी अधिकाश लोग ऐसी लडकी से विवाह करना चाहते है जो अक्षतयोनि हो। उसने कुछ उद्विग्न होकर कहा, 'लेकिन मेरा यह भी दृढ विश्वास है कि विवाह के समय लडके को भी अप्रसंगवीर्य होना चाहिए। मैं समझती हूँ कि लडकी या लडके दोनो के लिए, पर लडकी के लिए और भी अधिक हद तक, जीवन-साथी चुनते समय एक महत्त्वपूर्ण कसौटी यह होनी चाहिए कि विवाह स पहले किसी के साथ उसके सेक्स-सम्बन्ध न रहे हो।"

अपनी बात जारी रखते हुए उसने कहा, "उन्मुक्त भाव से मिलने जुलने से इस वर्तमान युग में किसी भी लड़की के लिए अपने कौमार्य की रक्षा करना पहले की अपेक्षा अधिक कठिन हो गया है और अब मैं यह महसूस करती हूँ कि इसमें कोई इतनी बड़ी बुराई भी नहीं है हालांकि जब मैं स्वयं विद्यार्थावस्था में थी तो मैं इसे बहुत अनैतिक समझा करती थी। आजकल पुरुष भी लड़की के अक्षतयोनि होने पर इतना आग्रह नहीं करते जितना पहले करते थे। इसका सबूत इस बात में मिलता है कि अब वे तलाकशुदा या विधवा स्त्री के साथ भी विवाह करने को तैयार हो जाते हैं और कुछ लोग तो उन्हें बेहतर समझते हैं क्योंकि वे अनुभवी होती हैं।"

अन्य प्रश्नों के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए भारती ने कहा कि विवाह से पहले यदि किसी स्त्री के सेक्स सम्बन्ध रह चुके हों तो वह उसे क्षमा कर देगी और यदि किसी पुरुष के सेक्स सम्बन्ध रह चुके हों तो उसे उसमें बहुत अधिक आपत्ति नहीं होगी बशर्ते जिस व्यक्ति के साथ वह स्त्री या वह पुरुष इस प्रकार के सम्बन्ध स्थापित करे उससे उसे सच्चा और पारस्परिक प्रेम हो। उसने बहुत गम्भीर तथा आवेशपूर्ण ढंग से कहा, "मेरी समझ में नहीं आता कि लोगों में इस प्रकार के पूर्व निर्धारित विचारों तथा विश्वासों की जड़ें इतनी गहरी क्यों जमी हुई हैं कि विवाह से पहले के सेक्स सम्बन्ध या सम्भोग हमेशा ही स्नेह तथा कोमल भावनाओं से रहित वासना, स्वार्थपूर्ति अथवा व्यभिचार वृत्ति का परिणाम होते हैं? न जाने क्यों इन लोगों का इतना दृढ़ विश्वास होता है कि यह काम मानसिक अथवा संवेगात्मक सन्तुष्टि के लिए नहीं बल्कि केवल शारीरिक सन्तुष्टि के लिए ही किया जा सकता है? वे यह क्यों नहीं समझते कि यह काम उन लोगों के बीच भी हो सकता है जिनमें एक-दूसरे से गहरा प्रेम हो और यह कि यह प्रेम की अभिव्यक्ति है? मैं समझती हूँ कि समस्त सच्ची प्रेम-लीला का लक्ष्य उस पारस्परिक संवेगात्मक प्रेम को व्यक्त करना होता है जो उनमें एक दूसरे के प्रति होता है। अलबत्ता शुद्ध शारीरिक विलास के लिए जो सेक्स-सम्बन्ध स्थापित किये जाते हैं वे उचित नहीं हैं।'

उसने कहा कि यदि कोई लड़की परिस्थितियों से विवश होकर या अज्ञानवश अवैध गर्भ धारण कर लेती है तो वह उसे क्षमा कर देगी। परन्तु उसका यह विचार था कि यदि कोई स्त्री आर्थिक दबाव के कारण अपना सदाचार का जीवन त्याग देती है तो वह दया या दण्ड की पात्र है।

वह इन कथनों से सर्वथा असहमत थी कि 'सेक्स गन्दी और लज्जास्पद चीज़ है' और यह कि 'सेक्स एक ऐसा सुख है जिसे स्वयं उसके लिए ही प्राप्त करने की कोशिश की जानी चाहिए। इस प्रस्थापना से वह न सहमत थी न असहमत कि स्त्री की शारीरिक आवश्यकता भी उतनी ही प्रबल होती है जितनी पुरुष की और उसने कहा कि यद्यपि वह इस बात को स्वीकार करती है कि स्त्री की भी अपनी शारीरिक आवश्यकता होती है पर वह यह नहीं मानती थी कि वह उतनी ही प्रबल होती है जितनी पुरुष की। इस कथन से वह पूरी तरह सहमत थी कि सेक्स

और प्रेम, हर व्यक्ति की एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न तथा अलग अलग आवश्यकताएँ होती हैं और उसने कहा "हो सकता है, कुछ लोगों में प्रेम की आवश्यकता बहुत प्रमुख हो और सेक्स की आवश्यकता केवल उस प्रेम की अभिव्यक्ति के रूप में मौजूद हो, जबकि कुछ लोगों में सेक्स की आवश्यकता प्रमुखतापूर्ण हो और प्रेम की आवश्यकता इस की तुलना में केवल गौण महत्त्व रखती हो।'

विवाह में सेक्स के स्थान के बारे में वह इस बात से सहमत थी कि सेक्स विवाह का एक महत्त्वपूर्ण अंग है और यह कि विवाह को सफल बनाने के लिए सन्तोषजनक सेक्स-सम्बन्धों का महत्त्व होता है। फिर भी वह ऐसा नहीं समझती थी उसका सर्वाधिक महत्त्व होता है और उसकी धारणा थी विवाह को सफल बनाने के लिए कुछ और बातों का भी इतना ही अधिक महत्त्व होता है—जैसे पारस्परिक प्रेम, एक-दूसरे को समझना, एक दूसरे की सुविधा का ध्यान रखना सहनशीलता, सहिष्णुता और धैर्य। वह इन बातों से तो सहमत थी कि पति और पत्नी दोनों ही विवाह की परिधि के अन्दर सेक्स-तुष्टि प्राप्त करने की समान क्षमता रखते हैं, कि विवाह की परिधि के अन्दर सेक्स का आनन्द लेने तथा सेक्स का सन्तोष प्राप्त करने का पति या पत्नी दोनों को समान अधिकार है और यह कि पति तथा पत्नी को सेक्स-सम्बन्धों में एक दूसरे की सुविधा का ध्यान रखना चाहिए, उनमें एक दूसरे के प्रति सहानुभूति होनी चाहिए और उन्हें धीरज से काम लेना चाहिए, परन्तु इसके साथ ही उसने यह भी कहा कि उसका यह भी विश्वास था कि अपने पति के साथ सेक्स-व्यवहार में पत्नी को इन गुणों का परिचय अधिक हद तक देना चाहिए।

उसने कहा, "मैं समझती हूँ कि विवाहित दम्पत्ति के बीच सेक्स के मामले में सकोच सर्वथा मिथ्या सकोच होता है। विवाह की परिधि के अन्दर सेक्स को अधिकतम तुष्टिदायक तथा सन्तोषप्रद अनुभव बनाने के लिए उन्हें सेक्स के क्षेत्र में अपनी रुचियाँ तथा अरुचियाँ एक दूसरे को बता देने में काफी स्पष्टवादी होना चाहिए। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यद्यपि सेक्स क्रिया का सम्बन्ध मूल प्रवृत्ति से होता है फिर भी प्रणय एक कला बन सकता है और अधिक सन्तोषप्रद हो सकता है यदि उसे जानकार लोगों से उचित ढंग से सीखा जाये।" अपनी बात जारी रखते हुए उसने कहा कि उसका विश्वास है कि विवाह का आधार शारीरिक सम्बन्ध तथा पारस्परिक आनन्द के महत्त्व को समझना है और जो भी स्त्री या पुरुष इस लक्ष्य को प्राप्त करने की कोशिश नहीं करता, वह नैतिक दृष्टिकोण से उचित या न्यायसंगत नहीं है। उसने जोर देकर कहा "विद्वान इस बात को स्पष्ट कर चुके हैं कि सेक्स का उद्देश्य केवल वंश-वृद्धि नहीं है, क्योंकि यदि ऐसा होता तो मनुष्य पूरे वर्ष भर समागम के लिए तैयार न रहता और वास्तविक सेक्स क्रिया से पहले और उसके बाद इतनी अधिक कोमलता तथा हार्दिकता की आवश्यकता तथा इच्छा न होती।"

एक प्रश्न के उत्तर में उसने कहा, 'मेरी राय में किसी भी विवाहित पुरुष तथा स्त्री के लिए, पुरुष के लिए अधिक, विवाह के बन्धन में बँधे हुए अपने साथी के प्रति-

रिक्त किसी दूसरे व्यक्ति के साथ सेक्स सम्बन्ध रखना उस दशा मे उचित है यदि उसका साथी सेक्स क्रिया मे भाग लेने से इन्कार करे, यदि पति नपुंसक हो या पत्नी ठंडी हो उसके सेक्स सम्बन्ध किसी दूसरे पुरुष या स्त्री के साथ हो या वह अपने जीवन साथी के प्रति वफादार न हो या वह रोगी हो, परन्तु मैं नही समझती कि उसका केवल इस कारण ऐसा करना उचित होगा कि उसे अपने साथी से सेक्स का पूरा सन्तोष नही मिलता या इसलिए कि उसे अपने साथी से प्रेम नही है या इसलिए कि उसका विवाह विफल रहा है। अपने साथी को सेक्स की दृष्टि से सन्तोषप्रद बनाने और उसके प्रति प्रेम विकसित करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए और यदि तमाम प्रयासो के बाद भी विवाह विफल रहता है तो बेहतर यही वह होगा कि तलाक लेकर दूसरा विवाह कर ले या दूसरो के साथ सेक्स सम्बन्ध स्थापित कर ले, बजाय इसके कि प्रकट रूप से तो उस विवाह को बनाये रखे और सेक्स की सन्तुष्टि कही और ढूढ़े।

उसका विश्वास था कि पति के किसी दूसरी स्त्री के साथ सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करने की अपेक्षा पत्नी का किसी दूसरे पुरुष के साथ सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करना अधिक गम्भीर बात है। परन्तु इसके साथ ही उसका यह भी विश्वास था कि यदि पति किसी दूसरी स्त्री के साथ या पत्नी किसी दूसरे पुरुष के साथ सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करे तो उसकी पत्नी या उसके पति को उसे क्षमा कर देना चाहिए, और उसने जोर देकर कहा कि यदि उसके भावी पति ने कभी किसी दूसरी स्त्री के साथ सेक्स सम्बन्ध स्थापित किया तो वह उसे क्षमा कर देगी और उससे आशा रखेगी कि अगर वह स्वयं कभी ऐसा करे तो वह भी उसे क्षमा कर देगा।

बाद मे चलकर उसने अन्य प्रश्नो के उत्तर मे कहा, 'मैं नही समझती कि विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स का आनन्द लूटने या सेक्स-तुष्टि प्राप्त करने का पुरुषो तथा स्त्रियो का समान अधिकार है। सच तो यह है कि मैं समझती हूँ कि यह उन दोनो मे से किसी का भी अधिकार नही है। उन्हे केवल सेक्स की परिधि के अन्दर सेक्स का आनन्द प्राप्त करने का अधिकार है। पुरुष के लिए विवाह से पहले और विवाह की परिधि के बाहर सेक्स अनुभव प्राप्त करना उचित हो सकता है परन्तु स्त्री को जहा तक सम्भव हो इससे बचना चाहिए। और यदि विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर किसी दूसरे पुरुष और उसके बीच बहुत गहरा और सच्चा प्रेम हो भी तो वह उसके प्रति बहुत स्नेह, हार्दिकता तथा शारीरिक कोमलता का व्यवहार रख सकती है और सेक्स-सम्भोग के अतिरिक्त अन्य तरीको से भी अपनी भावनाओ तथा भावो को व्यक्त कर सकती है।"

कुछ देर के बाद उसने कहा, "मैं आपको स्वयं अपने अनुभव से बता सकती हूँ कि किसी के साथ गहरा लगाव परिपूर्ति की भावना उत्पन्न करता है और मेरा दृढ़ आभास है कि एक दूसरे से प्रेम करनेवाले दो व्यक्तियो के बीच गहन सम्बन्ध उन दोनो के लिए अत्यधिक सुख तथा परिपूर्ति का स्रोत हो सकता है।' अपना तर्क जारी रखते हुए उसने कहा, यदि किसी पुरुष तथा स्त्री के बीच हार्दिक सम्बन्ध की

परिणति विवाह के रूप में न भी हो तो उसमें क्या हर्ज है ? किसी भी स्तर पर सच्चे सम्बन्ध के अनुभव से जिसमें शारीरिक सम्बन्ध भी शामिल है व्यक्ति को स्वयं अपने को समझने और दूसरा के प्रति संवेदनशीलता विकसित करने में सहायता मिलती है। इस प्रकार के सम्बन्ध में इस बात का बहुत महत्त्व नहीं होता कि सेक्स-सम्बन्ध स्थापित होता है या नहीं। जिस चीज़ का महत्त्व होता है वह है उस सम्बन्ध की उत्कृष्टता तथा उसकी गहराई।'

यह प्रश्न पूछे जाने पर कि 'यदि विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर आप किसी के साथ सेक्स-अनुभव प्राप्त करेंगी तो क्या आप अपराधी अनुभव करेंगी ?' उसे बहुत अटपटा-सा लगा और वह कुछ झुंझला भी पड़ी परन्तु जब उसे विश्वास हो गया कि लेखिका का अभिप्राय यह कदापि नहीं था कि वह उसके चरित्र पर सन्देह करे तो उसने उत्तर दिया 'मैं निश्चित रूप से अपराधी अनुभव करूँगी परन्तु यदि यह किसी ऐसे आदमी के साथ हो जिससे मुझे सच्चा प्रेम हो और जो सचमुच मेरा ध्यान रखता हो और उसे मेरी आवश्यकता हो तो मुझे बहुत अधिक ग्लानि नहीं होगी। परन्तु मुझे पूरा भरोसा है कि यदि मुझे किसी पुरुष से गहरा प्रेम हो भी तो मैं अपनी हार्दिक भावना को चुम्बन आलिंगन के रूप में और उसके साथ रहकर व्यक्त करूँगी और उसके साथ सेक्स-सम्भोग नहीं करूँगी। क्योंकि मेरा दृढ़ विश्वास है कि प्रेम तो अनेक लोगों को दिया जा सकता है और कई लोगों के साथ बाँटा जा सकता है लेकिन सेक्स जीवन केवल एक के साथ बिताया जा सकता है अन्यथा उसका कोई विशेष महत्त्व नहीं रह जायगा। यद्यपि मुझे दूसरों के ऐसा करने में कोई आपत्ति नहीं है परन्तु बचपन में मेरा पालन पोषण और प्रशिक्षण ऐसे परम्परागत ढंग से हुआ है कि मैं इस अनैतिक समझती हूँ और मैं ऐसा करना नहीं चाहूँगी।

बाद में चलकर उसने कहा, 'यद्यपि मैं इस बात में विश्वास नहीं रखती कि इसका निर्णय प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं करना चाहिए कि क्या उचित है और क्या अनुचित, परन्तु मेरा यह विश्वास अवश्य है कि क्या उचित है और क्या अनुचित इसके बारे में आवश्यकता से अधिक आदेश देना और किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर आवश्यकता से अधिक प्रतिबन्ध लगाना भी अच्छा नहीं है। एक खास उम्र तक समझदारी तथा विवेक की प्रौढ़ता माता पिता, अध्यापकों तथा समाज को प्रदान करनी चाहिए, और उसके बाद हर व्यक्ति को अपने निर्णय स्वयं करने और अपनी गतिविधियों तथा अपनी जीवन पद्धति का संचालन स्वयं करने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया जाना चाहिए।'

## व्यक्ति-अध्ययन संख्या 6

चालीस वर्षीया नीना ने डाक्टरी पास की थी, उसने विदेश में दो डिप्लोमा लिये थे और वह एक अस्पताल में काम कर रही थी। वह पिछले ग्यारह वर्ष से नौकरी कर रही थी और उसका विवाह दो वर्ष पहले हुआ था। उसके एक लड़की थी जिसकी उम्र एक वर्ष की थी। उसे 950 रुपये मासिक वेतन मिलता था। वह काफी सुन्दर थी

उसका शरीर तथा चेहरा बहुत यौवनमय तथा आकर्षक था। वह बातचीत बहुत अच्छे ढंग से करती थी और उसके विचार काफी प्रौढ़ थे। उसके चेहरे का भाव गम्भीर था और आंखों में विचारशीलता थी। उसका पहनावा बहुत शालीन और आचार-व्यवहार बहुत शिष्ट था।

उसके पिता व्यापारी थे और जब वह छोटी थी, तो उन्हें अपने बच्चों का अच्छा रहन-सहन प्रदान करने के लिए बहुत मेहनत करनी पड़ती थी। उससे बड़े दो भाई थे और वह अपने माता पिता की अकेली बेटी थी। वे बहुत आराम से रहते थे और उनके घर का वातावरण बहुत उन्मुक्त तथा स्वतन्त्र था। परन्तु उसकी मां का दिमाग कुछ खराब था और चूंकि वह हर समय अपने ही विचारों तथा अपनी धुन में खोयी रहती थीं, इसलिए बच्चों की देखभाल की ओर अधिक ध्यान नहीं दे पाती थीं। उसके पिता अपने बच्चों के लिए पैसा कमाने में बहुत व्यस्त रहते थे और यह सोचते थे कि अपने बच्चों तथा अपनी पत्नी के प्रति स्नेह व्यक्त करने का एकमात्र तरीका उन्हें पैसा तथा सुख सुविधा प्रदान करना और उनको जो भी जी चाहे करने की स्वतन्त्रता देना है, उन्होंने कभी यह अनुभव ही नहीं किया कि उनके साथ कुछ समय बिताना भी आवश्यक है।

वह एक ऐसे परिवार में पली-बढ़ी जो इस दृष्टि से विपन्न था कि परिवार के सदस्यों के बीच एक दूसरे के लिए प्रायः कोई भी हार्दिकता या लगाव की भावना नहीं थी और हर व्यक्ति को अपनी सुख सुविधा की ही चिन्ता रहती थी। माता पिता या तो हर समय व्यस्त रहते थे या अपने बच्चों के लिए बेहतर रहन-सहन के साधन जुटाने की चिन्ता में डूबे रहते थे और उन्हें इस बात के लिए समय ही नहीं मिलता था और न इस ओर उनकी प्रवृत्ति ही थी कि उन्हें स्नेह प्रदान करें। इसलिए बचपन ही से नीना में यह भावना उत्पन्न हो गयी कि इस जीवन में सच्चे स्नेहमय मानव-सम्बन्ध होते ही नहीं हैं, और यह कि पैसा ही सबसे बहुमूल्य उपलब्धि है और उससे हर चीज खरीदी जा सकती है।

उसे पढ़ने के लिए एक अच्छे कानवेंट स्कूल में भेजा गया था। वहाँ उसे उच्च सामाजिक आर्थिक वर्ग की लड़कियों के बीच उठने-बैठने का अवसर मिला और उसने उनसे मित्रता पैदा करने की कोशिश की पर उसकी कभी किसी के साथ बहुत गहरी मित्रता नहीं हो सकी और उसके कोई अच्छे मित्र नहीं थे क्योंकि वह स्वकेंद्रित थी और उसे हर समय अपनी ही आवश्यकताओं की चिन्ता लगी रहती थी और वह किसी को स्नेह या प्यार नहीं प्रदान कर सकती थी। उसे अपनी सुन्दरता पर, अपने माता पिता की आर्थिक हैसियत पर और अच्छे रहन-सहन पर काफी अभिमान था। उस छोटी-सी उम्र में ही वह आवश्यकता से अधिक निडर थी और उसे इस बात की तनिक भी चिन्ता नहीं होती थी कि लोग उसके बारे में क्या सोचेंगे या कहेंगे।

अपने बड़े भाई के साथ उसे उस बड़े शहर के सबसे अच्छे कालेज में पढ़ने के लिए भेजा गया जहाँ उसके पिता काम करते थे। चूंकि बच्चों के पास ढेरों पैसा था

और उनको रोक न टोकनवाला या उनकी गतिविधिया पर प्रतिब ध लगानेवाला कोइ नही था, इसलिए नीना अपने भाई, मित्रा और कालज के अन्य सहपाठिया के साथ बिना किसी रोक टोक के घूमती फिरती थी। जब वह 16-17 वष की थी और लम्ब कद की सु दर लडकी के रूप म विकसित हो रही थी तो उसे अपने रग रूप तथा अपने सुडौल शरीर का बहुत आभास रहन लगा और वह ऐस कपडे पहनकर उनका प्रदशन करने लगी जो उसके शरीर की सु दरता को आर उभार दें। लोग उसकी आर बहुत आकर्षित हाने लगे तथा उस सराहन लग जिसके फलस्वरूप उस रूप का आभास और बढ गया तथा उसम आत्म-सराहना का भाव उत्प न हो गया। उसे किसी के साथ आन-जान की पूरी छूट थी क्याकि उसक पिता अधिकाश समय घर के बाहर रहत थे और यह समभ्त थे कि बच्चो को स्वत त्रता दन स ही व उनको उदार विचारा वाला कहग और उनकी प्रशसा करेंगे।

जिन दिना वह कालज म पढती थी उस समय उसकी उत्कट इच्छा हुई कि उसस प्रम किया जाय और कोई सचमुच उसका ध्यान रखे। इसलिए उसने पाश्चात्य ढग के रहन-सहन वाल परिवारा के दा चार लडका स मित्रता बढा ली। उसन स्वीकार किया कि उनके साथ उसके घनिष्ठ शारीरिक सम्ब ध रह चुके थ पर बाद म उसन महसूस किया कि उनसे उस कोइ प्यार नही मिला।

बाद मे वह मेडिकल कालेज म पढन लगी। वहा भी उस किसी के भी साथ घूमन मिलने की पूरी स्वत त्रता थी और उसन कइ लडका के साथ मित्रता कर ली। शुरू म तो उसने उनके साथ केवल मौज उडान क लिए मित्रता की थी पर डाक्टरी की पढाई पूरी करन क फौरन ही बाद उस अस्पताल म काम करनेवाले एक वरिष्ठ डाक्टर स सचमुच लगाव हा गया जो धनी परिवार के थ। इस बार वह सचमुच उसके बारे म गम्भीर हो गयी और उसी अस्पताल म काम करत हुए लगभग दो वष तक बडी स्थिरता से उनक साथ सम्ब ध बनाय रही। चूकि उन दिना वह हास्टल म रहती थी और उस रात को काम पर जाना पडता था, इसलिए वह रात के किसी भी समय उनके साथ समय बिता सकती थी। पहली बार उसन अनुभव किया कि वह किसी से प्रेम कर सकती है और उसे पक्का विश्वास हा गया कि वह भी उसस प्रेम करते है। उसने बताया कि उ हे अपनी ओर और अधिक आकृष्ट करन क लिए और इस डर स कि वह कही किसी दूसरी स्त्री की ओर आकृष्ट न हा जायें उसने उ ह हर तरह की पूरी छूट दी और उ ह प्रस न रखने की काशिश की। वह भी उसकी ओर बहुत ध्यान देते थे और उसे सराहत थे और दोना साथ-साथ सिनमा दखन, मोटर पर लम्बी सर के लिए, तरन, क्लबा म और नाचने के लिए जाते थे। पहली बार उस सच्ची प्रसन्नता मिली और उसने अनुभव किया कि कोई उससे प्रम करता है।

परन्तु कुछ महीन तक उनक साथ बहुत उल्लासमय समय बिताने के बाद, जब वह धीरे धीर उससे दूर हटन लग आर उस यह पता चला कि वह लोगा स यह कहत फिरत थे कि वह उनके पीछे पडी है और यह कि वह उनक लिए 'आवश्यकता से

अधिक तेज है' और यह कि वह उससे पीछा छुडाने की कोशिश कर रहे हैं तो उसे बहुत आघात पहुँचा । वह घोर निराशा में डूब गयी और संवेगात्मक दृष्टि से बहुत विचलित हो उठी । कुछ समय तक उसने सबसे मिलना जुलना छोड दिया और निराशा तथा पराजय की भावना के कारण वह शराब और सिगरेट पीने लगी ।

लेकिन कुछ महीने के बाद उसे फिर ध्यान आया कि पैसे से हर चीज खरीदी जा सकती है और यह कि एक व्यक्ति के लिए अपना जीवन नष्ट कर देना मूर्खता है। इसलिए वह क्लबों में जाने लगी । विवाहित तथा अविवाहित दोनों ही प्रकार के बडे-बडे अफसरों से मिलने लगी । उसके सर पर मनोरंजन के विचार का भूत-सा सवार था और अचेतन रूप से वह किसी साथी की तलाश में थी और आशा करती थी कि वह इन जगहों में मिल जायगा । उसने कहा कि निराशा के कारण और बदला लेने की भावना से वह जीवन का भरपूर आनन्द लूटने लगी और यह सोचने लगी कि कुछ भी करने में कोई बुराई नहीं है । उन्हीं दिनों उसका उच्चतर शिक्षा के लिए विदेश जाने का दाव भी लग गया । वहाँ भी उसने बहुत से मित्र बनाये और मौज का जीवन व्यतीत किया ।

इसके बाद एक उच्च अधिकारी, जो सचमुच बहुत सच्चे हृदय के आदमी थे और यह महसूस करते थे कि उसे प्यार तथा ध्यान की आवश्यकता है, उसका ध्यान रखने लगे और उस पर प्यार लुटाने लगे । वह उसके साथ बडी नेकी और सहृदयता का व्यवहार करते थे । उनके साथ रहकर उसे बडी प्रसन्नता प्राप्त होती थी पर उसने कभी उनकी बातों पर पूरा भरोसा नहीं किया और उसे हर समय आशंका लगी रहती थी । उसका दृढ विश्वास था कि प्यार भरे मानव-सम्बन्ध जैसी कोई चीज नहीं होती है और पैसे से हर सुख खरीदा जा सकता है । जब वह पुरुषों के साथ उसके आवश्यकता से अधिक खुलकर व्यवहार करने की आलोचना करने लगे और जब वह उसमें कुछ पुरुषों के साथ मित्रता न बढाने के लिए कहने लगे, तो उसने बहुत अपमानित अनुभव किया और उसे झुँझलाहट हुई, क्योंकि उसने बताया कि उस समय उसे लगा कि उसकी गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगाना उनकी मूर्खता तथा संकीर्णता थी । वह एक के बाद एक अनेक पुरुषों को मित्र बनाती रही पर उनके निकट आने और बार बार उनसे मिलने पर उसे हमेशा यही लगा कि अपने विचारों तथा मतों में वे हमेशा बहुत कट्टरपंथी तथा रूढिवादी होते हैं और पुरुषों के आचार के लिए एक मानदंड तथा स्त्रियों के लिए दूसरे मानदंड में विश्वास रखते हैं । उसके तथा उसकी अधिकांश सहेलियों के विचार बहुत उन्नत थे और वे इस बात में उससे सहमत थीं कि लडकों तथा लडकियों दोनों के लिए सेक्स के मामले में बराबर स्वतन्त्रता होनी चाहिए और यह कि एक उम्र के बाद बिना किसी रोक-टोक के एक दूसरे से मिलने-जुलने और जो भी उनका जी चाहे करने की अनुमति होनी चाहिए और यह कि दो प्रौढ व्यक्ति अपनी अनुमति से आपस में जो कुछ भी करें वह ठीक है और उनका निजी मामला है जिसमें हस्तक्षेप करने का किसी को अधिकार नहीं है ।

उसने बताया कि जब उसकी उम्र 35 वर्ष से कुछ अधिक हो गयी तो काम के समय व्यस्त रहने और अवकाश के समय भी लोगों से घिरे ,रहने के बावजूद और उल्लासमय जीवन, सैर-सपाटे, मनोरंजन, क्लबों की चहल-पहल और बहुत-से लोगों के साथ के बावजूद जीवन में पहली बार वह अकेली और बेसहारा महसूस करने लगी थी और उसे ऐसे जीवन-साथी की आवश्यकता महसूस होने लगी थी जो सचमुच उससे प्रेम कर सके उसका सम्मान कर सके और उसे सुख सुविधा का जीवन प्रदान कर सके और जिसके साथ रहकर वह सुरक्षित तथा निश्चिन्त अनुभव कर सके। आकर्षक और चुस्त दिखायी देने के लिए वह अपने शारीरिक रूप-रंग का बहुत ध्यान रखती आयी थी, वह नियमित रूप से शृंगारशालाओं में जाकर अपने हाथों, बालों आदि को सजा सँवारकर रखती थी और परामर्श तथा उपचार आदि के लिए विशेषज्ञों के पास जाती रही थी परन्तु अपने यौवन तथा आकर्षण के बावजूद वह इस कारण बहुत उदास रहने लगी थी कि कोई भी न तो उससे हार्दिक प्रेम ही करता था और न उसका सम्मान ही करता था।

इसी बीच उसकी भेंट एक नवयुवक व्यापारी से हो गयी जो जीवन के उल्लास में भरपूर था और उसके विचार बहुत आधुनिक तथा उन्नत थे। नीना असाधारण रूप से उनके प्रति भावुक हो गयी और अपने अवकाश का अधिकांश समय उसके साथ बिताने लगी। वे अक्सर कुछ दिनों के लिए पहाड़ पर भी चले जाते थे और चूँकि उसके पास बेहद पैसा था इसलिए वह शराब और दूसरी चीजों पर जी खोलकर खर्च करता था। एक बार फिर वह जीवन के उल्लास से भर उठी और जीवन का सुख लूटने लगी और चूँकि विवाह से पहले तथा विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-जीवन के बारे में उस आदमी के विचार भी उसके विचारों जैसे ही थे इसलिए वह सोचने लगी कि वह उसका जीवन-साथी बनने के लिए सबसे उपयुक्त आदमी है और यह कि वह उसके साथ अत्यन्त सुखी रहेगी। लेकिन जब उस आदमी ने उसके साथ विवाह करने के प्रस्ताव पर बड़ी रुखाई का परिचय दिया और धीरे धीरे उससे कतराने लगा तो वह आघात तथा निराशा से बिल्कुल चूर चूर हो गयी।

नीना ने कहा, 'यद्यपि मुझे मेडिकल कालेज में दूसरी स्त्रियों के ऐसे ही अनुभवों की जानकारी थी पर इस अवसर पर पहली बार मैंने इस बात को अच्छी तरह समझा कि पुरुष बहुत उन्नत, आधुनिक तथा उन्मुक्त ढंग की स्त्रियों को पसन्द करते हैं तथा सराहते हैं और उनके साथ रहने तथा उल्लासपूर्वक समय बिताने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं लेकिन वे कभी सचमुच न उनसे प्रेम कर सकते हैं और न उनका सम्मान। जब उनके साथ कोई सच्चा और हार्दिक सम्बन्ध स्थापित करने का सवाल आता है तब तथाकथित सर्वाधिक उन्नत तथा आधुनिक पुरुष भी ऐसी स्त्रियों के साथ विवाह-सम्बन्ध स्थापित करने से कतराते हैं। अपनी निराशा के कारण मैंने इस सत्य को पहचाना कि जो स्त्रियाँ बहुत उन्मुक्त होती हैं और उनके साथ बैठकर शराब और सिगरेट पीने को तैयार रहती हैं और जिन्हें,रात बिरात उनके साथ कहीं भी जाने

मे कोई आपत्ति नही होती उन्हे पुरुष प्रेम तथा सम्मान की दृष्टि से नही देखत
बल्कि आमतौर पर उनका अनुचित लाभ उठाते ह। पुरुष विशेष रूप से ऐसी स्त्रिया
का अनुचित लाभ नठाते हैं जो अपने परिवारा स अलग रहती है और जिनके कहीं
आने जाने पर कोई रोक टोक नही होती और जिन पर उनके माता-पिता की कडी
निगरानी नही रहती। सबसे बढकर पुरुष उन स्त्रिया का अनुचित लाभ उठाते हैं जा
सच्चे मानव सम्बन्धो की भूखी होती है और जिनका यह विश्वास होता है कि
पुरुषो के साथ बहुत उन्मुक्त और घनिष्ठ भाव से मिलने जुलने और उनकी कामनाओ
के आगे आत्म-समपण करके ही वे उस प्रकार का सम्बन्ध विकसित करने मे सफल
हो सकती हैं। और इस अनुभूति से मेरे जीवन मे अचानक एक परिवतन आ गया
और मैंने धीरे धीरे मौज उडाने का वह जीवन त्याग दिया जा मैं अब तक बिताती
आयी थी।'

नीना अब भी बहुत अकेली और बसहारा अनुभव करती थी और किसी एस
पुरुष के लिए लालायित रहती थी जो उससे सचमुच प्रेम कर सके तथा उसका सम्मान
कर सके और जिसमे वह प्रेम कर सके तथा जिसकी वह पूरी श्रद्धा स सेवा कर सके।
कभी-कभी उसे ऐसा लगता था कि शायद उसे अपना सारा शेष जीवन अकेले ही व्यतीत
करना होगा और यह कि कोई भी कभी उससे प्रेम नही करेगा। देखने मे वह अपन
को प्रसन्नचित्त रखती थी, कपडे भी ढग से पहनती थी और अपने काम मे व्यस्त रहती
थी परन्तु उसके स्वभाव मे काफी ठहराव आ गया था। सौभाग्यवश, उन्ही दिनो एक
सम्मेलन मे उसकी भेंट अधेड उम्र के एक प्रौढ अधिकारी से हो गयी, उन्हे भी एक
सच्चे मित्र के रूप मे किसी प्रौढ तथा सुशिक्षिता स्त्री की आवश्यकता थी। वह उनक
सचमुच सम्मान करती थी क्योकि अपने सरकारी पद तथा विशेषाधिकारा के बावजू
वह बहुत गम्भीर व्यक्ति थे। दो एक वष के हार्दिक सम्बन्ध के बाद, जिसके दौरान
उन्होने उसका कोई अनुचित लाभ नही उठाया और उसे ढेरो सम्मान तथा प्यार
दिया, दोना का विवाह हो गया।

उसके पति बहुत उदार विचारा वाले तथा प्रौढ व्यक्ति थे। उसे उनके प्रति तथा
अपन बच्चे के प्रति बडी लगन थी और उसने जीवन मे पहली बार यह अनुभव किया
या कि किसी के प्रेम का पात्र बनने, किसी का ध्यान तथा सम्मान प्राप्त करन का क्या
अथ होना है और किसी पुरुष की होकर रहने और सच्ची निष्ठा के साथ उसम प्रम
करन का क्या अथ होता है। विवाह के बाद भी वह नौकरी करती रही क्योकि वह
नही चाहती थी कि उसकी सारी पढाई व्यय जाय और उसके पति को भी उसकी
उपलब्धियो पर बडा गव था।

सेक्स के विभिन्न पहलुओ के बारे म अपन विचार व्यक्त करत हुए उसन कहा,
'जैसा कि मैं आपका पहले ही बता चुकी हूँ, अब मरे विचार बहुत बदल गय हैं।
पहले मेरा विश्वास था कि लडका तथा लडकिया का सक्स क मामले म बराबर स्वतन्त्रता
मिलनी चाहिए और, कि यह अच्छी बात थी कि उन्हे पहले की अपक्षा अधिक

स्वतन्त्रता प्राप्त थी। मैं यह कहा करती थी कि भिन्नलिंगी व्यक्ति के साथ अकेले बाहर जाने के अतिरिक्त कोई लडकी और लडका शारीरिक घनिष्ठता की किसी भी सीमा तक जा सकते है, विशेष रूप से यदि उन्ह एक-दूसरे से प्रेम हो और उनकी आपस में मँगनी हो चुकी हो। मैं समझा करती थी कि जो लडकी भिन्नलिंगी व्यक्तियो के साथ खुलकर व्यवहार नही करती, या दुर्भाग्यवश जिसे इसका अवसर नही मिलता, उसकी लोग न तो कामना करते है, न उनकी सराहना करते है। मैं समझती थी कि विवाह से पहले और विवाह की परिधि के बाहर सेक्स अनुभव लडका तथा लडकियो दोनो ही के लिए उचित है और यह कि सेक्स एक शारीरिक आवश्यकता है जिसे तुष्ट करने में कोई हर्ज नही है और यह कि विवाह के लिए यह कोई आवश्यक गुण नही है कि लडकी अक्षतयोनि तथा लडका अक्षतवीर्य हो। मैंने इस बात को समझा ही नही था कि अधिकाश पुरुष अब भी ऐसी लडकी से विवाह करना चाहते है जो अक्षतयोनि हो। मैं अपनी उन सहेलियो या अन्य लडकियो के आचरण को ठीक समझती थी जिनके विवाह से पहले सेक्स सम्बन्ध रह चुके थे और मैं यह सोचती थी कि विवाहित स्त्री के लिए भी विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करना उचित है यदि अपने पति से उसे सेक्स का पूरा सन्तोष न मिलता हो या वह उससे प्रेम न करती हो या वह उससे प्रेम न करता हो या यदि उनका विवाह विफल हो। मेरा विश्वास था कि क्या अनुचित है और क्या उचित इसका निर्णय करना हर व्यक्ति का निजी मामला है। उस समय मैं यह सोचती थी कि यदि विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर मैंने किसी से सेक्स-सम्बन्ध स्थापित कर भी लिये तो मैं अपराधी अनुभव नही करूँगी। परन्तु अब मेरे विचार बदल गये है। यदि, ईश्वर न करे, अब मैं अपना विवाह की परिधि के बाहर किसी के साथ सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करूँ तो निश्चित रूप से मैं अपराधी अनुभव करूँगी।"

आगे चलकर उसने अपने वर्तमान विचार इन शब्दो में व्यक्त किये, 'मेरी राय में विवाह से पहले सेक्स अनुभव उचित नही है। मैं महसूस करती हूँ कि आज के समाज में भी वह नैतिक नही है और मैं समझती हूँ कि अधिकाश लडकियाँ और लडके, विशेष रूप से मेरे मित्र इसे अनुचित समझते है। खैर, समूह के रूप में लडका और लडकियो के मिलने, एक-दूसरे का हाथ थाम लेने या कभी-कभार चुम्बन भी कर लेने में कोई हर्ज नही है, लेकिन इससे आगे नही। माता पिता को बडे स्नेह के साथ उनका मार्गदर्शन करना चाहिए और उन्हे सेक्स की जानकारी देनी चाहिए बच्चो में यह आभास उत्पन्न होना चाहिए कि उनके माता पिता उनको चाहते है, उनसे प्यार करते है और उनको सराहते हैं और उन्हें कभी यह आभास नही होने देना चाहिए कि उनकी उपेक्षा की जा रही है या उनका तिरस्कार किया जा रहा है।'

अपनी बात जारी रखते हुए नीना ने कहा 'अब मैं महसूस करती हूँ कि लोगो के मन में, विशेष रूप से पुरुषो के मन में यह पूर्वाग्रह दृढ़ता से घर कर चुका है कि यदि कोई स्त्री पुरुषो के साथ बहुत उन्मुक्त व्यवहार करती है तो वह दुश्चरित्र

है और उसका सम्मान नही किया जाना चाहिए। और मैं समझती हूँ कि स्त्री का पुरुषो के साथ बहुत खुलना नही चाहिए क्योकि ऐसा करने के कारण ही वह उनकी दृष्टि म अपना सम्मान खो देती है। मैं अब इस पुरान दृष्टिकोण से सहमत होती जा रही हू कि स्त्री को पुरुषो के साथ बहुत घुल मिल नही जाना चाहिए और उनसे मर्यादानुकूल दूरी रखनी चाहिए क्योकि केवल ऐसी स्थिति मे ही पुरुष सचमुच उसे सम्मान की दृष्टि से देखेंगे।"

उसने यह भी कहा, "मेरी राय मे विवाह से पहले लडका तथा लडकियो को अकेले बाहर जाने या दूसरो की सगत से दूर एकान्त मे अक्सर एक दूसरे के साथ समय बिताने की, विशेष रूप से एकान्तमय तथा सुनसान जगहो मे अनुमति नही दी जानी चाहिए। क्योकि अगर उन्हे ऐसा करने दिया गया तो उनके बीच शारीरिक घनिष्ठता स्थापित होना अनिवार्य ह क्योकि वे अधिमानव तो होते नही। और विशेष रूप से स्त्री तो यदि पुरुषो के साथ अकेली रहे या घूमे फिरे तो उसका सम्मान और नेकनामी मिटटी मे मिल जाती है। लेकिन मैं समझती हूँ कि अपने घर पर या घर के बाहर भी उनके समूह के रूप म आपस मे मिलने मे कोई हर्ज नही है।"

बाद मे चलकर उसने कहा 'अब मैं महसूस करती हूँ कि किसी भी लडकी को किसी पुरुष को अपने शरीर से खेलने की छूट नही देनी चाहिए क्योकि अगर वह दूसरो को अपने शरीर पर हाथ डालने की छूट देगी और सेक्स क्रिया मे भाग लेगी, तो उसके व्यक्तित्व के प्रति दूसरो का सम्मान बहुत घट जायेगा और कोई भी पुरुष किसी ऐसी लडकी का सम्मान नही करता जो पुरुषो को शारीरिक अतिक्रमण की छूट देने को तैयार हो। मैं समझती हूँ कि जो स्त्रिया विवाह की परिधि के बाहर गुप्त रूप से सेक्स क्रिया मे भाग लेकर अपने पति को धोखा देती है वे निश्चित रूप से अनैतिक कर्म करती हैं, जो लगभग उतना ही बुरा है जितना पैसे की खातिर अपना शरीर का बेचना।"

उसने बताया 'म मानती हूँ कि नैतिकता का दोहरा मानदण्ड बहुत व्यापक रूप मे प्रचलित है और यह कि यदि विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर स्त्री तथा पुरुष दोनो ही सेक्स क्रिया म भाग लें तो स्त्री को अधिक दुराचारी समझा जाता ह। मेरी दृढ भावना है कि ऐसा नही होना चाहिए। उन दोनो ही को ऐसा नही होना चाहिए। उन दोनो ही को ऐसा नही करना चाहिए, और यदि व करें भी तो समाज की ओर से दोनो ही की समान रूप से निन्दा की जानी चाहिए। यह अत्यन्त अनुचित बात है पुरुष स्वय सेक्स भोग करते हैं या यह कहना अधिक सही होगा कि वे स्त्रियो को सेक्स भोग के लिए फासते हे और जब वे ऐसा करते हैं तो पुरुष स्वय ही उन्हे तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं और उनका सम्मान करना बन्द कर देते हैं। यह अत्यन्त अनुचित तथा अन्यायपूर्ण है।

मीना ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा, 'मेरी बहुत दृढ भावना है कि पुरुष स्त्रियो का अनुचित लाभ उठाते हैं और वे स्त्री को मुख्यत एक भोग विलास

की वस्तु और सक्स-तुष्टि का साधन समझते हैं। कोई स्त्री कितनी ही पढ़ी लिखी और बुद्धिमान क्यो न हो या दफ्तर म उसका पद कितना ही ऊचा क्या न हो, पुरुष उस सदन पहल स्त्री क ही रूप म—कमोवेश सेक्स तथा भोग विलास की वस्तु के रूप म—देखत हैं, जिसकी सगत आमतौर पर थकान दूर करन के लिए, गम्भीर काम क बाद हल्की फुल्की चीजो के बारे म बातें करते के लिए और आनन्द प्राप्त करन के लिए ही आवश्यक समझी जाती है किसी गम्भीर बौद्धिक विचार विनिमय या लाभ के लिए नही। और सबस बुरी बात यह है कि स्त्रिया भी गौरवान्वित अनुभव करती हैं यदि कोई उनकी सगत के लिए उत्सुक हो और अगर केवल हल्की फुल्की बातचीत, परिवतन या आराम से समय बिताने तथा आनन्द प्राप्त करने के लिए भी ऐसा किया जाये तो उन्हें बहुत सन्ताप मिलता है।

अन्त म उसने कहा, 'मैं समझती हूँ कि पति का किसी दूसरी स्त्री के साथ या पत्नी का किसी दूसरे पुरुष के साथ सेक्स-सम्बन्ध रखना समान रूप स गम्भीर अपराध है। हालाकि मेरा पति कभी किसी दूसरी स्त्री के साथ सक्स-सम्बन्ध स्थापित कर ता पहली बार तो मैं उस क्षमा कर दूगी, परन्तु यदि मैं ऐसा करूँ तो मैं उसस क्षमा की आशा नही रखूगी। यदि कभी मैं ऐसा करूँ तो मुझे उसका दण्ड मिलना चाहिए।" उसन जोर देकर कहा, मैं समझती हूँ कि सेक्स आचरण म सयम से काम लिया जाना चाहिए और विवाह से पहले तथा विवाह की परिधि के बाहर दोना ही स्थितिया म उसस दूर रहना चाहिए। हमशा की तरह अब भी मेरा यह विश्वास अवश्य है कि सक्स विवाह का एक महत्त्वपूर्ण अग है और यह कि पति तथा पत्नी दानो ही का विवाह की परिधि के अन्दर रहकर सेक्स-तुष्टि प्राप्त करन का समान अधिकार है, और दाना ही का विशेष रूप से पत्नी को, विवाहित सेक्स सम्बन्धा म एक-दूसरे की सुख-सुविधा का ध्यान रखना चाहिए दोनो म परस्पर सहानुभूति होनी चाहिए धैर्य से काम लेना चाहिए और बहुत प्यार का व्यवहार करना चाहिए। विवाह क सूत्र म बँधे हुए दोना पक्षा का कत्तव्य है कि व इस बात का ध्यान रखें कि दोना ही एक-दूसरे स सन्तुष्ट तथा प्रसन्न रह।"

## व्यक्ति अध्ययन सख्या 9

माना ने सीनियर कम्ब्रिज पास किया था और उसकी उम्र 22 वर्ष की थी। वह एक सरकारी सगठन म काम करती थी और उसकी नौकरी ऐसी थी कि उसे महीने के अधिकाश दिन हवाई जहाज मे यात्रा करनी पडती थी। उसे 525 रु० वेतन मिलता था और पिछले पाँच वर्षो म यह उसकी तीसरी नौकरी थी। माना का चेहरा बहुत तेहक तथा आकर्षक था उसकी आखो मे चमक तथा मुस्कराहट थी और उसका शरीर बेहद सुडौल था। वह कपडे इतने छोटे पहनती थी कि उसकी अधिकाश ..ठ और पेट खुला रहता था। उसकी चाल म बडी गरिमा थी और उसका पहनावा आधुनिकतम, सुरुचिपूर्ण तथा बहुत ही फशनेबुल होता था। वह बहुत चुस्त, फुर्तीली

और हँसमुख थी और बातचीत में अत्यन्त निःसंकोच तथा निर्भीक थी। वह बहुत बातूनी और दम्भिनी थी और कभी कभी कुछ दम्भ की झलक भी उसमें पायी जाती थी।

उसके पिता बहुत ऊँचे सरकारी अफसर थे। वह सुशिक्षित थे और उनके विचार तथा रहन-सहन पाश्चात्य ढंग का था। उसकी माँ भी पढ़ी लिखी थी, और एक सुशिक्षित तथा आधुनिक परिवार से सम्बन्ध रखती थी। उसके चाचा चाचिया भी अच्छी हैसियत के थे और उनका रहन सहन तथा विचार भी पाश्चात्य ढंग का था।

उसके केवल एक भाई था जो उससे एक वर्ष बड़ा था। उन दोनों ने अपना बचपन बहुत सुख-सुविधा तथा हर्ष उल्लास में व्यतीत किया था और उन्हें घर पर हर तरह का ऐश आराम उपलब्ध था। चूंकि वह बहुत सुन्दर थी और बचपन में भी उसे अपने माता पिता, रिश्तेदारों तथा माता पिता के मित्रों से बहुत प्रशंसा मिली थी, इसलिए वह लाड-प्यार में कुछ बिगड़ गयी थी। वह बचपन ही से बड़े शहरों में रहती आयी थी।

उसने और उसके बड़े भाई दोनों ही ने एक बड़े शहर में अंग्रेजी स्कूल में शिक्षा पायी थी। स्कूल में भी उसके बहुत-से मित्र थे और चूंकि माता पिता के घर का वातावरण बहुत उन्मुक्त था, इसलिए उन्हें कहीं भी आने जाने की और अपने मित्रों को घर बुलाने की पूरी स्वतन्त्रता थी। उसके माता पिता का सामाजिक जीवन भी बहुत व्यस्त रहता था और घर पर तथा क्लबों में उनकी स्त्रियों तथा पुरुषों की मिली जुली पार्टियां होती रहती थीं। बचपन से ही मोना तथा उसका भाई क्लबों में खेलने-कूदने और तैरने के लिए जाया करते थे, और इतवार को वे वहां लड़कों तथा लड़कियों की मिली जुली जमावड़ों का आनन्द लेने के लिए जाया करते थे। उसे अच्छे कपड़े पहनने का हमेशा शौक था और उसे कभी किसी चीज से वंचित नहीं रखा गया था। उसे पढ़ने के प्रति अधिक रुचि नहीं थी हालांकि वह अपनी पढ़ाई में काफी अच्छी थी।

जब वह 13-14 वर्ष की लड़की थी तभी से वह लड़के लड़कियों के उन नृत्य आयोजनों में जाने लगी थी जो अलग अलग लोगों के घरों पर होते रहते थे। नाच की ये पार्टियां लगभग आधी रात तक चलती थीं और उनमें सभी को जो भी जी चाहे करने की पूरी आजादी रहती थी। उसकी मां और बाप दोनों ही के बहुत से घनिष्ठ मित्र थे, जिनमें स्त्रियां भी थीं और पुरुष भी, और उसके पिता एक विशेष विवाहित महिला को बहुत पसन्द करते थे और उनसे उनकी बहुत मित्रता भी थी। उसकी माँ की भी कई पुरुषों से मित्रता थी और वे बिना किसी रोक-टोक के एक दूसरे से मिलते थे।

सीनियर कैम्ब्रिज तक की अपनी पढ़ाई पूरी कर लेने के बाद वह बहुत उत्सुक थी कि वह भी कोई काम करने लगे जैसे उससे उम्र में बड़ी उसकी कई सहेलियाँ कर रही थीं। नौकरी के प्रति उसका आकर्षण अन्य किसी बात की अपेक्षा रोमांच,

तडन-भडक तथा विभिन्न प्रकार के लोगों से मिलने के अवसर के कारण अधिक था। यद्यपि आरम्भ में उसके माता पिता ने उसके नौकरी करने का ही विरोध किया क्योंकि उनके पास उसे देने के लिए पैसे की कोई कमी नहीं थी, पर न जाने क्या वह चाहती थी कि वह आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र हो जाय और कोई ऐसी नौकरी कर ले जिसमें उसे नयी-नयी जगह और देश देखने तथा विदेशियों से मुलाकात का अवसर मिल सके। उसका कहना कि विदेशियों को वह विशेष रूप से पसन्द करती थी और योरपवासियों तथा अमरीकियों का बहुत प्यार करती थी। वास्तव में वह चाहती थी कि कभी कभी अपने माता पिता के घर के सुरक्षित जीवन से कहीं दूर चली जाय और उसका जी चाहता था कि वह एक प्रौढ व्यक्ति के रूप में जिम्मेदार महसूस करे। इसलिए उसने पहले एक बडे होटल में नौकरी कर ली और एक वर्ष बाद हवाई जहाज की एक कम्पनी में एयर-होस्टेस बन गयी।

कई लडकों से उसकी बहुत अच्छी मित्रता थी और उसने स्वीकार किया कि 'मित्र-लडकों के बिना जीवन अत्यन्त नीरस और रुचिहीन रहता है।' उसे एक फौजी अफसर से बहुत लगाव हो गया था और जब वह कहीं बाहर नियुक्त कर दिया गया और उसने उसके साथ पत्र व्यवहार जारी नहीं रखा तो उसे बहुत दुख हुआ पर उसने इस बात का बहुत बुरा नहीं माना। वह बहुत यात्रा करती रहती थी और विदेशों में उसके कई अच्छे मित्र थे जिनके साथ रहकर, उसने बताया, उसे सचमुच बहुत सुख और सन्तोष मिलता था।

चूंकि मोना का जन्म तथा लालन पालन एक उन्नत तथा पाश्चात्य ढंग के रहन-सहन वाले परिवार में हुआ था जिसके विचार उदार थे और जिसके पास ढेरों पैसा था, इसलिए उसका रवैया यह हो गया था कि 'खाओ, पियो और मौज उडाओ'। उसने इतने ऐश आराम और स्वतन्त्रता का जीवन व्यतीत किया था हालांकि वह सचेतन रूप से पैसे को मूल्यवान नहीं समझती थी, पर वह महसूस करती थी कि समस्त भौतिक सुख-सुविधाओं के बिना जीवन निरर्थक हो जायगा। वह जवान थी जीवन की उमंग और उत्साह से भरपूर उसे मनचाहे ढंग से घूमने फिरने की स्वतन्त्रता थी। वह पूर्णत वर्तमान में ही अपना जीवन व्यतीत करती थी और उसे भविष्य की तनिक भी चिन्ता नहीं थी और न इस बात की कि लोग उसके बारे में क्या सोचेंगे या कहेंगे क्योंकि वह हमेशा से ऐसे लोगों के बीच उठती-बैठती आयी थी जिनके विचार उन्नत और कुंठा-रहित थे।

मोना ने तर्क दिया कि वह किसी भी प्रकार के कपडे पहनने में कोई हर्ज नहीं समझती, वह इसे अपनी-अपनी निजी पसन्द का मामला समझती थी। उसने कहा, 'अगर कोई अपने शरीर की नुमाइश करता है तो उसे सराहा जाना चाहिए, उसकी प्रशंसा की जानी चाहिए या कम से कम उसकी ओर ध्यान तो दिया ही जाना चाहिए, ठीक उसी प्रकार जैसे मेरी आकर्षक वेश भूषा की ओर ध्यान दिया जाता है। बहुत थोडे और छोटे कपडे पहनने का न मैं गलत समझती हूँ और न घटियापन का प्रमाण

मानती हूँ। यह तो अपनी पसन्द की बात है।"

आगे चलकर उसने दूसरी बातों पर चर्चा करते हुए उसने कहा, 'मैं 'स्वच्छन्द प्रेम' में विश्वास रखती हूँ अर्थात् यह कि हर व्यक्ति को किसी से भी प्रेम करने की पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए और इस प्रकार के सम्बन्धों पर कोई प्रतिबन्ध या रोक नहीं लगायी जानी चाहिए, उन पर अनिवार्य कर्तव्यों अथवा दायित्वों की कोई सीमाएँ नहीं होनी चाहिएँ। इस प्रकार का प्रेम-सम्बन्ध उस समय तक जारी रखा जाना चाहिए जब तक दूसरे व्यक्ति के प्रति मन की भावनाएँ रहें। जिस दशा में यह आकर्षण तथा भावना न रह जाय, उस सम्बन्ध को भंग कर देने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

वह इस बात का अनुमोदन करती थी कि माता पिता अपने बच्चों की उपस्थिति में खुलकर तथा निःसंकोच भाव से बातें करें। वह समझती थी कि लड़कों तथा लड़कियों दोनों को ही खुलेआम सड़कों पर चर्चा करने की, आपस में बिना किसी रोक टोक के घुलने मिलने की और उचित तथा अनुचित को स्वयं अपनी धारणा के अनुसार सोचने तथा आचरण करने की पूर्ण स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए। उसका विश्वास था कि कोई भी काम करने में कोई भी बुराई नहीं है यदि उससे सम्बन्धित व्यक्तियों को सुख मिलता हो और किसी दूसरे के मामलात में कोई हस्तक्षेप न होता हो। उन्मुक्त भाव से मिलने-जुलने की छूट होनी चाहिए और यह बात हर व्यक्ति पर छोड़ दी जानी चाहिए कि वह स्वयं अपने सिद्धान्तों के अनुसार आचरण करे। परन्तु वह इस बात को महसूस करती थी कि यह केवल उसी स्थिति में सम्भव हो सकता है जब बच्चों को शुरू से ही अपने व्यक्तित्व का तथा स्वतन्त्र रूप से सोचने की क्षमता का विकास करने का अवसर दिया जाये। उसे उनके सिगरेट पीने और शराब पीने पर कोई आपत्ति नहीं थी। वह स्वयं ये दोनों ही काम करती थी।

वह महसूस करती थी कि अब नौजवान लड़कों तथा लड़कियों को पहले की तुलना में अधिक सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता है और यह उनके लिए बहुत स्वस्थ तथा अच्छी बात है। उसने इस पर जोर दिया कि लड़कियों तथा लड़कों को सेक्स के मामले में समान स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए। उसने कहा, 'लोगों की समझ में आखिर यह बात क्यों नहीं आती कि शारीरिक तथा मानसिक रूप से स्त्रियाँ भी पुरुषों की तरह ही मनुष्य होती हैं और सुखप्रद अनुभवों के लिए उनकी आवश्यकताएँ भी वैसी ही होती हैं जैसी पुरुषों की।"

उसने मत व्यक्त किया, "मेरी राय में सेक्स का दमन अनेक प्रकार के विकारों तथा दूषित आचरणों को जन्म देता है और यदि सेक्स को आवश्यकता से अधिक रोका जाये या उसका दमन किया जाये तो चोरी-छुपे ऐसे विकृत आचरणों में भाग लेने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है जैसे समलिंगी मैथुन या हस्त-मैथुन। मैं समझती हूँ कि सेक्स पर आवश्यकता से अधिक प्रतिबन्ध लगाना दकियानूसी तथा अतर्कसंगत बात है और इससे व्यक्ति के मन में अपराध की भावना उत्पन्न होती है।'

आगे चलकर उसने तर्क दिया, "लोग अक्सर कहते हैं कि पुरुष तथा स्त्री के बीच पारस्परिक चाह तथा आकर्षण केवल उतनी ही देर तक रहता है जब तक वे परस्पर सभोग करते हैं। लेकिन यदि ऐसा हो भी तो इस बात का अनुभव कर लेने और पता लगा लेने में क्या हर्ज है कि यह चाह या आकर्षण केवल सतही है या सच्चा। क्योंकि यदि यह आकर्षण सम्भोग के बाद भी बना रहता है तो वह निश्चित रूप से हार्दिक आकर्षण या प्रेम होगा और उसे मूल्यवान समझा जाना चाहिए।"

सेक्स से सम्बन्धित कई दूसरे प्रश्नों के बारे में अपना मत व्यक्त करते हुए उसने कहा, "वास्तव में मेरी यह दृढ भावना है कि दो प्रौढ व्यक्तियों के बीच उनकी पारस्परिक सहमति में किसी भी प्रकार का और किसी भी हद तक सेक्स आचरण सर्वथा उनका वैयक्तिक तथा निजी मामला है। और यदि वे सोचते हों कि उसमें कोई हर्ज नहीं है तो किसी को उनके मामलात में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए और न उनकी आलोचना करना चाहिए।"

उसने तर्क दिया कि जब लोग जीवन में परिपूर्ति प्राप्त करने के लिए प्रेम की आवश्यकता पर जोर देते हैं, तो स्वयं अपनी परिपूर्ति के लिए सेक्स की आवश्यकता पर जोर क्यों न दिया जाये। उसका विश्वास था कि सेक्स तथा प्रेम दो भिन्न आवश्यकताएँ हैं और दोनों ही का समान महत्त्व है और यह मान्यता कि सेक्स कोई दूषित तथा गन्दी चीज है बिल्कुल दकियानूसी और पुराने ढंग की बात है। उसने कहा कि उसका विश्वास था कि शरीर की आवश्यकताओं में कोई दूषित बात नहीं होती और सेक्स सम्बन्धी आवश्यकताओं की परिपूर्ति उतनी ही सन्तोषप्रद या उससे भी अधिक आनन्ददायक होती है, जितनी कि खाने, पीने या सोने जैसी अन्य किसी शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति। उसने कहा कि सेक्स यदि एकतरफा, स्वार्थपूर्ण, शोषणात्मक या विनाशकारी न हो तो वह विलक्षण शारीरिक क्रिया और अपार आनन्द का स्रोत होता है।

उसने स्वयं पूछा, "सेक्स को घृणास्पद क्यों समझा जाये? सेक्स को तिरस्कार की दृष्टि से क्यों देखा जाये? अगर किसी भी व्यक्ति को, वह स्त्री हो या पुरुष, सेक्स से घृणा हो तो वह विवाह की परिधि में भी सन्तोषप्रद सेक्स सम्बन्ध नहीं बना सकेगा और इसके फलस्वरूप वह व्यक्ति हरदम चिड़चिड़ेपन और तनाव का शिकार रहेगा और विवाहित जीवन को अत्यन्त दुःखद बना लेगा। सेक्स की दृष्टि से सन्तुष्ट दम्पत्ति ही अपने बच्चों तथा अपने मित्रों को स्नेह प्रदान कर सकते हैं। इसलिए सेक्स के प्रति घृणा की भावना क्यों पैदा की जाये?"

उसने यह मत व्यक्त किया कि यदि दो प्रौढ़ अपनी इच्छा और सहमति से कोई भी काम करें, जिसमें सेक्स क्रिया भी शामिल है और यदि उनका उद्देश्य दूसरे को धोखा देना या दूसरे का शोषण करना न हो और उससे किसी को कोई हानि न पहुँचती हो तो उसमें कोई अनैतिक बात नहीं है। उसने तर्क दिया "मेरी दृढ भावना है कि किसी भी चीज में, जिससे सम्बन्धित व्यक्तियों को सुख मिलता हो, कोई बुराई

है। दो प्रौढ़ तथा परस्पर प्रेम भाव रखनेवाले व्यक्तियों को यदि एक-दूसरे से शारीरिक आनन्द प्राप्त हो और उससे किसी को कोई हानि न होती हो तो उसे पापमय, अनैतिक या समाज विरोधी क्या समझा जाये। अपने भावों, भावनाओं या सुखों को ऐसे व्यक्तियों के साथ बाँटने में क्या बुराई है, जो हमें अच्छे लगते हों, जिनसे हम प्रेम हो या जिनकी हम प्रशंसा करते हों, और समाज को उसमें क्या हानि होती है?"

आगे चलकर विवाह से पहले सेक्स-अनुभव के बारे में चर्चा करते हुए उसने कहा कि उसकी राय में विवाह से पहले सेक्स का अनुभव कुछ बातों की दृष्टि से अच्छी बात है क्योंकि हम विवाह से पहले सेक्स के बारे में भी उसी प्रकार जानकारी प्राप्त करनी चाहिए जैसे हम जीवन में अन्य बातों की जानकारी प्राप्त करते हैं। उसने कहा, 'व्यक्तिगत रूप से मैं समझती हूँ कि विवाह-पूर्व सेक्स अनुभव से युगल प्रेमियों को यह पता चलता है कि शरीर-क्रिया की दृष्टि से तथा मानसिक दृष्टि से वे एक-दूसरे के लिए उपयुक्त हैं या नहीं और वे विवाह के माध्यम से स्थायी सेक्स-सम्बन्धों के क्षेत्र में प्रवेश करने का आपस में स्वेच्छा-पूर्वक निर्णय करें या न करें। मेरी राय में चूँकि विवाह में सेक्स-सामंजस्य का बहुत महत्व होता है, इसलिए इसमें प्रयोगात्मक विवाह का अवसर उपलब्ध हो सकता है जिससे दोनों पक्ष इस बात का पता लगा सकते हैं कि वे जीवन भर के लिए एक दूसरे के साथ विवाह के बन्धन में बँधने के लिए उपयुक्त हैं या नहीं। मेरा दृढ़ विश्वास है कि हर व्यक्ति को विवाह से पहले सेक्स का प्रयोगात्मक अनुभव प्राप्त करना चाहिए।"

उसका विचार था कि अक्षतयोनि होना महत्वहीन और दकियानूसी बात है। वह स्वतः कोई गुण नहीं है। उसने यह स्वीकार किया कि यदि वह किसी घनिष्ठ मित्र के साथ विवाह से पहले या विवाह के बाद सेक्स क्रिया में भाग ले तो उसे अपराध का आभास नहीं होगा क्योंकि वह एक ऐसी क्रिया होगी जो वह अपनी इच्छा से एक ऐसे व्यक्ति के साथ करेगी जिसके प्रति उसके मन में प्यार का भाव तथा भावनाएँ होंगी।

विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्बन्ध के बारे में भी उसने कहा कि उसमें कोई बुराई नहीं है यदि विवाह के सूत्र में बँधे लोग परस्पर उसके लिए सहमत हों और एक-दूसरे की जानकारी में ऐसा कर रहे हों। उसने बताया कि उसकी कुछ सहेलियाँ, जिनका विवाह बहुत उदार तथा [illegible] विचारों वाले पुरुषों के साथ हुआ था और उनके पति भी अपने कुछ अन्य [illegible] भिन्नलिंगी मित्रों के साथ शारीरिक दृष्टि से [illegible] घनिष्ठ सम्बन्ध रखते थे, और वे इसे किसी भी प्रकार अनुचित, अनैतिक या पापपूर्ण नहीं समझते थे। मोना ने बताया [illegible] मेरी सहेलियाँ मुझे बताती हैं कि दो-तीन दम्पति, जो उनके घनिष्ठ मित्र हैं आपस में एक-दूसरे के पति या पत्नी के साथ [illegible] बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं। कभी-कभी वे अपनी पत्नियाँ तथा [illegible] कुछ दिनों के लिए आपस में बदल भी लेते हैं विशेष रूप से जब वे सब मिलकर शहर से बाहर छुट्टी मनाने जाते हैं। और मैं इसमें कोई बुराई नहीं समझती। यदि

हाल वे सब आपस में इस रोमांस तथा परिवर्तन के लिए सहमत होते हैं और वे न किसी के साथ छल करते हैं, न किसी को धोखा देते हैं और न ही किसी को कोई हानि या क्षति पहुँचाते हैं। लेकिन मैं मानती हूँ कि ऐसी आदर्श स्थिति कभी-कभार ही हो सकती है। आमतौर पर यह सम्भव नहीं होता कि इस प्रकार के समूह के सभी सदस्य एक ही जैसे विचार तथा भावनाएँ रखते हों और हो सकता है कि वे सेक्स-जीवन में विविधता तथा परिवर्तन का उतने निःसंकोच, उन्मुक्त तथा निष्कपट भाव से आनन्द प्राप्त करने को पसन्द न करते हों।"

अन्त में उसने कहा कि उसका यह दृढ़ मत है कि उसकी पीढ़ी इससे पूर्वगामी पीढ़ियों से अधिक अनैतिक नहीं है जैसा कि आमतौर पर समझा जाता है और उसकी पीढ़ी के लोगों को अनैतिक केवल इसलिए कहा जाता है कि वे जो कुछ करते हैं उसे स्वीकार कर लेने में और जो कुछ वे विश्वास करते हैं उसका प्रचार करने में अधिक निःसंकोच, उन्मुक्त तथा ईमानदार होते हैं। उसने कहा "अब जो कुछ हो रहा है वह पहले भी होता रहता था, लेकिन पहले यह सब कुछ इतने गुप्त रूप में और चोरी-छुपे और सबके सामने बाहरी दिखावे के लिए बहुत भोलेपन तथा मक्कारी की मुद्रा बनाये रखकर किया जाता था कि सब लोग यही समझते थे कि सब ठीक-ठाक है। अब वही सब बातें सबके सामने आवश्यकता से अधिक गम्भीर आचरण तथा अभिवृत्ति का ढोंग किये बिना अधिक खुले ढंग से तथा ईमानदारी के साथ की जा रही हैं और इसलिए लोग शिकायत करते हैं और यह समझते हैं कि आजकल के पुरुषों तथा स्त्रियों का आचरण ठीक नहीं है। मेरी निजी धारणा यह है कि चोरी-छुपे हर प्रकार का काम करते हुए भी मक्कारी से काम लेना और यह जताने की कोशिश करना कि जैसे कुछ किया ही न हो इससे कहीं अच्छा है कि हर बात को खुलेआम स्वीकार कर लिया जाये।

## निष्कर्ष

जिन शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों का अध्ययन पहले किया गया था और जिनका अध्ययन दस वर्ष बाद किया गया उनके व्यक्ति अध्ययनों को देखने पर हमें सेक्स-सम्बन्ध तथा सेक्स आचरण के विभिन्न पहलुओं के बारे में और सेक्स तथा सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता के बारे में इन स्त्रियों की अभिवृत्तियों में अनेक परिवर्तन देखने को मिलते हैं। यद्यपि इन दस वर्षों के दौरान अभिवृत्तियों की विस्तार-सीमाएँ लगभग वही रहीं, एक सिरे पर रूढ़िवादी से दूसरे सिरे पर आमूल परिवर्तनवादी तक और बीच में उदारवादी, फिर भी रूढ़िवादी अभिवृत्तियों वाले उत्तरदाताओं का प्रतिशत अनुपात भी घट गया था और उनकी अभिवृत्तियों की उग्रता भी कुछ कम हो गयी थी, जबकि आमूल परिवर्तन की अभिवृत्तियों वाले उत्तरदाताओं की संख्या बढ़ गयी थी और उनकी अभिवृत्तियों की उग्रता भी अधिक तीक्ष्ण हो गयी थी और उनमें कुछ नयी संकल्पनाओं का भी समावेश हो गया था।

है। दो प्रौढ़ तथा परस्पर प्रेम-भाव रखनेवाले व्यक्तियों को यदि एक दूसरे से शारीरिक आनन्द प्राप्त हो और उससे किसी को कोई हानि न होती हो तो उसे पापमय, अनैतिक या समाज विरोधी क्यों समझा जाये। अपने भावों, भावनाओं या सुखों को ऐसे व्यक्तियों के साथ बाँटने में क्या बुराई है, जो हमें अच्छे लगते हों, जिनसे हम प्रेम करते हों या जिनकी हम प्रशंसा करते हों और समाज को उसमें क्या हानि होती है?"

आगे चलकर विवाह से पहले सेक्स अनुभव के बारे में चर्चा करते हुए उसने कहा कि उसकी राय में विवाह से पहले सेक्स का अनुभव कुछ बातों की दृष्टि से अच्छी बात है क्योंकि हमें विवाह से पहले सेक्स के बारे में भी उसी प्रकार जानकारी प्राप्त करनी चाहिए जैसे हम जीवन में अन्य बातों की जानकारी प्राप्त करते हैं। उसने कहा, 'वैयक्तिक रूप से मैं समझती हूँ कि विवाह-पूर्व सेक्स अनुभव से युगल प्रेमियों को यह पता चलता है कि शरीर क्रिया की दृष्टि से तथा मानसिक दृष्टि से वे एक-दूसरे के लिए उपयुक्त हैं या नहीं और वे विवाह के माध्यम से स्थायी सेक्स-सम्बन्धों के क्षेत्र में प्रवेश करने का आपस में स्वेच्छा-पूर्वक निर्णय करें या न करें। मेरी राय में चूंकि विवाह में सेक्स-सामंजस्य का बहुत महत्त्व होता है, इसलिए इसमें प्रयोगात्मक विवाह का अवसर उपलब्ध हो सकता है, जिससे दोनों पक्ष इस बात का पता लगा सकते हैं कि वे जीवन भर के लिए एक दूसरे के साथ विवाह के बंधन में बँधने के लिए उपयुक्त हैं या नहीं। मेरा दृढ़ विश्वास है कि हर व्यक्ति को विवाह से पहले सेक्स का प्रयोगात्मक अनुभव प्राप्त करना चाहिए।"

उसका विचार था कि अक्षतयोनि होना महत्त्वहीन और दकियानूसी बात है। वह स्वतः कोई गुण नहीं है। उसने यह स्वीकार किया कि यदि वह किसी घनिष्ठ मित्र के साथ विवाह से पहले या विवाह के बाद सेक्स क्रिया में भाग ले तो उसे अपराध का आभास नहीं होगा क्योंकि वह एक ऐसी क्रिया होगी जो वह अपनी इच्छा से एक ऐसे व्यक्ति के साथ करेगी जिसके प्रति उसके मन में प्यार का भाव तथा भावनाएँ होंगी।

विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्बन्ध के बारे में भी उसने कहा कि उसमें कोई बुराई नहीं है यदि विवाह के सूत्र में बँधे लोग पूर्ण रूप से उसके लिए सहमत हों और एक-दूसरे की जानकारी में ऐसा कर रहे हों। उसने बताया कि उसकी कुछ सहेलियाँ जिनका विवाह बहुत उदार तथा उन्मुक्त विचारों वाले पुरुषों के साथ हुआ था और उनके पति भी ऐसा कुछ करना पसन्द [illegible] भिन्नलिंगी मित्रों के साथ शारीरिक दृष्टि से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते थे, और वे इसे किसी भी प्रकार अनुचित अनैतिक या [illegible] नहीं समझते थे। [illegible] ने बताया [illegible] मेरी सहेलियाँ खुश [illegible] हैं कि [illegible] जो उनके घनिष्ठ मित्र हैं [illegible] आपस में एक-दूसरे के पति या पत्नी के [illegible] घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं। कभी-कभी वे [illegible] तथा [illegible] के लिए [illegible] में [illegible] भी [illegible] हैं [illegible]। और मैं इसमें कोई बुराई नहीं समझती।

हाल वे सब आपस में इस रोमांस तथा परिवर्तन के लिए सहमत होते हैं और न न किसी के साथ छल करते हैं, न किसी को धोखा देते हैं और न ही किसी को कोई हानि या क्षति पहुँचाते हैं। लेकिन मैं मानती हूँ कि ऐसी आदर्श स्थिति कभी-कभार ही हो सकती है। आमतौर पर यह सम्भव नहीं होता कि इस प्रकार के समूह के सभी सदस्य एक ही जैसे विचार तथा भावनाएँ रखते हों और हो सकता है कि वे सेक्स जीवन में विविधता तथा परिवर्तन का उतना निःसंकोच, उन्मुक्त तथा निष्कपट भाव से आनन्द प्राप्त करना को पसन्द न करते हों।"

अन्त में उसने कहा कि उसका यह दृढ़ मत है कि उसकी पीढ़ी इससे पूर्वगामी पीढ़ियों से अधिक अनैतिक नहीं है, जैसा कि आमतौर पर समझा जाता है और उसकी पीढ़ी के लोगों को अनैतिक केवल इसलिए कहा जाता है कि वे जो कुछ करते हैं उसे स्वीकार कर लेने में, और जो कुछ वे विश्वास करते हैं उसका प्रचार करने में अधिक निःसंकोच, उन्मुक्त तथा ईमानदार होते हैं। उसने कहा, "अब जो कुछ हो रहा है यह पहले भी होता रहता था, लेकिन पहले यह सब कुछ इतने गुप्त रूप में और चोरी-छुपे और सबके सामने बाहरी दिखावे के लिए बहुत भोलेपन तथा मक्कारी की मुद्रा बनाये रखकर किया जाता था कि सब लोग यही समझते थे कि सब ठीक-ठाक है। अब वही सब बातें सबके सामने आवश्यकता से अधिक गम्भीर आचरण तथा अभिवृत्ति का ढोंग किये बिना अधिक खुले ढंग से तथा ईमानदारी के साथ की जा रही हैं और इसलिए लोग शिकायत करते हैं और यह समझते हैं कि आजकल के पुरुषों तथा स्त्रियों का आचरण ठीक नहीं है। मेरी निजी धारणा यह है कि चोरी छुपे हर प्रकार का काम करते हुए भी मक्कारी से काम लेना और यह जताने की कोशिश करना कि जैसे कुछ किया ही न हो इससे कहीं अच्छा है कि हर बात को खुलेआम स्वीकार कर लिया जाये।

## निष्कर्ष

जिन शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों का अध्ययन पहले किया गया था और जिनका अध्ययन दस वर्ष बाद किया गया उनके व्यक्ति अध्ययनों को देखने पर हम सेक्स-सम्बन्ध तथा सेक्स-आचरण के विभिन्न पहलुओं के बारे में और सेक्स तथा सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता के बारे में इन स्त्रियों की अभिवृत्तियों में अनेक परिवर्तन देखने को मिलते हैं। यद्यपि इन दस वर्षों के दौरान अभिवृत्तियों की विस्तार-सीमाएँ लगभग वही रहीं, एक सिरे पर रूढ़िवादी से दूसरे सिरे पर आमूल परिवर्तनवादी तक और बीच में उदारवादी, फिर भी रूढ़िवादी अभिवृत्तियों वाले उत्तरदाताओं का प्रतिशत अनुपात भी घट गया था और उनकी अभिवृत्तियों की उग्रता भी कुछ कम हो गयी थी, जबकि आमूल परिवर्तन की अभिवृत्तियों वाले उत्तरदाताओं की संख्या बढ़ गयी थी और उनकी अभिवृत्तियों की उग्रता भी अधिक तीक्ष्ण हो गयी थी और उनमें कुछ नयी सकल्पनाओं का भी समावेश हो गया था।

चुकी थी और उनकी राय में वह अधिकतम सीमा जहाँ तक विवाह से पहले सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जा सकती है वह भी और विस्तृत होकर दो प्रौढ़ तथा परिपक्व विचारों वाले व्यक्तियों के बीच जो इसके लिए सहर्ष तत्पर तथा परस्पर सहमत हों, आवेशपूर्ण चुम्बन तथा आलिंगन तक और सेक्स-संभोग को छोड़कर शारीरिक घनिष्ठताएँ स्थापित करने के बिंदु तक पहुँच गयी है। कुछ थोड़ी-सी लगभग 5 7 प्रतिशत ऐसी थी जो समझती थी कि यदि दो प्रौढ़ व्यक्ति इसके लिए सहर्ष तत्पर तथा सहमत हों तो उन्हें सेक्स संभोग तक करने की सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जा सकती है, यदि यह काम केवल एक व्यक्ति विशेष के साथ किया जाये और हार्दिक प्रेम पर आधारित हो और यदि वे ऐसा करते हुए किसी को हानि न पहुँचा रहे हों या किसी का अनुचित लाभ न उठा रहे हों।

अभिवृत्ति में परिवर्तन का संकेत इस बात से भी मिलता है कि दस वर्षों के दौरान ऐसी स्त्रियों की संख्या में वृद्धि हुई है जिन्होंने यह कहा कि उनकी राय में अविवाहित स्त्री के लिए विवाह से पहले सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करना उचित होगा यदि दोनों पक्षों के बीच हार्दिक प्रेम हो, या उनकी आपस में मँगनी हो चुकी हो या वे एक-दूसरे से हार्दिक प्रेम करते हों और आपस में विवाह करने की योजना बना चुके हों या उस स्थिति में भी जब स्त्री अपने प्रेमी के प्रति निष्ठावान हो और कई पुरुषों के साथ एक ही समय में सेक्स सम्बन्ध न रखती हो। इससे पता चलता है कि विवाह से पहले अक्षतयोनि रहने के नियम के उल्लंघन को अब सर्वथा निन्दा की दृष्टि से नहीं देखा जाता जैसा कि परम्परागत रूप से किया जाता रहा है और दस वर्ष पहले की तुलना में अब उसे कहीं कम निंदनीय समझा जाता है। दस वर्ष पहले इन स्त्रियों के बीच सामान्य अभिवृत्ति यह पायी जाती थी कि जब तक स्त्री की मँगनी न हो जाये और तब भी अत्यन्त विरल परिस्थितियों में ही, तब तक उसे किसी पुरुष को अपना चुम्बन नहीं लेने देना चाहिए। दस वर्ष बाद प्रश्न यह था कि स्त्री कभी-कभार चुम्बन के अतिरिक्त और किन हद तक जा सकती है।

परन्तु श्रमजीवी स्त्रियों के व्यक्ति अध्ययनों में उनके जो बयान तथा टिप्पणियाँ दी गयी हैं उनसे संकेत मिलता है कि स्वयं अपने आचरण के बारे में उनके विचार उतने उदार नहीं हो पाये हैं जितने कि दूसरों के आचरण के बारे में।

प्रस्तुत अध्ययन में श्रमजीवी स्त्रियों ने जो विचार व्यक्त किये हैं उनसे पता चलता है कि समूह के रूप में भिन्नलिंगी लोगों के मिलन-जुलन के प्रति, कभी-कभार चुम्बन कर लेने और यहाँ तक कि गले लगा लेने या थपथपा देने आदि तक के प्रति तो उनकी अभिवृत्तियाँ अधिक उदार हो गयी हैं परन्तु व्यभिचार के प्रति उनकी अभिवृत्तियाँ अभी तक रूढ़िवादी तथा पारम्परिक हैं। अमरीका में 1967 में सेवेंटीन नामक पत्रिका ने सेक्स के बारे में किशोर-वयस्क लोगों की अभिवृत्तियों के बारे में जो मत-संग्रह किया था उसमें भी कुछ इससे मिलते जुलते ही निष्कर्ष निकाले गये थे। उस सर्वेक्षण में यह देखा गया था कि जिन लड़कियों से प्रश्न पूछे गये थे उनका विशाल बहुमत

## विवाह-पूर्व सेक्स सम्बन्ध

दस वर्ष के अन्दर ही वे हदें अथवा सीमाएँ बहुत व्यापक हो गयी थी, जिनमें श्रमजीवी स्त्रियों के मत के अनुसार लड़कों तथा लड़कियों को सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए। इसका पता इस बात से चलता है कि दस वर्ष पहले ऐसी स्त्रियों की संख्या बहुत अधिक थी जिनका यह विश्वास था कि उनकी राय में लड़कियाँ और लड़के या तो अपने माता पिता अथवा अभिभावकों के साथ बाहर जा सकते हैं या समूह के रूप में एक दूसरे के साथ मिल सकते हैं और बाहर जा सकते हैं और दूसरों की उपस्थिति में एक दूसरे से मिल सकते हैं लेकिन एकान्त स्थानों में अकेले नहीं। उनकी अनिवार्य नैतिकता के परम्परागत मानदण्ड पर आधारित थी, इसकी पुष्टि मेहता के अध्ययन (1970) से भी होती है, हालांकि वह अध्ययन पाश्चात्य ढंग में शिक्षित हिन्दू स्त्रियों के बारे में था शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियों के बारे में नहीं। उन्होंने बताया है कि 25 से 45 वर्ष तक के आयु-वर्ग की स्त्रियों में से (जो प्रस्तुत अध्ययन के प्रथम चरण के समय 25 से 35 वर्ष तक के आयु-वर्ग में रही होंगी) 72 प्रतिशत इस बात के पक्ष में नहीं थीं कि लड़के और लड़कियाँ किसी को साथ लिये बिना एक दूसरे के साथ बाहर जायें। उनका दृढ़ विश्वास था कि किसी लड़की को किसी पुरुष के साथ अकेले घूमना फिरना नहीं चाहिए और पुरुषों से मित्रता नहीं बढ़ानी चाहिए परन्तु उन्हें इस बात में कोई आपत्ति नहीं थी कि वे उनसे अपने घरों पर या दूसरे लोगों की उपस्थिति में मिलें। उनमें से अड़तालीस प्रतिशत लड़कियों की पुरुष मित्र बनाने की प्रवृत्ति का अनुमोदन नहीं करती थीं और उनका विश्वास था कि यह पुराना दृष्टिकोण कि स्त्रियों को पुरुषों के साथ बहुत घुलना नहीं चाहिए, बुनियादी तौर पर बहुत ठीक था (देखिए मेहता, 1970)।

इस अध्ययन के पूर्ववर्ती चरण में दस वर्ष पहले ऐसी शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ थीं तो अवश्य जिन्होंने यह मत व्यक्त किया था कि लड़कियाँ और लड़के किसी को साथ लिये बिना एक दूसरे के साथ बाहर जा सकते हैं। वे यह भी समझती थीं कि वे एक दूसरे का हाथ भी थाम सकते हैं या कभी-कभार माथे पर, गालों पर, हाथों पर और होठों पर भी चुम्बन कर सकते हैं पर उस समय उनका प्रतिशत अनुपात उससे कहीं कम था जितना दस वर्ष बाद पाया गया। सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता की अधिकतम सीमा के बारे में उनकी कल्पना लगभग इसी बिन्दु तक सीमित थी। और बहुत थोड़ी, केवल 5 प्रतिशत, ऐसी थीं जिन्होंने दस वर्ष पहले यह कहा था कि विवाह से पहले लड़कों तथा लड़कियों के बीच सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता आवेशपूर्ण चुम्बन तथा आलिंगन तक और सेक्स-सम्भोग को छोड़कर अन्य किसी भी प्रकार की शारीरिक घनिष्ठता तक हो सकती है शर्त केवल यह है कि इन क्रियाओं में भाग लेने वाले दोनों व्यक्ति एक दूसरे से प्रेम करते हों, वे एक-दूसरे से विवाह करने की योजना बना चुके हों या उनकी मंगनी हो चुकी हो।

लेकिन दस वर्ष बाद यह संख्या 5 प्रतिशत से बढ़कर 31 प्रतिशत तक पहुँच

चुकी थी और उनकी राय में वह अधिकतम सीमा जहाँ तक विवाह से पहले यवन सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जा सकती है वह भी और विस्तत हो गई दो प्रौढ तथा परिपक्व विचारों वाले व्यक्तियों के बीच जो इसके लिए सहर्ष तत्पर तथा परस्पर सहमत हों, आवेशपूर्ण चुम्बन तथा आलिंगन तक और सेक्स-सम्भोग को छोड़कर शारीरिक घनिष्ठताएँ स्थापित करने के बिन्दु तक पहुँच गयी हैं। कुछ थोड़ी-सी, लगभग 5 7 प्रतिशत ऐसी थी जो समझती थी कि यदि दो प्रौढ व्यक्ति इसके लिए सहर्ष तत्पर तथा सहमत हों तो उन्हें सेक्स-सम्भोग तक करने की सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जा सकती है, यदि यह काम केवल एक व्यक्ति विशेष के साथ किया जाय और हार्दिक प्रेम पर आधारित हो और यदि वे ऐसा करते हुए किसी को हानि न पहुँचा रहे हों या किसी का अनुचित लाभ न उठा रहे हों।

अभिवत्ति में परिवर्तन का सकेत इस बात से भी मिलता है कि दस वर्षों के दौरान ऐसी स्त्रियों की संख्या में वद्धि हुई है जिन्होंने यह कहा कि उनकी राय में अविवाहित स्त्री के लिए विवाह से पहले सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करना उचित होगा यदि दोनों पक्षों के बीच हार्दिक प्रेम हो या उनकी आपस में मँगनी हो चुकी हो या वे एक दूसरे से हार्दिक प्रेम करते हों और आपस में विवाह करने की योजना बना चुके हों या उस स्थिति में भी जब स्त्री अपने प्रेमी के प्रति निष्ठावान हो और कई पुरुषों के साथ एक ही समय में सेक्स-सम्बन्ध न रखती हो। इससे पता चलता है कि विवाह से पहले अक्षतयोनि रहने के नियम के उल्लंघन को अब सर्वथा निन्दा की दृष्टि से नहीं देखा जाता जैसा कि परम्परागत रूप से किया जाता रहा है और दस वर्ष पहले की तुलना में अब उसे कहीं कम निन्दनीय समझा जाता है। दस वर्ष पहले इन स्त्रियों के बीच सामान्य अभिवत्ति यह पायी जाती थी कि जब तक स्त्री की मँगनी न हो जाये, और तब भी अत्यन्त विरल परिस्थितियों में ही, तब तक उसे किसी पुरुष का अपना चुम्बन नहीं लेने देना चाहिए। दस वर्ष बाद प्रश्न यह था कि स्त्री कभी-कभार चुम्बन के अतिरिक्त और किस हद तक जा सकती है।

परन्तु श्रमजीवी स्त्रियों के व्यक्ति अध्ययनों में उनके जो बयान तथा टिप्पणियाँ दी गयी हैं उनसे सकेत मिलता है कि स्वयं अपने आचरण के बारे में उनके विचार उतने उदार नहीं हो पाये हैं जितने कि दूसरों के आचरण के बारे में।

प्रस्तुत अध्ययन में श्रमजीवी स्त्रियों ने जो विचार व्यक्त किये हैं उनसे पता चलता है कि समूह के रूप में भिन्नलिंगी लोगों के मिलने जुलने के प्रति, कभी-कभार चुम्बन कर लेने और यहाँ तक कि गले लगा लेने या थपक देने आदि तक के प्रति तो उनकी अभिवत्तियाँ अधिक उदार हो गयी हैं परन्तु व्यभिचार के प्रति उनकी अभिवत्तियाँ अभी तक रूढिवादी तथा पारम्परिक हैं। अमरीका में 1967 में सेवेंटीन नामक पत्रिका ने सेक्स के बारे में किशोर वयस्क लोगों की अभिवृत्तियों के बारे में जो मत-संग्रह किया था उससे भी कुछ इससे मिलते-जुलते ही निष्कर्ष निकाले गये थे। उस सर्वेक्षण में यह देखा गया था कि जिन लड़कियों से प्रश्न पूछे गये थे उनका विशाल बहुमत

विवाह से पहले सेक्स सम्भाग के पक्ष मे नही था, परन्तु जिन लडकियो की आयु अधिक थी उनमे यह प्रतिशत अनुपात गिरता गया था। यह देखा गया कि जैसे जैसे आयु अधिक होती जाती है वैसे वैसे सेक्स सम्बन्धी अनुज्ञात्मकता को स्वीकार करने की प्रवृत्ति भी निरन्तर बढती जाती है। *यह कहने वाली लडकियाँ अल्पमत मे थी कि पूरी स्वतन्त्रता* होनी चाहिए और ज्यो ज्यो किसी का प्रेम हो तब तक उसके लिए कुछ भी करना उचित है। केवल 25 प्रतिशत लडकियो ने विवाह से पहले सेक्स-सम्भाग का अनुमोदन किया, परन्तु वह भी केवल ऐसे युगलो के बीच जिनकी आपस मे मँगनी हो चुकी हो, और केवल 9 प्रतिशत से भी कम ने दोनो पक्षो के केवल तत्पर होने पर ऐसा करने का अनुमोदन किया। *बहुत थोडे ही नौजवान लोग ऐसे थे जिन्होने 'मौज उडाने' को सेक्स* के मामले मे स्वच्छन्द आचरणका न्यायोचित कारण माना, और सेक्स-सम्बन्धी परम्परागत मानदण्डो का बिल्कुल अस्वीकार करनेवाले भी अल्पमत मे थे। उनमे से अधिकाश ने निष्ठा तथा प्रेम के उच्च मानदण्डो पर आग्रह किया (देखिये, नेल्सन, 1970, पृष्ठ 79 46)।

इगलैड के नौजवानो के बारे मे *शोफील्ड के अध्ययन (1968)* मे भी ऐसे ही निष्कर्ष प्रस्तुत किये गये है 62 प्रतिशत इस कथन से सहमत थे कि 'विवाह से पहले सेक्स-सम्भोग अनुचित है, जबकि 24 प्रतिशत इस बात से असहमत थे और शेष को अपने विचार व्यक्त करने मे कुछ सकोच था। यह अभिवृत्ति इस बात मे और भी पुष्ट हो जाती है कि शोफील्ड के अध्ययन मे सभी कोटियो मे अधिकाश स्त्रिया उन लडकियों के आचरण को उचित नही समझती थी जो विवाह से पहले अपने मँगेतरो के साथ सेक्स-कर्म मे भाग लेती हैं।

भारत मे विश्वविद्यालयो के छात्रो के बारे मे तथा ऐसे लोगो के बारे मे जो छात्र नही हैं, फानसेका ने जो अध्ययन किया है उसमे दोनो *ही कोटियो मे 60 प्रतिशत* से अधिक लोगो ने विवाह से पहले सेक्स सम्बन्धो का अनुमोदन नही किया। उनमे से 14 प्रतिशत ने कहा कि ऐसा करना अत्यन्त अनुचित तथा अनैतिक है। छात्राओ ने और जो स्त्रिया छात्र नही थी उन्होने इसी मत को अधिक आग्रहपूर्वक व्यक्त किया। उन्होने जिन लोगो से छानबीन की थी उनमे से कुछ स्त्रियो ने कहा, विवाह मे तो सेक्स का समावेश है ही और इस मामले मे उचित समय से पहले कोई प्रयोग करने की आवश्यकता नही है। विवाह से पहले सेक्स-सम्बन्ध रखने के परिणामस्वरूप सामान्य प्रवृत्ति के लोग नैराश्य अथवा तन्त्रिताप (न्यूरासिस) के शिकार हो जाते हैं' या "विवाह से पहले किसी भी प्रकार के सेक्स-सम्बन्ध नहीं। *मेरा विश्वास है कि* लडकियो के लिए यह आत्मघातक होता है" (देखिये, फोनसेका, *1966,* पृष्ठ *153 155)*।

प्रस्तुत अध्ययन मे, प्रौढ तथा सहमत वयस्को के बीच विवाह से पहले एक से अधिक स्त्री अथवा पुरुष के साथ मैथुन की अबाध सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता देने का विचार दस वर्ष बाद पहली बार व्यक्त किया गया, और सो भी बहुत अल्पमत की ओर से।

यह बात बहुत आँखें खोल देनेवाली है कि इस प्रश्न के उत्तर मे कि "आपकी राय

में वह कौन सी चीज है जो किसी लड़की को विवाह से पहले किसी ऐसे लड़के के साथ जिससे वह प्रेम करती हो या जिसके साथ विवाह करनेवाली हो, सेक्स-कर्म करने से रोकती है या उसमें संकोच पैदा कर देती है ?' दस वर्ष पहले 70-75 प्रतिशत श्रमजीवी स्त्रियों ने अपना मत इन उत्तर-कोटियों के रूप में व्यक्त किया था 'उसके अपने सिद्धान्त तथा नैतिक मानदण्ड', 'सामाजिक प्रथाओं तथा नियमों का सम्मान', गर्भाधान का भय', 'यह विश्वास कि लड़की को विवाह के समय तक अक्षतयोनि रहना चाहिए' 'परिवार के नाम पर कलंक लगने का भय', 'लोकमत का भय, और स्वयं अपनी दृष्टि में प्रतिष्ठा खो देने का भय । दस वर्ष बाद ऐसी स्त्रियों की संख्या बढ़ गयी थी जिन्होंने अपना मत इन उत्तर-कोटियों के रूप में दिया अनुचित लाभ उठाये जाने का भय', पुरुष की दृष्टि में अपनी प्रतिष्ठा खो देने का भय, प्रेमी को खो देने का भय और 'स्वयं अपने नाम पर कलंक लगने का भय । और विशेष रूप से उन स्त्रियों की संख्या घट गयी थी जिन्होंने इनके कारण ये बताये उसके अपने सिद्धान्त' यह विश्वास कि लड़की को अक्षतयोनि रहना चाहिए, गर्भाधान का भय' और आत्म प्रतिष्ठा खो देने का भय' ।

इससे पता चलता है कि दस वर्ष बाद पहले की अपेक्षा अधिक श्रमजीवी स्त्रियाँ यह सोचने लगी थीं कि स्वयं अपने सिद्धान्त तथा नैतिक मानदण्ड या यह विश्वास कि विवाह के समय तक लड़की को अक्षतयोनि रहना चाहिए या गर्भाधान का भय विवाह से पहले सेक्स अनुभव से दूर रहने का उतना अधिक कारण नहीं है, जितनी कि यह आशंका कि प्रेमी शायद उससे प्रेम करना या उसे सम्मान की दृष्टि से देखना छोड़ दे और यदि वह उसके साथ सेक्स अनुभव प्राप्त करे तो वह उसके साथ विवाह ही करने से इन्कार कर दे । आशंका की इस अभिवृत्ति की झलक इस बात में भी दिखायी देती है कि दस वर्ष बाद भी वे इस प्रस्थापना से उतनी ही अधिक सहमत थीं कि अधिकांश लड़के अब भी ऐसी लड़की से विवाह करना चाहते हैं जो अक्षतयोनि हो । इससे संकेत मिलता है कि वे अपने विचारों में नैतिकतावादी कम हो गयी हैं और हानि-लाभ का ध्यान अधिक रखने लगी हैं ।

फिर भी उनमें से अधिकांश पर नैतिकता के परम्परागत मानदण्डों का शिकंजा काफी मजबूती से जकड़ा हुआ है । शिक्षित भारतीय युवजन की अभिवृत्तियों के अपने अध्ययन के आधार पर हेलन ने भी इसी प्रकार के निष्कर्ष निकाले हैं, इस अध्ययन में उसने देखा कि 85 प्रतिशत पुरुष तथा 79 प्रतिशत स्त्रियाँ यही चाहती हैं कि जिस व्यक्ति से वे विवाह करें वह 'अक्षतयोनि अथवा अक्षतवीर्य हो । (देखिये हेलेन, 1966 पृष्ठ 9 10) ।

उनके व्यक्ति अध्ययनों में प्रस्तुत किये गये तथ्यों का विश्लेषण करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि कुल मिलाकर, विवाह से पहले पुरुषों तथा स्त्रियों दोनों ही के सेक्स सम्बन्धों के प्रति शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियां दस वर्ष बाद अधिक सापेक्षता की द्योतक हो गयी थीं ।

## विवाह की परिधि में सेक्स-सम्बन्ध

विवाहित जीवन मे स्त्रियो के लिए सेक्स के महत्त्व के बारे मे और उसके साथ ही विवाह की परिधि मे सेक्स का आनन्द प्राप्त करने की उनकी क्षमता तथा उनके अधिकार के बारे म भी शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया अधिक सजग हो गयी हैं। इसका सकेत इस बात से मिलता है कि इन कथनो से सहमति प्रकट करनेवाली स्त्रियो का प्रतिशत अनुपात 38 और 43 प्रतिशत के बीच से बढकर 59 और 65 प्रतिशत क बीच तक पहुँच गया था स्त्रियो के लिए सेक्स विवाह का एक महत्त्वपूर्ण अग है', विवाह को सफल बनाने के लिए सन्तोषप्रद सेक्स-सम्बन्धो का बहुत महत्त्व है, 'सेक्स की परिधि के अन्दर पति तथा पत्नी दोनो ही सेक्स तुष्टि अनुभव करने की समान क्षमता रखते हैं पति तथा पत्नी दोनो ही को विवाह की परिधि के अन्दर सेक्स का आनन्द प्राप्त करने तथा सेक्स तुष्टि प्राप्त करने का समान अधिकार है, 'विवाहित जीवन म सेक्स सम्बन्धो के मामले म पति तथा पत्नी दोनो ही को समान रूप से एक दूसरे की सुख सुविधा का ध्यान रखना चाहिए, एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति रखनी चाहिए तथा धैर्य से काम लेना चाहिए, 'पति तथा पत्नी दानो ही को इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि विवाहित जीवन म दूसरे पक्ष को भी सेक्स सन्तोष प्राप्त हो ।

इस परिवर्तन का सकेत इस बात से भी मिलता है कि एक ओर तो ऐसी स्त्रियो की सख्या काफी घट गयी है जो यह समझती थी कि विवाह की परिधि के अन्दर भी सेक्स-सम्भोग मे सयम रहना चाहिए और दूसरी ओर ऐसी स्त्रियो की सख्या काफी बढ गयी है जो यह समझती है कि विवाहित जीवन मे जितनी बार भी जी चाहे या परस्पर सहमति हो, सेक्स सम्भोग किया जा सकता है। इस प्रकार की स्त्रिया विवाहित जीवन मे एकतरफा सेक्स के विचार का या केवल पति की सन्तुष्टि तथा सुख के लिए सेक्स के विचार का भी अनुमोदन नही करती थी।

विवाह की परिधि के अन्दर सेक्स-तुष्टि प्राप्त करने के अपने अधिकार के बारे म उनकी बढती हुई चेतना की ओर अधिक पुष्टि प्रस्तुत पुस्तक की लेखिका द्वारा किये गये एक और अध्ययन **विवाह और भारत की श्रमजीवी नारी** (कपूर, 1970) के निष्कर्षों स भी होती है। उस अध्ययन म लेखिका ने यह देखा कि जिन स्त्रियो के पति यह सोचते तथा विश्वास करते थे कि सेक्स क्रिया एकतरफा मामला होती है और उसे केवल पति की इच्छा के अनुसार और केवल उसी के लिए किया जाता है, उनकी प्रतिक्रिया बहुत आक्रोशमय थी। य स्त्रियाँ ऐसे पतियो स भी बहुत अप्रसन्न रहती थी जिन्हे केवल अपनी सेक्स-सन्तुष्टि की चिन्ता रहती थी और जो इस बात का ध्यान रखना अपना दायित्व नही समझते थे कि पत्नी की मानसिक तथा शारीरिक दशा इसके लिए उपयुक्त है और उसे भी इसकी कामना हो रही है तथा वह भी इससे आनन्द प्राप्त कर रही है और यह कि उसे भी विवाहित जीवन म सेक्स-सम्भोग से सन्तोष मिल रहा है।

विवाह के प्रति बम्बई मे विश्वविद्यालय की छात्राओ की अभिवृत्तियो के एक अध्ययन मे यह देखा गया कि विवाहित जीवन को सुखी बनानेवाले तत्त्वो म

सेक्स-सन्तुष्टि का स्थान पाँचवा था। उन अध्ययन से पता चलता है कि हिन्दू लड़कियाँ सेक्स-सन्तुष्टि को सुखी जीवन की एक प्राथमिक बात नहीं मानती हैं। ये संकल्पनाएं विवाहित जीवन में त्याग तथा निष्ठा के हमारे परम्परागत विचारों के अनुकूल हैं (शास्त्री कपूर तथा वानारसे 1966, पृष्ठ 20 तथा 30)। परन्तु लेखिका के प्रस्तुत अध्ययन में परवर्ती समूह की अधिकांश श्रमजीवी स्त्रियों ने विवाहित जीवन को सफल बनाने के लिए सन्तोषप्रद सेक्स-सम्बन्धों को अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बताया। इन दोनों अध्ययनों के बीच लगभग पाँच वर्ष का अन्तराल होने के कारण के अतिरिक्त दोनों के निष्कर्षों में इस असमानता का मुख्य कारण यह है कि एक अध्ययन छात्राओं का है और दूसरा श्रमजीवी स्त्रियों का। छात्राओं के बीच सुखी तथा सफल विवाहित जीवन की रोमांटिक सकल्पनाओं का प्रचलन अधिक रहता है, जिनमें भौतिक सुख सुविधाओं तथा सेक्स सन्तुष्टि जैसे वस्तुनिष्ठ विचारों को बहुत प्रमुख स्थान नहीं दिया जाता। वे वस्तुतः विवाहित जीवन प्रेम तथा स्वच्छ हवा के सहारे व्यतीत कर देने के स्वप्न देखती रहती हैं, और उनके लिए विवाह में सेक्स का बहुत अधिक महत्त्व नहीं होता जबकि श्रमजीवी स्त्रियों में, जो अधिक अनुभवी तथा व्यवहारकुशल होती हैं, और जो विवाह को अधिक यथार्थ दृष्टि से देखती हैं सफल तथा सुखी विवाहित जीवन के बारे में कम रोमांटिक संकल्पनाओं का प्रचलन पाया जाता है और वे विवाहित जीवन में सेक्स-सन्तुष्टि को अधिक महत्त्व देती हैं।

## विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्बन्ध

नृवेत्ता बताते हैं कि आदिम पति आतिथ्य भाव का परिचय देने के लिए अपनी पत्नी को सहर्ष सेक्स क्रिया में सहचारिणी के रूप में अपने अतिथि को कुछ समय के लिए दे देता था। परन्तु सभ्य समाज में यदि किसी पति को यह पता चले कि किसी दूसरे पुरुष ने उसकी पत्नी को इस्तेमाल किया है या सेक्स क्रिया में वह किसी दूसरे पुरुष की सहचारिणी रही है तो उसकी प्रतिक्रिया बहुत प्रतिकूल और प्रायः बार अत्यन्त उग्र होती है। समान क्रिया अथवा आचरण की ओर प्रतिक्रियाओं में यह परिवर्तन उस क्रिया विशेष के प्रति समाज की अभिवृत्तियों में होनेवाले परिवर्तनों के कारण होता है।

जैसा कि व्यक्ति अध्ययनों की सहायता से प्रस्तुत अध्ययन में इतनी अच्छी तरह बताया गया है और दृष्टान्त देकर समझाया गया है, एक दशाब्दी की अवधि के अन्दर ही विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्बन्धों के प्रति शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियों में एक स्पष्ट परिवर्तन हुआ है। दस वर्ष पहले इनमें से अधिकांश स्त्रियाँ इस बात की दृढ़ विरोधी थीं कि कोई स्त्री विवाह की परिधि के बाहर मैथुन करे, हालांकि पुरुष के मामले में वे इसी प्रकार के आचरण की न समर्थक थीं न विरोधी। उनका विश्वास था कि "स्त्री को किसी भी परिस्थिति में ऐसा नहीं करना चाहिए" और यह कि "विवाहित स्त्री का किसी भी परिस्थिति में विवाह की परिधि के

मैथुन करना उचित नहीं है।" उनमें से अधिकांश ने, 80 से 85 प्रतिशत तक ने, यह कहा कि यदि वे संयोगवश विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्भोग करें तो वे बहुत अपराधी अनुभव करेंगी और यह कि वे इसकी आशा नहीं करेंगी कि उनके पति का यदि इसका पता चल जाय तो वे उन्हें क्षमा कर देंगे।

सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता की सीमाओं के बारे में भी, जो उनके अनुसार विवाहित स्त्रियों तथा पुरुषों को अपने पति अथवा पत्नी के अतिरिक्त अन्य पुरुषों के साथ दी जानी चाहिए या दी जा सकती है, दस वर्ष पहले अधिकांश स्त्रियों का यह मत था कि उन्हें समूह के रूप में पार्टियों में या अपने पति के साथ भिन्नलिंगी व्यक्तियों से मिलने जुलने की अनुमति दी जानी चाहिए, या यदि उन्हें किसी सामाजिक अथवा सरकारी समारोह में भाग लेने के लिए जाना हो तो वे अपने पति की अनुमति से किसी दूसरे पुरुष के साथ बाहर जा सकती हैं। इसकी अधिकतम सीमा के बारे में उनका सुझाव यह था कि यदि उनके बीच हार्दिक प्रेम हो तो वे एक-दूसरे का हाथ थाम सकते हैं और कभी कभार चुम्बन तथा आलिंगन कर सकते हैं।

दस वर्ष बाद भी यद्यपि अधिकांश, 69 प्रतिशत, श्रमजीवी स्त्रियों ने सामान्यतः इस बात का समर्थन नहीं किया कि कोई स्त्री विवाह की परिधि के बाहर सेक्स मैथुन करे परन्तु ऐसी स्त्रियों की संख्या घट गयी थी जिनका विश्वास यह हो कि "विवाहित स्त्री को किसी भी परिस्थिति में ऐसा नहीं करना चाहिए' और यह कि 'विवाहित स्त्री के लिए किसी भी परिस्थिति में विवाह की परिधि के बाहर मैथुन करना उचित नहीं है।" दूसरी ओर उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात 11 से बढ़कर 31 हो गया था, जो यह समझती थीं कि आत्मपरक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कुछ आवश्यकता-तुष्टि की परिस्थितियों में विवाहित स्त्री के लिए विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्भोग करना उचित हो सकता है और वह वस्तुतः ऐसा कर सकती है। और ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात भी 20 से बढ़कर 55 हो गया था, जिनका यह कहना था कि यदि वे किन्हीं विशेष परिस्थितियों में किसी दूसरे पुरुष के साथ सम्भोग करें तो वे अपने पति से आशा रखेंगी कि वे उन्हें क्षमा कर दें।

इंगलैण्ड और अमरीका में नौजवान लोगों या शिक्षित स्त्रियों के सम्बन्ध में किये गये अन्य अध्ययन यद्यपि भारतीय सामाजिक प्रसंग से प्रत्यक्षरूप से सम्बन्धित नहीं हैं, फिर भी यह माना जा सकता है कि उनके निष्कर्षों में उन पाठकों को बहुत दिलचस्पी होनी चाहिए जो सारी दुनिया के नौजवानों की अभिवृत्तियों के बारे में जानना चाहते हैं। शोफील्ड के अध्ययन (1968) में यह देखा गया कि इंगलैण्ड के अधिकांश नौजवान लोग विवाहेतर सम्बन्धों का अनुमोदन न करने की अभिवृत्ति रखते हैं। अमरीका में शिक्षित स्त्रियों के सेक्स-जीवन के अपने अध्ययन (1929) में डेविस ने अपने उत्तरदाताओं से पूछा था कि क्या विवाह की परिधि के बाहर गलत सम्भोग किया जाना चाहिए। जिन 955 विवाहित स्त्रियों ने इस प्रश्न का उत्तर दिया था उनमें से 63.4 प्रतिशत ने बिना कोई शर्त लगाये स्पष्ट 'नहीं' के रूप में,

उत्तर दिया, जबकि एक प्रतिशत से कुछ ही कम स्त्रियो ने कहा कि विवाह की परिधि के बाहर सक्स सम्भोग किया जा सकता है और 12 6 प्रतिशत स्त्रियो ने केवल कुछ शर्तों के साथ इसे उचित ठहराया (देखिये घुर्ये, 1956, पृष्ठ 2)। प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्षों से यह पता चलता है कि उस समय अमरीका म शिक्षित स्त्रियो मे जो अभिवृत्ति उस समय उभर रही थी वही लगभग पाँच दशाब्दी बाद अब शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियो की अभिवृत्ति म उभरती हुई प्रवृत्ति बन गयी है।

इस अध्ययन के दूसरे चरण म दस वष बाद ऐसी स्त्रियाँ पायी गयी, हालाँकि व बहुत ही थोडी सख्या म थी—केवल 19 प्रतिशत—जिन्होने यह कहा कि यदि वे विवाह की परिधि के बाहर सक्स-सम्बन्ध स्थापित करें तो व अपराधी अनुभव नही करेंगी, शत केवल यह है कि उनके तथा उनके सहचारियो के बीच सच्चा प्रेम हो और यह काम पारस्परिक अनुमति से किया जाय।

इसके बारे म अपना मत व्यक्त करते हुए कि विवाहित लोगो को विवाह की परिधि क बाहर सक्स क मामले म अधिकतम किस सीमा तक स्वतन्त्रता दी जाय अधिकाश उत्तरदाताओं ने दस वष बाद भी उसी सीमा का सुझाव दिया जो उन्होने पहले दिया था, फिर भी एस उत्तरदाताओ की सख्या काफी बढ गयी थी जिनका विचार यह था कि विवाहित लोगो के मामले मे विवाह की परिधि क बाहर कभी कभार चुम्बन तथा आलिंगन की सीमा तक सक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए, और ऐसी स्त्रियो की सख्या काफी घट गयी थी जिनका यह विश्वास था कि विवाह की परिधि क बाहर भिन्नलिंगी व्यक्तियो के बीच प्राय कोई भी सक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता नही दी जानी चाहिए।

दस वष बाद जो एक और परिवतन देखा गया वह यह था कि कुछ स्त्रियो न, अलबत्ता उनकी सख्या बहुत थोडी थी, इस प्रकार के साहसपूण विचार भी व्यक्त किये कि विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्भोग को छोडकर हर प्रकार की शारीरिक घनिष्ठता स्थापित करने की सक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए, "विवाहित स्त्री को विवाह की परिधि के बाहर केवल एक और पुरुष के साथ सेक्स-सम्बन्ध रखन की अनुमति दी जानी चाहिए, यदि वह उसका सच्चा प्रेमी हो और दोनो म एक-दूसरे क प्रति प्रेम तथा सम्मान की समान भावना हो, और यह कि "विवाहित स्त्री को विवाह की परिधि के बाहर एक न अधिक पुरुष के साथ सक्स-सम्बन्ध रखने की अनुमति होनी चाहिए, यदि वह ऐसा करने की इच्छा रखती हो और इस सवथा उचित समझती हो।'

ऊपर बताये गय सभी तथ्यो स यह बात प्रमाणित होती है कि विवाह की परिधि के बाहर सक्स-सम्बन्धो क प्रति हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियो की अभिवृत्तियाँ दस वष पहले की तुलना क्रमश कम पारम्परिक तथा कम कठोर होती जा रही हैं। इस प्रकार धीरे-धीरे अनुज्ञात्मकता की या विवाह की परिधि के बाहर भिन्नलिंगी व्यक्तियो के बीच शारीरिक घनिष्ठताओं पर आपत्ति न करने की नयी प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होती जा

## सेक्स और सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता

लेखिका ने सेक्स के प्रति शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियों में जो पहला परिवर्तन देखा वह था सेक्स से सम्बन्धित प्रश्नों पर उनकी प्रतिक्रिया में परिवर्तन। दस वर्ष पहले ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात कहीं अधिक पाया गया था जिन्हें बहुत अटपटा महसूस होता था और जो बहुत लज्जा अनुभव करती थीं और जो यहाँ तक सोचती थीं कि सेक्स जैसे विषय पर लेखिका का प्रश्न पूछना अत्यन्त निलज्जता तथा धृष्टता की बात है, जिसके बारे में वे समझती थीं कि यह एक वर्जित विषय है और इसके बारे में बातें करना या छानबीन करना उचित नहीं है। दस वर्ष बाद यह देखा गया कि सेक्स के बारे में अपना मत व्यक्त करने का अनुरोध किये जाने पर उन्हें इतनी झुंझलाहट नहीं हुई और इस विषय पर अपने विचार उन्होंने अधिक खुले ढंग से तथा काफी विस्तार के साथ व्यक्त किये।

दस वर्ष बाद देखा गया कि ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बढ़ गया था जो सेक्स के प्रति अपनी अभिव्यक्ति में अधिक निःसंकोच तथा वस्तुपरक हो गयी थीं और वे इसे न 'अत्यधिक पवित्र' मानती थीं और न 'अत्यधिक गन्दा या लज्जास्पद'। इसका संकेत इस बात में मिलता है कि दस वर्ष में उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बहुत कम होकर 33 से 8 रह गया जो इस कथन से सहमत थीं कि 'सेक्स गन्दी और लज्जास्पद' चीज है, जबकि ऐसी स्त्रियों के प्रतिशत अनुपात में काफी वृद्धि पायी गयी जो इन कथनों से सहमत थीं 'सेक्स और प्रेम प्रत्येक मनुष्य की दो अलग-अलग तथा भिन्न आवश्यकताएँ हैं', 'स्त्री की सेक्स-सम्बन्धी आवश्यकता उतनी ही प्रबल होती है जितनी पुरुष की' और 'सेक्स एक ऐसा सुख है जिसे स्वयं उसकी खातिर ही प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए'। यद्यपि बाद वाले तीन कथनों से सहमति प्रकट करनेवाली स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात दस वर्ष बाद भी बहुत कम ही था, लेकिन उनमें से लगभग सभी—93 प्रतिशत—इस बात से असहमत थीं कि सेक्स कोई गन्दी तथा लज्जास्पद चीज है। इसकी और अधिक पुष्टि इस बात से होती है कि उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात भी बढ़ गया था जो इस बात के पक्ष में थीं कि माता-पिता उन्मुक्त भाव से सेक्स के बारे में अपने बच्चों से बातें करें और उनका भी जो समझती थीं कि नौजवान लड़के और लड़कियाँ आपस में खुलकर सेक्स पर चर्चा कर सकते हैं।

अब अधिकाधिक स्त्रियाँ सेक्स को स्त्री की शारीरिक आवश्यकता समझने लगी हैं, इसकी और अधिक पुष्टि इस बात में होती है कि दस वर्षों में उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात काफी बढ़ गया है जिनका मत यह है कि यदि किसी अविवाहित स्त्री का विवाह होने में सचमुच कठिनाई हो रही हो तो विवाह से पहले सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करना उसके लिए उचित है। इसका संकेत ऐसी स्त्रियों की संख्या में वृद्धि से भी मिलता है जिनका मत यह है कि विवाहित स्त्री का विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करना भी उचित होगा यदि उसका पति उसके साथ सेक्स-सम्बन्ध

रखने से इन्कार करे, या वह उसके साथ सेक्स-कर्म करने में अक्षम हो या उस स्थिति में भी जब वह उसे सक्स की दृष्टि से सन्तुष्ट न कर सकता हो और उसे केवल अपनी ही तुष्टि की चिन्ता रहती हो। यह जानकारी आँखें खोल देनेवाली है कि दस वर्ष बाद न केवल विवाह की परिधि में सक्स-सन्तुष्टि प्राप्त न होने के आधार पर पति अथवा पत्नी का किसी अन्य स्त्री अथवा पुरुष के साथ सम्भोग को उचित ठहराया जाने लगा था, बल्कि परिवर्तन या विविधता या नूतनता के उल्लास के आधार पर भी (देखिये व्यक्ति अध्ययन संख्या 9)।

इन सभी निष्कर्षों में संकेत मिलता है कि सक्स के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति या उसकी निन्दा करने की अभिवृत्ति काफी कमजोर पड गयी है और उसे प्रत्येक मनुष्य की एक आवश्यकता समझने की सकारात्मक अभिवृत्ति धीरे-धीरे उभर रही है। सक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता के बारे में बाद वाले समूह की अधिक स्त्रियाँ यह समझने लगी थी कि आमतौर पर अब नौजवान लडकियों तथा लडकों को दस वर्ष पहले की तुलना में एक दूसरे से घुलने मिलने की अधिक सक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता है", परन्तु इनमें से अधिकांश स्त्रियाँ यह महसूस करती थी कि इन दस वर्षों के दौरान भिन्नलिंगी व्यक्तियों के बीच सक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता में वृद्धि केवल शहरों के समान पाश्चात्य रहन सहन वाले हिस्सों में ही पायी गयी है और यह कि छोटे कस्बों में भी शिक्षित और अपेक्षाकृत उन्नत परिवार ही अधिक सक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता देते हैं। परन्तु उनका यह विचार अवश्य था कि एक दशाब्दी के अन्दर इस मामले में परिवर्तन हुआ है।

दस वर्ष के बाद यह महसूस करनेवाली स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात पहले से अधिक हो गया था कि कुल मिलाकर उन्हें अधिक स्वतन्त्रता मिलना, कुछ सीमाओं के भीतर ही सही, अच्छी बात है, और इसके साथ ही ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात घट गया था जो यह समझती थी कि यह अच्छी बात नहीं हुई है या यह बुरी बात हुई है। इससे संकेत मिलता है कि अब स्त्रियों तथा पुरुषों के बीच स्वतन्त्रता को कहीं अधिक स्वीकृति तथा अनुमोदन प्राप्त हो चुका है, यद्यपि यह अब भी उससे कहीं कम है जितना उदाहरण के लिए, फ्रांसीसी स्त्रियों के बीच पाया जाता है। फ्रांसीसी स्त्रियों के बारे में फ्रांसीसी लोकमत संस्थान की ओर से किये गये एक अध्ययन (रेमी तथा वू 1964) में यह देखा गया कि नयी पीढी की 80 प्रतिशत स्त्रियाँ यह समझती हैं कि किशोरवयस्क लडकी का अक्सर लडकों के सम्पर्क में आना अच्छी बात है जबकि पचास वर्ष की उम्र के लगभग की 44 प्रतिशत स्त्रियों का मत उसके विपरीत था।

इस समस्या के बारे में कि 'क्या स्त्रियों को भी सक्स के मामले में उतनी ही स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए जितनी पुरुषों को?" यह देखा गया कि यद्यपि इसका समर्थन करनेवाली स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात दस वर्ष में बढ गया था, परन्तु दोनों ही समय पर उनमें से अधिकांश का मत यही था कि स्त्रियों को सेक्स के मामले में पुरुषों जितनी स्वतन्त्रता नहीं दी जानी चाहिए, क्योंकि वे समझती थी कि एक सीमा से आगे

सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता के परिणाम पुरुषा की अपेक्षा स्त्रियो के लिए अधिक गम्भीर हो सकते है और यह कि इसमे स्त्री की ख्याति, सम्मान तथा आत्म प्रतिष्ठा का अधिक ह्रास हान की आशका रहती है। इससे सकेत मिलता है कि अभी तक अनुतात्मन्ता का इनम से अधिकाश स्त्रिया की स्वीकृति तथा अनुमोदन प्राप्त नही है।

उनके इस प्रत्यक्ष ज्ञान मे कि समाज मे अब भी पुरुषो तथा स्त्रिया के लिए सेक्स-सम्बन्धी नैतिकता के दो अलग अलग मानदड है, प्राय कोई परिवतन नही हुआ। इसकी पुष्टि इस बात स होती है कि दोनो ही समया पर लगभग समान सख्या मे स्त्रिया ने इन कथना से अपनी सहमति प्रकट की जब सेक्स का सवाल आता है ता स्त्रिया के लिए एक मानदड बरता जाता है और पुरुषा के लिए दूसरा, 'यदि पुरुष तथा स्त्री दोना ही विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बन्ध रखें ता लाग पुरुष की अपेक्षा स्त्री को अधिक दुराचारी समझते है', और यह कि अधिकाश लडके ऐसी लडकी से विवाह करना चाहते हैं जा अक्षतयोनि हो'।

नतिकता का यह दोहरा मानदड भारत म ही नही बल्कि अन्य कई समाजो मे भी पाया जाता है। विभिन्न विद्वाना के अध्ययना पर अपने अभिमत आधारित करते हुए स्टीफेंस लिखते हैं

> बहुत से समाजा मे सक्स सम्बन्धी प्रतिबन्ध पुरुषा की अपेक्षा स्त्रिया के लिए अधिक कठोर है। नमूनो के तौर पर चुने गय तेरह समाजा म विवाह पूव सक्स प्रतिबन्धो का आघात लडका की अपक्षा लडकिया पर अधिक भारी होता है। किसी भी समाज के सम्बन्ध मे यह नही बताया गया कि उसमे विवाह से पहले सेक्स सम्बन्धी प्रतिबन्ध स्त्रिया की अपेक्षा पुरुषो के लिए अधिक कठोर थे। इसी प्रकार, मुझ किसी एस समाज की जानकारी नही है जिसमे परस्त्रीगमन अथवा परपुरुषगमन पर स्त्रिया की अपेक्षा पुरुषो के लिए अधिक कठोर प्रतिबन्ध हा। इसक विपरीत, आठ समाजा के उदाहरण ऐसे थे जिनमे पुरुषा के लिए परस्त्रीगमन की छूट थी परन्तु स्त्री स पतिव्रता रहन की आशा की जाती थी। दो अन्य उदाहरणा मे, अन्यगमन-सम्बन्धी नियम पतिया की अपक्षा पत्निया के लिए अधिक कठोर प्रतीत हाते है। इरा राइस न पश्चिमी समाज के पूरे इतिहास के दौरान निरन्तर दोहरे मानदड प्रचलित रहन का ब्यौरा अकित किया है (राइस, 1960)। मध्ययुगीन काल म स्त्रिया पर अधिक कठोर प्रतिबन्ध ही नही लगाये गय थ सक्स को स्त्रिया का दोष' माना जाता था (स्टीफेंस, 1963, पष्ठ 290)।

प्रस्तुत अध्ययन म दस वष के दौरान जो महत्वपूण परिवतन देखा गया वह यह था कि समाज मे जो दोहरा मानदड प्रचलित था उस चुनौती देनवाली स्त्रिया की सख्या पहल की अपक्षा कही अधिक हा गयी थी। इसका प्रमाण इस तथ्य म मिलता है कि उन स्त्रिया का प्रतिशत-अनुपात, जो इन कथना स असहमत थीं 39 और 48 के

बीच से बढ़कर 65 और 69 के बीच तक पहुँच गया 'विवाह से पहले सेक्स अनुभव पुरुषों के लिए तो ठीक है पर स्त्रियों के लिए नहीं', 'विवाह की परिधि से बाहर संभोग से दूर रहना स्त्री के लिए महत्त्वपूर्ण है पर पुरुष के लिए नहीं, और 'पत्नी का पर-पुरुषगमन पति के परस्त्रीगमन से अधिक गम्भीर अपराध है'। यह बात ध्यान देने योग्य है कि अमरीका में लगभग चार दशाब्दी पहले एक बहुत बड़े पूर्वी विश्वविद्यालय के निकाय द्वारा अभिवृत्तियों के सम्बन्ध में किये गये अध्ययन में 69 प्रतिशत स्त्रियों ने दृढ़तापूर्वक कहा कि कोई भी ऐसा काम नहीं है जो पुरुष की अपेक्षा स्त्री के लिए अधिक बुरा हो (देखिये कार्ट्ज तथा आलपोर्ट 1931)। यह प्रतिशत अनुपात लगभग उतना ही था जितना कि लगभग चालीस वर्ष बाद प्रस्तुत पुस्तक की लेखिका ने शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियों के वर्तमान अध्ययन में पाया।

यद्यपि प्रस्तुत अध्ययन में अधिकांश स्त्रियों ने यह कहा कि विवाह से पहले सेक्स क्रिया से दूर रहना एक वांछनीय गुण है, विशेष रूप से स्त्रियों के लिए, परन्तु पहले की अपेक्षा कम स्त्रियों ने यह कहा कि पुरुषों के लिए इसकी छूट है। लगभग दस वर्ष पहले कार्नेल विश्वविद्यालय की कालेज छात्राओं के सम्बन्ध में भी ऐसे ही निष्कर्ष पाये गये थे। (देखिये, गोल्डसन तथा अन्य 1960, पृष्ठ 94)। इसमें दोहरे मानदंड की वैधता की अधिक अस्वीकृति का पता चलता है। श्रमजीवी स्त्रियों में दोहरा मानदंड निर्धारित करने की प्रवृत्ति दस वर्ष पहले कहीं अधिक पायी जाती थी और एक दशाब्दी बाद वह बहुत कम हो गयी थी।

चुनौती देने की बढ़ती हुई अभिवृत्ति के उभरने का संकेत इस बात में भी मिलता है कि उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बढ़ गया था जिनका यह विश्वास था कि 'पति का परस्त्रीगमन उतनी ही गम्भीर बात है जितनी कि स्त्री का परपुरुषगमन' और यह कि 'यदि पति किसी दूसरी स्त्री के साथ या पत्नी किसी दूसरे पुरुष के साथ सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करे तो दूसरे पक्ष को उसे क्षमा कर देना चाहिए'। फ्रांसीसी लोकमत संस्थान की ओर से आयोजित एक अध्ययन में भी इसी प्रकार के निष्कर्ष पाये गये थे, जिसके अनुसार फ्रांस की हर तीन स्त्रियों में से दो का यह मत था कि अपने पति अथवा अपनी पत्नी के अतिरिक्त अन्य किसी पुरुष अथवा स्त्री के साथ सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करना दोनों ही पक्षों के लिए समान रूप से गम्भीर दोष है (रैसी तथा यूग, 1964)। इससे परोक्ष रूप से प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्षों की मान्यता का पता मिलता है।

अभिवृत्ति में इस परिवर्तन की और अधिक पुष्टि दस वर्ष के अन्दर उन श्रमजीवी स्त्रियों की संख्या में वृद्धि से होती है जो यह समझती थीं कि विवाह से पहले तथा विवाह की परिधि के बाहर जिन स्थितियों तथा दशाओं में पुरुष के लिए सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करना उचित ठहराया जा सकता है उन्हीं स्थितियों तथा दशाओं में स्त्री के लिए भी ऐसा करना उचित माना जाना चाहिए। इस बात की और अधिक पुष्टि उन स्त्रियों के प्रत्युत्तरों से होती है जो यह महसूस करती थीं कि विवाहित स्त्री के लिए, परिस्थितियों में भी विवाह की परिधि के बाहर सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करना

होगा जब उसका पति परस्त्रीगामी हो या उसके प्रति निष्ठावान न हो या यदि वह उससे प्रेम न करता हो अथवा उसकी चिन्ता न करता हो, या यदि उस स्त्री का विवाहित जीवन विफल हो। इस परिवर्तन का संकेत उन स्त्रियों की संख्या में वृद्धि से भी मिलता है जिनका मत यह था कि वे विवाह से पहले सेक्स सम्बन्ध रखनेवाली स्त्री को भी उतना ही क्षम्य समझेंगी जितना कि पुरुष को, हालांकि उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात वही अधिक था जिन्होंने यह कहा कि स्त्री के मामले में वे 'इसे बर्दाश्त कर लेंगी और पुरुष के मामले में उन्हें इसमें कोई आपत्ति नहीं होगी'।

नौजवान लोगों के सेक्स व्यवहार के बारे में शोफील्ड के अध्ययन (1968) से प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्षों की पुष्टि होती है, यद्यपि वह अध्ययन एक भिन्न सांस्कृतिक प्रसंग में किया गया था। उनके अध्ययन में अधिकांश स्त्रियों ने उस दोहरे मानदंड का विरोध किया जिसमें *विवाह से पहले लड़कों के लिए तो सेक्स-अनुभव की अनुमति होती* है पर लड़कियों के लिए नहीं। फ्रांसीसी स्त्रियों से सम्बन्धित एक और अध्ययन में (रमी तथा बूग, 1964) केवल अल्पमत ही नैतिकता के दोहरे मानदंड को स्वीकार करने के पक्ष में था। उदाहरण के लिए जिन स्त्रियों से साक्षात्कार किया गया उनमें से केवल 33 प्रतिशत यह समझती थी कि पत्नी का किसी दूसरे पुरुष के साथ सेक्स सम्बन्ध स्थापित करना पति के किसी अन्य स्त्री के साथ सेक्स-सम्बन्ध रखने की अपेक्षा अधिक गम्भीर बात है, जबकि उनमें से दो तिहाई स्त्रियों का यह मत था कि यह दोनों पक्षों के लिए समान रूप से गम्भीर बात है।

नैतिकता के वर्तमान दोहरे मानदण्ड की निन्दा करने के साथ ही, अब उन श्रमजीवी स्त्रियों की संख्या भी पहले से कम होती जा रही है जो विवाह से पहले सेक्स सम्भोग के प्रति कठोर रवैया रखती हैं। उन स्त्रियों के प्रति जिनसे अपने अज्ञान के कारण, मजबूरी में या असाधारण परिस्थितियों तथा दशाओं में सामाजिक मानदण्डों अथवा प्रचलनों का उल्लंघन हो जाता है अपने रवैये में वे अधिक सहिष्णुता, नम्रता तथा उदारता का परिचय देती हैं, और उनकी इतनी अधिक निन्दा नहीं करतीं। सहिष्णुता तथा उदारता की यह अभिव्यक्ति 20 से 40 वर्ष तक की उम्र आयु की स्त्रियों में पायी जाती है। इसका प्रमाण उन स्त्रियों के प्रतिशत-अनुपात में काफी वृद्धि में मिलता है जिन्होंने यह बताया कि वे उस स्त्री को क्षम्य समझेंगी या उस पर उन्हें कोई आपत्ति नहीं होगी जिसने अवध रूप से गर्भ ठहर जाय या उसे भी जिसने विवाह से पहले सेक्स-सम्बन्ध रख चुके हों, और ऐसी स्त्री के उन्हें सहानुभूति होगी या वे उस पर ये तरस खायेंगी जो केवल आर्थिक अभाव के कारण अपना कौमार्य अथवा सतीत्व नष्ट कर दे। ऊपर बताये गये पहलुओं के प्रति उनकी सहिष्णुता का पता इस बात से भी मिलता है कि ऐसी स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बहुत घट गया है जो यह महसूस करती या मानती हैं कि वे उन परिस्थितियों अथवा दशाओं अथवा कारणों की ओर ध्यान दिये बिना जिनसे प्रेरित होकर यह कर्म किया गया हो, वे ऐसी स्त्री की निन्दा करेंगी या उसका उपहास करेंगी या उससे घृणा करेंगी। अधिक सहिष्णुता

तथा उदार अभिवृत्ति का परिचय इस बात में भी मिलता है कि उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बहुत कम हो गया है (80 से घटकर 41 प्रतिशत) जिनका मत यह है कि 'किसी स्त्री का विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बन्ध रखना, कभी भी उचित नहीं हो सकता', और इसके साथ ही उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात बढ़ गया है जिनका मत यह है कि कुछ परिस्थितियों तथा दशाओं में उसका ऐसा करना उचित माना जा सकता है। नियम भंग करनेवाली स्त्रियों के प्रति ही नहीं बल्कि इस प्रकार के पुरुषों के प्रति भी स्वयं अधिकाधिक सहिष्णु होता जा रहा है। कभी-कभी अपनी पत्नी के प्रति निष्ठा का भंग करनेवाले पतियों के प्रति भी काफी सहिष्णुता की अभिवृत्ति का परिचय दिया जाता है। इसका प्रमाण इस बात में मिलता है कि दस वर्ष बाद उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात काफी कम हो गया था, जो पति के एक बार भी परस्त्रीगमन को उससे अलग हो जाने या उससे तलाक ले लेने के लिए पर्याप्त आधार समझती थी।

इन सब बातों से यही पता चलता है कि सेक्स के प्रति विविधतापूर्ण सेक्स व्यवहार के प्रति तथा सेक्स के मामले में स्वतन्त्रता के प्रति वे उत्तरोत्तर बढ़ती हुई स्वीकृति सहिष्णुता तथा सहनशीलता की अभिवृत्ति के पक्ष में हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में सेक्स तथा सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता के प्रति इस बदलती हुई अभिवृत्ति का चरम रूप यद्यपि बहुत ही थोड़ी स्त्रियों में पाया गया, परन्तु उसकी लाक्षणिक विशेषता यह थी कि उसके पीछे सेक्स-व्यवहार से सम्बन्धित वर्तमान सामाजिक मानदण्डों तथा प्रचलित नियमों को चुनौती देने की भावना थी। उनके विचारों, उनकी भावनाओं तथा उनके आचरण के ढंग में उभरती हुई नयी प्रवृत्तियों में चुनौती की यह भावना देखी गयी। इनमें से एक प्रवृत्ति का संकेत इस कथन से उनकी सहमति में मिलता है कि 'हर व्यक्ति को इस बात का निर्णय स्वयं करना चाहिए कि उसके लिए क्या उचित है और क्या अनुचित' और उनके इस विश्वास में कि 'दो परस्पर सहमत प्रौढ़ व्यक्तियों के बीच सेक्स भोग में हर चीज ठीक है या कुछ भी अनुचित नहीं है यदि उससे किसी को हानि न पहुँचती हो और यह कि पुरुष तथा स्त्री दोनों ही के लिए उनका सेक्स जीवन तथा उनका सेक्स आचरण उनका व्यक्तिगत तथा निजी मामला होता है, और जब तक सम्बन्धित पक्ष परस्पर सहमति से इसमें भाग लें और उसमें किसी का अनुचित लाभ न उठाया जा रहा हो, या किसी को हानि न पहुँच रही हो तब तक किसी को उसकी निन्दा नहीं करनी चाहिए और न ही उसमें हस्तक्षेप करना चाहिए।" इस उभरती हुई प्रवृत्ति में सेक्स-सम्बन्धों में नैतिकता के बारे में रसेल की उस संकल्पना की काफी प्रतिध्वनि मिलती है जिसमें यह प्रस्थापना की गयी है "सेक्स-सम्बन्धों में अन्धविश्वास से मुक्त नैतिकता का अर्थ मूलतः होता है दूसरे पक्ष के लिए सम्मान, और उस पुरुष अथवा स्त्री को उसकी इच्छाओं की ओर ध्यान दिये बिना उसे केवल वैयक्तिक-तुष्टि के लिए एक साधन के रूप में इस्तेमाल करने के लिए तत्पर न होना" (रसेल, 1959 पृष्ठ 103)।

इस बात का समर्थन करने की अभिवृत्ति अपनाने में कि हर स्त्री अथवा पुरुष इस बात का निर्णय स्वयं करे कि उसके लिए क्या उचित है और क्या अनुचित, ऐसा लगता है कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियां अमरीका के नौजवानों की विचारधारा से प्रभावित हुई हैं। शोफील्ड द्वारा नौजवानों के सेक्स व्यवहार के सम्बन्ध में किये गये एक अध्ययन (1968) में यह देखा गया कि जिन नौजवानों का अध्ययन किया गया था उनमें से 84 प्रतिशत इस विचार में सहमत थे कि "हर व्यक्ति को इस बात का निर्णय स्वयं करना चाहिए कि क्या उचित है और क्या अनुचित", और केवल 11 प्रतिशत इस बात से असहमत थे।

जिन श्रमजीवी स्त्रियों का अध्ययन किया गया, उनमें जो एक और प्रवृत्ति प्रबल होती हुई पायी गयी वह यह थी कि वे यह सोचने लगी हैं कि "विवाह से पहले, विवाह की परिधि के अन्दर और विवाह की परिधि के बाहर सेक्स का आनन्द प्राप्त करने या सेक्स तुष्टि प्राप्त करने का पुरुषों तथा स्त्रियों का समान अधिकार है। सेक्स के इन पहलुओं के बारे में—विवाह से पहले, विवाह की परिधि में और विवाह की परिधि के बाहर—उनकी अभिवृत्तियों में होनेवाले परिवर्तनों पर अलग से विस्तार-पूर्वक चर्चा की जा चुकी है।

एक और उभरती हुई नयी प्रवृत्ति, हालांकि यह भी दस वर्ष बाद भी बहुत थोड़ी ही स्त्रियों में ही पायी गयी, यह है कि वे विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बन्ध स्थापित करनेवाली स्त्री को दुराचारिणी नहीं समझती हैं। इस बात का पता स्त्रियों के आगे दिये गये बयानों से चलता है, हालांकि ये बाद वाले नमूने की केवल थोड़ी ही सी स्त्रियों के—केवल 29 प्रतिशत के—बयान हैं, "अगर मैं विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर किसी से सेक्स-सम्बन्ध स्थापित करूँ तो मैं अपराधी अनुभव नहीं करूँगी, शर्त केवल यह है कि उस पुरुष से मुझे प्रेम हो, या यह सम्बन्ध सच्चे तथा हार्दिक प्रेम और पारस्परिक सम्मान पर आधारित हो, या यदि यह काम कोई अनुकम्पा अथवा लाभ प्राप्त करने के लिए नहीं किया गया हो। दस वर्ष पहले कहीं अधिक संख्या में सूचना देनेवाली स्त्रियों ने लेखिका का इसलिए लगभग अपमान किया था कि उनके विचार में जो प्रश्न उनसे पूछे जा रहे थे, वे उनके चरित्र पर लांछन लगाते थे और उन्होंने जोर देकर यह बात कही थी कि वे विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बन्धों की कल्पना भी नहीं कर सकतीं।

एक और अनोखी प्रवृत्ति, जो इस अध्ययन के दूसरे चरण में देखी गयी वह थी सेक्स, सेक्स सम्बन्धी साहित्य तथा सेक्स-सम्बन्धी गतिविधियों में उनकी बढ़ती हुई दिलचस्पी। इस बात का पता इससे चलता है कि उन्हें विभिन्न प्रकार की सेक्स क्रियाओं तथा सेक्स-सम्बन्धों को व्यक्त करनेवाली पारिभाषिक शब्दावली की अधिक गहरी जानकारी थी। उदाहरण के लिए, अब पहले की अपेक्षा अधिक स्त्रियाँ यह जानती थीं कि 'नेकिंग' का अर्थ होता है चुम्बन करना अपने सहभोगी के गले में बाहें डालना या गर्दन से ऊपर शरीर के किसी भाग से शारीरिक सम्पर्क स्थापित करना और

'पटिंग' का अर्थ होता है दो व्यक्तियों के शरीर के गठन, नीचे के अंगों के बीच सक्स-सम्भोग को छोड़कर और किसी भी प्रकार का शारीरिक सम्पर्क स्थापित करना और यह कि इसमें भरपूर चुम्बन करना कपड़े पहने हुए या कपड़े उतारकर सक्स-अंगों सहित शरीर के किसी भी भाग को बड़ी घनिष्ठता से छूना सहलाना जिसके फलस्वरूप आवश्यक रूप से नहीं रति निष्पत्ति हो जाय, परन्तु निश्चित रूप से इसमें मैथुन शामिल नहीं है। सेक्सटन ने इसकी व्याख्या इन शब्दों में की है, 'पटिंग दो (या अधिक) व्यक्तियों के बीच (जो समलिंगकामी हों या विलिंगकामी) इच्छापूर्वक स्थापित किये गये कामोद्दीपक शारीरिक सम्पर्क का वर्णन है जिससे उत्तेजन उच्चस्तरीय समतल आवेश अथवा रति निष्पत्ति भी उत्पन्न हो (सेक्सटन 1970 पृष्ठ 99)। कहने का मतलब यह कि यह इच्छापूर्वक सम्पन्न किया गया कामोद्दीपक उत्तेजन अथवा सक्स क्रीड़ा होती है जो मैथुन की सीमा तक नहीं जाती। बाद वाले समूह में ऐसी स्त्रियों की संख्या अधिक पायी गयी जो अश्लीलता के शब्द से परिचित थी जो सामान्यतः ऐसे साहित्य अथवा चित्रों के प्रसंग में इस्तेमाल किया जाता है जिनका सचेतन तथा मुख्य उद्देश्य होता है पाठक अथवा दर्शक में कामोद्दीपन को उभारना।

उपर्युक्त अभिमत का प्रमाण इस बात में मिलता है कि दस वर्ष पहले जिन स्त्रियों का अध्ययन किया गया था उनमें से जिन स्त्रियों ने इन शब्दों के बारे में सुना था या जिन्हें इसके बारे में अस्पष्ट सी जानकारी भी थी कि उनका अभिप्राय क्या होता है, उनकी संख्या मुश्किल से उसे 7 प्रतिशत तक थी जबकि दस वर्ष बाद यह देखा गया कि कहीं अधिक संख्या में (27 से 33 प्रतिशत तक) स्त्रियाँ सक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता के बारे में या भिन्नलिंगी व्यक्तियों को दी जा सकनेवाली सक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता की सीमाओं के बारे में बातें करते समय इन शब्दों का प्रयोग करती थी और उन्हें यह मालूम था कि इनमें से प्रत्येक का सही सही अर्थ क्या है। इस दिलचस्पी का संकेत इस बात में भी मिलता है कि दस वर्ष बाद इन स्त्रियों में ऐसी स्त्रियों की संख्या कहीं अधिक हो गयी थी जिन्होंने मानव नर तथा मानव मादा के सक्स-आचरण के बारे में किंसे के अध्ययनों और अंग्रेज स्त्रियों के विवाह-सम्बन्धों तथा सक्स सम्बन्धों के बारे में चेस्सर के अध्ययन जैसे प्रकाशनों के बारे में सुना था और कुछ ने तो उन्हें पढ़ा भी था। वे जानती थीं कि अश्लील साहित्य क्या होता है और उन्होंने अश्लील साहित्य पढ़ा भी था और अश्लील चित्र प्रदर्शन देखे भी थे। इन चित्र प्रदर्शनों और लोगों की सक्स-सम्बन्धी गतिविधियों तथा व्यवहार के बारे में बात करने में उन्हें अब दस वर्ष पहले की तुलना में बहुत कम संकोच होता था।

इस प्रवृत्ति का संकेत इस बात में भी मिलता है कि बाद वाले समूह में यह देखा गया कि उन स्त्रियों की संख्या पहले से कहीं अधिक हो गयी थी जिनमें यह चेतना बहुत तीव्र रूप से जागृत हो गयी थी कि पुरुष स्त्रियों को केवल सक्स का खिलौना समझते हैं और उनका अनुचित लाभ उठाते हैं। इसका प्रमाण इस बात में भी मिलता

इस बात का समथन करने की अभिवत्ति अपनाने मे कि हर स्त्री अथवा पुरुष इस बात का निणय स्वय करे कि उनके लिए क्या उचित है और क्या अनुचित, ऐसा लगता है कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया अमरीका के नौजवानो की विचारधारा से प्रभावित हुई है। गोफील्ड द्वारा नौजवानो के सेक्स व्यवहार के सम्बध मे किये गये एक अध्ययन (1968) म यह देखा गया कि जिन नौजवानो का अध्ययन किया गया था उनम से 84 प्रतिशत इस विचार मे सहमत थे कि "हर व्यक्ति को इस बात का निणय स्वय करना चाहिए कि क्या उचित है और क्या अनुचित", और केवल 11 प्रतिशत इस बात से असहमत थे।

जिन श्रमजीवी स्त्रियो का अध्ययन किया गया, उनम जो एक और प्रवत्ति प्रबल होती हुई पायी गयी वह यह थी कि वे यह सोचने लगी हैं कि "विवाह स पहले, विवाह की परिधि के अन्दर और विवाह की परिधि के बाहर सेक्स का आनन्द प्राप्त करने या सेक्स तुष्टि प्राप्त करने का पुरुषो तथा स्त्रियो का समान अधिकार है।' सेक्स के इन पहलुओ के बारे म—विवाह से पहले, विवाह की परिधि मे और विवाह की परिधि के बाहर—उनकी अभिवत्तियो मे होनेवाले परिवर्तनो पर अलग से विस्तार-पूवक चर्चा की जा चुकी है।

एक और उभरती हुई नयी प्रवृत्ति, हालाकि यह भी दस वष बाद भी बहुत थोडी ही स्त्रियो मे ही पायी गयी, यह है कि वे विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बध स्थापित करनेवाली स्त्री को दुराचारिणी नही समभती ह। इस बात का पता स्त्रिया के आगे दिये गये बयानो से चलता है, हालाकि ये बाद वाले नमूने की केवल थोडी ही सी स्त्रियो के—केवल 29 प्रतिशत के—बयान हैं "अगर मैं विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर किसी से सेक्स-सम्बध स्थापित करूँ तो मैं अपराधी अनुभव नही करूँगी, शत केवल यह है कि उस पुरुष से मुझे प्रेम हो, या यह सम्बध सच्चे तथा हार्दिक प्रेम और पारस्परिक सम्मान पर आधारित हो, या यदि यह काम कोई अनुकम्पा अथवा लाभ प्राप्त करन के लिए नही किया गया हो। दस वष पहले कही अधिक सख्या मे सूचना देनेवाली स्त्रियो न लेखिका का इसलिए लगभग अपमान किया था कि उनके विचार म जो प्रश्न उनसे पूछे जा रहे थे, वे उनके चरित्र पर लाछन लगाते थे और उन्होने जोर देकर यह बात कही थी कि वे विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बधो की कल्पना भी नहीं कर सकती।

एक और अनोखी प्रवत्ति, जो इस अध्ययन के दूसरे चरण म देखी गयी वह थी सेक्स सक्स सम्बधी साहित्य तथा सेक्स-सम्बधी गतिविधिया मे उनकी बढती हुई दिलचस्पी। इस बात का पता इससे चलता है कि उन्ह विभिन्न प्रकार की सेक्स क्रियाओ तथा सेक्स-सम्बधो का व्यक्त करनेवाली पारिभाषिक शब्दावली की अधिक गहरी जानकारी थी। उदाहरण के लिए, अब पहले की अपेक्षा अधिक स्त्रिया यह जानती थी कि 'नेकिंग' का अथ होता है चुम्बन करना अपने सहभोगी के गले मे बाहे डालना या गदन से ऊपर शरीर के किसी भाग मे शारीरिक सम्पक स्थापित करना, और

'पैटिंग' का अर्थ होता है दो व्यक्तियों के शरीर के मदन-ऐंद्रिक, नीचे के अंगों के बीच सेक्स-सम्भोग को छोड़कर और किसी भी प्रकार का शारीरिक सम्पर्क स्थापित करना, और यह कि इसमें भरपूर चुम्बन करना, कपड़े पहने हुए या कपड़े उतारकर सेक्स अंगों सहित शरीर के किसी भी भाग को बड़ी घनिष्ठता से इतना सहलाना जिसके फलस्वरूप, आवश्यक रूप से नहीं, रति निष्पत्ति हो जाय, परन्तु निश्चित रूप से इसमें मैथुन शामिल नहीं है। सेक्सटन ने इसकी व्याख्या इन शब्दों में की है "'पैटिंग दो (या अधिक) व्यक्तियों के बीच (जो समलिंगकामी हों या विलिंगकामी) इच्छा-पूर्वक स्थापित किये गये कामोद्दीपक शारीरिक सम्पर्क का वर्णन है जिससे उत्तेजन उच्चस्तरीय समतल आवेग, अथवा रति निष्पत्ति भी उत्पन्न हो" (सेक्सटन 1970, पृष्ठ 99)। कहने का मतलब यह कि यह इच्छापूर्वक सम्पन्न किया गया कामोद्दीपन उत्तेजन अथवा सेक्स क्रीड़ा होती है जो मैथुन की सीमा तक नहीं जाती। बाद वाले समूह में ऐसी स्त्रियों की संख्या अधिक पायी गयी जो अश्लीलता के शब्द से परिचित थीं, जो सामान्यतः ऐसे साहित्य अथवा चित्रों के प्रसंग में इस्तेमाल किया जाता है जिनका सचेतन तथा मुख्य उद्देश्य होता है पाठक अथवा दर्शक में कामोद्दीपन को उभारना।

उपर्युक्त अभिमत का प्रमाण इस बात में मिलता है कि दस वर्ष पहले जिन स्त्रियों का अध्ययन किया गया था उनमें से जिन स्त्रियों ने इन शब्दों के बारे में सुना था या जिन्हें इनके बारे में अस्पष्ट-सी जानकारी भी थी कि उनका अभिप्राय क्या होता है, उनकी संख्या मुश्किल से उसे 7 प्रतिशत तक थी, जबकि दस वर्ष बाद यह देखा गया कि कहीं अधिक संख्या में (27 से 33 प्रतिशत तक) स्त्रियाँ सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता के बारे में, या भिन्नलिंगी व्यक्तियों को दी जा सकनेवाली सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता की सीमाओं के बारे में बातें करते समय इन शब्दों का प्रयोग करती थीं और उन्हें यह मालूम था कि इनमें से प्रत्येक का सही-सही अर्थ क्या है। इस दिलचस्पी का सबूत इस बात में भी मिलता है कि दस वर्ष बाद इन स्त्रियों में ऐसी स्त्रियों की संख्या कहीं अधिक हो गयी थी जिन्होंने मानव नर तथा मानव मादा के सेक्स आचरण के बारे में किंस के अध्ययनों और अंग्रेज स्त्रियों के विवाह-सम्बन्धों तथा सेक्स सम्बन्धों के बारे में चेसर के अध्ययन जैसे अध्ययनों के बारे में सुना था और कुछ ने तो उन्हें पढ़ा भी था। वे जानती थीं कि अश्लील साहित्य क्या होता है और उन्होंने अश्लील साहित्य पढ़ा भी था और अश्लील चित्र-प्रदर्शन देखे भी थे। इन चित्र प्रदर्शनों और लोगों की सेक्स-सम्बन्धी गतिविधियों तथा व्यवहार के बारे में बात करने में उन्हें अब दस वर्ष पहले की तुलना में बहुत कम संकोच होता था।

इस प्रवृत्ति का संकेत इस बात में भी मिलता है कि बाद वाले समूह में यह देखा गया कि उन स्त्रियों की संख्या पहले से कहीं अधिक हो गयी थी जिनमें यह चेतना बहुत तीव्र रूप से जागृत हो गयी थी कि पुरुष स्त्रियों को केवल सेक्स का खिलौना समझते हैं और उनका अनुचित लाभ उठाते हैं। इसका प्रमाण इस बात में भी मिलता

इस बात का समर्थन करने की अभिवृत्ति अपनाने में कि हर व्यक्ति इस बात का निर्णय स्वयं करे कि उसके लिए क्या उचित है और क्या लगता है कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियां अमरीका के नौजवानों से प्रभावित हुई है। शोफील्ड द्वारा नौजवानों के सेक्स व्यवहार के सम्बन्ध में एक अध्ययन (1968) में यह देखा गया कि जिन नौजवानों का था उनमें से 84 प्रतिशत इस विचार से सहमत थे कि "हर व्यक्ति निर्णय स्वयं करना चाहिए कि क्या उचित है और क्या अनुचित प्रतिशत इस बात से असहमत थे।

जिन श्रमजीवी स्त्रियों का अध्ययन किया गया, उनमें प्रबल होती हुई पायी गयी वह यह थी कि वे यह सोचने लगीं विवाह की परिधि के अन्दर और विवाह की परिधि के बाहर करने या सेक्स तुष्टि प्राप्त करने का पुरुषों तथा स्त्रियों सेक्स के इन पहलुओं के बारे में—विवाह से पहले, विवाह की परिधि के बाहर—उनकी अभिवृत्तियों में होनेवाले प पूर्वक चर्चा की जा चुकी है।

5

# सिंहावलोकन

पिछली लगभग दो दशाब्दियों के दौरान जीवन के विभिन्न पक्षों के बारे में भारतवासियों की अभिवृत्तियों में गहरे परिवर्तन हुए हैं। बदलते हुए सामाजिक आर्थिक परिवेश के प्रसंग में युगों पुरानी और प्रायः पावन पुनीत मानी जानेवाली सामाजिक प्रथाओं को स्वतन्त्र तथा आलोचनात्मक दृष्टि से जांचना परखना और प्रेम विवाह तथा सेक्स के प्रति सुस्पष्ट तथा सचेतन अभिवृत्तियाँ धारण करना, और इतना ही नहीं बल्कि उनके बारे में मत व्यक्त करना भारत में अपेक्षाकृत एक नयी घटना है। दैविक प्रेम और आध्यात्मिक प्रेम को छोड़कर, सेक्स तथा प्रेम के पूरे क्षेत्र पर या तो नैतिक पाखंड, भावुकता तथा अन्य अवरुद्ध अभिवृत्तियों का परदा पड़ा रहता था, उन पर असंदिग्ध निंदनीयता अमिट कलंक और अश्लीलता की ऐसी छाप लगा दी गयी थी कि उनके बारे में आवेपक भाव से तथा खुलकर बात करने या विचार विनिमय करने की प्रायः कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। विवाह के बारे में भी परम्परा या पति के प्रति पत्नी की निर्दिष्ट भूमिकाओं तथा उसके पद की स्वीकृत मान्यता से विचलित होना या विचारों में अथवा बातचीत में प्रणय की पुनीत सुरक्षित गोपनीयता में परदा में से झांकना नैतिक आचरण का उल्लंघन समझा जाता था। परन्तु इधर कुछ समय से शहरों में शिक्षित लोग वैयक्तिक क्रिया प्रतिक्रिया तथा मानव सम्बन्धों के इन तीन बुनियादी क्षेत्रों के महत्व को समझने लगे हैं।

देश में जो राजनीतिक सांस्कृतिक तथा सामाजिक-मनोवैज्ञानिक परिवर्तन हो रहे हैं उनके कारण और विदेशी प्रभावों के बढ़ते हुए असर के कारण ऊपर बताये हुए पहलुओं के बारे में बातचीत करना अब उतना संकोचमय नहीं रह गया है और उनके बारे में मत व्यक्त करने को अभद्र लज्जाजनक या अशिष्ट नहीं समझा जाता है

है कि उन स्त्रियों की संख्या भी पहले से बढ़ गयी है जिनमें अपने स्त्री होने और स्त्रियों के लिए पुरुष की कमजोरी की चेतना जागृत हो चुकी है, उनमें यह भावना उत्पन्न हो गयी है कि यदि वे पुरुषों को थोड़ी सी छूट दें और शारीरिक रूप से उनके साथ थोड़ा सा घनिष्ठ होने का अवसर दें तो वे अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकती हैं।

उन स्त्रियों का अनुपात जिन्होंने परम्परा विरोधियों की—ऐसे व्यक्तियों की जो नियमों तथा प्रचलित प्रथाओं की पूरी अश्रद्धा के साथ अवहेलना करते हैं—अभिवृत्तियाँ अपना ली थीं दस वर्ष बाद कहीं अधिक हो गया था, हालांकि वे अब भी बहुत अल्पसंख्यक ही थीं। इससे उनकी अभिवृत्तियों में आमूल परिवर्तन की दिशा में बढ़ती हुई प्रवृत्ति का संकेत मिलता है। इस प्रवृत्ति का प्रमाण इस बात में भी मिलता है कि उन्होंने 'उन्मुक्त प्रेम', 'खुला प्रेम' और 'प्रयोगात्मक विवाह' जैसी नयी संकल्पनाओं को प्रचलित किया है। स्वैरिता अथवा अनियत सम्भोग की संकल्पना को भी उन्होंने एक नया आशय प्रदान किया है। परम्परा विरोधी श्रमजीवी स्त्रियों के लिए स्वैरिता का अर्थ है प्रेम के बिना सेक्स सम्भोग, इसमें कोई अन्तर नहीं पड़ता कि वह किसके साथ किया जाय, और उनका कहना है कि यदि सेक्स-सम्भोग में भाग लेने वाले दोनों पक्ष, चाहे वह एक से अधिक व्यक्तियों के साथ ही क्यों न किया जाये, एक-दूसरे से प्रेम करते हों तथा एक दूसरे का सम्मान करते हों तो वह स्वैरिता नहीं है।

सेक्स सम्बन्धों के प्रति उनकी अभिवृत्ति में आमूल परिवर्तनवाद की इस प्रवृत्ति का संकेत इनमें से कुछ—9 प्रतिशत—स्त्रियों के मतों तथा विचारों में भी मिलता है, जिन्होंने यह कहा कि परस्त्रीगमन तथा परपुरुषगमन या विवाह से पहले सेक्स अनुभव के लिए औचित्य उपलब्ध करने की प्रायः कोई आवश्यकता नहीं है, और यदि दो वयस्क व्यक्ति इसके लिए सहमत तथा तत्पर हों तो वे ऐसा कर सकते हैं। एक दशाब्दी बाद सेक्स के प्रति उनकी अभिवृत्ति अधिक सापेक्षतामूलक हो गयी थी और उतनी निरपेक्ष नहीं रह गयी थी जितनी दस वर्ष पहले थी।

इन सभी बदलती हुई तथा उभरती हुई प्रवृत्तियों से संकेत मिलता है कि ये स्त्रियाँ, कुछ प्रतिबन्धों के साथ ही सही विविध प्रकार के सेक्स व्यवहार को अधिकाधिक स्वीकारने लगी हैं या यह कि सेक्स सम्बन्धों के प्रति उनकी अभिवृत्ति पहले की अपेक्षा कम कुण्ठित तथा अधिक निःसंकोच हो गयी है या वे इस स्वीकृति को व्यक्त करने में अधिक ईमानदारी तथा स्पष्टवादिता से काम लेने लगी हैं, या इनमें ये सभी बातें मिलकर भी मौजूद हो सकती हैं। कुछ भी हो इस बात में किसी प्रकार का सन्देह नहीं हो सकता कि उत्तरदाताओं में जिन नयी उभरती हुई विविध प्रवृत्तियों तथा दृष्टिकोणों का उल्लेख ऊपर किया गया है उनसे असंदिग्ध रूप से सेक्स-सम्बन्धी अभिवृत्तियों तथा आचरणों में एक वास्तविक तथा दीर्घकालिक परिवर्तन का संकेत मिलता है।

# 5

## सिहावलोकन

पिछली लगभग दो दशाब्दियो के दौरान जीवन के विभिन्न पक्षा के बारे म भारतवासिया की अभिवृत्तिया म गहरे परिवतन हुए ह। बदलते हुए सामाजिक-आर्थिक परिवेश के प्रसग म युगा पुरानी और प्राय पावन पुनीत मानी जानेवाली सामाजिक प्रथाओ का स्वतन्त्र तथा आलोचनात्मक दृष्टि स जाँचना परखना और प्रेम विवाह तथा सेक्स के प्रति सुस्पष्ट तथा सचेतन अभिवृत्तियाँ धारण करना, और इतना ही नही बल्कि उनके बारे म मत व्यक्त करना भारत म अपेक्षाकृत एक नयी घटना है। दैविक प्रेम और आध्यात्मिक प्रेम का छोडकर, सेक्स तथा प्रेम के पूरे क्षेत्र पर या तो नैतिक पास ड, भावुकता तथा अन्य अवरुद्ध अभिवृत्तिया का परदा पडा रहता था, उन पर असदिग्ध निन्दनीयता अमिट कलक और अश्लीलता की एसी छाप लगा दी गयी थी कि उनके बारे म अवपक भाव स तथा खुलकर बात करने या विचार विनिमय करने की प्राय कल्पना भी नही की जा सकती थी। विवाह के बारे म भी परम्परा या पति के प्रति पत्नी की निर्दिष्ट भूमिकाओ तथा उसके द्वारा स्वीकृत मान्यता स विचलित होना या विचारा म अथवा बातचीत म प्रणय-क्रिया की पुनीत सुरक्षित गोपनीयता म परदा मे से झाँकना नैतिक आचरण का उल्लघन समझा जाता था। परन्तु इधर कुछ समय से शहरो के शिक्षित लोग वयक्तिक क्रिया प्रतिक्रिया तथा मानव-सम्बन्धा के इन तीन बुनियादी क्षेत्रा के महत्त्व का समझने लगे है।

देश मे जो राजनीतिक-सास्कृतिक तथा सामाजिक-मनोवैज्ञानिक परिवतन हो रहे है उनके कारण और विदेशी प्रभावा के बढ़ते हुए असर के कारण ऊपर बताये हुए पहलुओ के बारे म बातचीत करना अब उतना सकोचमय नही रह गया है, और उनके बारे म मत व्यक्त करने को अभद्र लज्जाजनक या अनिष्ट नही समझा जाता है

जसा कि अब तक काफी समय से समझा जाता रहा था। इस अध्ययन मे अपक्षाकृत आधुनिक अभिवृत्ति के सामाजिक मनोवैज्ञानिक आयामो की छानवीन की गयी है और यह सक्स, प्रेम तथा विवाह के प्रति भारत की शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो की—उन श्रमजीवी स्त्रिया की जो हमार समाज का एक महत्त्वपूण अग हैं—बदलती हुई अभिवत्तिया का प्रथम वज्ञानिक अ वेषण है। इसमे तो स देह नही कि इस प्रवत्ति की दिशा तथा विस्तार के बारे मे अनुमानो की तो कोइ कमी नही है पर तु उनक बारे मे वैज्ञानिक जानकारी न होने के बराबर है।

यह शिक्षित हि दू श्रमजीवी स्त्रिया की अभिवत्तिया मे हानवाले परिवतना का अध्ययन करने के उद्देश्य से कुछ सामाजिक समस्याग्रा के उम रूप का दस वर्षों के अ तराल से दो विवि न समयो पर किया गया अनुभवज य अध्ययन ह, जिस रूप म य स्त्रियाँ उन समस्याम्रो को देखती है। यह अध्ययन क्षेत्र मे जाकर की गयी छान बीन पर—500 शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया के साथ स्वय लेखिका के अनक बार किय गय साक्षात्कारा पर—आधारित है। इस पुस्तक मे लेखिका न इस बात का अ ययन करने का प्रयास किया है कि ये स्त्रिया सक्स, प्रेम तथा विवाह के बारे म क्या सोचती हैं ताकि उनकी अभिवत्तियो मे होनेवाले परिवतनो के बार मे जानकारी प्राप्त हो सके, उनकी अभिवत्तियो को प्रभावित करने वाले, ढालने वाले तथा बदलन वाल कारको का विश्लेपण किया जा सके और इस बात की छानवीन की जा सके कि स्वय ये अभिवत्तिया उनके आम दष्टिकोण और उनकी पूरी जीवन पद्धति को किस प्रकार प्रभावित करती हैं।

चूकि यह मुख्यत गुणात्मक अध्ययन है इसलिए लेखिका ने उन श्रमजीवी स्त्रियों के, जिनका अध्ययन किया गया था, कुछ दृष्टा तमूलक व्यक्ति वत्तान्त प्रस्तुत किये हैं, ताकि जानकारी प्रभावशाली ढग से व्यक्त की जा सके और अध्ययन के निष्कर्षों की व्याख्या की जा सके। व्यक्ति अध्ययनो मे इन स्त्रिया के विविधतम विचारो का रहस्योदघाटन हुआ है विशेष रूप स प्रेम, सक्स तथा विवाह के बारे मे, सामाजिक जीवन के उन तीन पक्षो क बारे मे जो समान रूप स जन साधारण तथा समाज विज्ञानिया दोना ही के ध्यान तथा गहरी दिलचस्पी का केद्र रह हैं पर तु फिर भी भारत म इन क्षेत्रा मे वैज्ञानिक अनुस धान का काम नही के बराबर हुआ है।

चूकि अभिवत्तियो के काफी दूरगामी प्रभाव उन अभिवत्तिया का धारण करन वाले व्यक्ति अथवा व्यक्तिया के समूह के प्रच्छ न तथा प्रत्यक्ष व्यवहार पर पडत हैं, इसलिए इस अध्ययन स प्रेम सेक्स तथा विवाह क बार म श्रमजीवी महिलाम्रा के वास्तविक, विशेषत अव्यक्त व्यवहार का—विशिष्ट परिस्थितिया म विशिष्ट प्रति क्रिया के लिए तत्परता—बहुत व्यापक चित्र सामन आता है। एक प्रकार स यह अध्ययन प्रेम तथा सेक्स सम्बन्धो के और विवाह प्रथा क भविष्य के बार म अ तद ष्टि प्रदान करता है। इस अध्ययन मे पाठक को यह बनान का दावा नही किया गया है

कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ सेक्स, प्रेम और विवाह के क्षेत्र मे वास्तव म क्या करती हैं, लेकिन इसमे इस बात का रहस्योदघाटन निश्चित रूप से हुआ है कि वे जीवन की इन मूलभूत समस्याओ के बारे म क्या सोचती हैं।

चूकि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो की अभिवृत्तियो के बारे म कोई तुलनात्मक आधार-सामग्री उपलब्ध नही है, इसलिए इस अध्ययन म विभिन्न स्थानो पर मुख्यत कालेजो की छात्राओ या समाज के मध्यम वर्ग की शिक्षित महिलाओ के सम्बन्ध म किये गये अन्य अध्ययनो की आधार-सामग्री का हवाला दिया गया है। यद्यपि इन आधार-सामग्रियो का स्वरूप वैसा ही नही है, फिर भी उनम यह सकेत अवश्य मिलता है कि विवाह तथा सेक्स के बारे म प्रचलित अथवा उदीयमान अभिवृत्तिया तथा विचार केवल शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो म ही नही बल्कि बहुत बडी हद तक शहरो के पूरे युवा वर्ग म पाये जाते हैं।

## अभिवृत्तिमूलक परिवर्तनो की सामाजिक-मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया

क्रो तथा क्रो ने यह मत व्यक्त किया है कि अभिवृत्तिमूलक परिवर्तन ऐसे गतिशील, "न्यूनाधिक रूप म नमनीय सघटक अगो का सयोजन होता है जिन्हे बदला जा सकता है। इसलिए मूल्याकन के उद्देश्य से किसी एक कारक की क्रिया को अलग कर सकना अत्यन्त कठिन है।" (क्रो तथा क्रो, 1956)। विभिन्न सामाजिक आर्थिक राजनीतिक धार्मिक तथा सामाजिक सास्कृतिक शक्तियो ने शिक्षित स्त्रियो की विचार पद्धति को प्रभावित किया है। इन सभी कारको का प्रभाव इतना सम्मिलष्ट है कि इनमे से किसी एक को दूसरे से अलग कर सकना और यह कह सकना कि कौन अधिक महत्वपूर्ण है बहुत कठिन है। किसी व्यक्ति पर इनकी क्रिया और परस्पर क्रिया ही विभिन्न वस्तुओ तथा मूल्यो के प्रति, उसकी अभिवृत्तियो म परिवर्तन लाती है।

प्रेम, विवाह या सेक्स जैसी जीवन की आधारभूत समस्याओ के बारे म और स्वय अपने बारे म किसी व्यक्ति के विचार बहुत बडी हद तक उस समाज के अनुसार ढलते हैं जिसम उसका जन्म तथा पालन पोषण होता है और वे उस समाज म होने वाले सामाजिक परिवर्तनो से प्रभावित होते हैं। अनेक मनोवैज्ञानिक अध्ययनो से पता चला है कि पुरुषो की अपेक्षा स्त्रियाँ तथा लडकियाँ अभी तक सामाजिक अनुमोदन पर अधिक निर्भर हैं। यही कारण है कि उनके लिए अभिवृत्तियो विचारो के स्तर पर भी परम्पराओ को तोडना या पुराने रीति रिवाजो तथा सामाजिक प्रथाओ के विपरीत जाना अधिक कठिन होता है। अभिवृत्ति के स्तर पर भी परम्परा से हटकर चलने की प्रवृत्ति स्पष्टत कई महत्वपूर्ण सामाजिक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक कारको का परिणाम होती है।

## सामाजिक कारक

विवाह की प्रथा की अनेक लाक्षणिक विशेषताएँ ऐसी हैं जिन्हें परम्परागत रूप मे उसके स्थायित्व के लिए महत्त्वपूर्ण माना जाता है। हिन्दू समाज ने, विशेष रूप से स्वतन्त्रता के बाद के युग मे, विवाह की प्रथा से सम्बन्धित युगो पुराने सामाजिक रीति रिवाजो तथा नियमो मे कुछ बहुत प्रमुख परिवर्तन अनुभव किये हैं। 1955 के हिन्दू विवाह अधिनियम ने विवाह की प्रथा मे संविदा के तत्त्व का समावेश करके वस्तुत एक क्रान्ति कर दी है। उसमे विवाह के लिए न्यूनतम आयु निर्धारित कर दी गयी है। उसमे तलाक तथा विच्छेद का प्रावधान है। उसमे अन्तर्गोत्रीय तथा अन्तर्जातीय विवाहो की अनुमति दी गयी है।

अन्य सामाजिक प्रथाओ की तरह विवाह की प्रथा पर भी आर्थिक, सामाजिक राजनीतिक और वैधिक शक्तियो का प्रभाव पडा है। स्त्रियो की शिक्षा, उनके नागरिकता के तथा अन्य वैधिक अधिकारो और सबसे बढकर उनके लाभप्रद रोजगार तथा आर्थिक स्वाधीनता ने उनकी धारणाओ तथा विचारो को बहुत प्रभावित किया है, जिसमे वैवाहिक सम्बन्ध के प्रति उनका दृष्टिकोण तथा विवाह के प्रति उनकी अभिवृत्तिया भी शामिल है। किसी समाज विशेष के सास्कृतिक स्वभाव का भी इन सभी कारको पर प्रभाव पडता है, क्योकि वास्तविक संस्कृति "किसी समाज के सदस्यो के व्यवहार का कुल योग होती है क्योकि ये व्यवहार सीखे हुए होते है और समाज के अन्य सदस्य भी उनमे सम्मिलित रहते है' (लिंटन, 1945)।

इस अध्ययन के प्रसग मे संस्कृति के दो पक्ष माने जा सकते हैं प्रत्यक्ष पक्ष, और प्रच्छन्न पक्ष। संस्कृति के प्रत्यक्ष पक्ष मे दो बातें होती हैं एक है भौतिक, अर्थात उद्योग का उत्पादन, और दूसरी है गत्यात्मक, अर्थात प्रत्यक्ष व्यवहार। प्रच्छन्न पक्ष मे मनोवैज्ञानिक बातें सम्मिलित होती हैं, अर्थात समाज के सभी सदस्यो का सम्मिलित ज्ञान, अभिवृत्तिया तथा मूल्य। ये दोनो ही पक्ष मानव व्यवहार को समझने के लिए समान रूप से वास्तविक तथा समान रूप मे महत्त्वपूर्ण होते हैं। इन दोनो मे से किसी भी एक पक्ष मे होनेवाले परिवर्तन का प्रभाव दूसरे पक्ष पर पडता है और इस प्रकार इसके फलस्वरूप प्रत्यक्ष तथा प्रच्छन्न दोनो ही प्रकार के मानव व्यवहार मे परिवर्तन होता है। प्रत्यक्ष संस्कृति के बारे मे राइसमन लिखते हैं "मैं यह मानकर चलता हू कि आज सचार के मुख्य साधन—रेडियो फिल्में, रेकार्ड, कामिक, बच्चो की पुस्तकें तथा पत्रिकाएँ—चरित्र निर्माण मे उससे कहीं अधिक बडी भूमिका अदा करती हैं जितनी वे अब से पहले के युगो मे करती थीं। निश्चय ही ये माध्यम आज पहले कभी की अपेक्षा अधिक केन्द्रीकृत हैं और अधिक समय तक अधिक लोगो तक पहुँचते हैं' (राइसमन, 1953 पृष्ठ 99)। किसी भी व्यक्ति के परिवेश का बहुत बडा भाग जीवन की भौतिक परिस्थितियो का होता है। और किसी भी व्यक्ति के सामाजिक उत्तराधिकार का काफी बडा भाग उसकी भौतिक संस्कृति का होता है। जब भौतिक परिस्थितियाँ बदलती हैं तो प्रत्यक्ष व्यवहार मे परिवर्तन होते हैं, और फिर इसके फल-

स्वरूप लोगो की अभिवृत्ति भी बदलती है ।

शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियो म भौतिक तथा वाह्य मूल्यो को अधिकाधिक
महत्त्व देने और हर मामले म ठोस व्यावहारिक और नपा तुला रवैया अपनाने की जो
बढती हुई प्रवत्तिया पायी जाती हैं उन्होने भी प्रेम सेक्स तथा विवाह के प्रति उनकी
अभिवत्तियो को प्रभावित किया है । य प्रवत्तियाँ इस सिद्धान्त को बल प्रदान करती
है कि कोई भी व्यक्ति बदले म कुछ पाने की आशा म ही कुछ देता है । और यह
बात स्पष्ट है कि यह रवया प्रौढ ढग स प्रेम करने की क्षमता के विकास के लिए
हितकर नही हो सकता । इन स्त्रिया म इस बात की बढती हुई प्रवृत्ति देखी गयी है
कि वे अपना जीवन सतही ढग से व्यतीत करती हैं, उन्हे आमतौर पर पूरे समाज के
प्रति कोई गहरा लगाव नहा होता जिसक कारण किसी भी व्यक्ति के लिए भरपूर
ढग से और गहराई के साथ प्रम करना कठिन हो जाता है । और फिर यही बात
उन्हे भौतिक तथा सतही मूल्या का अधिकाधिक गुलाम बनाती जाती है । किसी
भी स्त्री या पुरुप की प्रेम करने की क्षमता या प्रम के प्रति उसकी अभिवत्ति के
विकास पर जिस एक और कारक का प्रभाव देखा गया वह यह था कि उस स्त्री
अथवा पुरुप की बाल्यावस्था म उसके और परिवार के 'अन्य महत्त्वपूर्ण लोगो के
बीच अन्त क्रिया का स्वरूप क्या था ।

यद्यपि कालेज की छात्राओ के बारे मे कारयु बल तथा बानारसे (1966) के
अध्ययन म यह देखा गया कि जात पात माता पिता की शिक्षा तथा आय म अन्तर
का उनकी अभिवत्तियो पर कोई उल्लेखनीय प्रभाव नही पडा था, परन्तु प्रस्तुत
अध्ययन म यह देखा गया कि माता पिता की शिक्षा तथा आय का अभिवृत्तियो पर
प्रभाव पडता है परन्तु जात पाँत के आधार पर कोई अन्तर पडते नही देखा गया ।
और विवाह के प्रति या या कहें कि जीवन की विभिन्न समस्याओ के प्रति लोगो
की अभिवत्तियो को प्रभावित करने या उन्हे ढालने म जिन कारको को अधिक महत्त्व
पूर्ण पाया गया, व थ—माता पिता के घर पर पालन पोषण किस ढग से हुआ, माता-
पिता और सतान के बीच सम्बन्ध किस ढग के थ, परिवार के सामाजिक-सास्कृतिक
तथा अभिवत्ति सम्बन्धी मूल्य किस ढग के थ, उनकी शिक्षा दीक्षा किस ढग की
हुई थी और अपनी बाल्यावस्था म वे किस प्रकार के शहर या कस्बे म रह थ ।

व्यक्ति अध्ययनो की तुलना करन पर पता चलता है कि यदि दो स्त्रियो की
शिक्षा दीक्षा और उनकी सामाजिक हैसियत बिल्कुल एक जसी होने पर भी और
उनके एक ही शहर म एक जसी नौकरी करन, समान वतन पाने और समान काम
करन पर भी विभिन्न मामलो के बारे म उनकी अभिवत्तियो मे अन्तर होता है । व्यक्ति-
अध्ययनो का विश्लेषण करन पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उत्तरदाता के
परिवार की सामाजिक सास्कृतिक पृष्ठभूमि का—पारिवारिक परम्पराओ, रीति
रिवाजो आस्थाओ और रहन सहन का—उसकी अभिवत्तियो के निर्माण स कितना
गहरा सम्बन्ध होता है और विभिन्न लोगो की पृष्ठभूमि म इस अन्तर के कारण

ही अन्य भिन्नतापरक तत्वों में समानता के बावजूद उनकी अभिवृत्तियों में अंतर होता है।

उत्तरदाताओं की विभिन्न प्रकार की अभिवृत्तियों और विभिन्न भिन्नता परक तत्वों के पारस्परिक सम्बन्धों का निर्धारण करने के लिए उनके आयु वर्ग, शिक्षा, पारिवारिक पृष्ठभूमियों और उनके समवयस्क समुदायों को ध्यान में रखा गया। प्रस्तुत अध्ययन में विभिन्न व्यक्तियों के सम्बन्ध में जो आधार-सामग्री उपलब्ध हुई है उससे पता चलता है कि किसी व्यक्ति की अभिवृत्तियाँ किस प्रकार की हैं इसका सम्बन्ध उसकी आयु, शैक्षिक योग्यता अथवा उसकी अन्य योग्यताओं की अपेक्षा इन बातों से अधिक घनिष्ठ है कि उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि कैसी है, उसे शिक्षा कैसी मिली, उसके समवयस्क समुदाय में कैसे लोग हैं और वह किस जगह रहता है और किस जगह काम करता है। उदाहरण के लिए, जिन स्त्रियों का पालन पोषण आगरे जैसे छोटे और कम उन्नत शहर में हुआ था और जिन्होंने वहीं शिक्षा पायी थी तथा जो वहीं नौकरी करती थीं और जिनके समवयस्क समुदाय में कट्टरपंथी या कम उन्नत परिवार की स्त्रियाँ थीं, उनकी अभिवृत्तियाँ उन स्त्रियों की अभिवृत्तियों से मात्रा तथा दिशा दोनों ही की दृष्टि से काफी भिन्न थीं जिनका पालन पोषण दिल्ली जैसे उन्मुक्त वातावरण वाले शहर में हुआ था और जिन्होंने वहीं शिक्षा पायी थी तथा वहीं नौकरी करती थीं और जिनके समवयस्क समुदाय में आधुनिक तथा उन्नत स्त्रियाँ थीं।

यद्यपि सेक्स एक जैविक घटना है परन्तु सेक्स के प्रति मनुष्य की अभिवृत्तियों का निर्माण किसी संस्कृति विशेष के वातावरण में पलने बढ़ने के दौरान होता है। आदिम ढंग के समाज में अभिवृत्तियों का निर्माण प्रौढ़ लोगों का अनुकरण करने से और प्रथाओं का पालन करने से होता है, लेकिन अधिक सभ्य समाजों में मनुष्य की अभिवृत्तियों का निर्माण माता पिता, मित्रों, अन्य सामाजिक समुदायों के माध्यम से और संचार के माध्यमों—अखबारों, पत्रिकाओं, पुस्तकों और फिल्मों—के जरिये होता है। उदाहरण के लिए, सेक्स के प्रति अभिवृत्तियों में परिवर्तन में योग देनेवाले कारकों में से एक कारक वैज्ञानिक विचारों का प्रसार है। एक अन्य कारक है व्यक्ति पर अन्य संस्कृतियों का बढ़ता हुआ प्रभाव, एक और कारक है बहुत बड़ी मात्रा में ऐसे साहित्य का उपलब्ध होना जिसमें सामाजिक प्रभावों के कारण उत्पन्न होनेवाले सेक्स-सम्बन्धी अवरोधों के सम्भावित खतरों को उभारकर प्रस्तुत किया जाना। साइमस की धारणा है 'परन्तु पूरब और पश्चिम में प्रवृत्तियों की दिशा एक ही है बढ़ती हुई जन-जाग्रति के आधार पर समानता तथा सहिष्णुता में भी वृद्धि हो रही है और इसके फलस्वरूप अब जो सामाजिक परिवर्तन हो रहे हैं उनकी प्रबल धारा को रोक सकना कठिन है" (साइमस, 1971, पृष्ठ 68)।

सेक्स के प्रति तर्कसंगत रवैये को क्रमश: जो अधिकाधिक मान्यता मिलती जा रही है और क्रमश: जो प्रमुखता दी जा रही है, उसका और अमरीका यूरोप तथा अन्य स्थानों में होनेवाले अन्य परिवर्तनों का विभिन्न राष्ट्रों के लोगों के बीच अंत:क्रिया

तथा अन्त-प्रतिक्रिया के माध्यम से भारत के नगरवासी शिक्षित वर्ग पर प्रभाव पड़ा है, और इस प्रक्रिया में जन प्रचार के अधिक महत्त्वपूर्ण तथा प्रभावशाली साधनों से और विभिन्न देशों के लोगों के साथ मिलन जुलने के अधिकाधिक उपायों तथा साधनों से योग मिला है।

आधुनिक शहरी संस्कृति विशेष रूप से बड़े बड़े शहरों की संस्कृति भारत में भी मनुष्य की सेक्स सम्बन्धी संवेदनाओं को अधिक उग्र बनाने तथा उद्दीप्त करने की प्रवृत्ति रखती है। विज्ञापनों से लेकर लोकप्रिय साहित्य के विषयों तक जन प्रचार के सभी माध्यमों का लक्ष्य काम सम्बन्धी विचारों तथा वासनाओं को प्रज्वलित करना होता है। विज्ञापनों की दिशा सेक्स की ओर प्रवृत्त है, फिल्मों में नग्नता तथा काम-वासना के अधिकाधिक दृश्य दिखाये जाते हैं और किताबों की दुकानें अश्लील साहित्य से भरी रहती हैं। संचार के ये माध्यम मनुष्य को न केवल सेक्स की दृष्टि से उद्दीप्त करते हैं बल्कि निरन्तर अवैध सेक्स क्रिया को बढ़ावा और प्रोत्साहन देते रहते हैं। हमें इन तथ्यों का सामना खुलकर, यथार्थमूलक तथा वस्तुपरक ढंग से करना होगा।

जन प्रचार के कामोद्दीपक साधनों, फिल्मों और यहाँ तक कि वेशभूषा के माध्यम से समाज अधिकाधिक वासनामय होता जा रहा है, और सेक्स कामना की रोक थाम करना अधिकाधिक कठिन होता जा रहा है। अपने उग्रतम रूप में पश्चिम में नारी-मुक्ति का आन्दोलन स्त्रियों तथा पुरुषों दोनों ही के लिए विवाह से पहले तथा विवाह की परिधि के बाहर सेक्स सम्बन्धों की माँग करता है तथा उसका प्रचार करता है। अभी तक पूरब के देशों पर इस उग्रतम रूप में उसका प्रभाव भले ही न पड़ा हो, फिर भी भारत में उसका प्रभाव काफी प्रकट है, विशेष रूप से शहरों की शिक्षित स्त्रियों में, इस रूप में कि उनमें हर मामले में, सेक्स के रूप में भी बराबरी की माँग करने की प्रवृत्ति उभर रही है और खास तौर पर इस रूप में कि वे दोहरे मानदंडों के विरुद्ध बढ़ते हुए विद्रोह का रवैया व्यक्त करने लगी हैं।

इन अभिवृत्तियों को ढालने में औद्योगीकरण, नगरीकरण, संस्कृति के लोकतन्त्रीकरण, धर्म के घटते हुए असर और वैज्ञानिक तथा बुद्धिसंगत कसौटियों तथा रवैयों के प्रति बढ़ते हुए समर्थन के सामूहिक प्रभावों का भी हाथ है। हार्ट (1933 पृष्ठ 421) मोटरकार, सन्तति नियमन, औद्योगीकरण, नगरीकरण और पितृसत्तात्मक विचारधारा के पराभव के प्रासंगिक प्रभाव को स्वीकार करते हुए भी यह विश्वास रखते हैं कि 'इधर हाल में सेक्स व्यवहार के प्रति अभिवृत्तियों में जो परिवर्तन हुए हैं उनका एक मुख्य कारण है धार्मिक नियन्त्रण का छिन्न भिन्न हो जाना और उसके स्थान पर वैज्ञानिक कसौटियों की स्थापना के अधपके प्रयास' (देखिये फोल्सम्, 1948 पृष्ठ 548)।

राइस (1968) के अध्ययन जो अन्य अध्ययनों की तरह ही लेखिका [illegible] अध्ययन में भी यह देखा गया कि लोगों तथा उनके माता पिता की [illegible] का स्तर जितना ही [illegible] है, उनमें स्वयं अपने लिंग तथा दूसरे के

आचरण के मामले में छूट की प्रवृत्ति उतनी ही कम होती है और उसकी अभि-वृत्तियों में रूढ़िवादिता उतनी ही अधिक होती है। उदाहरण के लिए, ज्योति और सुमन की मिसालें इस कारक के प्रभाव को काफी स्पष्ट कर देती हैं। चूँकि सुमन अपना बचपन एक ऐसे पीत कट्टरपंथी परिवार में रही थी जिसकी औरतें अनपढ़ थीं और जिसमें परिवार के प्रमुख की सत्ता प्राय निर्बाध थी—ऐसा परिवार जिसमें परिवार की प्रमुख महिला बहुत भीरु तथा आज्ञाकारी होती है और अपने कर्तव्यों तथा दायित्वों के पालन में व्यस्त तथा जकड़ी हुई रहती है—इसलिए उसके सामाजिक-मानसिक परिवेश ने उसके उपचेतन मन में अपने पिता के प्रति तथा भारतीय नारीत्व के परम्परागत आदर्श के प्रति एक अतार्किक सम्मान का भाव और धर्म के प्रति श्रद्धा का भाव पैदा कर दिया था। अपनी प्रौढ़ता, अपने मानसिक विकास, अपनी उच्च शिक्षा और बाह्य जगत से अपने सम्पर्कों के बावजूद उस पर अपने परिवार की परम्परा गत पृष्ठभूमि का प्रभाव बना रहा।

यह भी देखा गया है कि किसी भी व्यक्ति की अभिवृत्तियों पर इस बात का भी प्रभाव पड़ता है कि उसके परिवार में और विशेष रूप से स्वयं उस व्यक्ति में धर्मपरायणता किस हद तक है। उदाहरण के लिए, यह देखा गया है कि सेक्स तथा विवाह के प्रति धर्मपरायण तथा भक्तिभाव रखनेवाली स्त्री की अभिवृत्तियाँ परम्परा गत और काफी हद तक रूढ़िवादी होती हैं। एक और उदाहरण लीजिए, ज्योति (व्यक्ति अध्ययन संख्या 19) का जन्म तथा पालन-पोषण साधारण साधनों तथा घोर रूढ़िवादी विचारों वाले मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था और वह विवाह, सेक्स तथा नैतिक मानदंडों के मामले में अपने माता पिता के आदर्शों की आज्ञाकारी रही, क्योंकि उसे सामाजिक परम्परा के बंधनों को तोड़ने में डर लगता था। उसके उदाहरण से इस मूल सत्य की पुष्टि होती है कि मानसिक तथा बौद्धिक विकास के बावजूद अभि-वृत्तियों के मनोविज्ञान का अध्ययन हमेशा पूर्ववर्ती जीवन के प्रसंग में किया जाना चाहिए।

यह देखा गया कि उन श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियाँ अधिक प्रगतिशील तथा पाश्चात्य ढंग की हो गयी थीं जिनका सम्बन्ध आधुनिक तथा पाश्चात्य ढंग के रहन सहन वाले परिवारों से था और जिन्होंने कानवेंट स्कूलों अथवा पब्लिक स्कूलों में शिक्षा पायी थी और जिनके सम्पर्क में भी ऐसी ही पृष्ठभूमियों के आनेवाले लोग थे, जैसे पमिता और सोना, या फिर घोर कट्टरपंथी तथा रूढ़िवादी परिवारों से सम्बन्ध रखनेवाली स्त्रियों की, जैसे समना तथा ललिता। समना और ललिता का पालन पोषण बहुत ही रूढ़िवादी तथा जकड़े हुए वातावरण में, जहाँ कहीं आने जाने की प्राय कोई भी स्वतन्त्रता नहीं थी, और बहुत बड़ी हद तक कठोर, नीरस तथा निरंकुश पारिवारिक परिवेश में हुआ था। और जब ये दोनों स्त्रियाँ अपने माता पिता की निगरानी से दूर हो गयीं और आर्थिक रूप से स्वतन्त्र हो गयीं तो परिस्थितिवश वे अत्यन्त प्रगतिशील तथा उन्नत सहकर्मियों के समूह में फँस गयीं जो उनका सम्पर्क समूह

था, जिसका परिणाम यह हुआ कि आवश्यकता से अधिक प्रतिबन्धित तथा कठोर वातावरण में पालन-पोषण के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में वे सर्वथा भिन्न दृष्टिकोण अपनाने लगीं तथा उसे अपने अन्दर विकसित करने लगीं। वे हर उस चीज का विरोध करने लगीं जो प्रथा तथा परम्परा के अनुकूल हो और लगभग हर उस चीज का अनुमोदन करने लगीं जो प्रथा के विरुद्ध हो। इस प्रकार की स्त्रियों की अभिवृत्तियाँ इस दृष्टि से प्रतिक्रियामूलक तथा परम्परा विरोधी होती हैं कि वे हर परम्परागत चीज को बुरा और हर उस चीज को जो परम्परा के विरुद्ध हो, अच्छा समझती हैं।

यह भी देखा गया कि कट्टरपंथी तथा परम्पराबद्ध परिवार में पालन-पोषण की पृष्ठभूमि में यदि बच्चों को बहुत अधिक लाड़-प्यार मिले और कहीं आने-जाने की छूट और अन्य स्वतन्त्रताएँ न मिलने के बावजूद यदि वे सुखी जीवन व्यतीत करें तो उनमें परम्परा का पालन करने की ओर कट्टरपंथी अभिवृत्तियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। ऐसी अभिवृत्तियाँ उन स्त्रियों में भी विकसित होते देखी गयी हैं जो बहुत उन्नत और पाश्चात्य ढंग के रहन-सहन वाले परिवारों की थीं और जिन्हें हर प्रकार की छूट और स्वतन्त्रता तो मिली थी पर अपने माता-पिता से कोई प्यार या मार्गदर्शन नहीं मिला था। कुछ अरुचिकर तथा विफलतामूलक अनुभवों के बाद प्रतिक्रिया के रूप में और अन्ततः बिल्कुल निराश होकर वे विभिन्न समस्याओं के बारे में परम्परागत मान्यताओं तथा विचारों में विश्वास रखने लगीं।

विभिन्न व्यक्तियों से सम्बन्धित आधार सामग्री और इस अध्ययन में प्रस्तुत की गयी आधार-सामग्री के गुणात्मक विश्लेषण से इस सैद्धान्तिक प्रस्थापना के पक्ष में प्रबल संकेत मिलते हैं कि माता-पिता जितने ही कठोर तथा रूढ़िबद्ध होंगे और उनमें प्यार तथा सद्भावना की जितनी ही कमी होगी उतनी ही अधिक इस बात की सम्भावना होगी कि बच्चों की अभिवृत्तियाँ नयी सामाजिक शक्तियों से प्रभावित होकर अपने माता-पिता की अभिवृत्तियों से अलग दिशा अपनायें। इस प्रस्थापना को राइस (1908) द्वारा व्यक्त किये गये मतों का समर्थन प्राप्त है, जो प्रस्तुत अध्ययन के प्रमाणों के मतों से बहुत मिलते-जुलते हैं, हालाँकि वे एक सर्वथा भिन्न संस्कृति के लोगों के अध्ययन पर आधारित हैं। अभिवृत्ति परिवर्तन के विषमता सिद्धान्त के अनुसार "अत्यधिक विषमता से अभिवृत्ति में अत्यधिक परिवर्तन होता है, यदि विषमता को कम करने के अन्य साधन सापेक्ष रूप से उपलब्ध न हों"। इस सिद्धान्त के अनुसार, उन स्त्रियों में जिनको ऊपर बतायी गयी स्थिति का सामना करना पड़ रहा था, अत्यधिक अभिवृत्ति-परिवर्तन देखा गया। इसका मुख्य कारण यह था कि इस प्रकार की स्थिति ने बहुत अधिक विषमता उत्पन्न हुई और चूँकि इस विषमता को कम करने का प्रायः कोई भी दूसरा साधन प्रदान नहीं किया, इसलिए विषमता से उत्पन्न होनेवाले तनाव ने कम होने की कोशिश की और इसने उनकी अभिवृत्तियों में स्पष्ट परिवर्तन के रूप में व्यक्त हुआ।

आधार सामग्री ने यह भी संकेत मिलता है कि माता-पिता जितने ही उदार,

नमनीय और उन्मुक्त विचारोवाले होगे और अपने बच्चो के प्रति उनका व्यवहार जितना प्यार भरा, सद्भावनापूण और अच्छा होगा, उतनी ही अधिक इस बात की सम्भावना रहेगी कि सामाजिक शक्तिया उनके अन्दर अपने माता पिता की अभिवृत्तियो को ही पुष्ट करेंगी। उदाहरण के लिए, जो माता पिता 'बहुत छूट देनेवाले' और प्रेममय होग उनके बच्चो मे भी इस बात की सम्भावना अधिक होगी कि वे 'बहुत अधिक छूट देनेवाले' हो। इन निष्कर्षों की पुष्टि राइस (1968) द्वारा व्यक्त किये गये इसी प्रकार के मता से होती है, और उन मतो के सवथा भिन्न सस्कृति के प्रसग मे व्यक्त किय जान से प्रस्तुत अध्ययन की लेखिका के निष्कर्षों की और अधिक पुष्टि होती है। इस समानता स निरन्तरता बनाये रखने की उस मनोवैज्ञानिक घटना की साथकता की पुष्टि होती है जिसकी प्रस्थापना हाइडर, ग्रासगुड तथा न्यूकोम जसे निरन्तरता के सिद्धान्तवेत्ताओ ने की है।

अनुज्ञात्मकता न केवल इस बात की माप है कि कोई व्यक्ति अपने लिए तथा अन्य समलिंगी व्यक्तियो के लिए क्या स्वीकार करेगा, बल्कि इस बात की भी कि वह भिन्नलिंगी व्यक्तियो के लिए किस प्रकार के व्यवहार की अनुमति देने को तयार है। प्रस्तुत अध्ययन मे यह देखा गया कि स्त्री की शिक्षा, उसका व्यवसाय और इसस भी बढकर उसकी आर्थिक स्वतन्त्रता, यदि उसके परिवार से उसकी आर्थिक स्वतन्त्रता को बढावा मिलता हो, उसकी अभिवृत्तियो म कुछ हद तक अनुज्ञात्मकता को भी बढावा देती है। अनज्ञात्मकता का समर्थन करनेवाली स्त्रियो ने स्वीकार किया कि आर्थिक स्वतन्त्रता न उनमे विचार तथा आचरण की स्वतन्त्रता भी पदा की है और उन्हे स्वय अपने को तथा अन्य लोगो को भी ऐसे व्यक्तियो के रूप मे देखने का अवसर दिया है जिन्हे अपनी क्षमताओ की पूणतम अभिव्यक्ति का पूरा अधिकार है। ये स्त्रियाँ अपने को पुरुषो के बराबर समझती थी और अपने लिए व्यक्तियो के रूप में मान्यता प्राप्त करने का प्रयत्न करती थी। वे महत्त्वाकाक्षी थी और अपने उद्देश्यो को प्राप्त करने के लिए प्रयास करने को तत्पर थी। उन्होने यह भी स्वीकार किया कि उनकी शिक्षा नौकरी या आर्थिक स्वाधीनता और वयक्तिक प्रतिष्ठा ने उन्हे अधिक अनुज्ञात्मक बना दिया था।

अभिवृत्ति मे अनुज्ञात्मकता का निर्धारण इस बात से भी होता है कि कोई भ व्यक्ति जिस वातावरण तथा परिवेश म रहता तथा घूमता फिरता है उसम कितनी अनुज्ञात्मकता है, विशेष रूप से इस बात स कि उसके समसमूह के सदस्यो की, और उनमे भी बढकर उन लोगो की अभिवृत्तिया क्या हैं जिन्हें वह अपना घनिष्ठतम मित्र समझता है। जिन शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो का अध्ययन किया गया है उनके बयानो प्रत्युत्तरो तथा कथनो स यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जो विचार उन्होंने व्यक्त किये वे उनके घनिष्ठ मित्रों, सगे-सम्बन्धियो या उनके सन्दभ-समूह के अन्य सदस्यो के विचारों से बहुत-कुछ मिलते जुलते थे। इस प्रकार इस अध्ययन की आधार-सामग्री से विकसित होनेवाली एक और सैद्धान्तिक प्रस्थापना यह है कि अनुज्ञात्मकता के प्रति

किसी की अभिवृत्ति इस बात से प्रभावित तथा सम्बंधित होती है कि उसके सन्दर्भ-समूह में प्रत्यक्ष अनुज्ञात्मकता कितनी है। इस सैद्धान्तिक प्रस्थापना की पुष्टि वाल्श के अध्ययन (1970) से भी होती है यद्यपि उसका सम्बन्ध छात्रों में अनुज्ञात्मकता से है। अपने अध्ययन के बारे में वाल्श लिखते हैं

> हमारी तीसरी प्राक्कल्पना को—कि छात्रों की अनुज्ञात्मकता उनके सन्दर्भ समूह की प्रत्यक्ष अनुज्ञात्मकता के अनुसार बदलती जायगी—हमारी आधार सामग्री का समर्थन प्राप्त था। हमने देखा कि घनिष्ठ मित्रों की प्रत्यक्ष अनुज्ञात्मकता का (चाहे वह उच्च हो या निम्न) छात्रों की अनुज्ञात्मकता के साथ गहरा सम्बन्ध था। हमने देखा कि लड़कों या लड़कियों को यह विश्वास हो गया कि उनका अपना चुना हुआ सबसे महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ समूह पूर्ण सेक्स-सम्बन्धों का अनुमोदन करेगा तो 87% लड़कों और 71% लड़कियों ने विवाह से पहले पूर्ण सेक्स-सम्बन्धों का अनुमोदन कर दिया (वाल्श, 1970, पृष्ठ 1397-ए)।

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि जिस स्त्री की अभिवृत्ति जितनी ही अधिक अनुज्ञात्मक होती है, अपनी अभिवृत्ति में भी उसके उतना ही अधिक समतावादी होने की सम्भावना रहती है और वह सेक्स सम्बन्धी नैतिकता के दोहरे मानदंडों को चुनौती देगी। जो स्त्रियाँ स्वतन्त्र सेक्स जीवन का अनुमोदन करती हैं या उस पर आपत्ति नहीं करतीं, वे समतावाद की भी पैरवी करती हैं।

## वैयक्तिक उपादान

संस्कृति के अप्रत्यक्ष पक्ष में वे मनोगत तथा वैयक्तिक उपादान होते हैं जिनकी विवेचना नीचे की गयी है।

संवेगात्मक अनुक्रिया की आवश्यकता—अभिवृत्तियों को प्रभावित करनेवाला सबसे महत्त्वपूर्ण मनोगत उपादान 'मन की आवश्यकताओं' का उपादान है। शायद मनुष्य की सबसे महत्त्वपूर्ण और सर्वाधिक सतत क्रियाशील मन की आवश्यकता दूसरे व्यक्तियों की संवेगात्मक अनुक्रिया की आवश्यकता है। आधुनिक नगरीय परिवेश में इस आवश्यकता के और भी अधिक महत्त्व का उल्लेख करते हुए लिंटन लिखते हैं

> आधुनिक नगर में किसी व्यक्ति के लिए यह बिलकुल सम्भव होता है कि वह बहुत बड़ी संख्या में दूसरे व्यक्तियों के साथ औपचारिक ढंग से तथा सांस्कृतिक दृष्टि से सुस्थापित मानदंडों के अनुसार परस्पर आचरण करे तथा उनसे आवश्यक सेवाएँ प्राप्त कर ले और फिर भी उन लोगों में कोई संवेगात्मक अनुक्रिया जाग्रत न हो। ऐसी परिस्थितियों में उसके मन की अनुक्रिया की आवश्यकता पूरी नहीं हो पाती और वह अकेलेपन तथा पृथकता की भावनाओं का शिकार हो जाता है

जो लगभग उतनी ही उम्र होती हैं जस कोई दूसरा मौजूद न हो (लिटन, 1945)।

दिल्ली जसे बडे शहरो मे रहनेवाली शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया के बारे मे यह बात और भी अधिक सच देखी गयी है। व भीड मे भी अकेली महसूस करती हैं और बहुत मे लोगो से जान पहचान हाने के बावजूद उदास रहती है। अनुक्रिया की इसी आवश्यकता को पूरा करने के लिए नय मित्र बनाने की खोज म वे क्लबा और भीड भाड की दूसरी जगहो म जाती रहती है। और जीवन साथी ढूढने का यह तरीका वास्तव मे सवेगात्मक अनुक्रिया की इस बहुत बडी आवश्यकता का सब कुछ दाँव पर लगाकर पूरा करने की कोशिश हाती है। उनकी अभिवत्तिया इस आवश्यकता से प्रभावित होती ह।

**सुरक्षा की आवश्यकता**—दूसरी आग इतनी ही व्यापक आवश्यकता है सुरक्षा की। अन्य आवश्यकताओ के अतिरिक्त इसी आवश्यकता के कारण, शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया नौकरी करना चाहती हैं और जीविकोपाजन का अनुभव तथा प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहती हैं ताकि वे आर्थिक दृष्टि म स्वतत्र बन सकें और आवश्यकता पडने पर अपने पावा पर खडी रह सकें। इस आवश्यकता का जिस एक और पक्ष पर प्रभाव पडता है वह है विवाह के प्रति उनकी अभिवत्ति। व्यक्ति अध्ययनो के गुणात्मक विश्लेषण से पता चलता है कि अचेतन रूप म वे इसीलिए विवाह करके सुचारु ढग से अपना घर बसा लेना चाहती हैं ताकि वे अपने पति, घर बार और बच्चा के साथ शारीरिक, सवेगात्मक तथा आर्थिक दृष्टि स अधिक सुरक्षित अनुभव करें।

**अनुभव की नूतनता की आवश्यकता**—मन की तीसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता ह अनुभव की नूतनता की आवश्यकता। शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो म इसकी अभिव्यक्ति उकताहट की परिचित घटना के रूप में हाती है जिसके फलस्वरूप वे नाना प्रकार के प्रयोग करती है जस प्रेम विवाह, प्रणय याचन (कोर्टशिप), प्रेमियो से मेल जाल या आना जाना करना, नय मित्र बनाना विवाह की परिधि के बाहर मित्रताएँ बढाना, विवाह से पहले और विवाह की परिधि के बाहर सक्स सम्बध स्थापित करना, और मन बहलाव तथा मनोरजन के लिए नये उपाय ढूढना। इस बढती हुई आवश्यकता न भी, जिसे शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया सचेतन तथा अचेतन दोनो ही रूपो मे अब पहले की अपेक्षा अधिक अनुभव करने लगी हैं प्रेम, सेक्स तथा विवाह के प्रति उनकी अभिवत्तियो को बदल दिया है।

**मान्यता प्राप्त करने की आवश्यकता**—श्रमजीवी स्त्रिया मे मान्यता प्राप्त करने और उपलब्धि की आवश्यकता बहुत प्रबल ह और इसने उनके व्यवहार तथा उनकी अभिवृत्तियो को बदल दिया है।

असामान्य व्यवहार की मनोगतियो का अध्ययन करने से पता चलता है कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया का व्यवहार जिस ढग का हाता है वह कुछ हद तक तो उनकी अब तक की पुरुषो की आधीनता और उनके हाथो दुर्व्यवहार सहन करने के

विरुद्ध प्रतिक्रिया होती है, और साथ ही वह अपने हीन भाव को दूर करने का भी एक उपाय होता है। उसे दूर करने की कोशिश में अचेतन मन के यन्त्र सक्रिय हो उठते हैं और उन्हें इस विशिष्ट ढंग का व्यवहार करने पर विवश कर देते हैं और फिर यह व्यवहार उनकी अभिवृत्तियों को बदल देता है।

वैयक्तिक अनुभव— व्यक्ति-अध्ययन के विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उन दो श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियों में क्यों और किस प्रकार अन्तर पाया गया जिनकी शिक्षा-योग्यताएँ समान थीं, नौकरियाँ एक जैसी थीं, वेतन बराबर था और जिनके नौकरी करने के कारण भी एक ही जैसे थे। यह देखा गया कि ऐसा होने का कारण यह था कि उनके पिछले तथा वर्तमान वैयक्तिक अनुभवों में अन्तर था जो व्यक्ति की अभिवृत्तियों को काफी बड़ी हद तक प्रभावित करता है। वर्तमान वैयक्तिक अनुभवों से अभिप्राय उन अनुभवों से है जो कोई व्यक्ति निजी कारकों के सम्बन्ध में प्राप्त करता है, जैसे उसका शारीरिक रूप तथा स्वभाव। यह देखा गया कि किसी भी व्यक्ति का शारीरिक रूप बहुत प्रभावशाली वैयक्तिक उपादान होता है, जो प्रेम, विवाह तथा सेक्स के प्रति उसके सामान्य दृष्टिकोण तथा अभिवृत्ति को प्रभावित करता है। लेखिका ने अपने 'पात्रों' से साक्षात्कार करते समय यह देखा कि जिनमें शारीरिक आकर्षण था, वे बहुत प्रतिभावान, आशावान तथा प्रसन्नचित्त थीं जबकि जिनमें कम आकर्षण था उनमें अपने पूरे जीवन के प्रति उत्साह भी कम था। यह इस पर निर्भर है कि दूसरे लोग शारीरिक रूप को किस दृष्टि से देखते हैं क्योंकि अपने शारीरिक आकर्षण के अभाव के कारण दूसरों की उपेक्षा का पात्र बनने का अनुभव हर व्यक्ति के लिए बहुत निराशाजनक अनुभव होता है और जीवन की आधारभूत समस्याओं के प्रति उस व्यक्ति की अभिवृत्ति को निश्चित रूप से बदल देता है।

परन्तु किसी व्यक्ति के मतों, विचारों तथा अभिवृत्तियों को ढालने और उनमें भी बदल कर उन्हें बदलने में पिछले वैयक्तिक अनुभवों का प्रभाव विशेषतः महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि अभिवृत्तियाँ पिछले अनुभवों से निर्धारित होनेवाली चीजों में विशेष रूप से दृढ़ होती हैं। अपने माता पिता के घर के पिछले अनुभवों के अतिरिक्त उन संस्थाओं में प्राप्त किये गये अनुभवों का भी महत्त्व होता है जहाँ कोई व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करता है। इन श्रमजीवी स्त्रियों के व्यक्ति अध्ययनों में यह देखा गया कि जिन स्त्रियों ने कानवेंट स्कूलों या अन्य अंग्रेजी स्कूलों में शिक्षा पायी थी उनके अनुभव उन स्त्रियों से भिन्न थे जिन्होंने भारतीय स्कूलों में शिक्षा प्राप्त की थी। देखा गया कि इस बात का भी महत्त्व होता है कि कोई व्यक्ति पढ़ाई में कितना अच्छा है, और यह कि अध्यापक तथा छात्र उसे पसन्द करते हैं या नहीं और स्कूल तथा कालेज में उस निपुणता के किस प्रकार के अनुभव हुए।

यह देखा गया कि किसी भी व्यक्ति के पूरे दृष्टिकोण पर और उसके पूरे व्यक्तित्व पर प्रेम के अनुभव का—माता पिता, भाई-बहनों, सगे सम्बन्धियों, सहपाठियों तथा मित्रों के प्रेम का—बहुत प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए किसी का

प्रेम का अनुभव हुआ है या नहीं और यह अनुभव संतोषप्रद, उद्दीपक तथा स्थायी था कि नहीं ये ऐसी बातें हैं जिनके बारे में देखा गया है कि इनका उन लोगों की भावनाओं तथा विचारों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। न केवल स्वयं उनके प्रेम के अनुभव बल्कि उनके निकटवर्ती प्रियजनों के अनुभव भी उनकी अभिवृत्तियों को प्रभावित करते हैं। प्रेम, विवाह तथा सेक्स के प्रति उनकी अभिवृत्तियों में यह प्रभाव विशेष रूप से देखा गया।

विभिन्न व्यक्तियों से सम्बन्धित आधार सामग्री के—इस अध्ययन में प्रस्तुत किये गए व्यक्ति अध्ययनों के—गुणात्मक विश्लेषण से यही निष्कर्ष निकलता है कि जीवन के अनुभवों के साथ अभिवृत्तियाँ भी बदलती रहती हैं। यदि किसी के जीवन में कोई आकस्मिक तथा महत्त्वपूर्ण घटना हो जाती है, या उसे मानव-सम्बन्धों में कुछ कटु अनुभव होते हैं तो उसके बाद भी उसकी अभिवृत्तियाँ बदलने लगती हैं। इस प्रसंग में भ्रात ने कहा है

> मनोरोग-सम्बन्धी विचारों से प्रेरित कुछ मनोविज्ञानवेत्ताओं ने दावा किया है कि प्रौढ़ सामाजिक अभिवृत्तियाँ मूलतः पूर्ववर्ती उत्पत्ति की निजी संवेगात्मक समस्याओं की परोक्ष अभिव्यक्ति होती हैं। उन्होंने इस सामान्य प्रस्थापना को अपना लिया है कि बचपन के सर्वप्रथम अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्ध उन दीर्घकालीन चरित्र-सम्बन्धी स्ववृत्तियों की स्थापना करते हैं जो सामाजिक समस्याओं के प्रति प्रौढ़ व्यक्ति के विचारों की दिशा को नियन्त्रित करती हैं (भ्रात, 1952, पृष्ठ 607)।

मनुष्य अपने जीवन में जैसे जैसे अनुभव प्राप्त करता जाता है और उसमें प्रौढ़ता आती जाती है वैसे-वैसे उसकी अभिवृत्तियाँ भी बदलती जाती हैं। वे उसके जीवन में होनेवाले अन्य सामाजिक आर्थिक परिवर्तनों के साथ भी बदलती रहती हैं। उदाहरण के लिए, प्रौढ़ता तथा जीवन के अनुभवों के साथ कंचन, ज्योति तथा वासना जैसी श्रमजीवी स्त्रियों के जीवन में प्रेम की संकल्पना बदलती गयी है और साक्षात्कार के समय वे प्रेम, विवाह तथा सेक्स के बारे में जो कुछ अनुभव करती थीं, वह स्वयं उनके बयान के अनुसार, उससे बहुत भिन्न और बदला हुआ था जो वे उस समय अनुभव करती थीं जब वे किशोरवयस्क थीं या जब वे आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र नहीं हुई थीं और उन्हें जीवन का बहुत अनुभव नहीं हुआ था।

आइसेंक के दूसरे अभिवृत्ति आयाम "आमूल परिवर्तनवाद-रूढ़िवाद" (1954) का बहुत बड़ा अंश उन प्रभावों के प्रति, जो किसी व्यक्ति विशेष ने अपने जीवन में अनुभव किये हैं, उसकी प्रतिक्रियाओं का है। यह आयाम कई बातों में शोफील्ड की 'शोध कार्य' (1968) के "अनुज्ञात्मक नियामक" आयाम के समान है और ऐसा लगता है कि शोफील्ड का अति अनुज्ञात्मक किशोर आइसेंक के आमूल-परिवर्तनवादी किशोर की तरह है तथा शोफील्ड का अति दृढ़ नियामक किशोर घोर रूढ़िवादी होगा सिवाय इसके कि शोफील्ड का किशोर जिन विषयों पर अपना मत व्यक्त करता है उनका सम्बन्ध मुख्यतः नैतिकता से है जबकि आइसेंक का किशोर जिन विषयों पर मत व्यक्त करता है उनका सम्बन्ध

राजनीति से है (देखिये शोफील्ड, 1968, पृष्ठ 194-195)। आइसेंक के सिद्धान्त के अनुसार 'आमूल परिवर्तनवाद रूढ़िवाद के आयाम की परिधि में आनेवाले विषयों पर किसी व्यक्ति के जो मत होते हैं उनका निर्धारण उन समस्त प्रभावों से होता है जिन्हें वह व्यक्ति अपने पूरे जीवन के दौरान अनुभव करता है जिनमें भाषा के माध्यम से सीखने का प्रभाव भी शामिल है।

अभिवृत्तियों के क्षेत्र में जो शोध-कार्य होता है उसकी जड़ें 'नियततत्ववाद' में होती हैं। नियततत्ववाद की मुख्य कल्पना यह है कि अतीत के सामाजिक तथा मानसिक अनुभव बहुत स्पष्ट रूप से इस बात का निर्धारण करते हैं कि भविष्य में लोग किस ढंग से अनुक्रिया करेंगे, किस ढंग से सोचेंगे और उनकी प्रतिक्रिया किस प्रकार की होगी।

अतीत के अनुभवों में परिवार के सदस्यों के साथ, अध्यापकों के साथ और स्कूल, कालेज तथा काम करने की जगह में समकक्षी लोगों के साथ विविध प्रकार के अनुभव शामिल रहते हैं। इस प्रकार के अनुभव कुछ मूल्यों तथा पूर्वग्रहों के अर्जन को प्रभावित करते हैं (देखिये लेटज तथा स्नाइडर 1969 पृष्ठ 209)।

जीवन की महत्वपूर्ण समस्याओं के बारे में प्रत्येक व्यक्ति की अभिवृत्तियों की प्रतिक्रिया उस परिवेश तथा समाज पर होती है जिसमें वह व्यक्ति रहता है और उस समाज तथा परिवेश की प्रतिक्रिया उसकी अभिवृत्तियों पर होती है। यह दोतरफा प्रक्रिया होती है जिसमें सामाजिक तथा वैयक्तिक कारकों की परस्पर प्रतिक्रिया तथा अन्त-प्रतिक्रिया के फलस्वरूप ऐसे सामाजिक तथा अभिवृत्ति सम्बन्धी परिवर्तन होते हैं जिनका बहुत घनिष्ठ पारस्परिक सम्बन्ध होता है और जो एक दूसरे को प्रभावित करते हैं।

## बदलती हुई अभिवृत्तियाँ

*प्रेम, विवाह और सेक्स के प्रति—तीन ऐसे तन्त्र जिनका गति विधान अलग* होते हुए भी वे अनिवार्य रूप से परस्पर सम्बन्धित रहते हैं—अभिवृत्तियाँ एक दूसरे में इतनी घुली मिली होती हैं कि दूसरे तन्त्रों को ध्यान में रखे बिना किसी एक के बारे में सोचना और महसूस करना प्रायः असम्भव होता है। उदाहरण के लिए, प्रेम सेक्स का अंग है और सेक्स प्रेम का अंग है और ये दोनों मिलकर विवाह का अंग हैं। परन्तु विश्लेषण के काम के लिए इन तीनों पर अलग अलग विचार किया गया है तथा अलग-अलग उनकी विवेचना की गयी है। पूरी सावधानी बरतने के बावजूद यह हो सकता है कि अलग-अलग शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत किये गये इन तीन तन्त्रों से सम्बन्धित अभिवृत्तियाँ कहीं-कहीं परस्परव्यापी हो गयी हों और एक-दूसरे में मिल गयी हों।

### प्रेम से सम्बन्धित अभिवृत्तियाँ

जैसा कि डे (1959) ने बताया है, इस बात के संकेत मिलते हैं कि ब्राह्मणों तथा बौद्धों के लोकप्रिय साहित्य में भी प्रेम एक महत्त्वपूर्ण विषय रहा है। महाकाव्यों के साहित्य में अधिकांश घटनामूलक कथा-प्रसंगों में प्रेम एक कथानक के रूप में पाया

त्री, शकुन्तला या दमयन्ती के कथा प्रसगो मे, और राम तथा सीता
जाता है, जैसे सुविदित महाकाव्य का मुख्य विषय है।
का प्रेम तो एक महद् साहित्य के गीतो म "शायद ही कभी प्रेम का उल्लेख किसी पार
प्राचीन हि मे किया गया हो बल्कि उसे हमेशा एक निश्चित सवेदन अथवा भावना
लौकिक वस्तु के रूप म आकार तथा उसके प्रत्यक्ष आकषण के रूप म प्रस्तुत किया गया
के रूप मे उसके शरीर तथा आत्मा का चित्रण एक साथ करता है यद्यपि अपन आवश
ह। कवि हमेशा शर कारण वह शरीर पर अधिक ध्यान देता है, और प्रेम का चित्रण
की यथाथनिष्ठता क्षण आत्म-तुष्टि के रूप म अधिक होता है। परन्तु उसके शरीर को
आत्म त्याग की अपनाई तुच्छ अथवा नि दनीय बात नही है (डे, 1959, पृष्ठ 36 37)।
प्राथमिकता दन म था के परवर्ती काव्यो म प्रेम क्रीडाओ का विस्तत वणन मिलता है
सस्कृत मे शृगार रसादि कवियो के यहाँ, और उनम नारी के रूप लावण्य का अत्यन्त
जस नारवि, माघ रन की प्रवत्ति पायी जाती है। एक आवेश के रूप मे उनमे प्रेम का
कामोद्दीपक वणन कण आशिक रूप से नारी सौ दय की भारतीय सकल्पना तथा आदश
मूलत यथाथ निरूप। इन काव्यो से बहुत घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित वे काव्य हैं जो
का व्यक्त करता है यन पर ही आधारित हैं। स्त्री के हृदय पर भी प्रेम का वैसा ही
कामविज्ञान के अध्य पुरुष के हृदय पर परन्तु विभिन्न प्रकार के पुरुषो तथा स्त्रियो
प्रभाव होता है जैसा अलग ढग का होता है। सस्कृत की शृगार रस की कविता अत्यन्त
पर यह प्रभाव अलग खुले कामोद्दीपन से लेकर कामोद्दीपक रहस्यवाद तक प्रेम के
समृद्ध है और उसके चित्रण किया जाता है (देखिए डे, 1959)।
*विभिन्न पहलुओ भारतीय शास्त्रीय साहित्य की शृगार रस की काव्य रचनाओ की*
प्राचान भाम से लेकर कामोद्दीपक प्रेम तक प्रेम की विभिन्न परिवतनशील
तरह जिनम दैवी स्त्रियो तथा सकल्पनाओ का चित्रण किया गया है भारत की शिक्षित
मनोदशाओ, अभिप्रायो की अभिवक्तिया भी उतनी ही विविध तथा परिवतनशील हैं,
हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियो 'रूमानी प्रेम और 'सवस्व बलिदान कर दन तथा सबस्व द
जिसम पहले गुद्ध र आग्रह किया जाता था और दस वष बाद सेक्स प्रेम, उद्देश्य
डालने वाले प्रेम पात प्रेम और हानि-लाभ का लेखा जोखा करके किये जानवाल
मूलक प्रेम, 'तकसगत दिया जाने लगा।
प्रेम' पर अधिक जो प्रम के प्रति स्त्रियो की अभिवक्तियो मे निश्चित परिवतन का
इस बात से ऐसी स्त्रियो की सख्या अब घटती जा रही है जो एक ही सच्चे
सकेत मिलता है कि विश्वास रखती हो और उन स्त्रियो की सख्या बढती जा रही है
प्रेम के आदश म अधिक पुरुष स प्रेम करने की वधता मे विश्वास करने लगी हैं।
जो स्त्री के एक से उनकी अभिवक्तिया मे एक और परिवतन उनके उन प्रत्युत्तरो म
प्रेम के प्रति इस प्रश्न क जवाब म दिये थ कि सुखी रहने के लिए उन्ह किस
देखा गया जो उन्हो क आवश्यकता है। जबकि दस वष पहले 'प्रेम और 'अच्छे पति
चीज की सबसे अधि पर अधिक जोर दिया जाता था, दस वष बाद 'धन दौलत और
तथा अच्छे घर-बार

'ख्याति' पर अधिक ज़ोर दिया जाने लगा, हालांकि 'प्रेम' और 'अच्छा पति तथा अच्छा परिवार' अब भी उनकी वांछित आवश्यकताएँ हैं। यह देखा गया है कि उनके मूल्य बदल गये हैं और कम से कम सचेतन रूप में, वे स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों में प्रेम को कम महत्त्व देने लगी हैं।

बहुत अच्छी हैसियत वाले या बहुत धनवान पति और बहुत अच्छे घर-बार के लिए उनकी यह नयी लालसा और इसके साथ ही मान्यता तथा ख्याति प्राप्त करने की उनकी उत्कट इच्छा दस वर्ष बाद कहीं अधिक प्रबल रूप में पायी गयी, विशेष रूप से उन स्त्रियों में जो दिल्ली में रहती तथा काम करती थीं। काफ़ी हद तक यह अभाव-पूर्ति की भी अभिव्यक्ति हो सकती है—जो अचेतन मन की एक मानसिक घटना होती है। बड़े महानगरों के अवैयक्तिक तथा व्यक्ति निरपेक्ष वातावरण में मनुष्य में सबसे अलग हो जाने तथा उपेक्षित होने और सच्चे प्रेम तथा स्नेह से सर्वथा वंचित रहने की भावना उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है। अपने जीवन के इस बहुत बड़े अभाव को पूरा करने के लिए शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियां, प्रायः विक्षिप्तों की तरह, क्षणिक तथा सतही सम्बन्धों के पीछे भागती हैं, और यह सोचकर 'धन-दौलत तथा ख्याति' के लिए लालायित रहती हैं कि यदि उन्हें धन दौलत और ख्याति मिल गयी तो उन्हें दूसरों का ध्यान, उनकी सराहना, उनकी देखभाल तथा उनका प्रेम भी प्राप्त हो सकेगा। वास्तव में पहले की अपेक्षा अब वे जिस चीज़ की आवश्यकता अनुभव करती हैं, अचेतन रूप से ही सही, वह है 'प्रेम', केवल उसकी अभिव्यक्ति का रूप बदल गया है, और इसके साथ ही प्रेम के प्रति उनकी अभिवृत्ति भी भाव-प्रधान रहने के बजाय अधिक हानि लाभ का लेखा-जोखा करने की तथा बौद्धिक हो गयी है। इस परिवर्तन के साथ प्रेम के प्रति उनकी अभिवृत्ति अधिक स्वार्थपूर्ण तथा अहंकेन्द्रित हो गयी है, और उसमें किसी पर अपना प्रेम न्यौछावर करने की अपेक्षा उसका प्रेम प्राप्त करने पर और 'सर्वस्व बलिदान कर देनेवाला' और 'सब कुछ लुटा देनेवाला' प्रेम प्रदान करने की अपेक्षा प्रेम में निजी सुविधाएँ तथा अनुकम्पाएँ प्राप्त करने पर अधिक या कम से कम समान बल दिया जाने लगा है। परन्तु, प्रेम अब भी उनके लिए एक अत्यन्त मूल्यवान और अत्यन्त वांछित आवश्यकता है, हालांकि उनके लिए उसका अर्थ और उसकी अभिव्यक्ति का रूप बदल चुका है।

लेखिका ने यह देखा कि सबसे के लिए उनकी अनिरंजित या या वह नि उन्मादियों जैसी लालसा भी काफ़ी हद तक स्थायी तथा 'सम्पूर्ण प्रेम' के लिए उनकी अनिवृद्ध लालसा की ही एक अभिव्यक्ति थी। फोलसम ने बताया है, "अधिकांश नारी जो चीज़ चाहती हैं वह केवल सेक्स नहीं होती, बल्कि सम्पूर्ण प्रेम होती है, जिसमें रोमांस की बहुत बड़ी भूमिका रहती है। वे प्रेम का स्थायित्व तथा सुरक्षा भी चाहती हैं। इस ही जीवन-साथी के साथ स्थायी प्रेम की वास्तविक आवश्यकता अब पहले कभी की अपेक्षा कहीं अधिक है" (फोलसम, 1945, पृष्ठ 567)।

## विवाह के प्रति अभिवृत्तियाँ

अब अधिकाधिक शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ इस परम्परागत मध्यमवर्गीय विचार को त्यागती जा रही हैं कि स्त्री की एकमात्र जीवन-वृत्ति उसका परिवार होता है। यद्यपि अधिकांश श्रमजीवी स्त्रियाँ अब भी नि सकोच भाव से विवाह तथा परिवार की इच्छा करती हैं, परन्तु दस वर्ष पहले की तुलना मे आज कही अधिक स्त्रियाँ ऐसी हैं जिनम आर्थिक दृष्टि से स्वत त्र होने, एक व्यक्ति क रूप मे मान्यता पाने और केवल पारिवारिक जीवन के बजाय किसी व्यवसाय अथवा रोजी के काम मे उपयोगिता का आभास अनुभव करने की इच्छा बनी रहती है, और अब उनम से अधिकाश यह नही सोचती कि विवाह और जीवनवृत्ति म कोई विरोध है। लेखिका ने अपने अध्ययन विवाह और भारत की श्रमजीवी स्त्रियाँ (कपूर, 1970) म यह देखा कि सबसे अधिक प्रतिशत अनुपात उन स्त्रियो का था जो विवाह के साथ ही कोई नौकरी भी करते रहना अधिक पसन्द करती हैं।

फिर भी अधिकाश श्रमजीवी स्त्रिया के लिए विवाह अब भी, पहले से भी अधिक, निश्चित रूप से एक अत्यन्त वाछित लक्ष्य है और बहुधा तो ऐसा भी होता है कि उसे जीवनवृत्ति के रूप मे काम करने की अपेक्षा प्राथमिकता दी जाती है। प्रस्तुत अध्ययन म एकत्रित की गयी आधार-सामग्री के परिमाणात्मक तथा गुणात्मक दोनो ही प्रकार के विश्लेषण स सकेत मिलता है कि शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियो के बीच विवाह की लोकप्रियता पहले की तुलना में बढ गयी है। दस वर्ष पहले की तुलना मे अब वे यह अधिक चाहती है कि वे जल्दी विवाह कर लें और विवाह के बाद शीघ्रतम उनके बच्चे हो जायें, और सबसे बढकर उन्होंने यह स्वीकार किया कि विवाह ही उनका अंतिम लक्ष्य तथा वास्तविक जीवन है और यही स्त्री की आधारभूत योजना होती है।

अपनी समस्त शिक्षा, नौकरियो, आर्थिक स्वतन्त्रता और व्यक्ति के रूप मे मान्यता प्राप्त होने के बावजूद हर आयु की हर शक्षिक तथा व्यावसायिक स्तर की और हर सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि की अविवाहित श्रमजीवी स्त्रियाँ पहले की अपेक्षा अब यह अधिक सोचने लगी है कि विवाह उनकी एक सबसे बडी आवश्यकता है और यह कि जीवन विवाह के बिना अधूरा रहता है और उसकी परिपूर्ति नही होती। और इस सचेतन आभास के साथ वे सुखी विवाहित जीवन की आवश्यकता तथा इच्छा का अधिक गहराई से अनुभव करती हैं। यह बिल्कुल वैदिक साहित्य मे उल्लिखित प्रख्यात स्त्रिया जसी अभिवृत्ति की अभिव्यक्ति है जो सुखी विवाहित जीवन की कामना करती थी तथा उसके लिए प्रार्थना करती थी और यह विश्वास करती थी कि यह उनके जीवन की पूर्ण निष्पत्ति के लिए अनिवार्य है।

समस्त परिवर्तनो के बावजूद विवाह का अब भी सर्वाधिक वाछित तथा आवश्यक सस्कार माना जाता है उसस भी अधिक जितना कि पहले समझा जाता था। परन्तु अब उनके लिए विवाह ऐसा सास्कारिक ब धन नही रह गया है जिसे भग न

किया जा सके, बल्कि यह एक ऐसी व्यावहारिक व्यवस्था है, एक प्रकार का संविदा जिसका लक्ष्य उसमें भाग लेनेवाले दोनों पक्षों को कुछ लाभ तथा सुविधाएँ प्रदान करना होता है। और इस संकल्पना के अनुरूप, शहरों की शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ अधिकाधिक संख्या में यह विश्वास रखने लगी हैं कि जब भी विवाह व्यावहारिक दृष्टि से सफल न रह जाये तो उसे भंग करने की अनुमति होनी चाहिए। इस प्रकार यह देखा गया है कि जो चीज धीरे धीरे बदल रही है वह है विवाह की पुनीतता से सम्बन्धित उनकी संकल्पना। अब ऐसी स्त्रियों की संख्या पहले से कहीं अधिक है जिनके लिए विवाह की पुनीतता पारस्परिकता की पुनीतता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

विवाह करने की इस बढ़ती हुई आवश्यकता तथा इच्छा के साथ विवाह करने की अभिप्रेरणा से सम्बन्धित उनके विचारों में होनेवाले परिवर्तन का घनिष्ठ सम्बन्ध है। 'केवल परम्परा अथवा सामाजिक प्रथा का पालन करने', जीवन के मूल कर्त्तव्यों को पूरा करने', 'पति, घर बार तथा बच्चों का ही होकर रहने', 'पारस्परिक प्रेम प्राप्त करने', 'सामाजिक, आर्थिक तथा शारीरिक सुरक्षा प्राप्त करने' और 'परिपूर्ण तथा सर्वरूपेण सम्पन्न मानसिक तथा शारीरिक जीवन प्राप्त करने' के उद्देश्य से विवाह करने की इच्छा रखने से हटकर अब उनके विवाह करने की इच्छा रखने के केन्द्रीय लक्ष्य हो गये हैं 'सामाजिक प्रतिष्ठा तथा समाज में सम्मान प्राप्त करना', 'मानसिक, शारीरिक तथा संवेगमूलक आवश्यकताओं तथा जीवन को किसी के साथ मिल-बाँटकर बिताने की भावना की तुष्टि करना', 'पति, घर बार, बच्चों का सुख प्राप्त करना', 'सुविधा प्राप्त करना', 'अकेलेपन से—एक अविवाहित लड़की के नैराश्यपूर्ण तथा सुखरहित जीवन से—बचना', 'विफल प्रेम-सम्बन्ध की निराशा से मुक्त होना', 'सेक्स-तुष्टि के वैध साधन प्राप्त करना', 'गहराई से अनुभव की जानेवाली प्रेम तथा ध्यान की आवश्यकता को पूरा करना', 'एक ऐसा व्यक्ति प्राप्त करना जो उसके जीवन की सारी ज़िम्मेदारियों का बोझ अपने कन्धों पर ले ले', और 'संवेगात्मक अरक्षा तथा हीनता की भावना को दूर करना'।

उनमें अब अधिकाधिक स्त्रियाँ सबसे बढ़कर भौतिक सम्पदाओं तथा भौतिक सुख सुविधाओं के लिए विवाह करना चाहती हैं। शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियों के बीच सम्पदा तथा सुख-सुविधा के लिए विवाह करने की प्रवृत्ति प्रबल होती जा रही है। दस वर्ष के अन्दर परिवर्तन यह हो गया है कि अब विवाह करने के लिए नकारात्मक तथा अहंमूलक अभिप्रेरणाएँ अधिक होती हैं और उन्हें अब स्वयं अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की अधिक चिन्ता रहने लगी है और सकारात्मक तथा परार्थ-परक अभिप्रेरणाओं की संख्या कम हो गयी है। उनका वैयक्तिक लाभ और वैयक्तिक आवश्यकता की तुष्टि प्रदान करनेवाली अभिप्रेरणाओं पर अधिक बल देना, जैसे पति तथा घर बार और सबसे बढ़कर सम्पदा तथा भौतिक सुख सुविधाएँ प्राप्त करना और शारीरिक तथा संवेगात्मक सन्तुष्टि प्राप्त करना, काफी हद तक जीवन में प्रेम के अभाव, सुरक्षा के अभाव और अच्छे तथा अर्थपूर्ण मानव सम्बन्धों के अभाव को पूरा करने के उनके

अचेतन प्रयास को प्रदर्शित करता है। यह आत्मविश्वास की उस कमी, दूसरो को प्रेम करने तथा उनकी सेवा करने की अपनी क्षमता मे भरोसे की उस कमी को भी पूरा करने की उनकी अचेतन चेष्टा की भी अभिव्यक्ति है जो सारी कमियाँ उनके अन्दर अपने माता पिता के घर और बडे शहरो के विसम्बंधित, प्राय मानवता रहित तथा आवश्यकता से अधिक तथ्यपरक जीवन के कारण उत्पन्न हो जाती हैं जहाँ लोग अधिकाश स्वकेन्द्रिक तथा लाभोन्मुख रहते हैं। अपनी रक्षा का सारा तन्त्र विधान एक उद्विग्न, विच्छृखल, अपरिपक्व तथा तनावपूर्ण मन का परिचायक है, जिसके कारण वे समझने लगती हैं कि विवाह उनकी सारी सवेगमूलक तथा मानसिक समस्याओ का हल कर देगा और उनके हर अभाव को पूरा कर देगा। विवाह करने की उनकी अभिप्रेरणाओ में अब यह प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है कि वे विवाह को तथा अपने जीवन साथी को स्वत लक्ष्य मानने के बजाय किसी लक्ष्य को प्राप्त करने का साधन मानने लगी है। हालाकि वे अब भी प्रेम को एक ऐसी चीज मानती है जिसकी उन्हे सबसे अधिक आवश्यकता है और जिसे वे सबसे अधिक मूल्यवान समझती हैं, फिर, अब ऐसी स्त्रियो की सख्या पहले से अधिक हो गयी है जो अपने जीवन मे सच्चे प्रेम सम्बन्ध प्राप्त कर सकने के प्रति निराश होने लगी है। इसलिए वे विवाह को आदान प्रदान का ऐसा व्यापार सम्बन्ध समझती है जिसमे पति तथा पत्नी दोनो ही उन अन्य लाभो के बदले मे, जो वे अपने विचार से दूसरे पक्ष को देते हैं, स्वय कुछ लाभो की माँग करते हैं।

विवाह की अभिप्रेरणाओ का विवाह से की जानेवाली प्रत्याशाओ के साथ पारस्परिक सम्बन्ध है और एक प्रकार से विवाह की अभिप्रेरणाए ही विवाह से की जानेवाली प्रत्याशाओ तथा उसके फलस्वरूप स्थापित होनेवाले वैवाहिक सम्बन्ध का महत्त्वपूर्ण निर्धारक तत्त्व होती है। विवाह की प्रथा का विकास सबसे पहले उत्तरजीविता (जीवन के सरक्षण) के लिए फिर सुरक्षा के लिए और उसके बाद सुविधा के लिए किया गया था। परन्तु दस ही वर्ष की अवधि के अन्दर यह देखा गया कि विवाह से शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो की प्रत्याशाओ मे नये आयाम जुडते जा रहे हैं। अब इनमे से अधिकाधिक स्त्रिया पहले की अपेक्षा इस बात की अधिक आशा रखने लगी हैं कि विवाह न केवल उनकी सारी मूल आवश्यकताओ को, बल्कि उनके जीवन की अन्य सभी आवश्यकताओ को भी पूरा कर देगा—इस बात की आवश्यकता कि कोई उनकी चिंता करे, कोई उनकी देखभाल करे, कोई उनकी मानसिक तथा सवेगमूलक समस्याओ को हल कर दे, उन्हे भौतिक सुख सुविधाएँ मिल सकें और वे किसी के साथ अपने भाव, अपना प्रेम, अपनी रुचियाँ, अपने मूल्य, अपनी सदभावना और अपने बौद्धिक तथा सस्कृति-सम्बन्धी सुख बाँट सकें।

ऊपर बताया गयी सारी प्रत्याशाओ के पीछे व्यक्तिगत सन्तोष तथा वैयक्तिक सुख पर अधिकाधिक बल देने की प्रवृत्ति दिखायी देती है जो अभी इधर कुछ ही समय से उत्पन्न हुई है। इससे इस बात का भी सकेत मिलता है कि वे अचेतन रूप से

सन्तुष्ट तथा सन्तोषप्रद मानव-सम्बन्ध के लिए, उस सम्पूर्ण प्रेम तथा सम्पूर्ण संवेगात्मक परिपूर्ति के लिए लालायित रहती है तथा उसे पाने के लिए प्रयत्नशील रहती है जो उन्हें अपने घर के या बड़े शहरों के निर्वैयक्तिक, उदासीन, स्वकेन्द्रित और भावनाशून्य व अधिक 'भौतिकवादी' वातावरण में नहीं मिल पाता। यदि विवाह जैसे एक ही सम्बन्ध द्वारा प्रथा से इतनी बहुत सी बातों की आशा रखी जाय और यदि उनके पूरे होने में थोड़ी कमी रह जाये तो उससे विफलता की भावना, असन्तोष, निराशा और उदासी उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है। और अब पहले की अपेक्षा अधिक स्त्रियाँ यह महसूस करने लगी हैं कि पति की क्रूरता, शराबखोरी या बेवफाई के आधार पर ही नहीं बल्कि स्वभावों तथा जीवन-पद्धति में मेल न बैठने पर भी अलगाव या तलाक की अनुमति होनी चाहिए। और यदि विवाह से या अपने जीवन-साथी से उनकी प्रत्याशाएँ पूरी न हों तब भी उन्हें तलाक ले लेने की छूट होनी चाहिए। 1938 में इंग्लैण्ड की राष्ट्रीय तलाक सुधार लीग की ओर से एक प्रश्नावली के आधार पर किए गए 500 व्यक्तियों के अध्ययन में यह देखा गया कि 2 प्रतिशत से कम तलाक पति या पत्नी के वफादार न रहने के कारण लिए जाते हैं और 70 प्रतिशत पारस्परिक असंगतियों के कारण। अधिकतर रूप से यह प्रवृत्ति श्रमजीवी स्त्रियों की और विशेष रूप से नौजवान शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की, अभिवृत्तियों में शामिल होती जा रही है।

अचेतन प्रयास को प्रदर्शित करता है। यह आत्मविश्वास की उस कमी, दूसरों को प्रेम करने तथा उनकी सेवा करने की अपनी क्षमता में भरोसे की उस कमी को भी पूरा करने की उनकी अचेतन चेष्टा की भी अभिव्यक्ति है, जो सारी कमियाँ उनके अन्दर अपने माता पिता के घर और बड़े शहरों के विसम्बाधित, प्राय मानवता-रहित तथा आवश्यकता से अधिक तथ्यपरक जीवन के कारण उत्पन्न हो जाती हैं जहाँ लोग अधिकाश स्वकेन्द्रित तथा लाभोन्मुख रहते हैं। अपनी रक्षा का सारा तन्त्र-विधान एक उद्विग्न, विच्छृंखल, अपरिपक्व तथा तनावपूर्ण मन का परिचायक है, जिसके कारण वे समझने लगती हैं कि विवाह उनकी सारी संवेगमूलक तथा मानसिक समस्याओं का हल कर देगा और उनके हर अभाव को पूरा कर देगा। विवाह करने की उनकी अभिप्रेरणाओं में अब यह प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है कि वे विवाह को तथा अपने जीवन साथी को स्वत लक्ष्य मानने के बजाय किसी लक्ष्य को प्राप्त करने का साधन मानने लगी हैं। हालाँकि वे अब भी प्रेम को एक ऐसी चीज मानती हैं जिसकी उन्हें सबसे अधिक आवश्यकता है और जिसे वे सबसे अधिक मूल्यवान समझती हैं, फिर, अब ऐसी स्त्रियों की संख्या पहले से अधिक हो गयी है जो अपने जीवन में सच्चे प्रेम सम्बन्ध प्राप्त कर सकने के प्रति निराश होने लगी हैं। इसलिए वे विवाह को आदान प्रदान का ऐसा व्यापार-सम्बन्ध समझती हैं जिसमें पति तथा पत्नी दोनों ही उन अन्य लाभों के बदले में, जो वे अपने विचार से दूसरे पक्ष को देते हैं, स्वयं कुछ लाभों की माँग करते हैं।

विवाह की अभिप्रेरणाओं का विवाह से की जानेवाली प्रत्याशाओं के साथ पारस्परिक सम्बन्ध है और एक प्रकार से विवाह की अभिप्रेरणाएँ ही विवाह से की जानेवाली प्रत्याशाओं तथा उसके फलस्वरूप स्थापित होनेवाले वैवाहिक सम्बन्ध का महत्त्वपूर्ण निर्धारक तत्त्व होती हैं। विवाह की प्रथा का विकास सबसे पहले उत्तरजीविता (जीवन के संरक्षण) के लिए, फिर सुरक्षा के लिए और उसके बाद सुविधा के लिए किया गया था। परन्तु दस ही वर्ष की अवधि के अन्दर यह देखा गया कि विवाह से शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों की प्रत्याशाओं में नये आयाम जुड़ते जा रहे हैं। अब इनमें से अधिकाधिक स्त्रियाँ पहले की अपेक्षा इस बात की अधिक आशा रखने लगी हैं कि विवाह न केवल उनकी सारी मूल आवश्यकताओं का, बल्कि उनके जीवन की अन्य सभी आवश्यकताओं को भी पूरा कर देगा—इस बात की आवश्यकता कि कोई उनकी चिन्ता करे, कोई उनकी देखभाल करे, कोई उनकी मानसिक तथा संवेगमूलक समस्याओं को हल कर दे, उन्हें भौतिक सुख सुविधाएँ मिल सकें और वे किन्हीं के साथ अपने भाव, अपना प्रेम, अपनी रुचियाँ, अपने मूल्य, अपनी सदभावना और अपने बौद्धिक तथा सेक्स सम्बन्धी सुख बाँट सकें।

ऊपर बतायी गयी सारी प्रत्याशाओं के पीछे वैयक्तिक सन्तोष तथा वैयक्तिक सुख पर अधिकाधिक बल देने की प्रवृत्ति दिखायी देती है, जो अभी इधर कुछ ही समय से उत्पन्न हुई है। इससे इस बात का भी संकेत मिलता है कि वे अचेतन रूप से उस

> विवाह को समस्त सुख का स्रोत और समस्त संवेगात्मक अभावों का हल तथा क्षतिपूर्ति का साधन मान लिया है। पति तथा पत्नी का निजी सुख सफल विवाह की कसौटी बन गया है। पारस्परिक सामंजस्य को विवाह का आधार माना जाता है और विवाहित जीवन का आनन्द उन संवेगात्मक भावों पर निर्भर रहने लगता है जो दम्पत्ति अपने सम्बन्ध के प्रति रखते हैं। इस प्रकार विवाहित जीवन में सुख की भविष्यवाणी एक निजी समीकरण के आधार पर, वैयक्तिक संतोष के आधार पर की जाती है। विवाहित जीवन में सुख के सांस्कृतिक पक्ष पर बल अभी इधर कुछ ही समय से दिया जाने लगा है (देखिये ग्रोटो, पृष्ठ 71)।

और असंदिग्ध रूप से "यह स्वीकार किया जाता है कि 'ग्रह' की इस अभिवृत्ति का एकमात्र उद्देश्य अपने स्वार्थ को बढ़ावा देना होता है, वह स्वार्थ कितनी ही उत्कृष्ट कोटि का क्यों न हो" (एलियट तथा मरिल 1950), और जैसा कि सेट ने लिखा है, "यह तो कहने की आवश्यकता नहीं कि व्यक्तिवाद की दिशा में आधुनिक प्रवृत्ति के कारण स्त्रियां तथा पुरुष दोनों ही विवाहित जीवन में निजी सुख प्राप्त करने के लिए अधिक प्रयत्नशील रहने लगे हैं और सामाजिक संयम के प्रति वे कम सहिष्णु रह गये हैं। सभी वर्गों में तथा स्त्रियां व पुरुषों दोनों ही में व्यक्तिवाद के प्रभाव से असंदिग्ध रूप से उस समय तक सामाजिक जीवन में, और सबसे बढ़कर विवाहित जीवन में, अधिकाधिक उलझाव पैदा होते जायेंगे, जब तक कि वैयक्तिक दायित्व की नैतिकता के विकास के माध्यम से इस नयी स्वतन्त्रता का उपयोग अधिक विवेकपूर्ण ढंग से न किया जाने लगे" (सेट, 1938, पृष्ठ 570)।

यद्यपि इसमें विरोधाभास दिखायी देता है परन्तु यह बात है सच कि यद्यपि विवाह से स्त्रियों की प्रत्याशाओं का क्षेत्र अधिक व्यापक होता जा रहा है, परन्तु उन स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात निरंतर घटता जा रहा है जो यह सोचती हैं कि 'विवाह में सम्पूर्ण सुख मिलता है"। इससे इस बात की पुष्टि होती है कि अव्यावहारिक होने तथा कल्पनालोक में रहने के बजाय विवाह के प्रति उनकी अभिवृत्ति अधिक व्यावहारिक और यथार्थपरक होती जा रही है। परन्तु काफी हद तक इसका कारण यह भी हो सकता है कि सम्पूर्ण सुख की उनकी संकल्पना में ही एक परिवर्तन दिखायी देने लगा है। इस बात के बावजूद वे अपने विवाह से कहीं अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति की आशा रखने लगी हैं, परन्तु वे उससे अपनी समस्त आवश्यकताओं की तुष्टि की आशा नहीं रखतीं।

इस अध्ययन में और इससे पहले वाले अध्ययन में जो गुणात्मक आधार-सामग्री —व्यक्ति अध्ययन—प्रस्तुत की गयी है, उसमें उनके इस उत्तरोत्तर घटते हुए विश्वास का स्पष्ट चित्रण होता है कि वे अपनी समस्त संवेगात्मक, बौद्धिक तथा मानसिक आवश्यकताओं की तुष्टि के लिए विवाह पर निर्भर नहीं रहतीं। पन्द्रह में अपना [illegible] उन्होंने यह बताया कि अपनी अनेक आवश्यकताओं को, जैसे उपलब्धि, मान्यता,

रुचि, बौद्धिक उद्दीपन तथा साहचर्य की आवश्यकता की ओर एक निजी हैसियत तथा आर्थिक स्वतन्त्रता की आवश्यकता को पूरा करने के लिए वे मुख्यत अपनी नौकरियों अपनी जीवनवृत्तियों तथा अपने व्यवसाय पर और विभिन्न बौद्धिक, सांस्कृतिक तथा घर के बाहर की अन्य गतिविधियों पर और विवाह की परिधि के बाहर स्थापित की गयी मित्रताओं पर निर्भर रहती हैं। इसकी और अधिक पुष्टि इस बात से होती है कि अपनी विभिन्न बौद्धिक तथा रागात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वे विवाह की परिधि के बाहर की मित्रताओं तथा सम्बन्धों का अधिकाधिक अनुमोदन करने लगी है, और उनके इस बढ़ते हुए विश्वास से भी कि सम्पूर्ण सुख के लिए उन्हें विवाह पर निर्भर नहीं रहना चाहिए।

प्राय पारम्परिक ढंग से तय किये हुए विवाह का अनुमोदन करनेवाली स्त्रियों की कुछ कोटियाँ ये हैं (1) वे जो कट्टरपंथी परिवारों की होती हैं और जिन पर स्नेहमय माता पिता की सत्ता का नियन्त्रण रहता है और जो उन्हीं की तरह सोचती हैं, (2) वे जिनमें अपने अनाकर्षक शारीरिक रूप रंग के कारण या भीरु तथा सकोचशील स्वभाव के कारण आत्मविश्वास नहीं रहता और जो यह समझने लगती हैं कि वे अपने लिए उचित वर नहीं ढूँढ सकती, (3) वे जिन्हें स्वयं अपने 'प्रेम प्रसंगों' में कटु अनुभव हो चुके हों या जिन्हें अपने रिश्तेदारों अथवा मित्रों से इस प्रकार के अनुभवों की जानकारी मिली हो। पहली दो कोटियों की स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात दस वर्ष पहले अधिक था, जबकि दस वर्ष बाद तीसरी कोटि की स्त्रियों का प्रतिशत अनुपात अधिक पाया गया। परन्तु ये स्त्रियाँ भी 'शुद्धत तय किये हुए विवाह' के विचार की विरोधी हैं और यह समझती हैं कि अंतिम निर्णय से पहले दोनों ही पक्षों की सहमति प्राप्त कर ली जानी चाहिए।

विवाह के प्रति शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियों में एक और बढ़ती हुई प्रवृत्ति यह देखी गयी कि वे तय किये हुए विवाहों की प्रथा का पहले से अधिक समर्थन करने लगी हैं, हालांकि तय किया गया विवाह किस ढंग का होना चाहिए इसके बारे में उनकी संकल्पना बदल गयी है। तय किये हुए विवाह से उनका अभिप्राय वह पारम्परिक ढंग का शुद्धत तय किया हुआ विवाह नहीं रह गया है जिसमें लड़की को दूकान में रखे हुए बिकाऊ माल की तरह प्रदर्शित किया जाता है और लड़का तथा उसके परिवार वाले अत्यन्त औपचारिक तथा तनावपूर्ण वातावरण में आलोचनात्मक दृष्टि से उसका निरीक्षण करते हैं। तय किये हुए विवाह कराने की पारम्परिक पद्धति का दृढ़तापूर्वक विरोध करनेवाली श्रमजीवी स्त्रियों की संख्या अब बढ़ गयी है। अब इसमें उनका अभिप्राय यह हो गया है कि लड़के तथा लड़की में सम्बन्धित पूरे ब्यौरे के बारे में और उनके परिवारों से सम्बन्धित सभी भौतिक तथा सामाजिक आर्थिक तथ्यों के बारे में पूरी तरह सन्तुष्ट हो जाने तथा उनको सर्वथा उचित पाने के बाद माता पिता, अभिभावक या मित्र भावी जीवन-साथियों का उनके माता पिता तथा सगे-सम्बन्धियों की उपस्थिति में किंचित् अनौपचारिक तथा अधिक मित्रतापूर्ण वातावरण

मे एक दूसरे से परिचय करा देने की व्यवस्था कर दें। वे महसूस करती हैं कि इस प्राथमिक भेंट के बाद यदि लडके तथा लडकी का झुकाव एक दूसरे के प्रति हो तो उन्हे एक दूसरे से मिलने और विचारो का आदान प्रदान करने के कुछ अवसर दिये जाने चाहिए और इसके बाद उन्हे अपने माता पिता, अभिभावको, या मित्रो की सहायता तथा सलाह से अंतिम निर्णय करने दिया जाये। इस प्रकार, यद्यपि यह विवाह माता पिता या अभिभावको का तय किया हुआ होता है, पर इसे भावी जीवन साथियो की हार्दिक सहमति प्राप्त रहती है जो सहमति व्यक्त करने से पहले इस बात का पूरा आश्वासन कर लेते है कि इस बात की आशा की जा सकती है कि उन परिस्थितियो मे उनकी जितनी भी मांगें सम्भवत पूरी हो सकती हैं व उनके भावी जीवन साथी म तथा विवाह से पूरी हो सकेंगी। इस प्रकार के विवाह को "नये ढग का तय किया हुआ विवाह" कहा जा सकता है, क्योकि इसम अंतिम निर्णय लडके और लडकी की पसन्द तथा अनुमति पर निर्भर रहता है, जो पारम्परिक ढग के तय किये हुए विवाहो से भिन्न पद्धति है।

यह भी देखा गया है कि "तय किये हुए विवाहो" के बदलते हुए अर्थ के साथ ही शहरो के मध्यमवर्गीय शिक्षित परिवारो मे उन बातो तथा विचारणीय तथ्यो के सम्बन्ध म भी परिवर्तन आ गया है जिनका कि तय किये हुए विवाह मे ध्यान रखा जाता है। तीन दशक पहले लडकी के माता पिता के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण विचारणीय बात यह होती थी कि लडका उसी प्रान्त तथा जाति का और प्रतिष्ठित तथा समृद्धिशाली परिवार का हो। स्वय उसकी आयु नौकरी या व्यवसाय की ओर इतना ध्यान नही दिया जाता था। अब दस वर्ष पहले की अपेक्षा अधिक हद तक, मुख्य महत्त्व लडके की नौकरी अथवा व्यवसाय और उसकी आय को और उसकी शिक्षा-सम्बन्धी योग्यताओ तथा अपनी नौकरी, व्यवसाय या व्यापार मे पैसा कमाने की उसकी क्षमताओ तथा भावी सम्भावनाओ को दिया जाने लगा है। लडके के माता पिता के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण विचारणीय बात यह होती थी कि लडकी उसी प्रान्त तथा उसी जाति की हो सम्पन्न परिवार की हो और घर के काम काज तथा खाना पकाने म निपुण हो, जबकि अब उसकी शिक्षा, उसकी प्रतिभाओ तथा जीविकोपार्जन की उसकी क्षमताओ पर, उसके निजी सौन्दर्य तथा पारिवारिक पृष्ठभूमि पर अधिक जोर दिया जाने लगा है।

यद्यपि अब श्रमजीवी स्त्रियाँ अधिकाधिक सख्या म "शुद्ध प्रेम विवाहो" को नापसन्द करने लगी हैं, परन्तु वे एक नये ढग के प्रेम विवाह का निश्चित रूप से अनुमोदन करती हैं। शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो के बयानो, उनके जीवन वृत्तो तथा उनकी अनुक्रियाओ का विश्लेषण करने से इस बात का निश्चित सकेत मिलता है कि प्रेम के बारे मे उनकी सकल्पना म परिवर्तन के साथ ही प्रेम विवाह से सम्बन्धित उनकी सकल्पना मे भी परिवर्तन हुआ है। और इसके साथ ही जिस ढग के प्रेम विवाह का वे अनुमोदन करती हैं और जिस प्रकार के प्रेम-विवाह वे करती हैं उनमें भी परिवर्तन

हुआ है। उनकी सकल्पना के अनुसार, जिस प्रकार के प्रेम विवाह का वे अनुमोदन करती हैं वह केवल 'सम्मोहन', 'सवस आवयण', 'स्वत स्फूर्त परस्परिक 'प्रेम', 'रूमानी प्रम', 'अन्धे प्रेम' या 'देखते ही प्रेम हो जाने' का परिणाम नही होता, बल्कि वह "शान्त भाव से सब बातो का लेखा जोखा करके, विकसित किय गय स्नह अथवा प्रेम' का प्रतिफल होता है। हर बात का लेखा-जोखा करके किया जाने वाला यह प्रेम इस बात का पूरा आश्वासन कर लेन के बाद कि लडकी जिस भावी जीवन साथी के साथ विवाह के सूत्र मे बँधने जा रही है वह उन समस्त विशिष्ट गुणा तथा साधनो स सम्पन्न हैं जा उस लडकी के लिए निश्चित रूप मे लाभप्रद तथा हितकर होग, विवाह करने का लक्ष्य प्राप्त करने के निश्चित उद्देश्य स विकसित किया जाता है। अध्याय-2 म दिया गया वासना का व्यक्ति अध्ययन इस प्रकार के प्रेम-विवाह का एक लाक्षणिक उदाहरण है।

नय प्रकार के प्रेम विवाह मे लडका और लडकी दफ्तर म, क्लबो मे या अन्य सामाजिक समारोहा मे या तो स्वय ही एक दूसर के सम्पक म आते है, या उनके मित्र, रिश्तेदार, सहकर्मी या माता पिता भी उनका एक-दूसरे से परिचय करा देते है। इसक बाद लडकी बडे शान्त भाव से और बडी होशियारी से लडके की शिक्षा, उसकी नौकरी, व्यवसाय या व्यापार और भावी प्रगति की सम्भावनाओं तथा उसके स्वास्थ्य के बार म सब कुछ मालूम कर लेती है, उसकी जाति और वह किस प्रान्त का है, ये महत्वपूर्ण विचारणीय बातें नही होती। लडका भी यह देख लेता है कि लडकी अच्छे परिवार की है, पढी लिखी है, सूरत शक्ल की अच्छी है, और या तो अच्छे वेतन वाली नौकरी कर रही है या आगे चलकर जीविका कमा सकती है। और जब दोना इन सारी बाह्य आवश्यकताओ के बारे मे सन्तुष्ट हो जात हैं, तब कही जाकर वे उद्देश्य-पूर्वक एक दूसरे के 'प्रेम मे पड जाते हैं' और विवाह करके एक-दूसरे के साथ घर बसान की कोशिश करते हैं, जिसके लिए कई उदाहरणों मे माता पिता की अनुमति भी ले ली जाती है। इस प्रकार, जबकि श्रमजीवी स्त्रियाँ अब अधिकाधिक सख्या म शुद्धत तय किये हुए विवाहो' और 'शुद्ध प्रेम विवाहो से विमुख होती जा रही है, वे 'नय ढग क तय किये हुए विवाहो' और 'नय ढग के प्रेम विवाहो' का समथन करन लगी हैं जिनके अलग अलग अथ तथा अलग अलग रूप होते हैं। शिक्षित श्रम जीवी स्त्रियो के बीच परम्परागत ढग के 'आँख मूदकर तय किये हुए विवाहों को स्वीकार कर लेने' और 'अन्धे प्रेम विवाहो' दोनो ही का ह्रास होता जा रहा है।

उनकी अभिवृत्तियो म हानेवाले परिवतनो के साथ ही जीवन साथी चुनने की समस्या अधिक जटिल हो गयी है, क्योंकि विवाह-सम्बन्ध म अलग अलग पक्षो की भूमिकाओ तथा उनकी हैसियतो के बारे मे बहुत उलझाव है। भावी दम्पत्ति एक-दूसरे से जिन बातो की माँग करत ह, वे पहले की अपेक्षा अधिक भले ही न हो, फिर भी वयक्तिकता, विस्तृत होती हुई रुचियो और नयी उभरती हुई आवश्यकताओ के साथ साथ पिछले एक दशक के अन्दर ही इन आवश्यकताओ मे एक नूतनता आ गयी

है, और वे अधिक निश्चित तथा अटल हो गयी हैं। और दोनों पक्ष अपनी मांगों के बारे में अधिक सजग हो गये हैं। स्वाभाविक रूप से जीवन-साथी चुनते समय अब इनमें से अधिकाधिक स्त्रियाँ इस बात पर अधिक ध्यान रखती हैं कि वह व्यक्ति विवाह के बाद उनकी सहायता करेगा या कम से कम स्वयं अपने जीवन तथा निजी रुचियों का विकास करने में बाधक नहीं होगा। इस बात की और अधिक पुष्टि इस बात से होती है कि शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्री अपने भावी पति में जो गुण चाहती है, उनमें से कुछ ये हैं कि वह उदार विचारों वाला हो और शिक्षा तथा प्रज्ञा में उससे बढ़कर हो ताकि वह उसका सम्मान कर सके और उससे मार्गदर्शन तथा सहायता की प्रत्याशा रख सके। सारत यह अभिवृत्ति विवाह के प्रति वही परम्परागत अभिवृत्ति है जिसमें पत्नी चाहती है कि उसका पति बुद्धि, शिक्षा तथा वीरता में उससे बढ़कर हो ताकि वह निश्चित होकर उस पर निर्भर रह सके, उसका सम्मान कर सके और उससे प्रेरणा प्राप्त कर सके। इससे मिलती जुलती पारम्परिक अभिवृत्ति उन फ्रांसीसी स्त्रियों में भी पायी गयी जिनके बारे में रेमी तथा वूग ने यह मत व्यक्त किया है कि फ्रांसीसी स्त्री "चाहती है कि बौद्धिक दृष्टि से उस पर भरपूर प्रभुत्व रखा जाये, और यह अभिवृत्ति उसे सर्वाधिक सनातन नैतिक, मनोवैज्ञानिक परम्पराओं की परिधि में पहुँचा देती है' (रेमी तथा वूग, पृष्ठ 146)।

शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियों में ऊपर बताये गये परिवर्तनों से यह संकेत मिलता है कि अब उनमें ऐसी स्त्रियों की संख्या बहुत बढ़ गयी है जो विवाह की कल्पना अधिक स्पष्ट रूप में करती हैं और स्वयं अपने तथा अपने मित्रों के अनुभवों से सबक सीखने की कोशिश करती हैं।

विवाह के प्रति उनकी अभिवृत्तियों में एक और आँखें खोल देनेवाले तथा रोचक परिवर्तन का संकेत इस बात में मिलता है कि दस वर्ष पहले उन्होंने हिन्दू समाज में विवाह की प्रचलित पद्धति के दोषों का उल्लेख करते हुए दहेज और आवश्यकता से अधिक प्रथाओं तथा रस्मों के पालन के साथ सुव्यवस्थित तय किये हुए विवाह जैसे सामाजिक प्रचलनों पर अधिक जोर दिया था। परन्तु दस वर्ष बाद एक विवाह पद्धति पर प्रहार किये गये और उसे नीरस तथा असंतोषप्रद बताया गया और 'प्रायोगिक विवाह' तथा 'समूह विवाह' जैसी नयी संकल्पनाओं का उल्लेख किया गया। यद्यपि अभी तक इस प्रकार के विचार व्यक्त करनेवाली स्त्रियों की संख्या बहुत थोड़ी है, फिर भी एक दशक बाद इनमें से पहले की अपेक्षा अधिक स्त्रियों ने एक विवाह पद्धति के बारे में ऐसे विचार व्यक्त किये जिनमें कुछ कुछ प्रतिध्वनि उन विचारों की मिलती है जो कैंडवलेडर जैसे लोगों ने निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किये हैं

> समकालीन विवाह एक अभिशप्त प्रथा है। वह स्वच्छिक स्नेह का, स्वतंत्रतापूर्वक दिये गये तथा हर्षपूर्वक स्वीकार किये गये प्रेम का अन्त कर देता है। सुन्दर रोमांस नीरस विवाहों में परिणत हो जाते हैं, और

अन्ततोगत्वा यह सम्बन्ध अवरोधकारी, ह्रासकारी, दमनकारी तथा विनाशकारी बन जाता है। सुन्दर प्रेम-लीला एक कटुतामय संविदा का रूप धारण कर लेती है (कडवलेडर, 1967, पृष्ठ 48)।

प्रायोगिक विवाह का विचार कुछ कुछ उस विचार से मिलता जुलता है जिसे मार्गरेट मीड ने (1970) में व्यक्त किया है। उनके अनुसार दो प्रकार के विवाह होने चाहिए, जिनमें पहले प्रकार के विवाह के बाद दूसरे प्रकार का विवाह हो भी सकता है और नहीं भी। पहला विवाह वैयक्तिक विवाह हो सकता है, जिसमें दो व्यक्ति, जब तक वे साथ रहना चाहें परन्तु भावी माता पिता के रूप में नहीं परस्पर प्रतिबद्ध रहेंगे। दूसरा विवाह मातृ पितृ विवाह हो सकता है, जिसका स्पष्ट निर्दिष्ट लक्ष्य परिवार की स्थापना करना होगा। इस प्रकार के विवाह के बाद पहली अवस्था को आजमा लेने और उसे पूरा कर लेने पर और दोनों व्यक्तियों के दूसरी अवस्था में प्रवेश करने के लिए उत्सुक होने पर दूसरे चरण अथवा अवस्था के रूप में हमेशा एक वैयक्तिक विवाह होगा। उसकी अपनी अलग अनुज्ञा, अपने अलग संस्कार तथा अपना अलग प्रकार का दायित्व होगा (देखिये ओटो, 1970 पृष्ठ 80)।

यद्यपि 'समूह विवाह' के विचार का सुझाव दस वर्ष बाद इस अध्ययन के दूसरे चरण में बहुत ही थोड़ी श्रमजीवी स्त्रियों ने दिया परन्तु इसके समर्थन में यह तक दिया गया कि यह अपने आप में कोई नया विचार नहीं है और मनुष्य सर्वप्रथम जिस प्रकार के विवाहों से परिचित हुआ वे समूह विवाह ही थे। जिन लोगों ने समूह-विवाह का विचार प्रस्तुत किया उनके तर्क कुछ इस प्रकार के थे मनुष्य से, जो सामाजिक पशुओं के समान है, यह आशा क्यों रखी जाये कि वह अपने सम्पर्क केवल एक भिन्नलिंगी व्यक्ति तक सीमित रखेगा? व्यक्तियों के एक समूह को इस बात की अनुमति क्यों न हो कि वे आपस में विवाह करके समूह के अन्दर ही अपनी विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा कर लें और अपनी विविध रुचियों में दूसरों को भी सम्मिलित करें और जीवन-साथियों तथा बच्चों सहित अपनी उन सभी चीज़ों को जिन पर सब का सम्मिलित अधिकार है, दूसरों के साथ मिल बाँटकर इस्तेमाल करना, सहयोग करना निःस्वार्थ रहना और त्याग करना सीखें, जो गुण इतने घनिष्ठ सम्बन्ध के रूप में समूह जीवन सिखाता है?

परन्तु इस बात के बावजूद कि कुछ लोग एक विवाही सम्बन्धों के अतिरिक्त अन्य प्रकार के सम्बन्धों के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करने में, जिनमें समूह विवाह भी शामिल है, विश्वास रखते हैं और जीवन व्यतीत करते भी हैं, व्यवहार में सारी दुनिया में अब भी प्रवृत्ति 'एक विवाही' पद्धति की दिशा में है और सम्भावनाएं यही हैं कि व्यवहार में विवाह इसी प्रकार का रहेगा (देखिये ओटो 1970 पृष्ठ 97)।

थोड़े-बहुत रूपान्तर तो हो सकते हैं जैसे संविदा रहित अथवा प्रायोगिक विवाहों में थोड़ी सी वृद्धि, परन्तु विवाह का मूल रूप अब भी वैसा ही बना हुआ है और ऐसा प्रतीत होता है कि एक संस्था के रूप में विवाह का अस्तित्व बना रहेगा।

है, और वे अधिक निश्चित तथा अटल हो गयी है। और दोनो पक्ष अपनी मागो के बारे मे अधिक सजग हो गये हैं। स्वाभाविक रूप से जीवन-साथी चुनते समय अब इनमे से अधिकाधिक स्त्रियाँ इस *बात का अधिक ध्यान रखती हैं कि वह व्यक्ति* विवाह के बाद उनकी सहायता करेगा या कम से कम स्वय अपने जीवन तथा निजी *रुचियो का विकास करने मे बाधक नही होगा।* इस बात की और अधिक पुष्टि इस बात से होती है कि शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्री अपने भावी पति मे जो गुण चाहती है, उनमे से कुछ ये हैं कि वह उदार विचारो वाला हो और शिक्षा तथा प्रज्ञा म उससे बढकर हो ताकि वह उसका सम्मान कर सके और उसस मार्गदर्शन तथा सहायता की प्रत्याशा रख सके। सारत यह अभिवृत्ति विवाह के प्रति वही परम्परागत अभिवत्ति है जिसमे पत्नी चाहती है कि उसका पति बुद्धि, शिक्षा तथा वीरता मे उसस बढकर हो ताकि वह निश्चित होकर उस पर निर्भर रह सके, उसका सम्मान कर सके और उससे प्रेरणा प्राप्त कर सके। इससे मिलती जुलती पारम्परिक अभिवत्ति उन फासीसी स्त्रियो मे भी पायी गयी जिनके बारे मे रेमी तथा वूग ने यह मत व्यक्त *किया है कि फ्रासीसी स्त्री "चाहती है कि बौद्धिक दृष्टि से उस पर भरपूर प्रभुत्व रखा* जाये, और यह अभिवत्ति उसे सर्वाधिक सनातन नैतिक, मनोवैज्ञानिक परम्पराओ की *परिधि मे पहुँचा देती है' (रेमी तथा वूग, पृष्ठ 146)।*

शिक्षित हिन्दू श्रमजीवी स्त्रियों की अभिवृत्तियो मे ऊपर बताये गये परिवतनो से यह सकेत मिलता है कि अब उनमे ऐसी स्त्रियो की सख्या बहुत बढ गयी है जो विवाह की कल्पना अधिक स्पष्ट रूप मे करती हैं और स्वय अपने तथा अपने मित्रो के अनुभवो से सबक सीखने की कोशिश करती हैं।

विवाह के प्रति उनकी अभिवत्तियो मे एक और आँखें खोल देनेवाले तथा रोचक परिवतन का सकेत इस बात मे मिलता है कि दस वर्ष पहले उन्होने हिन्दू समाज मे विवाह की प्रचलित पद्धति के दोषो का उल्लेख करते हुए दहेज और आवश्यकता से अधिक प्रथाओ तथा रस्मो के पालन के साथ शुद्धत तय किये हुए विवाहो जसे सामाजिक प्रचलनो पर अधिक जोर दिया था। परन्तु दस वर्ष बाद एक विवाह पद्धति पर प्रहार किये गये और उसे नीरस तथा असन्तोषप्रद बताया गया और 'प्रायोगिक विवाह तथा 'समूह विवाह' जैसी नयी सकल्पनाओ का उल्लेख किया गया। यद्यपि अभी तक इस प्रकार के विचार व्यक्त करनेवाली स्त्रियो की सख्या *बहुत थोडी है, फिर भी एक दशक बाद इनमे से पहले की* अपेक्षा अधिक स्त्रियो।ने एक विवाह पद्धति के बारे मे ऐसे विचार व्यक्त किये जिनमे कुछ कुछ प्रतिध्वनि उन *विचारो की मिलती है जो कँडवैलेडर जसे लोगो ने निम्नलिखित शब्दो मे व्यक्त* किये हैं

> *समकालीन विवाह एक अभिशप्त प्रथा है। वह स्वैच्छिक स्नेह का* स्वत स्फूर्तपूर्वक दिये गये तथा हर्षपूर्वक स्वीकार किये गये प्रेम का अन्त कर देता है। सुन्दर रोमास नीरस *विवाहो मे परिणत हो जाते हैं,* और

अन्ततोगत्वा यह सम्बन्ध अवरोधकारी, ह्रासकारी, दमनकारी तथा विनाशकारी बन जाता है। सुन्दर प्रेम लीला एक कटुतामय संविदा का रूप धारण कर लेती है (कडवलेडर, 1967, पृष्ठ 48)।

प्रायोगिक विवाह का विचार कुछ कुछ उस विचार से मिलता जुलता है जिसे मार्गरेट मीड ने (1970) मे व्यक्त किया है। उनके अनुसार दो प्रकार के विवाह होने चाहिए जिनमे पहले प्रकार के विवाह के बाद दूसरे प्रकार का विवाह हो भी सकता है और नही भी। पहला विवाह वैयक्तिक विवाह हो सकता है, जिसमे दो व्यक्ति जब तक वे साथ रहना चाहे परन्तु भावी माता पिता के रूप मे नहीं परस्पर प्रतिबद्ध रहेंगे। दूसरा विवाह मातृ पितृ विवाह हो सकता है जिसका स्पष्ट निर्दिष्ट लक्ष्य परिवार की स्थापना करना होगा। इस प्रकार के विवाह के बाद, पहली अवस्था को आजमा लेने और उसे पूरा कर लेने पर और दोनो व्यक्तियो के दूसरी अवस्था मे प्रवेश करने के लिए उत्सुक होने पर दूसरे चरण अथवा अवस्था के रूप मे हमेशा एक वैयक्तिक विवाह होगा। उसकी अपनी अलग अनुज्ञा, अपने अलग संस्कार तथा अपना अलग प्रकार का दायित्व होगा (देखिये ओटो 1970, पृष्ठ 80)।

यद्यपि 'समूह विवाह' के विचार का सुझाव दस वर्ष बाद इस अध्ययन के दूसरे चरण मे बहुत ही थोडी श्रमजीवी स्त्रियो ने दिया, परन्तु इसके समर्थन मे यह तर्क दिया गया कि यह अपने आपमे कोई नया विचार नही है और मनुष्य सर्वप्रथम जिस प्रकार के विवाहो से परिचित हुआ वे समूह विवाह ही थे। जिन लोगो ने समूह-विवाह का विचार प्रस्तुत किया उनके तर्क कुछ इस प्रकार के थे मनुष्य से, जो सामाजिक पशुओ के समान है यह आशा क्यो रखी जाये कि वह अपने सम्पर्क केवल एक भिन्नलिंगी व्यक्ति तक सीमित रखेगा ? व्यक्तियो के एक समूह को इस बात की अनुमति क्यो न हो कि वे आपस मे विवाह करके समूह के अन्दर ही अपनी विभिन्न आवश्यकताओ को पूरा कर लें और अपनी विविध रुचियो मे दूसरो को भी सम्मिलित करें और जीवन-साथियो तथा बच्चो सहित अपनी उन सभी चीजो को जिन पर सब का सम्मिलित अधिकार है, दूसरो के साथ मिल बाँटकर इस्तेमाल करना, सहयोग करना, निःस्वार्थ रहना और त्याग करना सीखें, जो गुण इतने घनिष्ठ सम्बन्ध के रूप मे समूह जीवन सिखाता है ?

परन्तु इस बात के बावजूद कि कुछ लोग एक विवाही सम्बन्धो के अतिरिक्त अन्य प्रकार के सम्बन्धो के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करने मे जिनमे समूह विवाह भी शामिल है, विश्वास रखते है और जीवन व्यतीत करते भी हैं व्यवहार मे सारी दुनिया मे अब भी प्रवृत्ति 'एक विवाही' पद्धति की दिशा मे है और सम्भावनाए यही है कि व्यवहार मे विवाह इसी प्रकार का रहेगा (देखिये ओटो 1970, पृष्ठ 97)।

थोडे-बहुत रूपान्तर तो हो सकते हैं जैसे संविदा-रहित अथवा प्रायोगिक विवाहो मे थोडी सी वृद्धि, परन्तु विवाह का मूल रूप अब भी वैसा ही बना हुआ है और ऐसा प्रतीत होता है कि एक संस्था के रूप मे विवाह का अस्तित्व बना रहेगा।

वह जाति, धर्म, देश आदि के बन्धनों से मुक्त होता जा रहा है और सम्भव है कि यह प्रवृत्ति और अधिक बढ़ जाये। विवाह की परम्परा चलती आ रही है और ऐसा लगता है कि भविष्य में भी चलती रहेगी। फिर भी लोग ऐसे दुस्साहसी लोगों के प्रति अधिकाधिक सहिष्णु होते जा रहे हैं जो विभिन्न प्रकार के विवाहों तथा विभिन्न सम्भावनाओं के बारे में नये नये प्रयोग करते रहना चाहते हैं। हो सकता है कि स्वयं विवाह के स्वरूप में कुछ परिवर्तन हो। ऐसा लगता है कि आगे चलकर यह और अधिक उन्मुक्त संस्था बन जाये, जिसकी परिधि में लोग स्वयं अपनी स्वतन्त्र इच्छा से प्रवेश कर सकें या उससे बाहर निकल सकें, और वे विवाह की परिधि के अन्दर और उससे बाहर भी सेक्स-तुष्टि अनुभव कर सकें। वेस्टरमार्क ने अपनी विवेकपूर्ण रचना विवाह का भविष्य (दि फ्यूचर ऑफ मैरिज) में लिखा है कि "लोगों में प्रचलित नियमों से बँधे रहने की प्रवृत्ति कम होती जायेगी और वे हर उदाहरण के बारे में अपना निर्णय उसके गुण दोष के आधार पर देने को अधिक तत्पर रहेंगे, और यह कि वे स्त्रियां तथा पुरुषों को अपना प्रेम जीवन स्वयं अपनी इच्छानुसार ढालने के लिए अधिक स्वतन्त्रता का स्वीकार करेंगे" (वेस्टरमार्क, 1928, बी)।

देखा गया है कि विवाह का अर्थ बदलता जा रहा है और हो सकता है कि आगे चलकर उसमें और अधिक परिवर्तन हो, फिर भी एक संस्था के रूप में विवाह दृढ़ रूप से स्थापित है, शायद पहले से भी अधिक दृढ़ रूप से। इस बात की और अधिक पुष्टि इस बात से भी होती है कि अब ऐसी शिक्षित स्त्रियों की संख्या बढ़ गयी है जो विवाह करना चाहती हैं, और इस बात से भी कि लोग अब पहले कभी की अपेक्षा अधिक विवाह कर रहे है।

कुल मिलाकर, सभी आयु वर्गों की नौजवान शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ अब भी यही परम्परागत विचार रखती हैं कि जीवन की परिपूर्णता के लिए विवाह एक आवश्यकता है और वे इस बात को अधिक पसन्द करती हैं कि विवाह वैदिक पद्धति के अनुसार और परम्परागत विधियों के साथ सम्पन्न किया जाये। उनमें से अधिकांश परम्परा से अलग इस दृष्टि से हैं कि वे केवल जाति की सीमाओं के अन्दर या प्रान्त की सीमाओं के अन्दर विवाह करने में दृढ़ विश्वास नहीं रखती और अलग अलग जातियों तथा अलग अलग प्रान्तों के लोगों के बीच विवाह में उन्हें कोई आपत्ति नहीं है।

फिर भी यह देखा गया है कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियां विवाह की अधिक आवश्यकता अनुभव करने लगी हैं तथा उसके लिए अधिक प्रयत्नशील रहने लगी हैं, हालांकि उनके लिए इसका अर्थ बदल गया है, और इसके साथ ही इन बातों में भी परिवर्तन आ गया है कि वे किस प्रकार के विवाह को अधिक पसन्द करती हैं और किन अभिप्रेरणाओं तथा कारणों से विवाह करना चाहती है और विवाह से उनकी प्रत्याशाएँ क्या हैं।

### सेक्स के प्रति अभिवृत्तियाँ

सेक्स की मूल प्रवृत्ति की जविक प्रयोजनवत्ता के सम्बन्ध मे कभी कोई मतभेद नही रहा है। सभी धर्मों के धर्मग्रन्थों मे इस बात का प्रमाण मिलता है कि वंशवृद्धि का एक अत्यन्त सराहनीय, आवश्यक तथा उदात्त कर्तव्य ठहराया गया है। सभी ने इस उद्देश्य से किये जाने वाले सेक्स कर्म को अत्यन्त वांछनीय बताया है। परन्तु केवल इन्द्रियों की तुष्टि के लिए इसका पालन नैतिक तथा सामाजिक विवादों का विषय रहा है। नेल्सन ने ठीक ही कहा है

> सेक्स तीन अक्षरों का ऐसा शब्द है जो अत्यन्त तीव्र मत, भावात्मक तेखन तथा अपराध की भावनाओं को उद्दीप्त करता है, जो बैठकखाना की बातचीत, सामूहिक शयनागारों की बातों तथा पुस्तकालयों, पेशाबखानों की दीवारों, धार्मिक प्रवचनों, कलाकृतियों, सार्वजनिक कानूनों तथा वैयक्तिक निर्णयों का विषय रहा है। यह बहुत सशक्त तथा विवादग्रस्त विषय इसलिए रहा है कि इसमें प्रत्येक व्यक्ति के मूल्य अत्यन्त निजी ढंग से निहित रहते हैं और इसमें किसी समाज विशेष का आधारभूत मूल्य विधान भी निहित रहता है (नेल्सन, 1970 पृष्ठ 3)।

सेक्स-सम्बन्धी मान्यताएँ बदलती जा रही है और सेक्स के प्रति नये विचारों तथा अभिवृत्तियों से अनेक ऐसे नागरिकों, मनोविज्ञानवेत्ताओं तथा सामाजिक विचारकों में चिन्ता उत्पन्न हो सकती है जो यह अनुभव करते है कि वर्जनाओं की बढती हुई अवहेलना दायित्वहीन अनास्था की ओर बढने की प्रवृत्ति की और अन्ततोगत्वा उनके सामाजिक क्षय के निकट पहुचते जाने की सूचक है। परन्तु कुछ दूसरे लोग ऐसे भी हैं जो सेक्स-सम्बन्धी अभिवृत्तियों में उभरती हुई 'अनुज्ञात्मकता' को या वर्जनाओं के ध्वंस को नैतिक पतन का संकेत नही समझते। इसके विपरीत वे अनुभव करते हैं कि यह शायद सबसे स्वस्थ बात है जो हो सकती थी।

अनेक प्रमुख विद्वानों ने इस विवादग्रस्त विषय पर प्रकाश डाला है और सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता, विवाह-पूर्व मैथुन की वांछनीयता तथा विवाह की परिधि के बाहर छूट जैसी समस्याओं के पक्ष मे या उसके विरुद्ध मत व्यक्त किये हैं। उनमे से कुछ लोगों के मत यहाँ उद्धृत किये जा रहे है। रसेल लिखते हैं

> अधिकांश परम्परानिष्ठ नैतिकतावादियों का यह विचार प्रतीत होता है कि यदि हमारे सेक्स सम्बन्धी आवेगों की सख्ती के साथ रोकथाम न की गयी तो वे बहुत तुच्छ अराजकतापूर्ण और अभद्र हो जायेंगे। मेरा विश्वास है कि इस मत का स्रोत ऐसे लोगों का अवलोकन करने में निहित है, जो अपने जीवन के प्रारम्भिक काल से सामान्य प्रावरोध ग्रहण कर लेते हैं और बाद मे उनकी उपेक्षा करने का प्रयत्न करते है (रसेल, 1959, पृष्ठ 210)।

सोरेंसैन का दृढ मत है, "पुरुष तथा स्त्रियाँ दोनो ही स्वभावत सेक्स की दृष्टि से स्वैर होते हैं। इस स्पष्ट सत्य को व्यक्त कर देने के बाद, स्वतन्त्रता से न तो स्वैरिता को प्रोत्साहन मिलता है और न ही उसकी अभिव्यक्ति मे बाधा पडती है" (सोरेंसेन, 1941, पृष्ठ 371)। लगभग चार दशाब्दी पहले सेक्स सम्बन्धों के भविष्य की विवेचना करते हुए पोमेराई ने लिखा था, "मैं उस समय की आस लगाये हूँ जब विवाह की परिधि के बाहर रियायतें, जैसी आदिम काल मे भी पायी जाती थी, स्वतन्त्र तथा समान विवाहित सहचारियो के बीच 'सीमित प्रकार की रियायता' के रूप मे स्वीकार कर ली जायेंगी और जब जीवन पहले की अपेक्षा असीम रूप से परिपूर्ण, अधिक समृद्ध तथा अधिक स्वतन्त्र होगा' (पोमेराई, 1936 पृष्ठ 132)।

विवाह के विषय पर लिखी गयी अधिकाश नियम-पुस्तिकाओ, सेक्स शिक्षा से सम्बन्धित प्रबन्धो, नैतिक दर्शनो और अधिकाश तकनीकी साहित्य मे जैसे बेकर तथा हिल मे कोहन के लेख (1942, पृष्ठ 226), पोपनोए (1943, पृष्ठ 113 128), दुवाल तथा हिल (1945, पृष्ठ 141-163), किर्कंडाल (1947, पृष्ठ 26-31) लडिस तथा लैडिस (1948, पृष्ठ 124 131), क्रिस्टेंसेन (1950, पृष्ठ 149 158) फास्टर (1950, पृष्ठ 66-69) और दुडेसेन (1951, पृष्ठ 88 120) की कृतियां विवाह पूर्व मैथुन की सामान्य अवांछनीयता तथा उसके दोषो पर जोर दिया गया है इसके विपरीत लेवी तथा मुनरो (1938, पृष्ठ 1-46), राइख (1945, पृष्ठ 111 115 कम्फर्ट (1950, पृष्ठ 89), फानहम (1951, पृष्ठ 130 135), और स्टोन तथा स्टं (1952, पृष्ठ 246 259) जैसे लोगो के अध्ययनो मे विवाह पूर्व सेक्स-अनुभव के प्रति सहिष्णुता की अभिवृत्तियो की पैरवी की गयी है (देखिये किसे, 1953, पृष्ठ 307-308)। इस विषय पर किसे का मत है

> एक ओर तो यह दावा किया जाता है कि विवाह से पहले मैथुन पर जो आपत्तियाँ की जाती हैं वे मुख्यत नैतिक हैं, उन स्थितियो मे भी जब वे व्यावसायिक दृष्टि से प्रशिक्षित व्यक्तियो की लिखी हुई प्रकटत तकनीकी नियम पुस्तकों में प्रस्तुत की जाती हैं। दूसरी ओर यह दावा किया जाता है विवाह पूर्व मैथुन के पक्ष में जो तर्क दिये जाते हैं वे अन्ततोगत्वा उसमे भाग लेनेवाले दोनो पक्षो के या सामाजिक संगठन की भलाई की चिन्ता से अधिक सुखमूलक कामनाओं पर आधारित होते हैं। एक ओर तो इस बात पर आग्रह किया जाता है कि लोकचार की उत्पत्ति उस प्राचीन अनुभव से हुई थी जो वर्तमान काल के लिए भी सार्थक है। दूसरी ओर यह दावा किया जाता है कि परिस्थितियाँ बदल गयी हैं और यह कि विवाह-पूर्व मैथुन पर पहले जो आपत्तियाँ की जाती थी उनमे से कई आज की दुनिया म सार्थक नही रह गयी है जिनमे गर्भाधान को नियंत्रित करने और रतिज रोगो की रोकथाम करने के उपाय मालूम कर लिये गये हैं और मानव

सम्बन्धो के आधारभूत सवेगो तथा समस्याओ के स्वभाव के बारे म कुछ वज्ञानिक समझ बूझ प्राप्त कर ली गयी है। वज्ञानिक आधार सामग्री जसी कोई चीज एकत्रित करने क प्रयास बहुत थोडे ही हुए हैं (क्लिसे, 1953, पृष्ठ 309)।

पोमेराई कहते हैं कि "आजकल के पुरुष तथा स्त्रियाँ एक ऐसी कामुकता से पीडित हैं जिसे विक्षिप्तता से भिन्न करके देखना बहुत कठिन है, और जब श्री एच० जी० वेल्स ने कहा था कि 'हमारी वतमान सभ्यता सेक्स के पीछे पागल है तो उन्होने केवल सत्य ही कहा था। सभ्यता के आधीन मनुष्य अपने असभ्य पूवजो का अपेक्षा अधिक कामुक हो गया है' (पोमेराई 1936, पृष्ठ 16)। आधुनिक पुरुषो तथा स्त्रियो के बारे मे जो बात पोमेराई ने अब से तीन दशक स अधिक पहले कही थी वह भारत के शहरो के शिक्षित आधुनिक युवा-वग के बारे मे आज भी सत्य प्रतीत होती है, और रसेल के अनुसार इसका कारण यह है कि सभ्य मनुष्य पर आवश्यकता स अधिक प्रतिबन्ध लगा दिये गये हैं। "जब स्वतन्त्रता होती है तो सेक्स अपना उचित स्थान ग्रहण करता है और हर समय दिमाग पर छाया रहने वाला उन्माद नही रह जाता" (रसेल, 1951, पृष्ठ 150)।

अतीत काल की, बल्कि अभी कुछ ही वर्ष पहले तक की या कट्टरपंथी परिवारो की आजकल की भी हिन्दू स्त्रियाँ सेक्स के बारे मे चर्चा करने को भी अरुचिकर तथा अभद्र मानती हैं। सेक्स के विषय को वर्जित माना जाता था और बच्चो के सामने या अन्य पुरुषो के सामने उस पर चर्चा नही की जाती थी। अब पहले की अपेक्षा अधिक हद तक शिक्षित श्रमजीवी युवतिया इस बात मे कोई बुराई नही समझती है कि माता पिता अपने बच्चो के सामने खुलकर और सच्ची भावना के साथ सेक्स पर चर्चा करें या युवा लडके तथा लडकिया आपस म खुलकर इस पर चर्चा करें। 'जिस तरह सच्चा और झूठा प्रेम होता है ठीक उसी प्रकार सच्चा और झूठा सकोच भी होता है। हमारे तथाकथित सकोच का अधिकाश भाग तो चालाकी का होता है और उसम काफी मात्रा मे मक्कारी का मिश्रण रहता है" (स्टेकल, 194 , पृष्ठ 210)। जिस समय प्रस्तुत अध्ययन का दूसरा चरण सम्पन्न किया जा रहा था उसस लगभग तीन दशक पहले स्टेकेल ने जो विश्लेषण किया था वह बदलती हुई सेक्स-सम्बन्धी अभिवृत्तिया के बारे म आज भी साथक है, और अब अधिकाधिक सख्या म शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ यह अनुभव करने लगी हैं कि सेक्स समस्याओ के बारे मे स्पष्टवादी न होना, विशेष रूप स विवाह की परिधि के अन्दर सरासर मिथ्या सकोच है। भारत मे प्राचीन काल के लोग सक्स के प्रति श्रद्धा का भाव रखत थ और इसी भाव से उसका उल्लेख करते थ। हमे इस प्रकार के उल्लेख वेदों, उपनिषदो रामायण, महाभारत तथा विभिन्न पुराणों म मिलते हैं। लेकिन बाद मे चलकर परम्पराबद्ध हिन्दू स्त्रियाँ इस अशिष्ट तथा पतित चीज समझने लगी और आज भी समझती हैं। परन्तु अब एक दशक के अन्दर ही शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ पहले की

अपेक्षा अधिक संख्या में सेक्स के बारे में खुलेआम चर्चा करने लगी हैं और उसे तिरस्कार की दृष्टि से देखनेवाली स्त्रियों की संख्या कम हो गयी है।

वैदिक काल में पुरुष तथा स्त्रियां घरों में, उपासनागृहों में तथा बाजारों में और विद्यापीठों में भी बिना किसी रोक टोक के घूमते फिरते थे। गुरुकुलों में लड़के और लड़कियाँ साथ साथ अपने गुरु के चरणों में बैठते थे। इस तरह खुलकर मिलने-जुलने पर किसी प्रकार की आपत्ति नहीं की जाती थी। बाद में चलकर सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण हिन्दू समाज की पूरी व्यवस्था बदल गयी और उस समय से स्त्रियों के लिए अपने घर की चारदीवारी से बाहर निकलने की मनाही कर दी गयी। खुलकर मिलना जुलना तो दूर रहा, बिना पर्दे के पुरुषों के सामने आना भी निषिद्ध कर दिया गया। ये परिस्थितियाँ इतने दीर्घकाल तक बनी रहीं कि परम्पराओं में जकड़ी हुई हिन्दू स्त्री आज भी इन अभिवृत्तियों को त्याग नहीं सकी है। वह अपने पिता, भाई या पति के अतिरिक्त अन्य पुरुषों के साथ मिलने जुलने को अनैतिक समझती है। फिर भी शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियाँ इन अभिवृत्तियों को त्यागती जा रही हैं, जैसा कि इस बात से स्पष्ट होता है कि अब वे अधिकाधिक संख्या में उन्मुक्त रूप से मिलने जुलने का अनुमोदन करने लगी हैं, हालांकि रूढ़िबद्ध तथा पिछड़े हुए परिवारों की शिक्षित श्रमजीवी युवतियाँ केवल समूहों में ही खुलकर मिलने जुलने का अनुमोदन करती हैं और सो भी बौद्धिक, मनोरंजनात्मक तथा सांस्कृतिक प्रयोजनों के लिए। परन्तु उन्नत परिवारों की दिल्ली में काम करनेवाली उन शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू युवतियों की अभिवृत्तियों में बहुत स्पष्ट परिवर्तन दिखायी देता है जो पाश्चात्य सभ्यता से सबसे अधिक प्रभावित हुई हैं। वे दो भिन्नलिंगी व्यक्तियों के आपस में समूह के रूप में या एकान्त में खुलकर मिलने जुलने का अनुमोदन करती हैं।

यह बात वांछनीय हो या अवांछनीय परन्तु दस वर्षों के अन्दर ही शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियों की सेक्स-सम्बन्धी अभिवृत्तियों में निश्चित रूप से परिवर्तन हुआ है भले ही इस सम्बन्ध में उनके वास्तविक आचरण में परिवर्तन न हुआ हो। यह बात ही कि स्त्रियाँ अब अधिकाधिक संख्या में व्यापारिक तथा व्यावसायिक जीवन में प्रवेश करने लगी हैं, अधिक सेक्स-सम्बन्धी स्वतन्त्रता और स्त्रियों तथा पुरुषों के अधिक उन्मुक्त रूप से आपस में मिलने-जुलने का कारण बन जाती है। आधुनिक शहरी केन्द्रों में अधिक आधुनिक ढंग के रहन-सहन के फलस्वरूप भिन्नलिंगी व्यक्तियों के सम्पर्क में आने के कहीं अधिक अवसर उपलब्ध हो गये हैं। आज पहले की अपेक्षा युगल बन्धन के अतिरिक्त कहीं अधिक ऐसी परिस्थितियाँ सामने आती हैं जिनमें पुरुष तथा स्त्रियाँ एक-दूसरे के साथ होते हैं। अधिक व्यापक सामान्य स्वतन्त्रता के फलस्वरूप सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता में भी वृद्धि हो सकती है और फिर इसके फलस्वरूप परम्परागत सेक्स सम्बन्धी प्रतिबन्ध तथा वर्जनाएँ भंग भी हो सकती हैं।

एक ही दशक के अन्दर सभी आयु वर्गों में अब ऐसी शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों

की संख्या पहले से अधिक हो गयी है जो सेक्स सम्बन्धी कामना को कोई दूषित अथवा गन्दी चीज़ समझने के बजाय एक जविकीय, सामाजिक तथा मानसिक दृष्टि से एक प्रकृत घटना समझने लगी हैं। और अब ऐसी स्त्रियों की संख्या पहले की तुलना में कम हो गयी है जो सन्तान पैदा करने की इच्छा को सेक्स सम्बन्धी गतिविधियों का एकमात्र वैध उत्प्रेरण मानती हो। यह संकल्पना भारत के लिए सर्वथा नयी नहीं है, क्योंकि प्राचीन काल में वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र में अन्य बातों के अतिरिक्त यह बात भी स्पष्ट शब्दों में कही थी कि शरीर के अस्तित्व तथा कल्याण के लिए कामतुष्टि भी उतनी ही आवश्यक है जितना कि भोजन (1,2 46)। प्राचीन भारत में वात्स्यायन के काल में शृंगारिक कला प्रचुर मात्रा में पायी जाती थी और खजुराहो की काम कला का उद्देश्य लोगों को प्रेम करने की कला सिखाना माना गया था। बाद में चलकर हम बिल्कुल दूसरे छोर पर पहुंच गये जब सेक्स का उल्लास करना भी अश्लील माना जाने लगा और उससे सम्बन्धित हर चीज़ वर्जित घोषित कर दी गयी। अब एक बार फिर यह बात देखी गयी है कि शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियों के बीच यह विश्वास जागृत हो रहा है कि सेक्स से आनन्द प्राप्त करना पाप नहीं है। इसके विपरीत अब पहले की तुलना में अधिक स्त्रियाँ यह अनुभव करने लगी हैं कि यह एक मानव अधिकार है और इसलिए इसका औचित्य सिद्ध करने के लिए किसी और चीज़ की ज़रूरत नहीं है।

मक्ग्रेगोर ने बताया है कि सबसे पहले हैवलाक एलिस ने 'बहुत-से लोगों को इस बात से अवगत कराने में सहायता दी कि स्त्रियों का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व होता है और उनकी अपनी वैध सेक्स सम्बन्धी आवश्यकताएँ तथा उनकी तुष्टि होती है। उनकी रचनाओं के बाद से ही सेक्स-सम्बन्धी अभिवृत्तियाँ अज्ञान तथा अन्ध-विश्वास से ज्ञान तथा आत्म चेतना की दिशा में संक्रमित होने लगीं" (मक्ग्रेगोर 1972 पृष्ठ 44 59)। अन्य बातों के अतिरिक्त, फ्रायड की विचारधारा ने भी सेक्स के प्रति आमतौर पर एक नयी अभिवृत्ति उत्पन्न करने में निश्चित योगदान किया है। इस विचारधारा ने जीवन में सेक्स के स्थान को व्यापक मान्यता तथा स्वीकृति दिलाने में बहुत सहायता दी।

जिन समाजों में सेक्स के प्रति अभिवृत्ति प्रतिबन्धों से मुक्त है, उनमें सेक्स को 'जीवन का एक सुखद तथा महत्त्वपूर्ण तथ्य' माना जाता है, "कोई ऐसी अनुचित बात नहीं जिसे लज्जित होकर छुपाने की कोशिश की जाय। नियम होते अवश्य हैं पर वे सेक्स आचरण का दमन करने के लिए नहीं बल्कि उसे नियन्त्रित करने के लिए होते हैं" (हर्मिंग, 1970, पृष्ठ 128)। क्लाफ लिखते हैं, "प्राचीनकालीन हिन्दू पुरुषों तथा स्त्रियों के बीच शरीर क्रिया सम्बन्धी तथा मनोक्रिया-सम्बन्धी अन्तरों को पहचानते थे। वे जानते थे कि मैथुन के दौरान उसकी अवधि से अधिक महत्त्व उसकी गतिक्रम का होता है, और यह कि स्त्री में काम-तृप्ति का चरमोत्कर्ष उत्पन्न करने के लिए कौशल तथा धैर्य की आवश्यकता होती है" (क्लाफ, 1964 पृष्ठ 9)। सबसे

महत्वपूर्ण बात यह है कि वात्स्यायन ने स्त्री का चित्रण उस रूप मे किया है कि वह भी पुरुषो जितनी ही प्रबल सेक्स अनुक्रिया की क्षमता रखती है। यह एक अत्यन्त आधुनिक विचार है जो पाश्चात्य सेक्स ज्ञान मे बीसवी शताब्दी में ही जाकर उभरा है। वात्स्यायन के अनुसार पुरुष को इस बात की पूरी चेष्टा करनी चाहिए कि उसके साथ सेक्स क्रिया मे भाग लेनेवाली स्त्री की तुष्टि हो। यह एक ऐसी अभिवृत्ति या माँग है जिसे बहुत समय तक पूरी तरह दबाकर रखा गया था और जो अब भारत के शहरो की शिक्षित तथा प्रबुद्ध स्त्रियो के बीच उभरने लगी हैं।

परन्तु वात्स्यायन के काल (चौथी शताब्दी ईस्वी) मे भी सेक्स-सम्बन्धी नैतिकता का दोहरा मानदड निश्चित रूप से था। हिन्दू पत्नी से यह आशा की जाती थी कि यदि उसका पति विवाह की परिधि से बाहर भी सेक्स का भोग करे तो उसे बिना किसी आपत्ति अथवा रोष के उसे सहन कर लेना चाहिए, जबकि उससे स्वयं इस प्रकार के आचरण से सर्वथा दूर रहने की आशा की जाती थी। इस प्रकार के समाज में जिस पर पुरुषो का प्रभुत्व था, पुरुषो के लिए अक्षतयोनि कन्याओ के साथ, अन्य पुरुषो की पत्नियो के साथ, या जो भी स्त्री उपलब्ध हो सके उसके साथ, चाहे वह उसकी ही जाति की हो या उससे नीची जाति की हो, अपनी काम वासना को तृप्त करने की पूरी स्वतन्त्रता थी। पुरुषो को गणिकाएँ रखने की भी छूट थी। ऐसे पुरुषो के लिए जिनकी सेक्स शक्ति क्षीण होने लगी हो उनके लिए कामोत्तेजक औषधियो अथवा उद्दीपन के कृत्रिम उपायो का भी परामर्श दिया जाता था।

शताब्दियो तक पुरुष तो अपने सुख-भोग के लिए या सन्तान उत्पन्न करने के लिए स्त्री के शरीर का निःसकोच उपयोग करते रहे, परन्तु यदि स्त्री विवाह की परिधि के अन्दर भी अपने सेक्स जीवन मे अनुभव किये गये सुखो को व्यक्त करती थी तो उसे उच्छृखल तथा अनैतिक समझा जाता था। इस दोहरे मानदड मे निहित विश्वास के कारण ही परम्परावद्ध पति अपनी पत्नी का सम्मान केवल तभी करता है जब वह उसके साथ अपने सेक्स सम्बन्धो मे पूरी तरह अनुक्रियात्मक आचरण का परिचय न दे क्योकि वह यह समझता है कि किसी सम्मानित स्त्री के लिए विवाह की परिधि मे भी सेक्स कर्म मे सक्रिय रूप से भाग लेना अशोभनीय है और यह केवल पुरुष का हिस्सा तथा उसका विशेषाधिकार है। यह स्पष्ट है कि सेक्स-सम्बन्धी सामान्य नैतिकता के बारे मे और विवाहित जीवन मे सेक्स आचरण के बारे मे इस प्रकार का दोहरा मानदड स्त्री को पूरी तरह पुरुष के आधीन रखने के सुदृढ आधार के बिना टिक ही नही सकता था।

सेक्स के क्षेत्र मे शताब्दियो तक दबे कुचले रहने और चुपचाप सहन कर लेने के बाद, अब शिक्षित स्त्रियो ने, विशेष रूप से शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो ने, सेक्स सम्बन्धी नैतिकता के दोहरे मानदडो के औचित्य को चुनौती देना तथा उसके बारे शकाएँ उठाना आरम्भ कर दिया है। अधिकाधिक सख्या मे इन श्रमजीवी स्त्रियो मे सेक्स सम्बन्धी नैतिकता के दोहरे मानदड को स्वीकार करने से इकार करने और

उसे चुनौती देने और पुरुषों तथा स्त्रियों के लिए अधिक समरूप मानदण्ड में विश्वास करने की जो नयी प्रवृत्ति पायी जाती है वह पुरुषों तथा स्त्रियों के बीच विशेषाधिकार तथा दायित्व के बराबर बराबर बँटवारे की उभरती हुई माँग की ही द्योतक है।

प्रस्तुत अध्ययन में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि सेक्स के सम्बन्ध में जो कुछ उचित है उसकी सकल्पना में उतना अधिक परिवर्तन नहीं हुआ है जितना इस विचार में कि उसमें क्या अनुचित है। ऐसे आचरण जिनके बारे में वे समझती हैं कि उनमें कोई बुराई नहीं है' उनकी संख्या तथा उनकी सीमाओं की व्यापकता दोनों ही में वृद्धि हुई है। शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के उन्नत वर्गों में विवाह की परिधि के अन्दर भी और उसके बाहर भी सक्स-तुष्टि तथा सेक्स सम्बन्धी प्रयोगों के बारे में स्त्रियों के अधिकार पर अधिकाधिक आग्रह किया जाने लगा है। अब वे पहले की तुलना में अधिक हद तक सेक्स-भोग को केवल विषय वासना समझने के बजाय आनन्द प्राप्त करने का तथा तनाव कम करने का स्रोत समझने लगी हैं। कुण्ठाओं से मुक्त तथा कोमल भावों तथा पारस्परिक स्नेह तथा सम्मान से युक्त सेक्स अनुभव को अधिकाधिक संख्या में इस प्रकार की स्त्रियाँ एक मूल्यवान अनुभव समझने लगी हैं, वह विवाह की परिधि के अन्दर हो या उससे बाहर। और इसके साथ ही स्त्री के स्वैर आचरण के बारे में उनकी परिभाषा भी बदल गयी है। उनके लिए स्वैरिता का अर्थ है गम्भीर रूप से लिप्त हुए बिना और केवल मौज उड़ाने के लिए सेक्स का भोग करना। आधुनिक तथा उन्नत शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के बीच यह अभिवृत्ति उभरती हुई पायी जाती है कि स्वच्छापूर्वक परस्पर सहमत प्रौढ़ व्यक्तियों के बीच सेक्स कर्म, चाहे वह हर बार एक ही व्यक्ति के साथ किया जाये अथवा भिन्न भिन्न व्यक्तियों के साथ, उन व्यक्तियों का निजी मामला है और उससे किसी और का कोई सम्बन्ध नहीं है।

सामाजिक परिस्थितियाँ जहाँ तक अनुमति दें उस सीमा तक वात्स्यायन उन्मुक्त प्रेम में विश्वास रखते थे। यह बात एक प्रकार से प्राचीन भारत में भी उन्मुक्त प्रेम को स्वीकार करने की अभिवृत्ति की द्योतक है। इसलिए इसमें कोई सर्वथा नयी बात नहीं है। परन्तु वात्स्यायन के बाद कई शताब्दियों तक उन्मुक्त प्रेम को, विशेष रूप से स्त्रियों के प्रसंग में इतना अपमानजनक समझा जाता था कि उसकी कल्पना भी नहीं की जाती थी। यद्यपि दस वर्ष पहले भी केवल एक प्रतिशत से कुछ ही अधिक शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों ने उन्मुक्त प्रेम की सकल्पना का उल्लेख किया था, फिर भी यह देखा गया कि एक दशक बाद यह सकल्पना अधिक स्पष्ट हो गयी थी और उसकी रूपरेखा का धुँधलापन कम हो गया था। इसके अतिरिक्त यह बात तो थी ही कि इस शब्दावली का प्रयोग करनेवाली स्त्रियों की संख्या भी बढ़ गयी थी। उनके लिए अब उन्मुक्त प्रेम का अर्थ विवेकहीन सेक्स सम्बन्ध नहीं रह गया है, बल्कि उसका अर्थ हो गया है विवाह के परम्परागत बन्धनों अथवा दायित्वों में जकड़े रहे बिना किसी से भी प्रेम

करने की स्वतन्त्रता, क्योंकि उनके अनुसार केवल इसी स्थिति में प्रेम वाह्य रूढ़िगत
बन्धनों के माध्यम से नहीं बल्कि स्वयं अपनी शक्ति के बल पर जीवित रह सकता है।
वे अनुभव करती हैं कि किसी भी व्यक्ति को सच्ची भावनाएँ बनी रहने तक प्रेम करने
की स्वतन्त्रता होनी चाहिए और उन्हें इस बात की भी स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि
जब उनके बीच प्रेम बाकी न रह जाये तो वे अपने प्रेमी अथवा अपनी प्रेमिका को छोड़
दें। उनके अनुसार प्रेम एक आन्तरिक शक्ति है जिसका सम्बन्ध आत्मा से है, वह
कोई ऐसा कर्त्तव्य नहीं है जिसका पालन उससे सम्बन्धित व्यक्तियों के लिए सुखद तथा
सन्तोषप्रद न रह जाने के बाद भी करते रहना आवश्यक हो। कीतया ब्लाउ ने भी कुछ इसी
प्रकार की विचारधारा इन शब्दों में व्यक्त की है, "प्रेम जीवन की एक आध्यात्मिक
शक्ति है, और अधिक निर्विकार नस्ल प्रेम से ही उत्पन्न की जा सकती है, जिसके लिए
प्रेम की अन्तर्मुखी स्वतन्त्रता अनिवार्य है। आजीवन प्रेम एक आदर्श है परन्तु कर्त्तव्य
नहीं। तलाक सर्वथा उन्मुक्त होना चाहिए' (देखिये रोबी, 1967, पृष्ठ 114)।

आजकल की शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के बीच स्नेहयुक्त सेक्स आचरण की
वांछनीयता के प्रति एक निरन्तर बढ़ती हुई बौद्धिक अभिवृत्ति पायी जाती है। वे इस
प्रकार की स्थिति को केवल सुखवादी भोग विलास अथवा विफलता या निराशा को दूर
करने का साधन न मानकर एक सकारात्मक अनुभव के रूप में उचित ठहराती हैं।
सेक्स के प्रति अनुज्ञात्मकता की प्रवृत्ति के साथ 'प्रेम सहित सेक्स' की शर्त लगा दी गयी
है, जो नयी उदीयमान नैतिकता है। सेक्स सम्बन्धी मानदंडों में यह नयी विकासशील
प्रवृत्ति कई प्रकार से उस प्रवृत्ति से मिलती जुलती है जो विवाह पूर्व सेक्स अनुभव के
सम्बन्ध में अमरीका में पायी जाती है, जैसा कि राइस ने अपने अध्ययन में पता लगाया
है (राइस, 1960)। जिन शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियों का अध्ययन किया गया है,
उनमें जो सेक्स-सम्बन्धी मानदंड विकसित होता हुआ पाया गया है उसे राइस की
शब्दावली में "स्नेह सहित अनुज्ञात्मकता" कहा जा सकता है।

विवाहित जीवन में सेक्स की सकल्पना में भी यह परिवर्तन हुआ है कि उसे
केवल सन्तानोत्पत्ति का साधन समझने के बजाय 'एक स्वस्थ ऐन्द्रिय सुख' माना जाने
लगा है। इसकी पुष्टि इस बात में होती है कि ये स्त्रियाँ अधिकाधिक संख्या में विवा
हित जीवन में सेक्स को केवल एक जैविकीय अथवा शारीरिक आवश्यकता न मानकर
उसे एक सामाजिक-मानसिक आवश्यकता समझने लगी हैं जिसकी तुष्टि केवल सेक्स
की मूल प्रवृत्ति की तुष्टि से नहीं बल्कि विवाहित जीवन में सम्पूर्ण "सामाजिक-मानसिक
सेक्स आवश्यकता" की तुष्टि से होती है। बोमन ने (1954) भी अपने अध्ययन में
इसी प्रकार के निष्कर्षों का उल्लेख किया है। प्रस्तुत अध्ययन की और लेखिका के दूसरे
अध्ययन **विवाह और** भारत की श्रमजीवी स्त्रियाँ (कपूर, 1970) की परिमाणात्मक
तथा गुणात्मक दोनों ही प्रकार की आधार सामग्री में इस बात के प्रबल संकेत मिलते
हैं कि विवाह की परिधि के अन्दर सेक्स की तुष्टि के अपने विशेषाधिकारों को पाने के
लिए आग्रह करके अधिकाधिक शिक्षित स्त्रियाँ अब विवाहित जीवन में सेक्स की मर्यादा

को ऊँचा उठा रही हैं, वे अब इस स्थिति को स्वीकार करने को तयार नहीं हैं कि विवाहित जीवन में सक्स केवल पुरुष के सक्स-सम्बन्धी तनावों को दूर करने का साधन होना है जबकि पत्नी को सवथा निष्क्रिय रहना होता है, वे उसे शारीरिक उल्लास, तनाव-शथिल्य तथा सन्तोष की एक पारस्परिक साझेदारी के पद पर पहुचा देना चाहती हैं।

विवाह से पहले अक्षतयोनि रहने का जो आग्रह किया जाता है उसे भी सवथा समाप्त कर देने की भी एक बढती हुई प्रवत्ति पायी जाती है, हालांकि यह प्रवत्ति अभी बहुत मन्द तथा क्षीण है और विवाह पूव सक्स अनुभव तथा सेक्स-सम्बन्धी अनुज्ञात्मकता के पक्ष में भी प्रवत्ति धीरे-धीरे विकसित हो रही है। अधिकांश स्त्रियों की दृष्टि में अब भी विवाह-पूव सेक्स सम्बन्ध अनुमेय नहीं हैं, परन्तु इस प्रकार के सम्बन्धों का अनुमेय मानने वाली स्त्रियों की सख्या पिछले दस वर्षों में बढी है। इसमें सन्देह नहीं कि व इस प्रकार के सम्बन्धों को बदाश्त कर लेने के लिए अब पहले से अधिक तत्पर हैं फिर भी ऐसी स्त्रिया इनी गिनी ही है, बहुत ही थोडी सख्या में जो परम्परागत सक्स सम्बन्धी लोकाचार को सवथा अस्वीकार करती हो, और [illegible] भी हैं वे स्वय अपने पतिव्रत तथा प्रम के उच्च मानदडो पर बहुत जोर देती हैं।

परन्तु सबसे अधिक व्यापक परिवतन इस क्षेत्र में देखा गया है कि वे विवाह से पहले की तथा विवाह की परिधि के बाहर की हर प्रकार की सेक्स-सम्बन्धी गतिविधियों तथा आचरणों के बारे में, जिनमें परीक्षण विवाह, सामूहिक सेक्स तथा पत्नियों की अदला-बदली भी शामिल है खुलकर चर्चा करने का [illegible] बर्दाश्त करने लगी है तथा उसमें भाग लेने लगी है। एसे लोगों के प्रति भी पहले से अधिक सहिष्णुता दिखायी जाती है जो नये प्रकार के सामाजिक-सेक्सीय सम्बन्धों के बारे में नये-नये प्रयोग करना चाहते हैं। यह देखा गया है कि विवाहेतर सेक्स सम्बन्ध अथवा [illegible] की अपेक्षा परस्त्रीगमन अथवा परपुरुषगमन के प्रति अनिवृत्ति अधिक [illegible] हो गयी है।

ये स्त्रियाँ जिस प्रकार की स्थितियों का अनुचित समझती हैं उनकी सख्या लगातार घटती जा रही है। पिछले [illegible] वर्षों के दौरान सेक्स-सम्बन्धी [illegible] सक्स-सम्बन्धी नतिक मानदण्डों की व्यवस्था और समाज के [illegible] के प्रति उनकी अभिवत्ति अधिक सहिष्णु तथा [illegible] हो गयी है [illegible] जा रहा है। परन्तु [illegible] वग की स्त्रियों में पायी गयी है। [illegible] 24 से 29 [illegible] कुछ वर्ष तक नौकरी [illegible] रह लेने के बाद ही उनके विचारों [illegible] है। परन्तु लगभग 34 वर्ष की आयु के बाद [illegible] तथा जड होना शुरू हो जाती है।

परन्तु इस दिशा में [illegible] के क्षेत्र में पहले जिस अस्वीकार [illegible]

किया जाने लगा है। इधर हाल के वर्षों में शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के बीच सेक्स के प्रति जो अधिक उदार अभिवृत्तियाँ पायी गयी वे मुख्यत प्रेम की परिवर्तित सकल्पना का और स्वास्थ्य-रक्षा से सम्बन्धित नयी विचारधाराओं का परिणाम थीं। अब ये स्त्रिया पहले की अपेक्षा अधिक सख्या में सेक्स का सन्तानोत्पत्ति के साधन के अतिरिक्त विवाहित जीवन में सन्तोष का एक महान् स्रोत भी मानने लगी है। अब इनमें एसी स्त्रियों की सख्या कही अधिक है जो विवाह से पहले या विवाह की परिधि के बाहर सेक्स अनुभव को क्षमा कर देने के लिए तैयार है, यदि वह 'सच्चे प्रेम' से प्रेरित हो। अब ऐसी स्त्रियों की सख्या भी पहले से अधिक है जो फ्रायड के इस सिद्धान्त से परिचित हैं कि सेक्स का दमन भावात्मक अस्वस्थता का कारण बन सकता है और अब वे किसी अविवाहित स्त्री की, या जिस स्त्री का विवाहित जीवन सुखी न हो, उसकी भी सेक्स-सम्बन्धी गुमराही को पहले से अधिक हद तक बर्दाश्त करने को तैयार रहती हैं।

यह बात बहुत रोचक है कि समानात्मक स्तर पर बहुत परिवर्तन हुआ है, और यह कि प्रेम, विवाह तथा सेक्स के प्रति बदलती हुई अभिवृत्तियों ने और इन विषयों पर उन्मुक्त चर्चा ने पहले की गुपचुप कानाफूसी का स्थान ले लिया है। सेक्स के विषय के बारे में प्रकटता को अधिकाधिक स्वीकार किया जाने लगा है। मूलभूत परिवर्तन समानतावाद, स्त्रियों द्वारा अनुज्ञात्मकता की अधिक स्वीकृति और सेक्स सम्बन्धी समस्याओं पर अधिक उन्मुक्त चर्चा की दिशा में हुआ है। विवाह से पहले तथा विवाह की परिधि के बाहर सेक्स अनुभव के प्रति उनकी अभिवृत्ति में सबसे उल्लेखनीय परिवर्तन इस बात में दिखायी देता है कि वे "अनुज्ञात्मक अभिवृत्तियों तथा मूल्यों" को और "सेक्स सम्बन्धी अनुज्ञात्मकता" को अधिक उन्मुक्त भाव से व्यक्त करने लगी हैं। उनके सेक्स सम्बन्धी आचरण में भी ऐसा ही परिवर्तन हुआ है या नहीं, इसका अध्ययन अभी वैज्ञानिक ढग से तथा विस्तारपूर्वक होना बाकी है। सेक्स के प्रति "अनुज्ञात्मक अभिवृत्तियों" की अधिक उन्मुक्त अभिव्यक्ति परम्पराबद्ध समाज की आवश्यकता से अधिक कठोर मानदडों के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया मात्र हो सकती है, या यह भी हो सकता है कि वह सेक्स के प्रति अपने विचारों तथा अभिवृत्तियों में अधिक जानकार तथा आधुनिक लगने की आवश्यकता का परिणाम हो, या यह भी हो सकता है कि वे केवल यह जताना चाहती हों कि उनकी अभिवृत्तिया नयी हैं।

जो भी हो, यह तथ्य तो अपनी जगह पर है ही कि इधर पिछले कुछ समय के दौरान सेक्स के प्रति उनकी अभिवृत्ति में काफी परिवर्तन हुआ है, जिसका कारण कुछ हद तक तो यह है कि समस्त समकालीन परिवेश में परिवर्तन हुआ है और बहुत बड़ी हद तक इसका कारण यह है कि एलिस, फ्रायड तथा वात्स्यायन जैसे प्रख्यात विद्वानों की रचनाओं तथा सिद्धान्तों के प्रति रुचि बढ रही है, वात्स्यायन के कामसूत्र को अब अधिक प्रमुखता प्राप्त हो गयी है। जिस शब्दावली को अभी एक ही दशाब्दी पहले सुनकर इन स्त्रियों को आघात पहुचता था उसी को अब वे अधिकाधिक सख्या में बिना

सजाये इस्तमाल करती हैं।



उनकी अभिवत्तिया म परिवतन का सकेत उनक पहनावे मे होनेवाले नये परिवतना म भी मिलता है, क्याकि कोई भी स्त्री जिस ढग क कपडे पहनती है वह इस बात का सबस बडा सकेत होता है कि वह स्त्री क्या है और वह क्या चाहती है कि लोग उसे किस रूप म देखें। स्त्री के शरीर के कामोत्तेजक अगा का आजकल दस वष पहल की तुलना म अधिक खुला रखा जाता है। इससे यह सकत मिलता है कि अब उह अपने शरीर के कामोत्तेजक क्षेत्रो के अधिक बडे भाग को प्रदर्शित करने मे पहल की अपेक्षा कम सकोच होता है, और यह कि वे स्त्री के अनावत्त शरीर को अश्लील नही समझती हैं।

सक्स अब उनके लिए वर्जित विषय नही रह गया है और पुरानी मक्कारी ढहती जा रही है। परिवतन इस बात से भी स्पष्ट है कि इस समय ऐसी पुस्तका, पत्रिकाओ, समाचारपत्रा तथा अन्य प्रकार के लोकप्रिय तथा सुलभ साहित्य का प्रकाशन तथा प्रचार प्रसार बडी तजी स बढता जा रहा है जिनम सक्स-सम्बन्धी विषया पर उनके विविध रूपा म चर्चा की जाती है, और इस बात स भी कि फिल्मा म भी सक्स-सम्बन्धी विषया तथा स्थितिया को प्रस्तुत करन की प्रवत्ति बढती जा रही है। अभी कुछ ही दशक पहल तक य सारी बातें प्राय वर्जित थी, और यो देखा जाय तो एक ही दशक पहल तक य बहुत छोटे पमाने पर पायी जाती थी। ऊपर बताये गये सभी तत्त्वा का सक्रिय हो उठना इस बात का द्योतक है कि जन-साधारण अभी एक ही दशक पहले की अपेक्षा उह अधिक बर्दाश्त करने लगे है तथा उनम रुचि लने लगे हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर भारत के शहरी क्षत्र मे, विशेष रूप स बडे बड शहरो मे, पिछले दो-एक दशको क दौरान धीरे धीरे सेक्स के प्रति अधिक उन्मुक्त तथा सकोच रहित अभिवृत्ति उभरी है।

समाज के विभिन्न भागो के सेक्स आचरण क वैज्ञानिक अध्ययनो का सहारा लिये बिना—जिनका इस देश मे लगभग सवथा अभाव है—हम केवल सेक्स के प्रति उनकी अभिवत्तियो के अध्ययनो क आधार पर विश्वास क साथ यह नही कह सकत कि सेक्स के बारे म अधिक स्पष्ट आचरण अधिक स्वरिता की द्योतक है या कम मक्कारी की। फिर भी अभिवत्तिया के इस अध्ययन स इस बात का पता अवश्य चलता है कि सेक्स के प्रति शिक्षित श्रमजीवी हिंदू स्त्रियो की अभिवत्तिया म पिछले एक दशक के अन्दर ही इतना परिवतन अवश्य आया है कि वे परम्परागत 'गुपचुप या 'अवरुद्ध' अभिवृत्ति से दूर हटती गयी हैं और उन्होने उसके प्रति अधिक निर्भीक सहिष्णु तथा यथार्थनिष्ठ अभिवृत्ति अपना ली है। जिस हद तक और जिस ढग से अब इस विषय पर चर्चा होने लगी है उनके कारण यह परिवतन और उजागर हो गया है।

शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया का सोचने का ढग अब पहले की अपेक्षा अधिक 'सेक्समय हो गया है। यह देखा गया है कि अधिकाधिक सख्या म इन स्त्रिया के लिए सेक्स हर समय दिमाग पर छाया रहनेवाला उन्माद-सा हो गया है। कुछ हद तक तो

इसकी वजह यह है कि विभिन्न बदलते हुए सामाजिक-सांस्कृतिक और राजनीतिक-आर्थिक तथा कानूनी कारणों से वे सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता सहित हर मामले में अपने बराबरी के अधिकार के बारे में अधिक सजग हो गयी हैं, और फिर वे सेक्स के बारे में तकनीकी वैज्ञानिक तथा अन्य प्रकार के साहित्य से अधिक परिचित हो गयी हैं जिसने उनमें अपनी शारीरिक आवश्यकताओं तथा उल्लासों की समानता की सजगता पैदा कर दी है। इस स्थिति में यदि उनकी सेक्स सम्बन्धी स्वतन्त्रता पर आवश्यकता से अधिक प्रतिबन्ध लगाये जाते हैं तो यह बात हर समय उन्हें सताती रहती है। कोमल प्रेम के अभाव को पूरा करने की उनकी बढ़ती हुई आकांक्षा के कारण भी वे लगभग उन्मादियों की तरह शारीरिक प्रेम अथवा सेक्स पर निर्भर रहकर उससे जीवन की सारी तुष्टियां प्राप्त करना चाहती हैं।

परन्तु यह कहना बहुत कठिन है कि इसका कारण यह है कि उन्हें सच्चे तथा हार्दिक प्रेम से वंचित रहने का आभास अधिक है या यह कि वे अपनी सेक्स सम्बन्धी आवश्यकता के बारे में अधिक सजग हो गयी है या यह कि उन पर सेक्स का भूत अधिक सवार रहने लगा है या यह कि वे प्रेम, विवाह तथा सेक्स से सम्बन्धित अपने मतों तथा विचारों के बारे में अधिक निःसंकोच, सत्यनिष्ठ तथा स्पष्टवादी हो गयी हैं। यद्यपि किर्कंडाल का अध्ययन शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के बारे में नहीं बल्कि अमरीका के युवा वर्ग के बारे में है, फिर भी उनके अभिमत युवा वर्ग की सेक्स सम्बन्धी अभिवृत्तियों के किसी भी अध्ययन के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। युवा वर्ग के बीच 30 वर्ष तक अपने काम के दौरान उन्होंने अनेक बार यह बात कही है कि नौजवानों पर सेक्स का भूत सवार नहीं रहता। वह लिखते हैं, "जहाँ तक सेक्स सम्बन्धी दुविधाओं के बारे में सोचने तथा उनका अर्थपूर्ण हल ढूंढने का सवाल है, वे अधिकांश प्रौढ़ लोगों की तुलना में अधिक नीतिपरायण अधिक स्पष्टवादी तथा अधिक ईमानदार होते हैं।" आगे चलकर वह लिखते हैं कि प्रौढ़ लोग उस भय में जकड़े रहते हैं "जो हमारे पूरे समाज पर छाया हुआ है और जो सेक्स से सम्बन्धित समस्याएं उत्पन्न होने पर अध्यापकों तथा प्रशासकों दोनों ही को समस्या से कतराने और बेईमानी का रास्ता अपनाने पर विवश कर देता है" (किर्कंडाल, 1961)।

ऐसा प्रतीत होता है कि सम्भवतः निषेध धीरे धीरे क्षीण होते जायेंगे और परम्परा क्रमशः कम दमनकारी तथा कम बाध्यकारी होती जायेगी। जिन शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू युवतियों का अध्ययन किया गया है उनकी अभिवृत्ति में 'जियो और जीने दो" तथा 'हस्तक्षेप से दूर रहने" की बढ़ती हुई प्रवृत्ति पायी गयी है—अर्थात यह प्रवृत्ति कि लोग अपने काम से काम रखें—जो इस बात का संकेत है कि जकड़कर रख देनेवाले भय तथा कठोर रूढ़ियों का प्रभाव उन पर कम हो गया है और वे लोगों के रूढ़ि विरोधी अथवा परम्परा विरोधी आचरण तथा अभिवृत्तियों के प्रति अधिक सहिष्णु हो गयी हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये स्त्रियाँ अपने स्नेह-सम्बन्धों में कम आधिपत्यकारी तथा अधिक उदार होंगी और दूसरों को क्षमा करने में भी अधिक

उदारता का परिचय देंगी।



## अभिवृत्तियों की अस्थिरता

भारतीय समाज के परम्पराबद्ध परिवेश म पुराने विचार तथा अभिवत्तियाँ बहुत मुश्किल स बदलती हैं और पारिवारिक जीवन स सम्बन्धित पारम्परिकता का ढांचा और विवाह की प्रथा स्वय ही इन्ह चिरस्थायी बनाये रखती है। जिन श्रमजीवी स्त्रिया का अध्ययन किया गया है उनके सम्बन्ध मे यह देखा गया है कि कुछ बातो म व परम्पराबद्ध होती हैं और कुछ दूसरी बातो म आधुनिक।, शायद उनकी वतमान अभिवत्तिया का सबस सही वणन अस्थिरता या सघप के प्रसग मे ही किया जा सकता है।

सेक्स के प्रति शिक्षित श्रमजीवी स्त्रिया की अभिवत्ति बहुत कुछ अस्थिर है। व यह अनुभव करने लगी हैं कि सक्स उल्लास तथा सन्तुष्टि का एक बहुत अच्छा स्रोत है। परन्तु इसके साथ ही वे इस विश्वास को भी पूरी तरह त्यागने म सफल नही हो सकी हैं कि यह एक अपेक्षाकृत निकृष्ट मूल प्रवत्ति है कि वह कोई ऐसी चीज नही है जिसकी खुलेआम कामना की जाये और प्राप्त करने की चेष्टा की जाये और यह कि विवाह की परिधि के अन्दर भी उसका दमन किया जाना चाहिए और उसे उन्मुक्त भाव स अभिव्यक्त नही किया जाना चाहिए। यद्यपि वे यह सोचने लगी है कि सक्स क मामले म लडकियो को भी उतनी ही स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए जितनी लडका को दी जाती है परन्तु इसके साथ ही वे यह भी अनुभव करती हैं और विश्वास करती है कि यदि कोई स्त्री पुरुषा के साथ बहुत खुलकर घुलती मिलती है तो विशप रूप से पुरुषा द्वारा उसे 'घटिया समझा जाता है और उसका सम्मान नही किया जाता, और वे यह भी महसूस करती है कि सक्स की स्वतन्त्रता स्त्रियो के लिए नये असन्तोपो तथा नयी निराशाओ को जन्म दती है।

इस सक्रमणकाल म, जब शिक्षित स्त्रियाँ सेक्स के मामले मे अधिक स्वतन्त्रता की मांग तो करती हैं पर उन्ह यह भरोसा नही है कि वे अपनी इस स्वतन्त्रता तथा आजादी का क्या उपयोग करें, तो इस नय नतिक वातावरण म उन्हे उलझाव और चिन्ता का सामना करना पडता है। शिक्षित स्त्रियो के मन म उलझन तनाव और चिन्ता इसीलिए रहती है कि नैतिकता के पुराने मानदडा पर स उनका विश्वास उठता जा रहा है परन्तु उन्ह अभी तक ऐस नये मानदड नही मिल सके हैं जिनका वे सहज भाव स तथा सुरक्षा के साथ पालन कर सकें। इसलिए वे हर समय इसी दुविधा म पडी रहती हैं कि वे किस प्रकार आचरण करें और किस बात म आस्था रखें। व इस लिए भी उलझना का शिकार रहती हैं कि समानता का तक तो उन्ह अभिभूत कर दता है परन्तु उनकी अपनी मनावत्ति अभी तक परम्परा के साथ जकडी हुई है। वे परिवतन की आवश्यकता तो अनुभव करने लगी हैं परन्तु इसके साथ ही वे पुरान मूल्या के साथ भी चिपकी हुई हैं क्योंकि उनका लालन पालन उन्ही मूल्यो के बीच हुआ

है, और इससे भी बढ़कर इसलिए कि वे पूरे भरोसे के साथ यह नहीं कह सकती हैं कि इन मूल्यों के स्थान पर किन मूल्यों की स्थापना करें। इससे उनके बीच पायी जाने वाली 'दोहरे चिन्तन' की प्रक्रिया और उनकी अभिवृत्तियों की अस्थिरता का पता चलता है।

धर्मभीरु पारिवारिक पृष्ठभूमि और उसके साथ गहराई से जमी हुई परम्पराओं की भूमिका आमूल परिवर्तनकारी चिन्तन तथा आभास में बाधा डालने में बहुत महत्वपूर्ण होती है। परन्तु फिर भी शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रियाँ स्वयं अपने आदर्शों तथा विचारों और सामान्य समाज के आदर्शों तथा विचारों के पारस्परिक संघर्ष के प्रति सजग हैं। समस्या समाज के परम्परागत मानदंडों और व्यक्ति के बदलते हुए विचारों के बीच होनेवाले टकरावों से ही उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए स्त्रियों को सेक्स के मामले में स्वतन्त्रता दिये जाने के सवाल पर उनकी बदलती हुई अभिवृत्तियाँ अभी तक सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से और स्त्रियों की स्वतन्त्रता के प्रति पुरुषों की अभिवृत्ति से इतनी असंगत हैं कि जब कोई आधुनिक लड़की यह देखती है कि विवाह का प्रश्न उठते ही उसके प्रेमी लड़के उससे किनारा कर जाते हैं या जब यह देखती है कि काफी समय तक उसके साथ रहने का आनन्द लेने के बाद उन्हें उसकी कोई चिन्ता नहीं रह जाती तो वह बेहद निराश हो जाती है। इस प्रकार की स्त्रियाँ पहले तो खुलकर मिलने जुलने के फलस्वरूप इन लोगों के प्रति गहरा लगाव पैदा कर लेती हैं और बाद में जब उनका भ्रम टूटता है तो वे न केवल बेहद निराश हो जाती हैं बल्कि उनका आचरण भी बेहद अस्वाभाविक हो जाता है। उनके व्यक्तित्व विच्छिन्न हो जाते हैं और इस पृष्ठभूमि में उन्हें न तो अपनी नौकरियों के प्रति ही कोई उत्साह रह जाता है और न ही जीवन के प्रति।

भिन्नलिंगी व्यक्तियों के बीच शारीरिक घनिष्ठता का अनुमोदन करने के फलस्वरूप वे किन उलझनों, अन्तर्द्वन्द्वों तथा अपराध की भावना का शिकार हो जाती हैं, इसका पता सबसे अच्छी तरह उनके व्यक्ति अध्ययनों को पढ़कर और उन्नत तथा पाश्चात्य सभ्यता के रंग में डूबी हुई लड़कियों के विक्षिप्त व्यक्तित्वों को देखकर लगाया जा सकता है। वे इसलिए पीड़ित रहती हैं कि उनकी अभिवृत्तियाँ आधी तो भारतीय रहती हैं और आधी से अधिक पाश्चात्य ढंग की और इस कारण भी कि उनकी उन्नत आधुनिक अभिवृत्तियाँ समाज के उन रूढ़िबद्ध पुरुषों की अभिवृत्तियों के साथ मेल नहीं खाती जिनके बीच वे उठती-बैठती तथा रहती हैं। अपने लिए एक उपयुक्त जीवन-साथी की खोज में वे अपनी प्रतिष्ठा तथा आत्म सम्मान खो देती हैं और अपने सुखमय तथा उल्लासमय लगने वाले जीवन के बावजूद व अनुभव करती हैं कि वे बिल्कुल अकेली हैं और जैसे उनका कोई नहीं है। इस प्रकार के मानसिक रूप से विचलित व्यक्तित्व वाले लोग स्वयं अपने लिए भी और पूरे समाज के लिए भी एक समस्या बन सकते हैं।

सेक्स-सम्बन्धी नैतिक मानदंडों के प्रति अभिवृत्ति में होनेवाले परिवर्तनों का

समाज के लिए बहुत महत्त्व होता है। शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के बीच भिन्नलिंगी व्यक्तियों के आपस में खुलकर घुलने मिलने का अनुमोदन करने, कुछ सीमाओं के भीतर उनके बीच शारीरिक घनिष्ठता पर आपत्ति न करने, विवाह की परिधि के बाहर किसी से लगाव हो जाने में कोई बुराई न समझने आदि की जो बढती हुई प्रवृत्तियाँ पायी जाती हैं, उनसे यही पता चलता है कि शिक्षित श्रमजीवी युवतियों ने सेक्स-सम्बन्धी नैतिकता के बारे में अपनी धारणा बदल दी है। वह अच्छी हो या बुरी पर उससे सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याएँ अवश्य उत्पन्न हो गयी हैं, क्योंकि वह अभी एक ही दशक पहले तक की इन स्त्रियों की धारणा से भिन्न है। इससे सामाजिक शांति के लिए संकट उत्पन्न हो जाता है क्योंकि परम्परागत हिन्दू समाज का सामान्य सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश पाश्चात्य ढंग के उस परिवेश से मेल नहीं खाता जिसमें घूमना फिरना चाहती हैं। इसका कारण यह भी है कि सेक्स सम्बन्धी नैतिकता के बारे में समाज की जो धारणा है और श्रमजीवी स्त्रियाँ जिस ढंग से चीजों को देखती हैं उन दोनों के बीच सामंजस्य नहीं है।

यह पूरा ढाँचा अव्यवस्थित है क्योंकि समाज, विशेष रूप से पुरुष इस हद तक नहीं बदले हैं, और जो लडकियाँ उनके साथ खुलकर मिलती जुलती हैं उन्हें वे केवल मौज उड़ाने का साधन समझते हैं और उनका लाभ उठाना चाहते हैं। सेक्स के मामले में स्त्रियों की स्वतन्त्रता के प्रति उनकी अभिवृत्ति भी अस्थिर है। उनके मन में आदर्श स्त्री का जो चित्र है वह न्यूनाधिक रूप में एक परम्परागत नारी का चित्र है—विनम्र, संकोचशील सती-साध्वी, भीरु, लजीली तथा अछूती स्त्री। परन्तु इसके साथ ही इन सारे गुणों से सम्पन्न होने के अतिरिक्त वे यह भी चाहते हैं और आशा करते हैं कि उनकी पत्नी चुस्त चालाक और 'सुसंस्कृत' भी हो, जो पति के हित के लिए उसके मित्रों तथा परिचितों के मिले जुले समुदाय में आत्मविश्वास के साथ प्रसन्नचित्त रहकर घुलना मिलना तथा आतिथ्य-सत्कार करना भी जानती हो। समाज की अभिवृत्ति भी कुछ अस्थिर है। समाज अनेक व्यवसायों की स्त्रियों को सम्मान की दृष्टि से तो देखने लगा है और यह चाहता है कि वे सुशिक्षित, स्वतन्त्र तथा निर्भीक हों और जो भी विपत्ति उन पर पडे उसका सामना करने का आत्मविश्वास उनमें हो, फिर भी समाज यह नहीं चाहता कि वे आजाद, स्पष्टवादी, सचमुच स्वतन्त्र और अपने आचरण में निर्भीक हों सबसे बढकर अपने सेक्स-आचरण में।

यूक्रोम के सिमेट्री मॉडल (1959) और फेस्टिंगर के संज्ञानात्मक विसंगति के सिद्धान्त (1959) के अनुसार श्रमजीवी स्त्री का स्वयं अपने स्वरूप के बारे में जो प्रत्यक्ष ज्ञान है और अपने स्वरूप के बारे में समाज के प्रत्यक्ष ज्ञान के बारे में उसका जो प्रत्यक्ष ज्ञान है जब तक इन दोनों के बीच सामंजस्य नहीं होगा तब तक हमेशा मानसिक खींचातानी बनी रहेगी। जब तक जीवन की इन महत्त्वपूर्ण समस्याओं के प्रति स्त्रियों की अभिवृत्तियों और इन्हीं समस्याओं के प्रति पुरुषों तथा समाज की अभिवृत्तियों का अभिवृत्तिमूलक अंतर दूर नहीं होगा तब तक उनके बीच संघर्ष,

उलझनें और तनाव बने रहेंगे और उनमे विभिन्न मनोविकारो के रोग चिह्नों का रूप धारण कर लेंगे और विभिन्न प्रकार के अरुचिकर, अप्रिय तथा अप्राकृतिक बाह्य आचरणो के रूप मे व्यक्त होंगे जो आगे चलकर समाज मे अनेक समस्याएँ उत्पन्न कर देंगे। इसलिए उनके और पूरे समाज के बीच संज्ञानात्मक सामजस्य होना आवश्यक है और इसके लिए आवश्यक है कि स्वय अपनी अभिवृत्तियो के बारे मे उनके प्रत्यक्ष ज्ञान और मूल समस्याओ के प्रति विभिन्न अभिवृत्तियों के बारे मे समाज के प्रत्यक्ष ज्ञान के बीच समानता या सामजस्य हो और यह सामजस्य उत्पन्न करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

## व्यापक निष्कर्ष

इस सीमित अध्ययन के आधार पर व्यापक निष्कर्ष निकालना तो कठिन है फिर भी कुछ निष्कर्षों का उल्लेख कर देना तर्कसगत भी होगा और उचित भी।

इस अध्ययन के दौरान जिन बातो का पता लगा है उनसे शिक्षित श्रमजीवी हिन्दू स्त्रिया की अभिवृत्तियो मे काफी परिवर्तन का सकेत मिलता है। यह देखा गया है कि जिन स्त्रियो का अध्ययन किया गया वे सभी दस वर्ष के अन्दर प्रेम, विवाह तथा सेक्स के बारे मे अपनी भावनाओ, प्रत्यक्ष ज्ञान चिन्तन तथा आचरण के मामले मे कम परम्पराबद्ध तथा कम रूढिबद्ध रह गयी थी, हालांकि इस व्यापक चित्र के अन्दर भी अलग अलग प्रकारताएँ तथा प्रतिरूप पाये जाते है। ये शिक्षित स्त्रिया पारम्परिकता के बन्धनो को तोडकर बाहर निकलने लगी हैं। रूढिवादी शक्तिया भी पूर्ववत बनी हुई हैं, फिर भी आमूल परिवर्तन की प्रवृत्तियाँ भी विकसित हो रही हैं। आचरण के स्तर पर भले ही उतनी हद तक न सही पर संज्ञानात्मक तथा भावात्मक स्तरो पर तो निश्चित रूप से और कुछ हद तक सज्ञान के स्तर पर पारम्परिकता ढहती जा रही है।

'परम्परोन्मुखी' होने के बजाय वे अब अधिकाधिक 'अन्योन्मुखी अथवा 'अन्तर्मुखी होने की दिशा मे आगे बढ रही है। प्रेम, सेक्स तथा विवाह के बारे म व भिन्न ढग से सोचती हैं, इस सामाजिक महत्त्व की घटना के मामले मे उनके सज्ञान की दुनिया और इसके साथ ही उनकी इच्छाओ तथा प्रत्याशाओ की दुनिया धीरे धीरे ही सही पर अनिवार्य रूप से स्थापित रूढियो से दूर हटती जा रही है।

यह देखा गया है कि उनमे धीरे धीरे परम्परा विहीन जीवन पद्धतियो तथा जीवन शैलियो का विकास होता जा रहा है। वे समानतावादी तथा समतावादी सिद्धान्तों से प्रभावित होती जा रही हैं और उनकी अभिवृत्तियाँ तथा उनके मूल्य अधिक समतावादी तथा समानतावादी होते जा रहे हैं।

स्वय उनकी अभिवृत्तियो और उन्ही समस्याओ के प्रति समाज की, विशेष रूप से पुरुषो की, अभिवृत्तियो के बारे मे उनके प्रत्यक्ष ज्ञान के बीच बहुत चौडी खाई है। और यह बात उनमे उलझनें, अन्तर्द्वन्द्व तथा चिन्ता उत्पन्न करती है और उनकी अभिवृत्तियों को अस्थिर बना देती है।

### अध्ययन की परिसीमा

परन्तु, हो सकता है कि प्रस्तुत अध्ययन में जिन श्रमजीवी स्त्रियों के बारे में छानबीन की गयी थी उनके बीच जिस हद तक और जिस दिशा में परिवर्तन देखा गया वह समाज के अन्य हिस्सों में दिखायी न दे। यह अध्ययन शहरों में किया गया था—मुख्यतः राजधानी दिल्ली में। देश की राजधानी में काम करनेवाली शिक्षित स्त्रियों के बीच जो प्रगतिशील प्रवृत्ति या प्रवृत्तियाँ देखी गयीं उन पर महानगर की प्रकृति की छाप है जो सम्भवतः भारत के अनेक शहरों तथा कस्बों में सम्भवतः दिखायी न दे।

ऊपर बताये गये निष्कर्षों में मोटी मोटी प्रवृत्तियाँ इंगित की गयी हैं, परन्तु उनमें पूरे देश का प्रतिनिधित्व करनेवाला चित्र प्रस्तुत नहीं किया गया है क्योंकि भारत में अत्यधिक सांस्कृतिक जटिलता, सामाजिक विविधता तथा प्रादेशिक विभिन्नता है। अधिक स्पष्ट, अधिक सुनिश्चित तथा अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण चित्र प्राप्त करने के लिए, और अधिक आग्रहपूर्वक उसके सामान्यीकरण के लिए विभिन्न प्रदेशों में और समाज के अलग-अलग सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों वाले विभिन्न हिस्सों के बीच अन्य कई अध्ययन करने होंगे ताकि तुलनात्मक आधार-सामग्री उपलब्ध हो सके। लेखिका की यह आशा है कि प्रस्तुत अध्ययन से इसी प्रकार के अन्य अध्ययनों के लिए प्रणाली-तन्त्र सम्बन्धी ढाँचा और सिद्धान्त सम्बन्धी प्रारम्भिक सूत्र उपलब्ध हो सकेंगे तथा यह अध्ययन बौद्धिक जिज्ञासा तथा उद्दीपन उत्पन्न कर सकेगा।

### अतीत, वर्तमान तथा भावी प्रवृत्तियों की गहरी जानकारी

फिर भी वर्तमान सीमित आधार सामग्री भी इस दृष्टि से बहुमूल्य है कि इसमें प्रेम, विवाह तथा सेक्स से सम्बन्धित प्रश्नों के बारे में शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियों के विचार, मूल्य तथा उनकी आस्थाएँ प्रतिबिम्बित होती हैं। उत्तरदाताओं के लाक्षणिक तथा दृष्टान्तमूलक व्यक्ति अध्ययनों में विभिन्न प्रश्नों के जो उत्तर प्रस्तुत किये गये हैं, वे ऐसी अभिवृत्तियों के द्योतक हैं जो प्रेम विवाह तथा सेक्स के न केवल वर्तमान अभिवृत्तिक रूपों का चित्रण करते हैं बल्कि वे भविष्य में चलकर नये रूपों तथा मूल्य प्रणालियों को प्रभावित करने तथा कुछ हद तक उन्हें ढालने की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। आज के किसी समाज विशेष में विद्यमान नये दृष्टिकोण को समझने के लिए हमें इन्हीं अभिवृत्तियों तथा मूल्यों की ओर ध्यान देना होगा।

बदलती हुई अभिवृत्तियों के आधार पर भावी प्रवृत्तियों के बारे में पूर्वानुमान की कोशिश करने में गम्भीर तथा अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ सामने आ सकती हैं। फिर भी यदि थोड़े-थोड़े समय बाद इन अभिवृत्तियों में होनेवाले परिवर्तनों के बारे में छान-बीन तथा उनका विश्लेषण किया जाये तो उससे हमें भावी प्रवृत्तियों के बारे में और भविष्य की रूपरेखा' के बारे में भविष्यवाणी करने के लिए कुछ तथ्यमूलक आधार उपलब्ध हो सकता है। फिर भी इस अध्ययन में जिन अभिवृत्तियों की छानबीन

की गयी है उनसे निश्चित रूप से इस बात का संकेत मिलता है कि भविष्य मे चलकर दृष्टिकोण, विचार, विश्वास, आचरण तथा व्यवहार का रूप सम्भवत क्या होगा।

चूंकि अभिवृत्तिया तथा मूल्य समाज म सामाजिक व्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण अंग होते है, इसलिए उभरती हुई अभिवृत्तियो को समाज मे एक गतिशील सामाजिक तथा नैतिक व्यवस्था का निर्माण करने के पूरे समकालीन संघर्ष के प्रसंग मे रखा जाना चाहिए। बराबरी की बढती हुई चेतना अवश्य है फिर भी हो सकता है कि आनेवाले वर्षो म भी स्त्रियो तथा पुरुषो के बीच पूर्ण समानता न हो। यह उस समय तक सम्भव नही है जब तक कि परिवार म स्त्रिया तथा पुरुषो की भूमिकाओ को भी बराबर महत्त्वपूर्ण न समझा जाये, उनको बराबर सम्मानित तथा उपयोगी न समझा जाय, और बच्चो को पालने तथा परिवार के भरण पोषण मे स्त्रिया तथा पुरुष बराबर दायित्व वहन न करें।

कोई स्त्री सेक्स आचरण को कितना महत्त्व देती है यह बहुत बडी हद तक उसके अन्य मूल्यो तथा उद्देश्यो पर निर्भर करता है। चूंकि ये मूल्य तथा उद्देश्य बदल रहे हैं, इसलिए सेक्स आचरण के प्रति उसकी अभिवृत्ति भी बदल रही है। सेक्स के बारे म एक नयी अभिवृत्ति की झलक दिखायी देती है जिसमे सेक्स को जीवन का एक सकारात्मक मूल्य माना जाने लगा है, और उसे "सम्पूर्णता, परिपूर्ति तथा पारस्परिकता की मनुष्य की खोज मे एक सृजनात्मक प्रभाव, मानव मूल्यो से प्रभावित हो सकनेवाला मानव सम्बन्ध समझा जाने लगा है' (हेमिंग, 1970, पृष्ठ 126)। आगे चलकर हेमिंग यह मत व्यक्त करते है

> अतीत की भयावह कठोरताओ तथा छद्मविवेक ने सेक्स को, जिसे स्वास्थ्य तथा उल्लास का स्रोत होना चाहिए था इतना उत्पीडित किया कि वह मानसिक पीडा तथा विक्षोभ का एक मुख्य स्रोत बन गया। अब हम ऐसे भविष्य की आशा लगा सकते है, जो इस समय भी प्रकट होने के लिए संघर्ष कर रहा है, जो समाज के अन्दर कुण्ठारहित परन्तु नियन्त्रित सेक्स आचरण जीवन तथा विवाह की पूरी उत्कृष्टता को बढा देगा। समस्त मानवता के हित मे ऐसा होना की आवश्यकता है और इसलिए भी कि भविष्य सभी व्यक्तियो मे तथा पूरे समाज मे उपलब्ध समस्त सृजनात्मक शक्ति का तकाजा करेगा। (हेमिंग, 1970, पृष्ठ 255)।

इस समय शिक्षित श्रमजीवी युवतियो मे जो नयी अभिवृत्ति उभरती हुई पायी जाती है और वह भविष्य जिसकी हेमिंग बडी आशा के साथ प्रतीक्षा कर रहे हैं, वह एक प्रकार से उसी प्रवृत्ति का पुनरुत्थान है, जो कुछ हद तक प्राचीन भारत मे मौजूद थी। डे का मत है कि प्राचीन भारतीय साहित्य के अनुसार आध्यात्मिक चरमोत्कर्ष की गरिमा मे भी जीवन के व्यावहारिक पक्ष का कभी सर्वथा परित्याग नही किया गया है। इसकी अभिव्यक्ति इस बात मे होती है कि 'बहुत प्रारम्भ म ही और स्पष्ट रूप स

सेक्स आवेग को मानव मस्तिष्क का एक प्रबलतम आवेग मान लिया गया था' (डे, 1959, पृष्ठ 85) । ऋग्वेद की एक सुविख्यात ऋचा म (10, 129 4 5) प्रेम के देवता काम पहले-पहल सामान्यत समस्त इच्छाओं के पर्याय के रूप म प्रकट होते हैं, परन्तु उनका सम्बन्ध सेक्स प्रतीक से जुड़ा हुआ है। यह इस बात की स्वीकारोक्ति है कि आदर्श रूप में सेक्स कामना समस्त अस्तित्व का आदिस्रोत है। इस प्रसग मे डे ने बताया है, "ऋग्वेद की दो सुविख्यात सवाद ऋचाओ म जिनका सम्बन्ध पौराणिक जीवो की प्रेम लीला से है, हमे भारतीय साहित्य म (और विश्व साहित्य मे) पहली बार प्रेम के सवेग की आवेगपूर्ण अभिव्यक्ति दिखायी देती है" (डे 1959, पृष्ठ 87) । बृहदारण्यक उपनिषद् (4, 22) मे कहा गया है कि सेक्स की इच्छा का स्तर अन्य किसी भी इच्छा के स्तर जैसा ही होता है (डे, 1959, पृष्ठ 89) । 400 और 500 ई० के बीच किसी समय लिखा गया वात्स्यायन का कामसूत्र एक गम्भीर तथा विज्ञानसम्मत रचना है जिसम इस सामान्यत वर्जित विषय पर मानविकी के एक अग के रूप मे प्रकाश डाला गया है। (देखिये डे, 1959, पृष्ठ 104) ।

क्लाफ के अनुसार जिस समाज न कामसूत्र को जन्म दिया वह मनोग्रन्थियो म मुक्त था। कामसूत्र की रचना समृद्धि के उस युग मे हुई जब भारत के नगर अत्यन्त भव्य हुआ करते थे और सार्वजनिक क्षेत्रो म दीवारो को विशेष रूप से इस प्रकार चमकाया जाता था कि वे उधर से होकर गुजरने वाली सुन्दर स्त्रियो की आकृतियों को प्रतिबिम्बित कर सकें। उस युग म लोग भौतिक तथा विषयमूलक सुख को समान महत्त्व देते थ (देखिये क्लाफ 1964)। आगे चलकर क्लाफ ने मत व्यक्त किया है, "कामसूत्र उस लुप्त सभ्यता को समझने के लिए बुनियादी महत्त्व का समाजशास्त्रीय प्रबन्ध ग्रन्थ है, जिस सभ्यता मे जीवन-स्तर तथा स्वतन्त्रता का सम्मान लगभग हमारी वर्तमान स्थिति जैसा ही था' (क्लाफ, 1964, पृष्ठ 8) । कामसूत्र मे जीवन के तीन मान्यता प्राप्त लक्ष्यो—धर्म अर्थ तथा काम—के समान महत्त्व तथा सामजस्यपूर्ण समन्वय पर बल देकर उनके बीच ताल मेल बिठाने की कोशिश की गयी थी। उसमे इस विचार को प्रचारित किया गया है कि जो व्यक्ति धर्म तथा अर्थ और उसके साथ ही काम को भी अपने आवेगो का दास बने बिना विकसित करता है, बल्कि अपनी इन्द्रियो पर पूर्ण सयम प्राप्त कर लेता है, वह अपने हर प्रयास म सफल होता है।

इस बात का पर्याप्त प्रमाण मिलता है कि बाल्यावस्था तथा किशोरावस्था मे सेक्स-सम्बन्धी रुचि के सीमित दमन तथा उदात्तीकरण से सभ्यता के सभी श्रेष्ठतम पक्षो का—कला का सृजन, विज्ञान की खोज तथा शिल्प कौशल की प्रगति का—पोषण प्राप्त होता है। आदिम मनुष्य जिसे असीमित सेक्स सम्बन्धित स्वतन्त्रता रहती है और जो बिना किसी अवरोध के सेक्स का भोग करता है वह सभ्यता तथा प्रगति के क्षेत्र म बहुत पीछे रहता है। इसलिए उन्मुक्त परन्तु नियन्त्रित सेक्स आचरण की उस अभिवृत्ति को, जिसका वर्णन प्राचीन भारतीय साहित्य म किया गया है एक बार फिर सेजागृत करना होगा ताकि समाज की सृजन शक्ति का न तो सेक्स आचरण का दमन करने

तथा उसे कुंठित करने मे अपव्यय हो, और न ही वह अनियन्त्रित सेक्स आचरण म नष्ट हो।

सेक्स आचरण के सामाजिक रूप से स्वीकृत प्रतिमान तथा मानदण्ड ही उस समाज विशेष की सेक्स सम्बन्धी नैतिकता होती है और इन्ही के प्रसग मे अभिवृत्तियो मे होनेवाले परिवतना के विकासमूलक अथवा क्रान्तिकारी होने का मूल्याकन किया जा सकता है। तीव्र गति मे होनेवाला परिवतन क्रान्तिकारी होता है और अपेक्षाकृत क्रमिक परिवतन विकासमूलक होता है। इस प्रश्न का उत्तर कि शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो की अभिवृत्तियो मे क्रान्ति हुई है या नही, इस पर निभर करता है कि हम क्रान्ति की परिभाषा किस रूप मे करते हैं, परन्तु लेखिका का मत यह है कि उनकी अभिवृत्तियो म क्रान्तिकारी नही विकासमूलक परिवतन हुआ है। या हम उसे प्राचीनकाल मे लौट जाने की प्रवृत्ति भी कह सकते हैं जब प्रेम तथा सेक्स को मनुष्य की दो सबसे बडी आवश्यकताएँ समझा जाता था और जब सेक्स का आनन्द प्राप्त करने की प्रविधियाँ भी सिखायी जाती थी और जब वैयक्तिक स्वतन्त्रता का सम्मान किया जाता था। वात्स्यायन और खजुराहो के कामसूत्र के काल की कला, स्थापत्य कला तथा मूर्तिकला मे उस समय की सेक्स की सकारात्मक भूमिका का सकेत मिलता है। यह तो बाद म चलकर सामाजिक धार्मिक सास्कृतिक प्रभावो ने लोगो मे यह विश्वास उत्पन्न कर दिया कि सेक्स केवल सन्तानोत्पत्ति के लिए होता है और यह कि वैयक्तिक तुष्टि के लिए सेक्स मात्र पाप है। विवाह की परिधि के अन्दर तो सेक्स को स्वीकार किया जा सकता था परन्तु विवाह की परिधि के बाहर उसे सबसे बडा पाप और अनैतिक आचरण समझा जाता था। बाद मे चलकर यह अभिवृत्ति पैदा हुई कि सेक्स आनन्द का स्रोत भी हो सकता है और सन्तानोत्पत्ति का माध्यम भी। देश मे होने वाले विभिन्न सामाजिक राजनीतिक सास्कृतिक परिवतनो ने 'शुद्धाचारवादी' अथवा विक्टोरियाई प्रतिब धकारी सेक्स नैतिकता के विरुद्ध बढती हुई प्रतिक्रिया को और तीव्र कर दिया है।

औद्योगिक क्रान्ति, नगरो के विकास शिक्षा और स्त्रियो के हाल ही म प्राप्त किए गये कानूनी तथा राजनीतिक अधिकारो, मोटरकार का आविष्कार करनेवाली उन्नत टक्नोलोजी तथा विज्ञान ने गर्भ निरोध की प्रविधियो मे भी सुधार किया, जन प्रचार के माध्यमो की उन्नति की, और फ्रायड तथा किन्से जसे लेखको की पुस्तकें उपलब्ध की, और सबस बढकर देश क विभाजन, आर्थिक मन्दी और स्त्रियो की शिक्षा तथा आर्थिक स्वतन्त्रता के नये अवसरो न तथा उनके फलस्वरूप स्त्रियो की जीवन पद्धति के बाह्य तथा आन्तरिक परिवेशो म होनेवाले परिवतनो ने, अपनी क्रिया प्रतिक्रिया मे शिक्षित श्रमजीवी युवतियो की अभिवृत्तियो को बदल दिया है। सच तो यह है कि प्रेम सेक्स तथा विवाह से सम्बन्धित उनके विचारो तथा मतो म सम्पन्नता स्वतन्त्रता स्वाधीनता तथा मानव अधिकारो के नये विचारो का समावेश होता जा रहा है।

सेक्स सम्बन्धी नैतिकता सामाजिक समस्या भी है और वैयक्तिक भी क्योंकि क्या उचित है और क्या अनुचित, इसके बारे में सामाजिक तथा वयक्तिक निर्णय अथवा मानदड ही नैतिकता है। सेक्स सम्बन्धी नैतिकता के समाज के मानदडो तथा वयक्तिक मानदडो के बीच परस्पर क्रिया प्रतिक्रिया होती रहती है और जब भी इनमे से किसी एक मे परिवर्तन आता है तो वह दूसरे को भी बदल देता है। समाज के मानदडो मे परिवर्तन उसके सदस्यो मे व्याप्त विचारो तथा आचरणो से आता है, और परम्परा के प्रभाव से तथा मित्रो, समसमूहो, अध्यापको माता पिता की अभिवृत्तियो के प्रभाव से परिवर्तन आने की सम्भावना रहती है और साहित्य चलचित्रो, रेडियो तथा पत्र पत्रिकाओ के माध्यम से नये प्रतिमानो के सम्पर्क मे आने से सेक्स-सम्बन्धी व्यक्तिगत मानदडो मे परिवर्तन आने की सम्भावना रहती है।

शायद ही कोई पीढी ऐसी रही हो जिसमे सेक्स अत्यधिक रुचि का विषय न रहा हो, और प्राय हर पीढी मे ऐसे लोग हुए है जो अपने बडो के बनाये हुए नियमो का उल्लघन करते हैं। अतीत मे अनेक काल ऐसे आये है जब सेक्स सम्बन्धी सोपानार के नियम कुछ शिथिल कर दिये गये थे और उसके बाद फिर सेक्स पर अधिक कडे प्रतिबन्ध लगा दिये गये। इस प्रकार सेक्स-सम्बन्धी प्रतिबन्धो का शिथिल तथा कठोर करने का क्रम एक चक्र के रूप मे चलता रहता है। इतिहास की दृष्टि से देखा जाये तो सेक्स-सम्बन्धी समाज विज्ञान का लोलक विभिन्न प्रकार की सामाजिक शक्तियो तथा समाजगत परिवर्तनो से प्रेरित होकर डायोनीसियन—यूनानी देवता डायोनीसस से सम्बन्धित अर्थात ऐन्द्रिक—और 'अपोलोनियन—यूनानी देवता अपोलो से सम्बन्धित, अर्थात सामजस्यपूर्ण तथा सन्तुलित—छोरो के बीच झूलता रहता है। उभरती हुई अनुशासनहीनता और अधिक अनुशासनहीनता को जन्म दे सकती है और इसके बाद कुछ सामाजिक शक्तियाँ अथवा समाजगत परिवर्तन और अधिक सामाजिक प्रतिबन्धो को फिर वापस ला सकते है। फिर भी, प्रस्तुत अध्ययन मे देखी गयी प्रचलित अभिवृत्तियो के आधार पर लेनिका को भारत मे भावी अभिवृत्तियो तथा सेक्स मूल्यो मे बहुत अधिक विघटन की कोई सम्भावना दिखायी नहीं देती। प्रेम, विवाह और सेक्स के बारे मे चर्चा करते हुए टनर लिखते हैं

> सेक्स, प्रेम और विवाह को हम तीन ऐसी व्यवस्थाएँ कह सकते है जिनकी गति विधान अलग अलग है, जिनके अनियाम अन्तर-सम्बन्धो को महत्व की दृष्टि से एक सोपान के रूप मे व्यवस्थित करके और उनकी व्याख्या अपेक्षाकृत निकट अथवा अपेक्षाकृत भिन्न [illegible] के रूप मे करके ही समझा जा सकता है। तीव्र पृथकता कदाचित् [illegible] के लिए या केवल उस अवस्था मे ही [illegible] जा सकती है जब मूल परिवार को दृढतापूर्वक एक स्थायी [illegible] पत्नी-[illegible] परिवार के आधीन कर दिया जाये। निकटता के विभिन्न [illegible] सेक्स को प्रेम के और प्रेम का विवाह के आधीन रखा [illegible] है

> तथा प्रेम के सम्बन्धो का गहन बनाने तथा संघर्षों का समाधान करने की शक्ति को चरम सीमा तक बढा देते हैं, जिसके फलस्वरूप विवाह तुष्टियो तथा विघटनो दोनो ही की दृष्टि से एक गहन सम्बन्ध बन जाता है, (टर्नर, 1970, पृष्ठ 343)।

भारतीय समाज जैसे परम्परा निर्देशित समाज मे, जिस पर परम्परा का प्रभाव अब भी बहुत प्रबल है, और जिसमे अब भी बहुत बडी हद परम्परा मुख संकल्पनाएँ व्याप्त हैं, और जिसमे चिन्तन परम्पराबद्ध लोकाचार से प्रभावित रहता है, इन तीन व्यवस्थाओ को आदर्श के रूप मे घनिष्ठता के प्रतिमान मे विवाह, सेक्स तथा प्रेम के क्रम से व्यवस्थित किया गया है। इसलिए आदर्श के रूप म सेक्स का स्थान विवाह के बाद है और प्रेम का सेक्स के बाद। प्राचीन भारतीय साहित्य म एसे प्रतिमान के उल्लेख भी मिलते हैं जिसमे विवाह का स्थान प्रेम के बाद आता है और एसे भी जिनमे सेक्स का स्थान प्रेम के बाद आता है। परन्तु एसा प्रतीत होता है कि उस समय प्रचलित विश्वास यह था, जसा कि आज भी है, कि सेक्स का स्थान विवाह के बाद आना चाहिए और सामान्यत प्रेम भी विवाह के बाद ही होना चाहिए। जसा कि राधाकृष्णन् ने बताया है, "हम जिस स्त्री म प्रेम करते हैं उससे विवाह नही करते, बल्कि जिस स्त्री से विवाह करते हैं, उससे प्रेम करते हैं" (1956, पृष्ठ 171)। वह आगे चलकर तर्क देते हैं, "यदि विवाह के बिना प्रेम अवैध है तो प्रेम के बिना विवाह अनैतिक है" (राधाकृष्णन, 1956, पृष्ठ 193)।

शिक्षित श्रमजीवी युवतियो के बीच जो नयी प्रवृत्तियाँ उभर रही हैं उनकी दिशा इन तीनो व्यवस्थाओ के क्रम को प्रेम, विवाह और सेक्स के सोपान के रूप मे या इससे भी बढकर प्रेम, सेक्स और विवाह के सोपान के रूप में फिर स व्यवस्थित करने की ओर है। प्रेम, विवाह तथा सेक्स के क्रमबद्ध प्रतिमान के प्रति उनकी अभिवृत्ति मे जो परिवर्तन दिखायी दे रहा है वह यह है कि परम्परागत रूप मे स्वीकृत "विवाह, तब सेक्स और तब प्रेम" या "प्रेम, तब विवाह, और तब सेक्स' के क्रम स बजाय उनमे से कुछ, यद्यपि उनकी सख्या बहुत थोडी ही है अब "प्रेम तथा सेक्स और फिर, यदि सम्भव हो तो विवाह" के क्रम के पक्ष मे हैं। और कुछ उदाहरणो म, यद्यपि व विरले ही हैं, यह भी देखा गया कि वे 'सेक्स, फिर यदि सम्भव हो तो प्रेम और फिर विवाह' का अनुमोदन करती हैं।

"विवाह की प्रक्रिया से प्रेम तथा सेक्स' के स्थान तथा महत्त्व का उल्लेख करते हुए टर्नर लिखते हैं

> जब सेक्स तथा प्रेम का विवाह के आधीन कर लिया जाता है परन्तु तीनो को परस्पर बहुत घनिष्ठ रूप से गुँथा हुआ रखा जाता है, तो सेक्स एक शक्तिशाली बन्धन बन जाता है केवल शारीरिक तुष्टि के कारण उतना नही जितना कि उस चीज के कारण जिसका वह प्रतीक है। सेक्स-सम्बन्ध विवाहित दम्पति के बीच अत्यन्त विशिष्ट तथा वयक्तिक

सम्बन्ध की भावना का मूर्त रूप बन जाते हैं। इस प्रतीक विधान का केन्द्र इस सम्बन्ध का पुनीत स्वरूप हो सकता है, और सेक्स सम्भोग एक संस्कार के रूप मे एक आधारभूत अनुभव के पूरे विवाह सम्बन्ध की पवित्रता को अपने अन्दर समाविष्ट कर सकता है। या सेक्स को प्रेम की एक अभिव्यक्ति के रूप म अनुभव किया जाता है, परन्तु चूंकि वह समस्त प्रेम नहीं होता है इसलिए वह थोड़े थोड़े समय बाद प्रेम की पुनर्पुष्टि के समान होता है और उसकी तुष्टि को प्रेम के ह्रास के रूप म नहीं अनुभव किया जाता। प्रेम के व्यापक रूप से अभिवद्ध अर्थ के माध्यम से ही सेक्स अनुभव की परस्पर बद्धता को बढ़ाने वाले प्रभाव समय के विस्तार म इस तरह बढ़ता जाता है कि तुष्टि के साथ उसका ह्रास न हो (टर्नर, 1970 पृष्ठ 339)।

विचित्र बात है कि प्राचीन भारतीय साहित्य के अध्ययन से यह पता चलता है कि ये प्रतिमान प्राचीन भारत म भी मौजूद थे और आदर्श के रूप मे परम्परागत परि-वेश म आज भी मौजूद हैं।

हम सभी म मूलत एक दोहरापन पाया जाता है—प्रेम की आवश्यकता और सेक्स की आवश्यकता का दोहरापन—और ये आवश्यकताएँ अलग अलग व्यक्तियो म अलग अलग रूप म पायी जाती है। शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो म प्रेम की आवश्यकता और सेक्स की आवश्यकता दोनो ही तीक्ष्ण हो गयी हैं। परन्तु उनके मस्तिष्क म कुछ उलझाव हैं, क्योंकि वे अभी यह नहीं समझ पायी हैं कि इस दोहरी आवश्यकता को कैसे पूरा किया जाये। समाज को उनकी सहायता करनी होगी कि वे इस बढ़ती हुई दोहरी आवश्यकता म सामंजस्य उत्पन्न करने के उपाय विकसित कर सकें।

शहरो की शिक्षित श्रमजीवी स्त्रियो की बदलती हुई अभिवृत्तियो का गहराई के साथ विश्लेषण करने पर यह बात स्पष्ट तथा प्रकट हो जाती है कि उनकी प्रेम की, सेक्स की तथा विवाह की आवश्यकता बढ़ती जा रही है और पहले की अपेक्षा अधिक प्रबल तथा सजग रूप से अनुभव की जाने लगी है। और वैयक्तिक स्वतन्त्रता की खोज के झीने आवरण के पीछे और उनके आचार विचार की विविध प्रत्यक्ष तथा परोक्ष अभि-व्यक्तियो की परत के नीचे इच्छा-पूर्ति की प्रक्रिया काम करती रहती है। उनके समस्त प्रत्यक्ष तथा परोक्ष व्यवहार म एक ऐसी गतिवान समाज व्यवस्था स्थापित करने की इच्छा को पूरा करने की अचेतन चेष्टा प्रतीत होती है जिसमे विवाह, प्रेम और सेक्स एक-दूसरे म बहुत घनिष्ठ रूप से घुल मिल जायें, और उनके मानसिक, संवेगात्मक, शारीरिक तथा आध्यात्मिक स्तर की पूर्णरूपेण परिपूर्ति हो सके।

# पारिभाषिक शब्दावली—1
(हिन्दी-अंग्रेज़ी)

| | |
|---|---|
| अन्तःक्रिया | Inter action |
| अन्तःप्रेरण | Urge |
| अन्तःसांस्कृतिक | Cross-cultural |
| अन्तर्दृष्टि | Insight |
| अन्तर्निरीक्षण | Introspection |
| अन्तर्नोद | Drive |
| अन्तर्वैयक्तिक | Inter-personal |
| अचेतन (मन) | Unconscious |
| अतिकल्पना | Fantasy |
| अध्ययन | Study |
| अनिवार्य | Essential |
| अनुकम्पामय | Compassionate |
| अनुकूलन | Conditioning |
| अनुक्रिया | Response |
| अनुक्रियाशील | Responsive |
| अनुदैर्ध्य | Longitudinal |
| अनुप्रस्थ परिच्छेद | Cross section |
| अनुबन्ध | Contract |
| अनुमान | Inference |
| अनुमोदन | Approbation |
| अनुराग | Affection |
| अनुज्ञा | Permission |
| अनुज्ञात्मक | Permissive |

| | |
|---|---|
| अनुज्ञात्मकता | Permissivness |
| अन्यगमन | Adultery |
| अन्योन्य | Reciprocal |
| अन्वेषण | Investigation |
| अन्वेषी | Exploratory |
| अभाव | Desideratum |
| अभिप्राय, अभिप्रेरण, अभिप्रेरक | Motive |
| अभिप्रेरण-शक्ति | *Motivating force* |
| अभिभावक | Guardian |
| अभिमत | Observation |
| अभिविन्यास | *Orientation* |
| अभिवृत्ति | Attitude |
| अभिज्ञा | Awareness |
| अवचेतन (मन) | *Subconscious* |
| अवसाद | Depression |
| अवयक्तिक | Impersonal |
| अहंकेन्द्रिक | *Egocentric* |
| अहंभाव | Ego |
| आचरण | Behaviour |
| आत्म-तादात्म्य | *Self identity* |
| आत्मपरक | Subjective |
| आत्म-परिरक्षण | Self preservation |
| आत्मरतिक | *Narcissistic* |
| आत्मीयता | Intimacy |
| आदर्शक | Normative |
| आदिम | *Primitive* |
| आदिम जाति | Tribe |
| आधार-सामग्री | Data |
| आनुभविक | *Empirical* |
| आवेग | Impulse |
| आवेश | Passion |
| आवेशपूर्ण, आवेश प्रधान | *Passionate* |
| आस्था | Faith |
| ऐन्द्रियगत | Sensuous |
| उन्नयन | Exaltation |

| | |
|---|---|
| उत्तेजन | Excitation |
| उत्सस्करण | Acculturation |
| उद्दीपक | Stimulating |
| उद्दीपन | Stimulus |
| उदात्त | Sublime |
| उपकरण | Instrument Tool |
| उपागम | Approach |
| उपादान | Factor |
| उभयभावी | Ambivalent |
| उल्लास | Elation |
| एकरूप, एकसार | Uniform |
| एक विवाह | Monogamy |
| एकाधिक | Multiple |
| ऐन्द्रिय | Sensuous |
| औचित्यस्थापन | Rationalisation |
| कट्टरपंथी | Orthodox |
| कबीला | Tribe |
| कल्पना | Assumption |
| कल्याण | Welfare, Well being |
| कशेरुकी | Vertebrate |
| कामुक, कामोद्दीपक | Erotic |
| कारक | Factor |
| कार्यात्मक, कार्यमूलक, कार्यपरक | Functional |
| कालक्रमिक | Diachronic |
| किशोर | Adolescent |
| कुमारीगमन | Fornication |
| कौमार्य | Virginity |
| खिंचाव तथा विकृति | Stress & Strain |
| गणित, गणितीय | Mathematics, Mathematical |
| गहन | Intense |
| गुण | Attribute |
| गुणात्मक | Qualitative |
| घटना | Phenomenon |
| घनिष्ठता | Intimacy, Rapport |
| चेतना | Consciousness |

| | |
|---|---|
| परिपक्व | Mature |
| परिपाटी | Convention |
| परिप्रेक्ष्य | Perspective |
| परिमाणन | Quantification |
| परिमाणात्मक | Quantitative |
| परिवेश | Environment |
| परिष्कृत | Refined |
| परीक्षण विवाह | Trial marriage |
| पाठ्येतर, पाठ्यक्रमेतर, पाठ्यविषयेतर | Extra-curricular |
| पारस्परिक | Reciprocal |
| पित्रीय, पैतृक | Paternal |
| पुनीतता, पवित्रता | Sanctity |
| पुनरावृत्त साक्षात्कार | Repeated interview |
| पूर्वाग्रह | Prejudice |
| पूर्ववृत्ति | Pre disposition |
| पूर्वानुमान | Prognosis |
| प्रकट | Overt |
| प्रकारता | Modality |
| प्रकृति | Nature |
| प्रच्छन्न | Covert |
| प्रणय-याचन | Courtship |
| प्रणाली | Method |
| प्रतिचयन | Sampling |
| प्रतिनिध्यात्मक अध्ययन | Cross section study |
| प्रतिमान, प्रतिरूप | Pattern |
| प्रतिष्ठा | Status |
| प्रतिस्थापन | Substitution |
| प्रतीक विधान | Symbolism |
| प्रत्यर्थी | Respondent |
| प्रत्युत्तर | Response |
| प्रत्यक्ष | Overt |
| प्रत्यक्ष ज्ञान | Perception |
| प्रथा | Custom |
| प्रबन्ध | Treatise |
| प्रबुद्ध वर्ग | Intelligentsia |

| | |
|---|---|
| मूल्य | Value |
| मैथुन | Coitus, Mating |
| मोह | Infatuation |
| यौवनारम्भ | Puberty |
| रतिज रोग | Veneral disease |
| रति निष्पत्ति | Orgasm |
| रहस्यात्मक | Mystical |
| रूढ़ि | Convention Custom |
| रूढ़िवादी | Conservative, Orthodox |
| रूमानी | Romantic |
| लक्षण | Characteristics |
| लोकतन्त्र | Democracy |
| लोकतन्त्रीय | Democratic |
| लोकरीति | Mores |
| लोकस्वभाव | Ethos |
| लोकाचार | Mores Ethos |
| वयस्क | Adult |
| वर्जन वर्जना | Taboo |
| वस्तुनिष्ठ, वस्तुपरक | Objective |
| वस्तुनिष्ठा, वस्तुपरकता | Objectivity |
| विभिन्नता | Variation |
| विकास | Evolution |
| विकासवादी, विकासमूलक | Evolutionary |
| विचार | Idea |
| विषमलिंगगामी | Heterosexual |
| विशेषता | Attribute |
| विश्लेषण | Analysis |
| विश्वास | Belief |
| विषयनिष्ठ | Objective |
| विषयनिष्ठा | Objectivity |
| विसंगति, विसम्वाद | Dissonance |
| विसम्बन्ध | Alienation |
| वैवाहिक स्थिति | Marital status |
| व्यक्ति अध्ययन | Case study |
| व्यक्त्यंकन | Idiography |

| | |
|---|---|
| समाजशास्त्री | Sociologist |
| समसमूह | Peer group |
| समनुमोदन | Approbation |
| समायोजन | Adjustment |
| समुदाय | Community |
| समूह | Group |
| सम्मान | Respect |
| सहचारिता | Companionship |
| सहचारी, साहचर्यमूलक | Companionate |
| सहमतिजन्य | Consensual |
| सहानुभूति | Sympathy |
| सांख्यिकीय | Statistical |
| साधन | Resources |
| साहचर्य | Association |
| सिंहावलोकन, दिग्दर्शन, संदर्शिका, संक्षिप्त विवरण | Conspectus |
| सुखवाद | Hedonism |
| सूचक | Index |
| सोद्देश्य | Purposive |
| सौहार्द | Rapport |
| स्थापना | Thesis |
| स्नेह | Affection |
| स्वच्छन्द प्रेम | Free love |
| स्वतःस्फूर्त | Spontaneous |
| स्वयं प्रयोजन | Self-administering |
| स्वरूप | Nature |
| स्वभाव, स्ववृत्ति | Disposition |
| स्वैर | Promiscuous |
| स्वैरिता, अनियत सम्भोग | Promiscuity |

# पारिभाषिक शब्दावली—2
## (अंग्रेजी-हिन्दी)

| | |
|---|---|
| Absolute | निरपेक्ष |
| Acculturation | उत्संस्करण, परसंस्कृतिग्रहण |
| Adjustment | समायोजन |
| Admiration | श्लाघा |
| Adolescent | किशोर |
| Adult | वयस्क, प्रौढ़ बालिग |
| Adultery | अन्यगमन, परस्त्रीगमन, परपुरुषगमन |
| Affection | स्नेह, अनुराग |
| Affectional | भावात्मक |
| Affective behaviour | भावात्मक व्यवहार |
| Alienation | विसम्बन्ध |
| Altruistic | परार्थवादी, परहितवादी, परार्थपरक |
| Ambivalent | उभयभावी |
| Analysis | विश्लेषण |
| Anthropology | नृविज्ञान |
| Approach | उपागम, दृष्टिकोण |
| Approbation | अनुमोदन, समनुमोदन |
| Association | साहचर्य |
| Assumption | कल्पना |
| Attitude | अभिवृत्ति, मनोवृत्ति |

| | |
|---|---|
| Attribute | गुण, विशेषता |
| Awareness | अभिज्ञा |
| Behaviour | व्यवहार, आचरण |
| Belief | विश्वास |
| Biological | जैविक |
| Carnal | दैहिक शारीरिक |
| Case study | व्यक्ति अध्ययन |
| Characteristics | लक्षण |
| Cognition | संज्ञान |
| Cognitive | संज्ञानात्मक |
| Coitus | मैथुन |
| Community | समुदाय |
| Companionate | सहचारी साहचर्यमूलक |
| Companionship | सहचारिता |
| Compassionate | अनुकम्पामय |
| Complex | मनोग्रन्थि |
| Conception, Concept | संकल्पना संप्रत्यय |
| Conditioning | अनुकूलन |
| Conscious | सचेतन |
| Consciousness | चेतना |
| Consensual | सहमतिजन्य |
| Conservative | रूढ़िवादी |
| Conspectus | सिंहावलोकन दिग्दर्शन संदर्शिका |
| Consummation | निष्पत्ति |
| Continence | संयम |
| Contract | संविदा, अनुबन्ध |
| Convention | रूढ़ि परिपाटी |
| Courtship | प्रणय-याचन |
| Covert | प्रच्छन्न, अप्रकट |
| Cross-cultural | अंत सांस्कृतिक |
| Cross section | अनुप्रस्थ-परिच्छेद |
| Cross section study | प्रतिनिध्यात्मक अध्ययन |
| Custom | प्रथा, रूढ़ि |
| Data | आधार-सामग्री |
| Democracy | लोकतन्त्र, जनतन्त्र |

| | |
|---|---|
| Filial | सतानीय |
| Formative period | निर्माणात्मक काल |
| Formulation | निरूपण |
| Fornication | कुमारीगमन |
| Free love | स्वच्छन्द प्रेम |
| Functional | कार्यपरक, कार्यमूलक, कार्यात्मक |
| Genitals | जननांग |
| Goodwill | सदभावना |
| Group | समूह |
| Guardian | अभिभावक |
| Guide | परिदर्शिका |
| Hedonism | सुखवाद प्रेयवाद |
| Heterosexual | विलिंगकामी |
| Homogeneous | सजातीय, समजातीय |
| Homosexual | समलिंगकामी |
| Humanistic | मानवतावादी |
| Hypothesis | प्राक्कल्पना |
| Hysteria | हिस्टीरिया |
| Idea | विचार |
| Ideographing | व्यक्त्यंकन |
| Impersonal | अवैयक्तिक |
| Impulse | आवेग |
| Index | सूचक |
| Infatuation | मोह |
| Inference | अनुमान |
| Inhibition | प्रावरोध |
| Insight | अन्तर्दृष्टि |
| Instinct | मूल प्रवृत्ति |
| Institute | संस्थान |
| Instrument | उपकरण, यन्त्र औज़ार, साधन |
| Intellect | प्रज्ञा |
| Intelligentsia | प्रबुद्ध वर्ग, बुद्धिजीवी वर्ग |
| Intense | गहन |
| Intensity | तीव्रता |
| Inter-action | अन्तःक्रिया |

| | |
|---|---|
| Orthodox | कट्टरपंथी, रूढ़िवादी |
| Overt | प्रकट, प्रत्यक्ष |
| Panel | तालिका, नामिका |
| Passion | भावावेश, आवेश |
| Passionate | आवेशपूर्ण, आवेशप्रधान |
| Paternal | पित्रीय, पतृक |
| Pattern | प्रतिरूप, प्रतिमान |
| Peer | समदर्शी |
| Peer group | समसमूह |
| Perception | प्रत्यक्ष ज्ञान |
| Permission | अनुज्ञा |
| Permissive | अनुज्ञात्मक |
| Permissiveness | अनुज्ञात्मकता |
| Perspective | परिप्रेक्ष्य |
| Phenomenon | घटना, दृग्विषय, गोचर |
| Positive | निश्चयात्मक, सकारात्मक |
| Potential | सम्भावी |
| Pre-disposition | पूर्ववृत्ति |
| Prejudice | पूर्वग्रह |
| Primitive | आदिम |
| Profession | व्यवसाय |
| Prognosis | पूर्वानुमान |
| Proposition | प्रस्थापना |
| Promiscuity | स्वैरिता, अनियत सभोग |
| Promiscous | स्वैर |
| Psychiatry | मनोरोग विज्ञान |
| Psychic energy | मन ऊर्जा |
| Puberty | यौवनारम्भ |
| Puritan | शुद्धाचारी |
| Purposive | सोद्देश्य |
| Qualitative | गुणात्मक |
| Quantification | परिमापन |
| Quantitative | परिमाणात्मक |
| Questionnaire | प्रश्नावली, प्रश्नमाला |
| Race | नस्ल |

| | |
|---|---|
| Subconscious | अवचेतन (मन) |
| Subjective | आत्मपरक |
| Sublime | उदात्त |
| Substitution | प्रतिस्थापन |
| Symbolism | प्रतीक विधान |
| *Sympathy* | सहानुभूति |
| Taboo | निषेध, वर्जन, वर्जना |
| Technique | प्रविधि, तकनीक |
| Teleology | प्रयोजनवत्ता |
| Thesis | स्थापना |
| Tool | उपकरण, औजार |
| *Traditional* | पारम्परिक, परम्परागत |
| Treatise | प्रबन्ध |
| Trend | प्रवृत्ति |
| Trial marriage | परीक्षण विवाह |
| Tribe | आदिम जाति, जनजाति, कबीला |
| Unconscious | अचेतन (मन) |
| Uniform | एकसा, एकरूप, समरूप |
| Uninhibited | निरवरोध |
| Urge | अन्त प्रेरण |
| Value | मूल्य, मान |
| Variation | विभिन्नता |
| Venreal disease | रतिज रोग |
| Vertebrate | कशेरुकी |
| Virginity | कौमार्य, सतीत्व |
| Working | श्रमजीवी |
| *Welfare, Well Being* | कल्याण |

# सन्दर्भ ग्रन्थ

ADLER, ALFRED, *What Life Should Mean to You* London George Allen and Unwin Ltd , Unwin Books edition (First published in 1932) 1962

ALTEKAR, A S , *The Position of Women in Hindu Civilisation*, 3rd edition, Varanasi Motilal Banarsidass, 1962

ARNOLD, MARTIN, *Marriage Sex and Society*, London Mayflower Books Ltd 1965

ASCH, SOLOMAN E *Social Psychology*, New Jersey Prentice Hall, Inc , 1952

BABER, BERNARD, ' The Three Human Females,' in *An Analysis of the Kinsey Reports on Sexual Behaviour in the Human Male and Female* edited by Donald Porter Geddes, A Mentor Book, New York The New American Library of World Literature, Inc , 1954

BABER, RAY E , *Youth Looks at Marriage and the Family A Study of Changing Japanese Attitudes*, Tokyo International Christian University, 1958

BAIN, READ, ' Changed Beliefs of College Students in *The Journal of Abnormal and Social Psychology*, Vol 31, 1936, pp 1 11

BAROT JYOTI ' Trends in Marital Relations in 70 s A Paper read in *All India Seminar on The Indian Family in The Change and Challenge of Seventies* in New Delhi, from 28 Nov to 2nd Dec , 1971

BEAUVOIR, SIMONE DE, *The Second Sex*, London New English Library, 1969

BECKER, H , and HILL, R (ed ), *Marriage and the Family*, Boston D C Heath and Co , 1942

BEIGEL, HUGO G , ' Romantic Love," in *American Sociological Review* Vol 16, No 3, June 1951, pp 326 34

BENNY, M , REISMAN D , and STAR, S A 'Age and Sex in the Interviewer in *Americal Journal of Sociology* Vol 62, 1956, pp 143 52

BLOCH TWAN, *The Sexual Life of Our Time*, New York Rebman 1968, p 188

BOGARDUS, E S , *Sociology*, 3rd edition New York The Mac millan Company, 1950

BOROFF, DAVID *Campus*, New York Harper and Brothers 1961

——, 'Sex The Quiet Revolution in *Esquire Magazine*, July 1962

BOWMAN, HENRY A , *Marriage for Moderns*, 3rd edition New York McGraw Hill Book Company, Inc , 1954

BRATA, SASTHI "The Sex Revolution, in *The Illustrated Weekly of India*, 24 October 1971

BROMLEY, D D , and BRITTEN F H *Youth and Sex, A Study of 1300 College Students*, New York Harper and Brothers 1938

BROWN, J F , *The Psycho Dynamics of Abnormal Behaviour*, London McGraw Hill Book Company, Inc , 1940

BUCK W A Measurement of Changes in Attitudes and Interests of University Students Over a Ten Year Period ' in *Journal of Abnormal and Social Psychology*, Vol 31 1936 pp 12 19

BUNDESEN, H N , *Toward Manhood* New York J B Lippincott Co , 1951

BURGESS ERNEST W and LOCKE HARVEY J , *The Family* 2nd ed , New York American Book Company 1960

CADWALLADER MERVYN, "Changing Social Mores in *Current*, February 1967, p 48

CAPELLANUS ANDREAS *The Art of Courtly Love* translated by John J Parry New York Columbia University Press 1941

CARSTAIRS G M *This Island Now*, London Hogarth 1963

CAVAN RUTH SHONLE Attitudes of Jewish College Students in the United States Toward Interreligious Marriage in *International Journal of Sociology of the Family* Vol I Special Issue May 1971 pp 84 98

CHARTHAM ROBERT *Sex Manners for the Young Generation* London New English Library Limited, 1970

CHATTERJEE, B B *Impact of Social Legislation on Social Change*, Calcutta The Minerva Associates 1971

CHAUDHURI NIRAD C *To Live or Not to Live*, Delhi Hind Pocket Books Pvt Ltd

CHESSER, EUSTACE *The Sexual, Marital and Family Relationships of the English Woman*, London Hutchinson s Medical Publications Ltd 1956

——, *Cost of Loving* London Methuen & Co Ltd 1964

——, *Twentieth Century Woman*, London Arrow Books Ltd , 1969

CHITRE, DILIP, Many Peopled Experience ' in *The Illustrated Weekly of India*, 12 December 1971

CHRISTENSEN H T , *Marriage Analysis Foundations for Successful Family Life*, New York Ronald Press Co 1950

COMFORT A , *Sexual Behaviour in Society*, London Gerald Duck worth and Co 1950

COMFORT ALEX, *Sex in Society*, London Gerald Duckworth & Co Ltd , 1963

COOMARASWAMY A K *The Dance of Siva* New York Sunwise Turn 1924

CORMACK MARGARET L *She Who Rides a Peacock Indian Students and Social Change* Bombay Asia Publishing House, 1960

—— *The Hindu Woman* Bombay Asia Publishing House Indian Edition 1961

CROW, LESTER D , and CROW ALICE *Understanding Our Behaviour* New York Alfred A Knopf Inc 1956

DAS MAN SINGH 'A Cross Cultural Study of Intercaste Marriage in India and the United States" in *International Journal of Sociology of the Family* A Special Issue of Intermarriage in a Comparative Perspective, Vol I, May 1971 pp 25 33

DAVIS K B , *Factors in the Sex Life of Twenty Two Hundred Women*, New York Harper 1929

DAVIS MAXINE *Sex and The Adolescent* New York Dail Press 1958

DE SUSHIL KUMAR *Ancient Indian Erotics and Erotic Literature*, Calcutta Firma K L Mukhopadhyay 1969

DESAI, G B ' Women in Modern Gujarati Life Unpublished Thesis Bombay University of Bombay, 1945

DESAI NEERA A *Woman in Modern India*, Bombay Vora and Co Publishers Private Ltd , 1957

DUBE, S C , "Men s and Women s Roles in India in *Women in the New Asia*, ed Barbara E Ward, Paris UNESCO, 1963

DUVALL EVELYN MILLIS, 'Adolescent Love as a Reflection of Teenagers Search for Identity, in *Journal of Marriage and Family*, Vol 26 No 2 (May 1964) pp 226 29

DUVALL, E M and HILL, R *When You Marry* Boston D C Heath and Co 1945

EDWARDS JOHN N , 'The Future of the Family Revisited, in *Journal of Marriage and the Family* Vol 29 (August 1967), pp 505 07

EJLERSEN METTE *I Accuse*, London Universal-Tandem Publishing Co Ltd 1969

ELLIOT MABEL A , and MERRIL, FRANCES E , *Social Disorganisation* 3rd edition, New York Harper and Brothers Publishers, 1950

ELLIS ALBERT, ' Questionnaire Versus Interview Methods in the Study of Human Love Relationships, in *American Sociological Review* Vol 12, 1947, pp 61 65

——, *The American Sexual Tragedy* New York Lyle Stuart and Grove Press 1962 (*Idem*) *The Case for Sexual Liberty* New York Tucson Seymour Press 1965

——, Group Marriage A Possible Alternative in *The Family in Search of a Future*, edited by Herbert A Otto 1970

ELLIS ALBERT and ABARBANEL ALBERT (eds ) *The Encyclopaedia of Sexual Behaviour*, New York City Hawthorn Books 1967

ELLIS HAVELOCK ' The Evolution of Modesty in *Studies in the Psychology of Sex*, Vol I New York F A Davis Company, 1900

— — 'Sexual Selection in Man in *Studies in the Psychology of Sex* Vol IV New York F A Davis Company, 1905

—— Sex in Relation to Society in *Studies in the Psychology of Sex* Vol VI New York F A Davis Company 1910

—— *Studies in the Psychology of Sex*, Vol II Part Three New York Random House 1936

—— *Sex and Marriage*, 3rd Printing edited by John Gawsworth New York Pyramid Books 1961

LYSENCK H J *The Structure of Human Personality*, London Methuen 1953

——, *The Psychology of Politics*, London Routledge & Kegan Paul 1954
—— *Experiments in Personality*, London Routledge & Kegan Paul, 1960
FARNHAM, M F, *The Adolescent*, New York Harper & Brothers 1951
FENICHEL OTTO, *The Psychoanalytic Theory of Neurosis*, New York W W Norton & Company Inc 1945
FESTINGER, L, *A Theory of Cognitive Dissonance*, California Stanford University Press 1957
——, 'Behavioural Support for Opinion Change,' in *Public Opinion Quarterly*, Vol 28, 1964, pp 404 17
FIGS, EVA *Patriarchal Attitudes Women in Society*, London Faber and Faber, 1970
FOLSOM JOSEPH KIRK, *The Family and Democratic Society*, London Routledge & Kegan Paul Limited, 1948
FONSECA, MABEL *Counselling for Marital Happiness*, Bombay Manaktalas 1966
FORBATH, A (ed) *Love Marriage, Jealousy*, London Pallas Publishing Co Ltd, 1941
FORD CHELLAN S and BEACH FRANK A, *Patterns of Sexual Behaviour* New York Harper & Row Publishers, 1951
*Fortune Magazine* poll April 1937
FOSTER R G, *Marriage and Family Relationships* New York The Macmillan Co, 1950 (1st edition 1944)
FREUD SIGMUND, *Group Psychology and the Analysis of the Ego* London Hogarth 1972
FROMM ERICH, *Man for Himself*, New York Rinehart and Co, Inc, 1947
—— *The Art of Loving*, New York Harper and Brothers 1956
FROMME ALLAN, *The Psychologist Looks at Sex and Marriage*, New York Barnes and Noble, 1955
GEDDES DONALD PORTER (ed) *An Analysis of the Kinsey Reports on Sexual Behaviour in the Human Male and Female*, a Mentor Book New York The New American Library of World Literature, Inc, 1954
GHURYE, G S *Caste and Class in India*, Bombay Popular Book Depot 1950
——, *Family and Kin*, Bombay Popular Book Depot, 1955

——, *Sexual Behaviour of the American Female*, Bombay Current Book House 1956

GITTLER JOSEPH B, *Social Dynamics* New York McGraw Hill Book Company Inc, 1952

GOLDSEN ROSE K, *et al*, *What College Students Think*, New York D Van Nostrand Company, Inc, 1960

GOODE, WILLIAM J, "The Theoretical Importance of Love, in *American Sociological Review*, Vol 24, No 1 (February 1959) pp 38 47

—— *World Revolution and Family Patterns* London The Free Press of Glencoe 1963

—— *The Family* New Delhi Prentice Hall of India (Private) Ltd 1965

GORE, M S, *Urbanization and Family Change*, Bombay Popu lar Prakashan, 1968

GOTTSCHALK, LOUIS, KLUCKHOHN CLYDE and ANGELL ROBERT, "The Use of Personal Documents in History Anthropology and Sociology ' London *Social Science Research Council* 1945

GREEN GAEL *Sex and the College Girls* London Mayflower Books, 1964 Reprinted 1970

GREER, GERMAINE *The Female Eunuch* London Granada Pub lishing Limited 1971

GUPTA K C, ' Family Counselling—(Parent Child Relationship),' a paper read in *All India Seminar on the Indian Family in Change and Challenge of the Seventies* in New Delhi from 28 Nov to 2nd Dec 1971

HART HORNELL "Changing Social Attitudes and Interests' in *Recent Social Trends*, McGraw Hill Book Company Inc 1933

HATE C A, ' The Socio Economic Conditions of Educated Women in Bombay City Study prepared in the University School of Economics and Sociology, Bombay 1930

——, ' The Social Position of Hindu Women unpublished *Ph D* Thesis, University School of Economics and Sociology, Bombay, 1946

——, *Changing Status of Woman in Post Independence India*, Bombay Allied Publishers Private Limited 1969

HAYTIN DANIEL LEIGH 'A Methodological Validity of the Case Study in the Social Sciences in *Dissertation Abstracts Interna tional A*, Vol 31 No 1, July 1970, p 492 A

HEIDER F, "Attitudes and Cognitive Organization," in *Journal of Psychology*, Vol 21, 1946, pp 107-12

HELLEN, G C "Attitudes of Educated Youth Towards Marriage,' in *Social Welfare* Vol XII, No 11, Feb 1966 pp 9 10

HEMMING, JAMES *Individual Morality*, London Panther Books 1970

HILL, REUBEN "The American Family of the Future' in *Journal of Marriage and the Family* Vol 26, No 20 February 1964

HOFFMAN LOIS W 'The Decision to Work,' in F I Nye and Lois W Hoffman (eds), *The Employed Mother in America* Chicago Rand McNally, 1963

IYENGAR S SRINIVASA, *Hindu Law and Usage*, 1938

KANNAN, C T, *Intercaste and Inter community Marriage in India*, Bombay Allied Publishers Private Ltd, 1963

KAPADIA K M *The Hindu Marriage and Divorce Bill A Critical Study* Bombay Popular Book Depot, 1953

—— Views and Attitudes of University Graduates in the Hindu Community on Marriage and Family Relationships in *Sociological Bulletin* Vol 3 No 1, March 1954

—— 'Changing Patterns of Hindu Marriage in *Sociological Bulletin* Vol 3 No 2, September 1954

——, 'Changing Patterns of Hindu Marriage and Family,' in *Sociological Bulletin* Vol 4 No 2 September 1955

—— *Marriage and Family in India*, 2nd edition, Bombay Oxford University Press 1958

—— The Family in Transition in *Sociological Bulletin*, Vol 8 No 2 September 1959

KAPUR PROMILLA, "The Socio Psychological Study of the Change in the Attitudes of Young Hindu Educated Earning Women unpublished Ph D thesis, Institute of Social Science, Agra University, Agra 1960

——, *Marriage and the Working Woman in India*, Delhi Vikas Publications, 1970

KARDINER, A *The Individual and His Society* New York Columbia University Press, 1939

KATZ, D and ALLPORT, F H *Students Attitudes A Report of the Syracuse University Reaction Study*, Syracuse The Chafts man Press 1931

KIESLER CHARLES A, Collins Barry E, Miller, and Norman

*Attitude Change A Critical Analysis of Theoretical Approaches*, New York John Wiley & Sons, 1969

KINESY, ALFRED C *et al*, *Sexual Behaviour in the Human Male* Philadelphia W B Saunders Company 1948

——, *Sexual Behaviour of Human Female* Philadelphia W B Saunders Company, 1953

KIRKENDALL LESTER A *Understanding Sex* Chicago Science Research Associates, 1947

—— *Premarital Intercourse and Interpersonal Relationships* New York The Julian Press Inc, 1961

KIRKPATRICK CLIFFORD, *The Family as Process and Institution* 2nd edition New York Ronald Press 1963

KLAF, FRANKLIN S (Introduction by), *Kama Sutra of Vatsyayana* New York Lancer Books Inc 1964

KNOWER, F H 'Experimental Studies of Changes in Attitudes I A Study of the Effect of Oral Argument on Changes of Atti tude, in *Journal of Social Psychology*, Vol 6, 1935 pp 315 47

KOLB, WILLIAM L "Sociologically Established Norms and Demo cratic Values, in *Social Forces* 26 1948

KOMAROVSKY, MIRRA, *The Unemployed Man and His Family*, New York The Dryden Press, 1940

KRECH DAVID and CRUCHFIELD, RICHARD S, *Theory and Pro blems of Social Psychology* Asian Student Edition, McGraw Hill Book Co Inc, 1948

KRICH, A M (ed), *Women The Variety and Meaning of Their Sexual Experience* New York Dell Books 1953

——, (ed) *Men The Variety and Meaning of Their Sexual Experience* Sixth Printing, New York Dell Publishing Co Inc 1967

KUPPUSWAMY, B, *A Study of Opinion Regarding Marriage and Divorce* Bombay Asia Publishing House, 1957

LANDIS J T, and LANDIS M G, *Building a Successful Marriage*, New York Prentice Hall 1948

LANTZ HERMAN R, and SYNDER ELISE C *Marriage An Exami nation of the Man Woman Relationship* New York John Wiley and Sons, Inc 1969

LARSON, LYLE E, 'The Family in Contemporary Society and Emerging Family Patterns Unpublished paper Department of Sociology University of Alberta 1970, pp 15 20

LEVY, J, and MUNROE, R *The Happy Family*, New York Alfred A Knopf, 1938

LIEBERMAN, SEYMOUR "The Effects of Changes in Roles on the Attitude of Role Occupants," in *Human Relations* Vol 9, No 4, 1966, pp 385 402

LIKERT R 'A Technique for the Measurement of Attitudes,' in *Arch Psychology*, New York, No 140, 1932, pp 1 55

LINTON RALPH, *Cultural Background of Personality*, New York Appleton Century Crafts, 1945

LISOVSKY, VLADIMIR, and PELEVIN, SERGEI, "Why Divorce in the Soviet Union ' in *Sputnik*, a monthly Soviet magazine, January issue 1967

LUNDIN JOHN PHILIP, *Women* New York Lancer Books, Inc, 1967

MAHAJAN, AMARJIT, "A Study of Attitudes of Women Students towards Mate Selection, in *Journal of Family Welfare*, Vol XII, No I, September 1965

MALINOWSKI, BRONISLAW, in *Nature*, 22 April 1922

——, *Sex and Repression in Savage Society*, London Paul, Trench and Trubner 1927

MATHEW, A, ' Expectations of College Students Regarding Their Marriage ' in *Journal of Family Welfare* Vol 12 No 3, March 1966 pp 46 52

MAYO ELTON *The Human Problems of an Industrial Civilization*, Cambridge Harvard University Press, 1946

MCGREGOR, O R "Equality Sexual Values and Permissive Legis lation The English Experience in *Journal of Social Policy* Vol I, Part I, January 1972 Issue, pp 44 59, Cambridge Uni versity Pre s

MEAD M, *Growing Up in New Guinea* New York Morrow, 1930

—— Kinship in the Admiralty Islands, in *Anthrop Pap Amer Mus*, Vol 34, 1934 pp 181 358

—— What Women Want in *Fortune*, Vol 34, 1946 172 pp

——, Marriage in Two Steps in *Redbook Magazine*, July 1966 reprinted in *The Family in Search of a Future*, edited by Otto 1970

MEHTA RAMA *The Western Educated Hindu Woman*, Bombay Asia Publishing House 1970

MERCHANT K T, *Changing Views on Marriage and the Family*, Madras B G Paul and Co, 1935

MEYER JOHANN J, *Sexual Life in Ancient India*, Calcutta The Standard Literature Co Ltd, 1952

MURDOCK GEORGE PETER *Social Structure* New York The Macmillan Company, 1949

NELSON JACK L *Teenagers And Sex: Revolution or Reaction?*, New Jersey Prentice Hall, Inc, 1970

NEUBACK GEPHARD (ed) *Extramarital Relations*, New York Prentice Hall, 1969

NEUMEYER, MARTIN H, *Social Problems and the Changing Society*, New York D Van Nostrand Company, Inc 1953

NEWCOMB THEODORE M 'Recent Changes in Attitudes Towards Sex and Marriage, in *American Sociological Review* Vol 2, 1937, pp 659 67

—— "An Approach to the Study of Communicative Acts in *Psychological Review* Vol 30 1953, pp 393 404

——, 'Individual Systems of Orientation' in S Koch (ed) *Psychology A Study of a Science* Vol 3 New York McGraw Hill 1959 pp 384 422

NEWCOMB THEODORE M, TURNER, RALPH H, and CONVERSE, PHILIP E, *Social Psychology* New York Holt, Rinehart and Winston, Inc, 1965

OMARI T PETER, Changing Attitudes of Students in West African Society Towards Marriage and Family Relationship in *British Journal of Sociology* Vol XI, No 3 September 1960, p 205

OSGOOD, C E, and TANNENBAUM P H "The Principles of Congruity in the Prediction of Attitude Change,' in *Psychological Review*, Vol 62 1955 pp 42 55

OTTO, HERBERT A (ed) *The Family in Search of a Future Alternate Models for Moderns* New York Appleton Century Crafts 1970

OVERSTREET, HARRY *The Mature Mind*, New York W W Norton & Company Inc, 1949

OVID The Loves and Remedies of Love, in *The Art of Love*, Cambridge Press Mass, Harvard University Press 1939

PANUNZIO, C, *Major Social Institutions* New York Macmillan, 1939

PARSONS TALCOTT *et al*, *Working Papers in the Theory of Action* New York The Free Press of Glencoe 1953

PARSONS T and BALES R F, *Family Socialization and Interaction Process* Glencoe Ill The Free Press 1955

PETERSON R C, and THURSTONE, L L *Motion Pictures and the Social Attitudes of Children*, New York The Macmillan Company, 1933

POMERAI, RALPH DE *The Future of Sex Relationships*, London Kegan Paul, Trench, Trubner & Co Ltd, 1936

POPENOE, PAUL, *Sex Love and Marriage*, New York Belmont Productions Inc, 1963

—— *Marriage Before and After* New York Wilfred Funk, 1943

PORTERFIELD AUSTIN L *Creative Factors in Social Research* Durham, N C Duke University Press 1941

PRABHU PANDHARI NATH *Hindu Social Organization*, rev ed, Bombay Popular Book Depot 1954

PRESCOTT DANIEL A "The Role of Love in Human Development," in *Journal of Home Economics* Vol 44, No 3 (March 1952), reprinted in *The Individual, Marriage and the Family Current Perspectives*, by Lloyd Saxton Belmont California Wadsworth Publishing Co, Inc 1970

PRINCE, ALFRED J 'Attitudes of Catholic University Students in the United States Toward Catholic Protestant Intermarriage,' in *International Journal of Sociology of the Family* Vol I, Special Issue, May 1971, pp 99 125

PUNEKAR, S D and RAO KAMALA *A Study of Prostitutes in Bombay* 2nd edition Bombay Lalvani Publishing House, 1967

RADHAKRISHNAN, S, *Religion and Society* 2nd edition, Third Impression London George Allen & Unwin Ltd 1956

REICH WELHELM *The Sexual Revolution Toward a Self Governing Character Structure*, New York Orgone Institute Press, 1945

REIK, THEODORE, *A Psychoanalyst Looks at Love*, New York Holt Rinehart and Winston, Inc 1944

——, *Psychology of Sex Relations*, New York Farrar, Straus & Co, 1945

—— *Of Love and Lust*, New York Farrar, Straus and Company, 1957

REISMAN DAVID, 'Permissiveness and Sex Role' in *Marriage and Family Living* August 1959

REISMAN D, GLAZER, N and DENNEY R, *The Lonely Crowd A Study of the Changing American Character* New York Doubleday 1953

REISS IRA L *Premarital Sexual Standards in America* New York The Free Press of Glencoe, 1960

——, "How and Why America's Sex Standards are Changing" in *Transaction*, Vol 5, March 1968, pp 26-32
REMMERS, H H, "Studies in Attitudes—Series I," in *Purdue University Studies in Higher Education*, No 26, 1934
——, "Studies in Attitudes—Series II," in *Purdue University Studies in Higher Education*, No 31, 1936
——, 'Studies in Attitudes—Series III, in *Purdue University Studies in Highter Education*, No 34, 1938
——, *Introduction to Opinion and Attitude Measurement*, New York Harper & Brothers, 1954
REMY, JACQUES, and WOOD, ROBERT (presented by them), *Patterns of Sex and Love A Study of the French Woman and Her Morals* by the French Institute of Public Opinion, London Anthony Gibbs and Phillips Ltd, A Panther Book, 1964
ROBIE, W F, *Love and Response*, New York Belmont Productions, Inc, 1967
ROSS, AILEEN D, *The Hindu Family in Its Urban Setting* Canada University of Toronto Press, 1961
RUSSELL, BERTRAND Quoted in *Dear Bertrand Russell*, London Allen & Unwin, 1951
——, *Marriage and Morals* New York Bantam Books Inc, 1959
ROUGEMENT, DENS DE, *Love in the Western World* New York Harcourt, Brace and World, 1940
——, 'The Crisis of the Modern Couple in R N Anshen, *Family Functions and Destiny*, New York Harper Brothers & Co, 1949
SAIT, UNA BERNARD, *New Horizons for the Family*, New York The Macmillan Company, 1938
SARTAIN, AARON QUINN, *et al*, *Understanding Human Behaviour*, New York McGraw Hill Book Company, Inc 1958
SAXTON, LLOYD 'Love in a Paired Relation in *The Individual Marriage and the Family Current Perspectives*, edited by Lloyd Saxton, Belmont, California Wadsworth Publishing Company, Inc, 1970
SCHOFIELD, MICHAEL, *The Sexual Behaviour of Young People*, Baltimore Penguin Books, Inc, 1968
SCHUCKING, LEVIN L, *The Puritan Family*, London Routledge & Kegan Paul, 1969
SCHUR EDWIN, M (ed), *The Family and the Sexual Revolution*, Bloomington Indiana University Press, 1964

SEWARD GEORGENE H, *Sex and the Social Order*, London Penguin Books Ltd 1954

SHAH B V 'Gujarat College Students and Selection of Bride," in *Sociological Bulletin*, Vol XI, 1962, p 132

SHARAYU BAL and VANARASE S J *Attitude of College Girls Towards Marriage*' A Study in *Journal of the S N D T Women s University*, Bombay Vol I 1966 pp 19 31

SHETH, JYOTSNA "A Matter of Arrangement ' in *Times Weekly*, col 12, pp 3 5, March 1972 Sunday Magazine Section of *The Times of India*

SIMONS, G L *Sex Tomorrow* London New English Library Limited 1971

SIMPSON, RICHARD L, and SIMPSON, IDA HARPER (eds), *Social Organization and Behaviour*, New York John Wiley & Sons, Inc 1964

SINGH, SUNEET VIR "Is Marriage Outmoded?" in 'Sunday World" of *The Hindustan Times*, 15 August 1971

SIRJAMAKI JOHN "Cultural Configuration in the American Family' in *The American Journal of Sociology* May 1948, p 44

SLATER, RALPH, 'Narcissism Versus Self Love, in paper prepared for *Auxiliary Council to the Association for the Advancement of Psychoanalysis*, 1953

SMITH M BREWSTER BRUNER, JEROME S, and WHITE, ROBERT W, *Opinions and Personality*, New York John Wiley & Sons, Inc 1964

SORENSEN S, "Is a Reform of Marriage Necessary?' in *Love, Marriage, Jealousy*, edited by A Forbath London Pallas Publishing Co Ltd, 1941

SOROKIN PITRIM A "Altruistic Love,' in *The Encyclopaedia of Sexual Behaviour* by Albert Ellis and Albert Abarbanel New York Hawthorn Books, Inc 1967, reprinted in Lloyd Saxton s *The Individual, Marriage and the Family Current Perspectives* Belmont, California Wadsworth Publishing Company, Inc, 1970

SPENCER HERBERT, *Principles of Psychology* 1855

STEKEL, W, "The Art of Love in *Love Marriage Jealousy*, edited by A Forbath London Pallas Publishing Co Ltd, 1941

——, "The First Disappointments in Man and Woman, in *Love, Marriage Jealousy*, edited by A Forbath London Pallas Publishing Co Ltd, 1941

STEPHENS, WILLIAM N , *The Family in Cross Cultural Perspective*, New York Holt, Rinehart and Winston, 1963

STOKES, WALTER R , and MACE DAVID R , "Premarital Sexual Behaviour, ' in *Marriage and Family Living*, August 1953

STONE, H M , and STONE, A S , *A Marriage Manual A Practical Guide book to Sex and Marriage* (rev ed ), New York Simon and Schuster, 1952

STORR ANTHONY, *The Integrity of the Personality*, Harmonds worth Penguin Books, Inc , 1963

——, *Sexual Deviation*, Harmondsworth Penguin Books Inc , 1964

SULLIVAN, HARRY STACK, *Conceptions of Modern Psychiatry* Washington D C William Alanson White Psychiatric Foundation 1947

SWANSON G E , 'Routinization of Love Structure and Process in Primary Relations,' in S Klausner (ed ) *The Quest for Self Control*, New York The Free Press of Glencoe pp 160 209 1965

TAIETZ, PHILIP, 'Conflicting Group Norms and the Third Person in the Interview, in *American Journal of Sociology*, Vol 68, 1962, pp 97 104

' Teen Agers and Sex A Student Report in *Seventeen* Magazine 17 July 1967 issue, published, New York Triangle Publica tions Inc

THOMAS JOHN L , *The American Catholic Family* New Jersey Prentice Hall, 1956

THOMAS W I and ZNANIECKI, F , *The Polish Peasant in Europe and America*, Boston R C Badger, 1918

THURSTONE, L L 'Comment, in *American Journal of Sociology*, Vol 52 1946, pp 39 40

TODD, ARTHUR JAMES *The Primitive Family* New York Putnam, 1913

TRUXAL ANDREW G and MERRIL FRANCES E , *The Family in American Culture* New Jersey Prentice Hall, 1947

TURNER RALPH H *The Family Interaction*, New York John Wiley & Sons Inc 1970

VATSYAYANA *The Kama Sutra* (translated) Delhi Rajkamal, 1948

VEROFF JOSEPH and FELD SHEILA, *Marriage and Work in America*, New York Van Nostrand Reinhold Company, 1970

VIDAL, F, "Love, the Impul ive Instinct,' in *Love, Marriage, Jealousy*, edited by A Forbath, London Pallas Publishing Co Ltd, 1941

VIVEKANANDA, SWAMI, *Complete Works of Swami Vivekananda*, Almora Advaita Ashrama Vol No IV, 1946, 4th edition

——, *Our Woman*, Reprints Almora Advaita Ashrama, 1953

WALLACE IRVING, *The Chapman Report*, London Pan Books Ltd, 1962

WALLER, WILLARD *The Family*, New York Dryden, 1938

WALSH, ROBERT HILL, 'A Survey of Parents and Their Own Children s Sexual Attitudes ' in *Dissertation Abstracts International* A-Humanities and Social Sciences 1970, p 1397 A

WESTERMARCK, EDWARD, *The History of Human Marriage*, Macmillan Company Vol 1, 1925

——, *The Origin and Development of Moral Ideas*, Vol II, 1928, a

——, *The Future of Marriage*, New York Events Publishing Company Inc, 1928, b

——, *Future of Marriage in Western Civilization*, London Macmillan, 1936

WHITEHURST, ROBERT N, ' Extramarital Sex Alienation or Extension of Normal Behaviour, in *Extramarital Relations*, edited by Gerhard Neuback, New York Prentice-Hall, 1969

WHITEHURST, ROBERT N, and PLANT, BARBARA, "A Comparison of Canadian and American University Students Reference Groups, Alienation and Attitudes Towards Marriage, ' in *International Journal of Sociology of the Family*, Vol I, No I March 1971

WHITE, R K, "Value and Analysis A Quantitative Method for Describing Qualitative Data in *Journal of Social Psychology*, Vol XIX, 1944, pp 351 58

WINCH, ROBERT F, *The Modern Family*, New York Holt, Rinehart and Winston, 1952

YOUNG, PAULINE V, *Scientific Social Surveys and Research*, 3rd edition, New Jersey Prentice-Hall, 1956

# अनुक्रमणिका

# शुद्धि-पत्र

| अशुद्ध | शुद्ध | पृष्ठ |
|---|---|---|
| हेट | हाटे | 37, 153, 155 158, 162 |
| उत्कृप्ट | ग्राकृष्ट | 43 |
| उज्जवल | उज्ज्वल | 91 |
| वेस्टरमाव | वेस्टरमाक | 106 |
| मित्र-वग | मित्र वग | 129 |
| हौ | हो | 158 |
| सिक्सीयना | सेक्सीयता | 181 |
| भर्डोक | मर्डोव | 187 |
| विवि न | विभिन्न | 246 |
| लोक्चार | लोकाचार | 274 |
| बाफी | बाकी | 282 |
| भिर | फिर | 293 |